व्यवसाय अध्ययन

कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

क्यू आर (QR) कोड से संबद्ध ई-सामग्री प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शिका

प्रत्येक अध्याय के ऊपर कोने में स्थित कोड बॉक्स को क्विक रिस्पांस कोड – क्यू आर (QR) कोड कहते हैं। यह क्यू आर कोड आपको अध्याय में दिए गए विषयों से संबंधित ई-सामग्री, जैसे ऑडियो, वीडियो, मल्टीमीडिया, पाठ्य-सामग्री आदि को प्राप्त करने में सहायता करेगा। पहला क्यू आर कोड संपूर्ण ई-पाठ्यपुस्तक प्राप्त करने के लिए है। बाद में प्रत्येक अध्याय में दिए गए क्यू आर कोड उस अध्याय से संबंधित ई-सामग्री प्राप्त करने में मदद करेंगे। यह कोड आपको आनंदपूर्ण तरीके से सीखने में मदद करेंगे।

अपने मोबाइल फ़ोन या टेबलेट द्वारा निम्नवत् चरणों का पालन करें और ई-सामग्री प्राप्त करें।

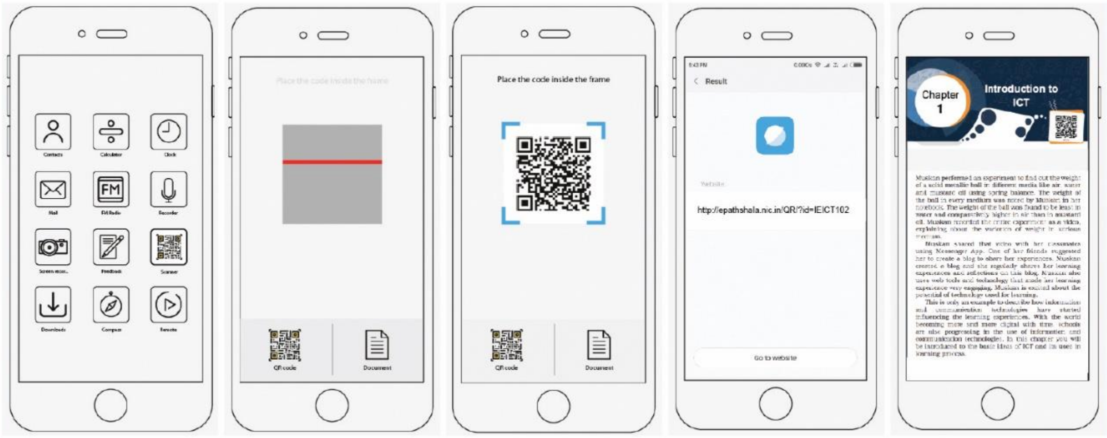

प्ले स्टोर से क्यू आर कोड स्कैनर एप इंस्टॉल करें और इसे खोलें	क्यू आर कोड स्कैनिंग विंडो को तैयार रखें	स्कैनर को क्यू आर कोड के सामने रखें	लिंक को सिलेक्ट एवं क्लिक करें	उपलब्ध ई-सामग्री का प्रयोग करें

कंप्यूटर या लैपटॉप पर ई-सामग्री प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाएँ

1. फ़ायरफ़ॉक्स ( ), क्रोम ( ) आदि वेब ब्राउज़र खोलें।
2. ई-पाठशाला वेबसाइट पर जाएँ (http//:epathshala.nic.in)।
3. 'एक्सेस ई-सामग्री' वाले बॉक्स पर क्लिक करें।
4. प्रत्येक क्यू आर कोड (0120CH01) के नीचे दिए गए अक्षरांकीय कोड को टंकित करें।
5. अब जो लिंक प्रस्तुत हुए हैं, उनके प्रयोग से ई-सामग्री खोजें।

व्यवसाय अध्ययन

कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

11109

विद्यया ऽमृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 81-7450-583-0

प्रथम संस्करण
अप्रैल 2006 वैशाख 1928

पुनर्मुद्रण
जनवरी 2007 माघ 1928
फरवरी 2009 माघ 1930
जनवरी 2010 माघ 1931
जून 2011 ज्येष्ठ 1933
मार्च 2019 फाल्गुन 1940

PD 5H RSP

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रब\ड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 01

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बैंगलूर 560 085

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकटः धनकल बस स्टॉप
पनिहटी
कोलकाता 700 114

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021

₹ 135.00

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	:	एम. सिराज अनवर
मुख्य संपादक	:	श्वेता उप्पल
मुख्य उत्पादन अधिकारी	:	अरुण चितकारा
मुख्य व्यापार प्रबंधक	:	अबिनाश कुल्लू
संपादक	:	मरियम बारा
उत्पादन सहायक	:	मुकेश गौड़

आवरण
करण चड्ढा

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 70 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा .... द्वारा मुद्रित।

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिये। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है, जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाये हुए है। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सिखाने के दौरान अपने अनुभवों पर विचार करने का कितना अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नये ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों एवं स्रोतों की अनदेखी किये जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जन और पहल को विकसित करने के लिये ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है, जितनी वार्षिक कैलेंडर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिये नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिये पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निधारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिये उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिये बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक सलाहकार समूह के अध्यक्ष आचार्य हरि वासुदेवन और व्यवसाय अध्ययन पाठ्यपुस्तक समिति के मुख्य सलाहकार आचार्य संजय के. जैन की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान दिया; इस योगदान को संभव बनाने के लिये हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं, जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा आचार्य मृणाल मीरी एवं आचार्य जी. पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनीटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों व सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

हरि वासुदेवन, आचार्य, इतिहास विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता।

मुख्य सलाहकार

संजय के. जैन, आचार्य, दिल्ली स्कूल ऑफ इकॉनोमिक्स, दिल्ली विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली।

समिति

आनंद सक्सेना, प्रवाचक, दीन दयाल उपाध्याय कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

देवेन्द्र कुमार वैद्य, आचार्य, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

गरिमा गुप्ता, प्रवक्ता, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

जी.एल. तायल, प्रवाचक, रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

के.वी. अचलापती, आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, वाणिज्य विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

एम.एम. गोयल, प्रवाचक, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

एम. उषा, सहायक आचार्य, यूनीवर्सिटी कॉलेज ऑफ कॉमर्स एंड बिजनेस मैनेजमेंट, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

पी.के. परीदा, आचार्य, वाणिज्य विभाग, उत्कल विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर, ओडिशा।

पूजा दासानी, पी.जी.टी., कॉनवेंट ऑफ जीसस एण्ड मैरी स्कूल, गोल डाकखाना, नयी दिल्ली।

शैलेंद्र निगम, एन.आई.आई.एल.एम. केंद्र प्रबंधन अध्ययन, शेरशाह सूरी मार्ग, नयी दिल्ली।

अनुवादक मंडल

एस.के. बंसल, पी.जी.टी. वाणिज्य (सेवानिवृत्त), कमर्शियल सी. से. स्कूल, दरियागंज, दिल्ली।

एल.आर. पाठक, शिक्षा अधिकारी (सेवानिवृत्त), शिक्षा निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली;

मनवीर राणा, पी.जी.टी. वाणिज्य, गंगा इंटरनेशनल स्कूल, हिरण कूदना, रोहतक रोड, दिल्ली;

सीमा श्रीवास्तव, प्रवक्ता डी.आई.ई.टी., मोती बाग, नई दिल्ली।

एम.एम. वर्मा, प्रवाचक, (सेवानिवृत्त), स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,

सदस्य समन्वयक

मीनू नंद्राजोग, प्रवाचक, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता**

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

अध्यापकों के लिए

यह पाठ्यपुस्तक व्यावसायिक वातावरण की एक अच्छी जानकारी देने की अपेक्षा करती है। एक प्रबन्धक को व्यवसाय की जटिल, गतिशील स्थितियों का विश्लेषण करना पड़ता है। विषय-वस्तु को अधिक समृद्ध बनाने के लिए व्यावसायिक पत्र-पत्रिकाओं और लेखों के उद्धरणों को अतिरिक्त रूप से कोष्ठकों में जोड़ा गया है। इससे विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिलता है कि वे व्यवसाय की प्रक्रियाओं का अवलोकन करें एवं स्वयं खोज करने का प्रयास करें कि व्यावसायिक संगठनों में क्या हो रहा है। यह भी अपेक्षा की जाती है कि इस दौरान वे पुस्तकालय, समाचार-पत्रों, व्यवसायोन्मुख दूरदर्शन कार्यक्रमों और इन्टरनेट के द्वारा आधुनिक जानकारी प्राप्त करेंगे। इस पुस्तक को कंपनी अधिनियम 2013 के प्रावधानों के अनुसार संशोधित किया गया है।

आभार

परिषद् इस पुस्तक के विकास में इनकी प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों के लिए आभार व्यक्त करती है– डी.पी. शर्मा, पूर्व उप कुलपति एवं आचार्य, बरकातुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल; एस.के. बंसल, पी.जी.टी. वाणिज्य (सेवानिवृत्त), कमर्शियल सी. से. स्कूल, दरियागंज, दिल्ली; विजय कुमार यादव, पी.जी.टी. वाणिज्य, केंद्रीय विद्यालय, जवाहर लाल नेहरू कैंपस, नयी दिल्ली; के. वासुदेवा मूर्ति, प्रवक्ता वाणिज्य, महाजना प्री-यूनीवर्सिटी कॉलेज, जयालक्ष्मीपुरम, मैसूरू; द्वारिकानाथ मिश्रा, पी.जी.टी. वाणिज्य, डी.ए.वी. स्कूल, यूनिट 8, भुवनेश्वर, ओडिशा।

पुस्तक के विकास में सहयोग के लिए हम सविता सिन्हा, विभागाध्यक्ष एवं आचार्य, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के प्रति विशेष रूप से आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने हर संभव मार्गदर्शन एवं समर्थन दिया। हम उन सभी वाणिज्य शिक्षकों के भी आभारी हैं, जिन्होंने इस पाठ्यपुस्तक की क्यू.आर. कोड की अतिरिक्त पाठ्य सामग्री तैयार करने में अपना योगदान दिया है।

पुस्तक के विकास के विभिन्न चरणों में सहयोग के लिए महेश सिंह भंडारी, गिरीश गोयल, विजय कुमार और हरि दर्शन लोधी, डी.टी.पी. आपरेटर; अनिल शर्मा, प्रूफरीडर; दिनेश कुमार, इंचार्ज कंप्यूटर कक्ष के भी हम आभारी हैं। प्रकाशन प्रभाग द्वारा हमें पूर्ण सहयोग एवं सुविधाएँ प्राप्त हुईं जिसके लिए हम उनका आभार व्यक्त करते हैं।

विषय-सामग्री

आमुख			iii
भाग 1	**:**	**व्यवसाय के आधार**	**1-180**
अध्याय 1	:	व्यवसाय, व्यापार और वाणिज्य	2-30
अध्याय 2	:	व्यावसायिक संगठन के स्वरूप	31-66
अध्याय 3	:	निजी, सार्वजनिक एवं भूमंडलीय उपक्रम	67-91
अध्याय 4	:	व्यावसायिक सेवाएँ	92-129
अध्याय 5	:	व्यवसाय की उभरती पद्धतियाँ	130-159
अध्याय 6	:	व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व एवं व्यावसायिक नैतिकता	160-180
भाग 2	**:**	**व्यावसायिक संगठन, वित्त एवं व्यापार**	**181-333**
अध्याय 7	:	कंपनी निर्माण	182-202
अध्याय 8	:	व्यावसायिक वित्त के स्रोत	203-230
अध्याय 9	:	लघु व्यवसाय एवं उद्यमिता	231-255
अध्याय 10	:	आंतरिक व्यापार	256-288
अध्याय 11	:	अंतर्राष्ट्रीय व्यापार	289-337
फॉर्म नं. आई.एन.सी.-1			338-342

भाग-1

व्यवसाय के आधार

11109CH01

अध्याय 1

व्यवसाय, व्यापार और वाणिज्य

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आपः

- ऐतिहासिक अतीत में व्यापार और वाणिज्य के विकास की सहराहना कर सकेंगे;
- व्यापार और वाणिज्य में स्वदेशी बैंकिंग प्रणाली का योगदान समझ सकेंगे;
- व्यवसाय की अवधारणा और उद्देश्यों को समझा सकेंगे;
- उद्योगों के प्रकारों की चर्चा करेंगे;
- वाणिज्य से संबंधित गतिविधियाँ समझाएँगे;
- व्यवसायिक जोखिमों की प्रकृति और उनके कारणों का वर्णन करेंगे; तथा
- व्यवसाय प्रारंभ करते समय विचारणीय बुनियादी घटकों की चर्चा करेंगें।

इमरान, मनप्रीत, जोसेफ और प्रियंका कक्षा दस में सहपाठी रहे हैं। परीक्षा समाप्त होने पर, वे अपनी मित्र रुचिका के घर पर मिले! वे अपने परीक्षा दिनों के अनुभवों पर चर्चा ही कर रहे थे, कि रुचिका के पिता रघुराज चौधरी ने बीच में आकर उनके हाल-चाल पूछे। उन्होंने उनके करियर की योजनाओं के बारे में भी पूछा लेकिन किसी के पास कोई निश्चित जवाब नहीं था। रघुराज (जो स्वयं एक सफल व्यवसायी हैं), ने व्यवसाय को करियर का एक अवसर बताया। जोसेफ इस विचार से उत्तेजित हो गया और बोला, 'हाँ, बहुत सारा पैसा कमाने के लिए व्यवसाय वास्तव में बहुत अच्छा है।' रघुराज ने उन्हें बताया कि व्यवसाय से केवल पैसा ही नहीं, बल्कि और भी बहुत कुछ है। उन्होंने कहा, व्यावसायिक गतिविधियाँ किसी भी देश में संवृद्धि और विकास को आगे ब ढ़ाती हैं। उन्होंने उन्हें आगे बताया कि व्यावसायिक गतिविधियों की जड़ों को प्राचीन काल में भी देखा जा सकता है कि कैसे व्यापार भारतीय उप-महाद्वीप की समृद्धि में मदद करता है। प्रियंका बोली कि उन्होंने अपनी इतिहास की पाठ्यपुस्तक में 'रेशमी मार्ग' के बारे में पढ़ा हैं। रघुराज फिर अपनी दैनिक गतिविधियों में व्यस्त हो जाते हैं। मगर, इन चार सहपाठियों ने सवाल उठाने प्रारम्भ कर दिये। चारों सहपाठियों का वार्तालाप इसी बात पर फोकस था कि प्राचीनकाल में व्यापारिक गतिविधियाँ कैसे होती थी। व्यापारिक गतिविधियों की जड़ें कितनी दूर तक देखी जा सकती हैं? भारतीय उप-महाद्वीप को उस समय के यात्रियों ने 'स्वर्ण भारत और स्वर्णद्वीप' क्यों कहा? किस कारण से कोलम्बस और वास्को-डी-गामा भारत की खोज के लिए निकले? उन्होंने व्यवसाय की प्रकृति, लक्ष्य, विकास और इस प्रकार के अनेक प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए अपने विद्यालय के वाणिज्य शिक्षक से मिलने का निश्चय किया।

1.1 विषय-प्रवेश

सभी मनुष्यों को, चाहे वे कहीं भी हों, अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुओं और सेवाओं की आवश्यकता होती है। वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति की इस आवश्यकता ने लोगों को दूसरों की ज़रूरत के अनुसार उत्पादन और विक्रय की गतिविधियों हेतु प्रेरित किया। सभी आधुनिक चिंतनशील सभ्यताओं में, व्यवसाय एक प्रमुख आर्थिक गतिविधि है, क्योंकि यह लोगों द्वारा आपेक्षित वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन और विक्रय से जुड़ी है। अधिकतम व्यावसायिक गतिविधियों का लक्ष्य लोगों की वस्तुओं और सेवाओं की मांग को पूरा करके धन अर्जित करना होता है। व्यवसाय हमारे जीवन का केंद्र है। यद्यपि, आधुनिक समाज में हमारा जीवन अनेक अन्य संस्थाओं, जैसे-स्कूल, कॉलेज, चिकित्सालय, राजनैतिक पार्टियों, और धार्मिक निकायों से प्रभावित होता है। व्यवसाय का हमारे दैनिक जीवन पर बड़ा प्रभाव है इसलिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि हम व्यवसाय की आवधारणा, प्रकृति और उद्देश्यों को समझें।

अध्याय दो खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड प्राचीन काल में व्यापार और वाणिज्य के इतिहास को बताता है तथा द्वितीय खण्ड व्यवसाय की आवधारण, प्रकृति और उद्देश्यों की विवेचना करता है।

खण्ड-1

व्यापार और वाणिज्य का इतिहास

किसी क्षेत्र का आर्थिक एवं वाणिज्यिक विकास उसके प्राकृतिक परिवेश पर निर्भर करता है। यह भारतीय उप-महाद्वीप, जिसका विस्तार उत्तर में हिमालय और दक्षिण में हिन्द महासागर और बंगाल की खाड़ी तक है, के लिए भी सत्य है। व्यावसायिक मार्ग, जिन्हें लोकप्रिय रूप से 'रेशमी राह' कहा जाता है, सामान्य रूप में सम्पूर्ण विश्व और विशेष रूप से एशिया में आस-पास के विदेशी राज्यों और साम्राज्यों से व्यावसायिक और राजनैतिक सम्पर्क स्थापित करने में मदद करते हैं। भारत से मसाले के व्यापार में उपयोग किये गये पूर्व और पश्चिम को जोड़ने वाले समुद्री मार्गों को 'मसाला मार्ग' के रूप में जाना जाता था। प्राचीन भारत में इन्हीं मार्गों के कारण प्रमुख राज्य, महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र और औद्योगिक क्षेत्र निखरे, जिन्होंने बदले में घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की प्रगति को सुगम बनाया।

प्राचीन काल में, व्यापार और वाणिज्य ने भारतीय उप-महाद्वीप को आर्थिक जगत में एक महान निर्यातक केंद्र बनाने में महत्वपूर्ण भमिका अदा की। परातात्विक प्रमाणों ने प्रदर्शित किया है कि प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार भूमिगत और सामुद्रिक अंतर्देशीय व विदेशी व्यापार और वाणिज्य ही था। ईसा पूर्व तीसरी सहस्त्राब्दी में व्यापारिक केन्द्र भी आये, जिसके परिणामस्वरूप व्यापारियों और व्यापारिक समुदायों के वर्चस्व वाले भारतीय समाज का निर्माण हुआ। प्राचीन काल के दौरान राजनैतिक अर्थव्यवस्था और सैनिक सुरक्षा में अधिकांश संयुक्त भारतीय उप-महाद्वीप और व्यापार नियमों को ध्यान में लाकर योजनाएँ बनाई गई थी। इससे एक सामान्य आर्थिक-व्यवस्था बनी, मापन में एकरूपता आई तथा मुद्रा के रूप में सिक्कों के उपयोग ने व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ाया व बाज़ार को विस्तारित किया।

1.2 स्वदेशी बैंकिंग प्रणाली

आर्थिक जीवन में प्रगति के साथ, मुद्रा के रूप में अन्य वस्तुओं के उपयोग को धातुओं ने अपनी विभाजकता और स्थायित्व के गुणों के कारण प्रतिस्थापित किया। जैसे ही मुद्रा ने मापन की इकाई और विनिमय के माध्यम के रूप में काम किया, धात्विक मुद्रा की शुरुआत हुई और इसके उपयोग से आर्थिक गतिविधियों में तेजी आई।

हुण्डी और चित्ति जैसे दस्तावेज़ों का उपयोग एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को द्रव्य के लेन-देन में होने लगा। प्रमुख विनिमय के साधन के रूप में उप-महाद्वीप में हुण्डी ने काम किया जो स्थानीय भाषा में थी और अनुबंध के द्वारा (1) बिना शर्त द्रव्य के भुगतान का वचन या आदेश अधिपत्र (वारण्ट) (2) वैध विनिमय द्वारा हस्तांतरण से परिवर्तनीय थी।

निम्नलिखित प्रकार की हुण्डियाँ प्रमुख रूप से प्रचलन में थीं		
हुण्डी का नाम	**व्यापक वर्गीकरण**	**हुण्डी का कार्य**
धनीजोग	दर्शनी	किसी भी व्यक्ति को देय - भुगतान पाने वाले पर कोई दायित्व नहीं।
शाहजोग	दर्शनी	विशिष्ट व्यक्ति को देय (कोई सम्माननीय) भुगतान पाने वाले पर दायित्व।
फमान जोग	दर्शनी	हुण्डी आदेशित व्यक्ति को देय।
देखनहार	दर्शनी	वाहक या प्रस्तुतकर्ता को देय।
फरमान जोग	मुद्दती	हुण्डी निश्चित अवधि के बाद आदेशित व्यक्ति को देय।
जोखिमी	मुद्दती	प्रेषित माल पर आहरित। यदि माल मार्ग में खो जाये तो आहर्ता या धारक लागत वहन करता है और आहर्यी का कोई दायित्व नहीं होता।

स्वदेशी बैंकिंग प्रणाली ने मुद्रा उधार एवं साख पत्रों के माध्यम से घरेलू और विदेशी व्यापार के वित्तपोषण में महत्वपूर्ण योगदान किया। बैंकिंग के विकास के साथ लोगों ने बैंकरों के रूप में काम करने वाले व्यक्तियों या सेठों के साथ कीमती धातुओं को जमा करना शुरू किया और यह पैसा निर्माताओं को अधिक वस्तुओं का उत्पादन करने हेतु संसाधनों की आपूर्ति करने के लिए एक साधन बन गया।

कृषि और पशुपालन प्राचीन लोगों के आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण घटक थे। अनुकूल जलवायु परिस्थितियों के कारण वे एक साल में दो या कभी-कभी तीन-तीन फसलें भी उगा लेते थे। इसके अतिरिक्त सूती वस्त्रों की बुनाई, रंगाई, बर्तन, मिट्टी के बर्तन बनाना, कला और हस्तशिल्प, मूर्तिकला, कुटीर उद्योग, राजगीरी, यातायात-साधन (गाड़ियाँ, नौकाओं और जहा.जों) का निर्माण आदि से उन्हें अतिरिक्त आय हो जाती थी जिससे वे बचत और आगे निवेश कर पाते थे। प्रसिद्ध वर्कशाप (कारखाने) थे, जहाँ कुशल कारीगर काम करते थे और कच्चे माल को निर्मित माल में परिवर्तित करते थे, जिसकी बहुत मांग थी। परिवार-आधारित प्रशिक्षुता प्रणाली प्रचलन में थी और उसका व्यापार हेतु विशिष्ट कौशल प्राप्त करने में विधिवत पालन किया जाता था। कारीगर, शिल्पकार और विभिन्न प्रकार के व्यवसायों के कुशल श्रमिक कौशल और ज्ञान को विकसित कर उसे एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी को प्रदान करते जाते थे। इससे व्यापार और वाणिज्य के वित्तपोषण हेतु वाणिज्यिक और औद्योगिक बैंक बने तथा कृषकों को अल्प और दीर्घकालीन ऋण देने के लिए कृषि-बैंक अस्तित्व में आये।

1.2.1 मध्यस्थों का उदय

व्यापार के विकास में मध्यस्थों की प्रमुख भूमिका रही। उन्होंने व्यापार और विशेषकर विदेशी व्यापार का जोखिम वहन करने की

ज़िम्मेदारी लेकर निर्माताओं को वित्तीय सुरक्षा प्रदान की। इसमें कमीशन एजेन्ट, दलाल और फुटकर दोनों प्रकार के माल के वितरक शामिल थे। विदेशी व्यापार बढ़ता हुआ एशिया में बड़ी मात्रा में सोना-चांदी और बहुमूल्य धातुएँ लाया और इसकी बड़ी राशि भारत की ओर रही।

'जगतसेठ' जैसी संस्था का भी विकास हुआ और मुगलकाल और ईस्ट इंडिया के दिनों में उनका बहुत प्रभाव रहा। बैंकरों ने न्यासों (ट्रस्टी) और अक्षयनिधि (एण्डॉमेंट) के निष्पादन के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया। विदेशी व्यापार का वित्तपोषण ऋण से होता था। यद्यपि लम्बी यात्राओं में विशाल जोखिम को देखते हुए ब्याज की दर को उच्च रखा गया था।

उधार सौदों के अभ्युदय तथा ऋण व अग्रिमों की उपलब्धता ने गतिविधियों को बढ़ाया। भारतीय उप-महाद्वीप ने अनुकूल व्यापार संतुलन के फल का लाभ आनन्द लिया, जिसमें निर्यात बड़े अन्तर से आयात से अधिक होते थे। स्वदेशी बैंकिंग प्रणाली ने निर्माताओं, व्यापारियों और सौदागरों को विस्तार और विकास के लिए अधिक पूंजी कोषों से लाभान्वित किया।

1.3 परिवहन

प्राचीन काल में जल और स्थल परिवहन लोकप्रिय थे। व्यापार .जमीन और समुद्र दोनों ही माध्यमों से होता था। संचार के साधन के रूप में सड़कें विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया, खासतौर पर स्थल और अन्तर्देशीय व्यापार में बुनियादी महत्वपूर्ण स्थान रखती थीं। उत्तरी सड़क मार्ग मूल रूप में असम से तक्षशिला तक फैला माना जाता था। दक्षिण में भी पूर्व से पश्चिम तक फैले व्यापारिक मार्ग संरचनात्मक रूप से व्यापक थे तथा गति और सुरक्षा के लिए भी उपयुक्त थे।

सामुद्रिक व्यापार, वैश्विक व्यापार नेटवर्क की एक अन्य महत्वपूर्ण शाखा थी। मालाबार तट, जिस पर मुजीरिस स्थित है, का अंतर्राष्ट्रीय सामुद्रिक व्यापार में पुराना इतिहास रहा है, जो रोमन साम्राज्य के युग तक जाता है। काली मिर्च विशेष रूप से रोमन साम्राज्य में मूल्यवान थी और 'काले सोने' के नाम जानी जाती थी। सदियों तक, इस व्यापार के लिए मार्ग पर हावी होने के लिए विभिन्न साम्राज्यों और व्यापार शक्तियों के बीच प्रतिद्वंद्विता और संघर्ष का कारण बनी रही। इन मसालों के लिए ही भारत के वैकल्पिक मार्ग की तलाश में पंद्रहवी शताब्दी के अंतिम वर्षों में कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की और 1498 में मालाबार के किनारे वास्को-डी-गामा भी आया।

कालीकट ऐसा व्यस्ततम विक्रय-केंद्र था कि मध्य-पूर्व से लोबार (आवश्यक तेल) और गंधार (परफ्यूम में उपयोगी सुगंधित रेजिन, दवाइयाँ) लेने के लिए यहाँ चीनी जहाज़ भी आते थे और साथ ही साथ भारत से काली मिर्च, हीरे, मोती और कपास भी ले जाते थे। पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में दक्षिणी या कोरोमण्डल तट पर पुलिकट प्रमुख बन्दरगाह था। पुलिकट बन्दरगाह से दक्षिण-पूर्व एशिया के लिए कपड़ा प्रमुख निर्यात था।

1.4 मज़बूत व्यापारी समुदाय

देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग समुदाय व्यवसाय में आये। पंजाबी और मुल्तानी व्यापारियों ने उत्तरी क्षेत्र में कारोबार संभाला,

जबकि भट्ट ने गुजरात और राजस्थान के राज्यों में व्यापार का प्रबन्धन किया। पश्चिमी भारत में इन समूहों को 'महाजन' कहा गया। अहमदाबाद जैसे शहरी क्षेत्रों में व्यवसायियों का सामूहिक रूप से मुखिया 'नगरसेठ' के नाम से जाना जाता था। अन्य शहरी समूहों में व्यावसायिक वर्ग, जैसे-हकीम और वैद्य (चिकित्सक), वकील (विधिवक्ता), पंडित या मुल्ला (शिक्षक), चित्रकार, संगीतकार, सुलेखक आदि शामिल थे।

1.4.1 मर्चेन्ट कॉरपोरेशन

व्यापारिक समुदाय ने गिल्ड से अपनी प्रतिष्ठा और ताकत प्राप्त की, जो अपने हितों की रक्षा के लिए स्वायत्त निगम थे। ये निगम औपचारिक रूप से संगठित हुए, अपने स्वयं के सदस्यों के लिए नियम और व्यावसायिक आचार संहिता बनाई जिसे राजा भी स्वीकारते और सम्मान करते थे। उद्योग और व्यापार पर कर भी राजस्व के प्रमुख साधन थे। व्यापारियों को चुंगी करों का भुगतान करना होता था, जो अधिकांश प्रमुख वस्तुओं पर अलग-अलग दर पर लगाए जाते थे। उनका भुगतान नगद या वस्तुओं के रूप में होता था।

वस्तुओं के अनुसार सीमा शुल्कों में भिन्नता पाई जाती थी। सीमा शुल्क दरें विभिन्न प्रान्तों में अलग-अलग थीं। नौका-कर आय का एक अन्य स्रोत था। इसका भुगतान यात्रियों, सामान, मवेशियों और गाड़ियों के लिए किया जाता था। श्रम-कर वसूलने का अधिकार आमतौर पर स्थानिकों को हस्तांतरित किया गया था।

रजा या कर संग्रहकों से गिल्ड प्रमुख का सीधे व्यवहार हुआ करता था तथा वे अपने साथी व्यापारियों की तरफ से निश्चित राशि पर मार्केट टोल का समाधान कर लिया करते थे। गिल्ड व्यवसायी धार्मिक हितों के संरक्षक के रूप में भी कार्य करते थे। अपने सदस्यों पर निगम-कर लगाकर उन्होंने मन्दिर निर्माण का कार्य भी किया। इस प्रकार, वाणिज्यिक गतिविधियों ने बड़े व्यापारियों को समाज में सत्ता हासिल करने में सक्षम बनाया।

1.4.2 प्रमुख व्यापारिक केंद्र

सभी प्रकार के नगर जैसे कि बंदरगाह-कस्बे, निर्माणी नगर, व्यापारिक नगर, पवित्र और तीर्थयात्रा आदि के शहर थे। उनका अस्तित्व व्यापारी समुदाय और पेशेवर वर्गों की समृद्धि का सूचक है।

प्राचीन भारत में निम्नलिखित प्रमुख व्यापार-केंद्र थे-

1. **पाटलीपुत्र–** आजकल पटना के नाम से जाना जाता है। यह केवल व्यापारिक नगर ही नहीं था बल्कि निर्यातक केन्द्र भी था, विशेषकर नगीनों का।

2. **पेशावर–** यह घोड़ों के आयात और ऊन का एक प्रमुख निर्यातक केंद्र था। प्रथम शताब्दी ईसवी में इसका भारत, चीन और रोम के बीच वाणिज्यिक लेन-देनों में बहुत बड़ा हिस्सा था।

3. **तक्षशिला–** यह भारत और मध्य एशिया के बीच महत्वपूर्ण भूमि-मार्ग पर एक प्रमुख केंद्र के रूप में कार्य करता था। यह वित्तीय वाणिज्यिक बैंकों का शहर भी था। बौद्धकाल में शहर को एक महत्वपूर्ण विद्वता केंद्र का स्थान प्राप्त था। प्रसिद्ध तक्षशिला विश्वविद्यालय यहाँ विकसित हुआ, जिसमें चीन, दक्षिण-पूर्व एशिया और मध्य एशिया से अध्येता

आते थे।

4. **इन्द्रप्रस्थ-** यह शाही सड़क पर वाणिज्यिक जंक्शन था जहाँ पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर में जाने वाले अधिकांश मार्गों का एकीकरण हुआ था।

5. **मथुरा–** यहाँ लोगों ने वाणिज्य पर काम किया तथा यह व्यापार का एक विक्रय केंद्र था। दक्षिण भारत को जाने वाले कई मार्ग मथुरा और भरूच से होकर जाते थे।

6. **वाराणसी–** यह गंगा मार्ग और पूर्व के साथ उत्तर को जोड़ने वाले मार्ग, दोनों पर स्थित होने से अच्छे स्थान पर था। यह कपड़ा उद्योग के एक बड़े केंद्र के रूप में उभरा और सुन्दर सुनहरे रेशम के कपड़े और चन्दन की कारीगरी के लिए प्रसिद्ध हो गया। यह तक्षशिला, भरूच और काजीवरम से भी जुड़ता था।

7. **मिथिला–** मिथिला के व्यापारी बंगाल की खाड़ी में नाव से समुद्र पार करके दक्षिण चीन सागर एवं जावा-सुमात्रा और बोर्निया के द्वीपों पर बंदरगाहों के साथ कारोबार करते थे। मिथिला ने प्रथम शताब्दी ईसवी के शुरुआती वर्षों में दक्षिण चीन में और विशेष रूप से यूनान में व्यापारिक कालोनियों की स्थापना की।

8. **उज्जैन–** सुमेलानी व कार्नेलियन पत्थर, मलमल और मालों का कपड़ा उज्जैन से विभिन्न केंद्रों में निर्यात किया जाता था। तक्षशिला और पेशावर के थल मार्गों से इसके पश्चिमी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध भी थे।

9. **सूरत–** मुगल काल में यह पश्चिमी व्यापार का विक्रय केंद्र था। सूरत का कपड़ा जरी के सुनहरे बॉर्डर के लिए मशहूर था। यह उल्लेखनीय है कि सूरत की हुण्डियाँ मिस्र, ईरान और बेलि्.जयम के दूरदराज के बाजारों में भी चलती थीं।

10. **कांची–** इसे आजकल कांजीवरम के नाम से जाना जाता है। यहाँ पर चीनी लोग विदेशी जहाज़ों में मोती, काँच और दुर्लभ पत्थरों को खरीदने के लिए आया करते थे और बदले में सोना और रेशम बेच जाते थे।

11. **मदुरै–** यह मन्नार की खाड़ी के मोती मत्स्य पालन को नियंत्रित करता था और मोती, गहने और फैन्सी कपड़े का एक प्रमुख निर्यातक केंद्र था। इसने सामुद्रिक व्यापार चलाने के लिए विदेशी व्यापारियों, विशेषकर रोमनों को आकर्षित किया।

12. **भरूच–** यह पश्चिमी भारत का महानतम वाणिज्यिक शहर था। यह नर्मदा नदी पर स्थित था तथा सड़क मार्ग से सभी महत्वपूर्ण मंडियों से जुड़ा हुआ था।

13. **कावेरीपट्ट–** इसे कावेरीपटनम् के नाम से भी जाना जाता था। शहर के रूप में यह अपनी बनावट में काफी वैज्ञानिक था तथा माल की ढुलाई इत्यादि के लिए उत्तम सुविधाएँ प्रदान करने के लिए इसका उपयोग किया जाता था। विदेशी व्यापारी इस शहर में अपने मुख्यालय रखते थे। मलेशिया, इंडोनेशिया, चीन और सुदूर पूर्व से व्यापार करने के लिए यह सुविधाजनक स्थान था। यह सौन्दर्य प्रसाधन, इत्र, पाउडर,

रेशम, ऊन, कपास, मोती, मुगा, सोने और कीमती नगीनों के लिए व्यापार का केंद्र था। यह नगर जहाज़ निर्माण के लिए भी प्रसिद्ध था।

14.ताम्रलिप्ति- यह पश्चिमी और सुदूर पूर्व के साथ समुद्री और थलमार्गों से जुड़े सबसे बड़े बन्दरगाहों में से एक था। यह सड़क मार्ग से बनारस और तक्षशिला से तथा सुसा के माध्यम से सुदूर देशों के साथ कालासागर तक जुड़ा हुआ था।

1.4.3 प्रमुख निर्यात और आयात

निर्यात में मसाले, गेहूँ, चीनी, नील, अफीम, तिल का तेल, कपास, रेशम, तोते, जीवित मवेशी, और पशु-उत्पाद-खालें, फर, सींग, चमड़ा, कछुआ-कवच, मोती, नीलमणि, चमकीले पत्थर, क्रिस्टल, लैपेस-लाजुली, ग्रेनाइट, फिरोजा और तांबा आदि शामिल थे।

आयातों में घोड़े, पशु-उत्पाद, चीनी, सिल्क, फ्लेक्स और लेनिन, मणि, सोना, चांदी, टिन, तांबा, सीसा, मणिक, पुखराज, मूँगा, काँच और एम्बर शामिल थे।

1.5 भारतीय उप-महाद्वीप की विश्व अर्थव्यवस्था में स्थिति (1 ई. से 1191 ई. तक)

पहली और सत्रहवीं शताब्दी के बीच, भारतवर्ष के प्राचीन और मध्ययुगीन दुनिया की लगभग तिहाई या चौथाई दौलत को नियन्त्रित करने वाली सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होने का अनुमान था। मेगस्तनीज, फाह्यान, ह्वेन सांग, अलबरूनी (11वीं शताब्दी), इब्नबतूता (11वीं शताब्दी), फ्रांसीसी फ्रेंकोइस (17वीं शताब्दी) और अन्य लोग जो विभिन्न अंतरालों पर आए, जिन्होंने देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, आर्थिक,

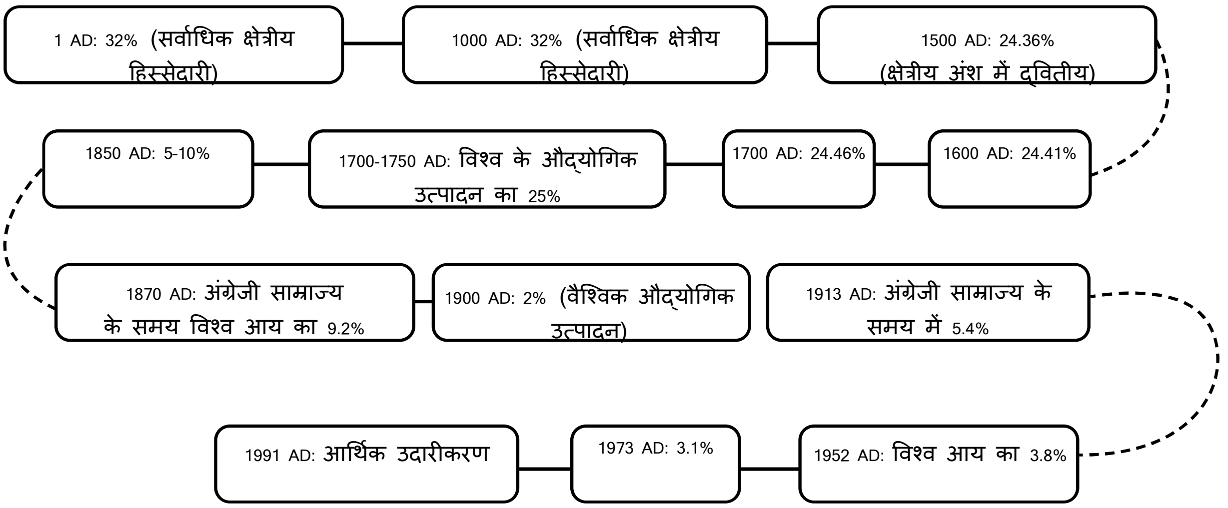

स्रोतः एंगस मैडिसन (2001 और 2003), दी वर्ल्ड इकोनामी-द मिलेनियल परस्पेक्टिव, ओ.ई.सी.डी., पेरिस; एंगस मैडिसन, दी वर्ल्ड इकोनामी, हिस्टोरीकल स्टेटिस्टिक्स।

वाणिज्यिक और राजनैतिक संरचना और समृद्धि की बात की और अपने लेखन में इसे स्वर्णभूमि और स्वर्णद्वीप कहा।

पूर्व-औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था को समृद्धि का स्वर्णयुग माना जाता है और इसी ने यूरोपियों को खोज की महान यात्रा हेतु प्रेरित किया। प्रारम्भ में वे लूटने के लिए आये, किंतु शीघ्र ही उन्हें सोने और चांदी के बदले व्यापार के पुरस्कार का एहसास हुआ। बढ़ते वाणिज्यिक क्षेत्र के बावजूद, यह स्पष्ट है कि 18वीं सदी का भारत प्रौद्योगिकी, नवाचार और विचारों में पश्चिमी यूरोप के पीछे था।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के बढ़ते नियन्त्रण से आज़ादी में कमी आई और कोई कृषि और वैज्ञानिक क्रान्ति नहीं हुई, जनसंख्या वृद्धि, शिक्षा की आमजन तक सीमित पहुँच और मानवीय कौशल के स्थान पर मशीनों के प्राथमिकता ने मिलकर भार को एक ऐसा देश बना दिया, जो समृद्ध था, किन्तु इसके निवासी गरीब थे।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य में ब्रिटिश शाही साम्राज्य का उत्थान आरंभ हुआ। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपने नियमों के अधीन प्रान्तों द्वारा उत्पन्न राजस्व का उपयोग भारतीय कच्चे माल, मसालों और वस्तुओं को खरीदने में किया। अतः विदेशी व्यापार से होने वाले सोने-चाँदी और बहुमूल्य धातुओं का सतत् प्रवाह रुक गया। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था की दशा बदल गई। जो तैयार माल का निर्यातक था, वह कच्चे माल का निर्यातक और विनिर्मित माल का खरीददार बन गया।

1.5.1 भारत में पुनरौद्योगीकरण

आज़ादी के बाद, अर्थव्यवस्था के पुनर्निमाण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई और भारत में केंद्रीकृत नियोजन की शुरुआत हुई। 1952 में पहली पंचवर्षीय योजना कार्यान्यवन में आई। योजनाओं में आधुनिक उद्योगों, आधुनिक प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक संस्थानों, अंतरिक्ष और परमाणु कार्यक्रमों की स्थापना को महत्व दिया गया। इन प्रयासों के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था तेजी से विकसित नहीं हो सकी। पूंजी विनिर्माण में कमी, जनसंख्या में वृद्धि, रक्षा पर भारी व्यय, अपर्याप्त बुनियादी संरचना इसके प्रमुख कारण थे। परिणामस्वरूप, भारत विदेशी स्रोतों से उधार लेने पर अत्यधिक निर्भर था और अन्त में 1991 में आर्थिक उदारीकरण पर सहमत हुआ।

भारतीय अर्थव्यवस्था आज दुनिया की सबसे तेज़ी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है और एक पसंदीदा प्रत्यक्ष विदेशी विनिमय निवेश का गन्तव्य है। बढ़ती आय, बचत, निवेश के अवसर, घरेलू खपत में बढ़ोत्तरी और युवा जनसंख्या मिलकर आने वाले दशकों में विकास सुनिश्चित करेंगे। उच्च विकास क्षेत्रों की पहचान की गई है, जोकि दुनिया भर में तेज़ी से बढ़ रहे हैं और भारत सरकार की हाल की पहलों, जैसे–'मेक इन इण्डिया', 'स्किल इण्डिया', 'डिजिटल इण्डिया' और भारत की नवनिर्मित विदेश व्यापार

1850 के बाद भारतीय उद्यमियों ने अपनी आधुनिक कपड़ा मिलों की स्थापना प्रारम्भ की और धीरे-धीरे घरेलू बाज़ार का पुनर्ग्रहण करना शुरू किया। 1896 में भारतीय मिल कपड़ा उपभोग के 8 प्रतिशत की पूर्ति करते थे, 1913 में 20 प्रतिशत, 1936 में 62 प्रतिशत और 1945 में 76 प्रतिशत। इस प्रकार, 1913-1938 के बीच भारतीय निर्माताओं का उत्पादन 5.6 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ा, जो वैश्विक प्रतिशत 3.3 से अधिक था। अंततः ब्रिटिश सरकार ने 1920 के दशक से टैरिफ संरक्षण प्रदान किया जिससे उद्यमियों को विस्तार और विविधता लाने में मदद मिली।

1947 में आज़ादी में समय तक, भारतीय उद्यमी काफी मज़बूत थे और जाने वाले अंग्रेज़ों के कारोबार खरीदने की स्थिति में थे। भारत के सकल घरेलू उत्पाद में उद्योगों का हिस्सा, 1913 में 3.8 से बढ़कर 1947 में 7.5 प्रतिशत, अर्थात् दो-गुना हो गया और निर्यात में विनिर्माताओं की हिस्सेदारी 1913 और 1947 के वर्षों में क्रमशः 22.4 से बढ़कर 30 प्रतिशत हो गई।

स्रोतः बी.आर. तोमलीसन, दी इकॉनोमी ऑफ इंडिया 1870-1970, द न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, वॉल्यूम 3.3. द कैम्बिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1996.

नीति, 2015-20 से भारतीय अर्थव्यवस्था को निर्यात व आयात और व्यापार सन्तुलन के मामले में मदद मिलने की उम्मीद है।

खण्ड-2

व्यवसाय की प्रकृति और अवधारणा

1.6 व्यवसाय की अवधारणा

व्यवसाय शब्द की व्युत्पत्ति व्यस्त रहने से हुई है। अतः व्यवसाय का अर्थ व्यस्त रहना है। तथापि विशेष संदर्भ में, व्यवसाय का अर्थ ऐसे किसी भी धंधे से है, जिसमें लाभार्जन हेतु व्यक्ति विभिन्न प्रकार की क्रियाओं में नियमित रूप में संलग्न रहते हैं। वे क्रियाएँ अन्य लोगों की आवश्यकताओं की संतुष्टि हेतु वस्तुओं के उत्पादन, क्रय-विक्रय या विनिमय और सेवाओं की आपूर्ति से संबंधित हो सकती हैं।

प्रत्येक समाज में मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि हेतु अनेकों प्रकार की क्रियाएँ करते हैं। ये क्रियाएँ विस्तृत रूप से दो समूहों में वर्गीकृत की जा सकती हैं- आर्थिक एवं अनार्थिक। आर्थिक क्रियाएँ, वे क्रियाएँ हैं जिनके द्वारा हम अपने जीवन यापन के लिए धन कमाते हैं जबकि अनार्थिक क्रियाएँ प्रेमवश, सहानुभूति के लिए, भावुकतावश या देशभक्ति आदि के लिए की जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक श्रमिक द्वारा फैक्टरी में काम करना, एक डॉक्टर द्वारा अपने क्लीनिक में कार्य करना, एक प्रबंधक द्वारा अपने कार्यालय में काम करना तथा एक शिक्षक का विद्यालय में अध्यापन कार्य करना आदि उदाहरणों में, सभी अपनी जीविका उपार्जन के लिए कार्य कर रहे हैं। अतः ये सभी आर्थिक क्रियाओं में संलग्न हैं। दूसरी ओर एक गृहणी द्वारा अपने परिवार के लिए भोजन पकाना या एक वृद्ध व्यक्ति को सड़क पार कराने में एक बालक द्वारा सहायता करना अनार्थिक क्रियाएँ हैं क्योंकि ये क्रियाएँ या तो प्रेमवश या सहानुभूतिवश की जा रही हैं।

स्वयं करके देखें-

क्या निम्नलिखित एक आर्थिक क्रिया है–

1. एक कृषक अपने उपभोग हेतु चावल उगाता है।	हाँ/नहीं
2. एक कारखाने का स्वामी बाज़ार में विक्रय हेतु बस्तों का उत्पादन करता है।	हाँ/नहीं
3. एक व्यक्ति ट्रैफिक चौराहे पर भीख माँगने में व्यस्त है।	हाँ/नहीं
4. नियोक्ता के मकान पर घरेलू कार्य कर रहे घरेलू सहायक की सेवाएँ।	हाँ/नहीं
5. घर पर घरेलू कार्य कर रही गृहणी की सेवाएँ।	हाँ/नहीं

आर्थिक क्रियाओं को भी आगे तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे- व्यवसाय, धंधा या रोज़गार। अतः व्यवसाय को एक आर्थिक क्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें वस्तुओं का उत्पादन व विक्रय तथा सेवाओं को प्रदान करना सम्मिलित है। उपरोक्त क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य समाज में मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करके धन कमाना है।

1.6.1 व्यावसायिक क्रियाओं की विशेषताएँ

समाज में व्यावसायिक क्रियाएँ अन्य क्रियाओं से किस प्रकार भिन्न हैं, यह समझने के लिए व्यवसाय की प्रकृति अथवा इसके आधारभूत लक्षणों को इसकी अद्वितीय विशेषताओं के संदर्भ में स्पष्ट करना चाहिए, जो निम्नलिखित हैं-

(क) **यह एक आर्थिक क्रिया है–** व्यवसाय को एक आर्थिक क्रिया समझा जाता है क्योंकि यह लाभ कमाने के उद्देश्य से या जीवन यापन के लिए किया जाता है, न कि प्रेम के कारण अथवा मोह, सहानुभूति या किसी अन्य भावुकता के कारण।

(ख) **वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन अथवा उनकी प्राप्ति–** वस्तुओं को उपभोक्ताओं के उपभोग के लिए सुलभ कराने से पूर्व व्यावसायिक इकाइयों द्वारा या तो इनका उत्पादन किया जाता है या फिर इनका क्रय किया जाता है। अतः प्रत्येक व्यावसायिक इकाई जिन वस्तुओं में व्यापार करती है, उनका या तो स्वयं उत्पादन करती है या आपूर्ति करने के लिए उत्पादकों से प्राप्त करती है। वस्तुएँ या तो उपभोक्ता वस्तुएँ हो सकती हैं, जो प्रतिदिन काम आती हैं, जैसे- चीनी, पेन, नोट बुक या पूंजीगत वस्तुएँ, जैसे- मशीन, फर्नीचर आदि। सेवाओं में यातायात, बैंक तथा विद्युत की आपूर्ति आदि को सम्मिलित किया जा सकता है, जो उपभोक्ताओं की सुविधाओं के रूप में सुलभ करायी जाती हैं।

(ग) **मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वस्तुओं और सेवाओं का विक्रय या विनिमय–** प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से व्यवसाय में मूल्य के बदले वस्तुओं

और सेवाओं का हस्तांतरण व विनिमय सम्मिलित है। यदि वस्तुओं का उत्पादन, उत्पादक द्वारा स्वयं के उपभोग के लिए किया जाता है, तो ऐसी क्रिया व्यावसायिक क्रिया नहीं कहलाती है। घर में परिवार के सदस्यों के लिए भोजन पकाना व्यवसाय नहीं हैं लेकिन किसी रेस्तराँ में अन्य व्यक्तियों को बेचने के लिए भोजन पकाना व्यवसाय है। इस प्रकार व्यवसाय की यह एक आवश्यक विशेषता है कि वस्तुओं या सेवाओं का क्रय-विक्रय या विनिमय होना चाहिए।

(घ) **नियमित रूप से वस्तुओं और सेवाओं का विनिमय–** व्यवसाय की एक विशेषता यह है कि इसमें नियमित रूप से वस्तुओं और सेवाओं का लेन-देन होता है। एक बार का क्रय या विक्रय साधारणतः व्यवसाय नहीं कहलाता। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति अपना घरेलू रेडियो चाहे लाभ पर ही बेचे मगर यह व्यावसायिक क्रिया नहीं कहलाएगी, लेकिन यदि वह अपनी दुकान पर या घर से नियमित रूप से रेडियो बेचता है तो यह एक व्यावसायिक क्रिया कहलाएगी।

(ङ) **लाभ अर्जन–** प्रत्येक व्यावसायिक क्रिया लाभ के रूप में आय अर्जित करने के उद्देश्य से की जाती है। बिना लाभ कमाए कोई भी व्यवसाय लंबे समय तक कार्यरत नहीं रह सकता। इसीलिए व्यवसायकर्ता विक्रय की मात्रा बढ़ाकर या लागत कम करके अधिकतम लाभ कमाने का हरसंभव प्रयास करता है।

(च) **प्रतिफल की अनिश्चितता–** प्रतिफल की अनिश्चितता से तात्पर्य व्यावसायिक क्रियाओं के संचालन से एक निश्चित समय में होने वाले लाभ की अस्थिरता से है। प्रत्येक व्यवसाय में परिचालन हेतु कुछ धन (पूँजी) के विनियोग की आवश्यकता होती है। व्यवसाय में विनियोजित पूंजी पर लाभ पाने की आशा तो होती है, लेकिन यह निश्चित नहीं होता कि लाभ कितना होगा। बल्कि सतत् प्रयासों के बावजूद भी हानि की आशंका सदैव बनी ही रहती है।

(छ) **जोखिम के तत्त्व–** जोखिम एक अनिश्चितता है, जो व्यावसायिक हानि की ओर इंगित करती है, जिनका कारण कुछ प्रतिकूल अथवा अवांछित घटक होते हैं। जोखिमों का संबंध कुछ व्यावसायिक घटनाओं से है, जैसे- उपभोक्ताओं की पसंद या फैशन में परिवर्तन, उत्पादन विधियों में परिवर्तन, कार्यस्थल पर हड़ताल या तालेबंदी, बाज़ार-प्रतिस्पर्धा, आग, चोरी, दुर्घटनाएँ, प्राकृतिक आपदाएँ आदि। कोई भी व्यवसाय जोखिमों से अछूता नहीं रहता।

उद्यम स्तर पर व्यावसायिक कर्त्तव्य

व्यवसाय में निहित विभिन्न प्रकार के कार्यों को विभिन्न प्रकार के संगठनों द्वारा संपन्न किया जाता है, जिन्हें व्यावसायिक इकाई या फर्म कहा जाता है। व्यवसाय के संचालन हेतु उद्यम चार मुख्य प्रकार के काम करते हैं, ये हैं- वित्त व्यवस्था, उत्पादन, विपणन तथा मानव संसाधन प्रबंधन। वित्त व्यवस्था का संबंध, व्यवसाय के संचालन के लिए वित्त जुटाने तथा उसका सही उपयोग करने से है। उत्पादन का अर्थ कच्चे माल को निर्मित माल में परिवर्तित करने या सेवाओं को उत्पन्न करने से है। विपणन से तात्पर्य उन संपूर्ण क्रियाओं से है, जो वस्तुओं तथा सेवाओं के आदान-प्रदान में, उत्पादक से उन व्यक्तियों तक, उस स्थान व समय पर तथा उस कीमत पर उपलब्ध कराने से है जो वे चुकाने को तैयार हों एवं जिन्हें उनकी आवश्यकता हो। मानव संसाधन प्रबंधन उद्यम में विभिन्न प्रकार के कार्यों को पूरा करने का कौशल रखने वाले व्यक्तियों की उपलब्धता को सुनिश्चित करता है।

सारणी 1.1 व्यवसाय, पेशा तथा रोज़गार में तुलना

क्र.सं.	आधार	व्यवसाय	पेशा	रोज़गार
1.	स्थापना की विधि	उद्यमी का निर्णय तथा अन्य कानूनी औपचारिकताएँ, यदि आवश्यक हों	किसी व्यावसायिक संस्था की सदस्यता तथा व्यावहारिक योग्यता का प्रमाण-पत्र	नियुक्ति-पत्र तथा सेवा समझौता
2.	कार्य की प्रकृति	जनता की वस्तुओं तथा सेवाओं की सुलभता	व्यक्तिगत विशेषज्ञ सेवाएँ प्रदान करना	सेवा समझौता या सेवा के नियमों के अनुसार कार्य करना
3.	योग्यता	किसी न्यूनतम योग्यता की आवश्यकता नहीं	विशेष क्षेत्र में प्रशिक्षण तथा विशेष योग्यता (निपुणता) अति आवश्यक	नियोक्ता द्वारा निर्धारित योग्यता एवं प्रशिक्षण
4.	प्रतिफल	अर्जित लाभ	फीस	वेतन या मज़दूरी
5.	पूँजी निवेश	व्यवसाय की प्रकृति एवं आकार के अनुसार पूँजी निवेश आवश्यक	स्थापना के लिए सीमित पूँजी आवश्यक	पूंजी की आवश्यकता नहीं
6.	जोखिम	लाभ अनिश्चित तथा अनियमित जोखिम सदैव	फीस नियमित एवं निश्चित, कुछ जोखिम भी	निश्चित एवं नियमित वेतन, कोई जोखिम नहीं
7.	हित-हस्तांतरण	कुछ औपचारिकताओं के साथ हित-हस्तांतरण संभव	संभव नहीं	संभव नहीं
8.	आचार संहिता	कोई आचार संहिता निर्धारित नहीं	पेशेवर आचार संहिता का पालन आवश्यक	व्यवहार के लिए नियोक्ता द्वारा निर्धारित नियमों का पालन आवश्यक

1.6.2 व्यवसाय, पेशा तथा रोजगार में तुलना

जैसे पहले बताया जा चुका है कि आर्थिक क्रियाओं को तीन मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– व्यवसाय, पेशा, और रोज़गार। इन तीन वर्गों की भिन्नताओं को सारणी 1.1 में दर्शाया गया है।

1.7 व्यावसायिक क्रियाओं का वर्गीकरण

विभिन्न व्यावसायिक क्रियाओं को दो विस्तृत वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है–उद्योग एवं वाणिज्य। उद्योग से तात्पर्य वस्तुओं का उत्पादन अथवा प्रक्रिया है। वाणिज्य में वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित की जाती हैं, जो वस्तुओं के आदान-प्रदान, संभरण तथा वितरण को संभव बनाती हैं। इन दो वर्गों के आधार पर हम व्यावसायिक फर्मों को औद्योगिक उद्यम तथा वाणिज्यिक उद्यम की श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं। अब हमें व्यावसायिक क्रियाओं का विस्तृत अध्ययन करना है।

1.7.1 उद्योग

उद्योग से अभिप्राय उन आर्थिक क्रियाओं से है, जिनका संबंध संसाधनों को उपयोगी वस्तुओं में परिवर्तित करना है। उद्योग शब्द का प्रयोग उन क्रियाओं के लिए किया जाता है, जिनमें यांत्रिक-उपकरण एवं तकनीकी कौशल का प्रयोग होता है। इनमें वस्तुओं का उत्पादन अथवा प्रक्रिया तथा पशुओं के प्रजनन एवं पालन से संबंधित क्रियाएँ सम्मिलित हैं। व्यापक अर्थों में उद्योग का अर्थ समान वस्तुओं अथवा संबंधित वस्तुओं के उत्पादन में लगी इकाइयों के समूह से है। उदाहरण के लिए, रुई अथवा कपास से सूती वस्त्र आदि बनाने वाली सभी इकाइयों को उद्योग कहते हैं। इन्हीं के समकक्ष बैंकिंग, बीमा आदि की सेवाएँ भी उद्योग कहलाती हैं, जैसे- बैंकिंग उद्योग, बीमा उद्योग आदि। उद्योगों को तीन व्यापक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है- प्राथमिक उद्योग, द्वितीयक या माध्यमिक उद्योग एवं तृतीयक या सेवा उद्योग।

(क) प्राथमिक उद्योग– इन उद्योगों में, वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित हैं जिनका संबंध प्राकृतिक संसाधनों के खनन एवं उत्पादन तथा पशु एवं वनस्पति के विकास से है। इन उद्योगों को पुनः इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है–

(i) **निष्कर्षण उद्योग–** ये उद्योग उत्पादों को प्राकृतिक स्रोतों से निष्कर्षित करते हैं। निष्कर्षण उद्योग आधारभूत कच्चे माल की आपूर्ति करते हैं, जो प्रायः भूमि से प्राप्त किये जाते हैं। इन उद्योगों के उत्पादों को दूसरे विनिर्माणी उद्योगों द्वारा बहुत-सी उपयोगी वस्तुओं में परिवर्तित किया जाता है। मुख्य निष्कर्षण उद्योगों में खेती करना, उत्खनन, इमारती लकड़ी, शिकार तथा मछली पकड़ना आदि को सम्मिलित किया जाता है।

(ii) **जननिक उद्योग–** इन उद्योगों का मुख्य कार्य पशु-पक्षियों का प्रजनन एवं पालन तथा वनस्पति उगाना है, ताकि उनका उपयोग आगे विभिन्न उत्पादों के

लिए किया जा सके। जननिक उद्योग, पौधों के प्रजनन के लिए 'बीज तथा पौधा संवर्धन (नर्सरी) कंपनियाँ' इसके विशेष उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त पशु प्रजनन फार्म, मुर्गी पालन, मछली पालन आदि जननिक उद्योगों के अन्य उदाहरण हैं।

(ख) द्वितीयक या माध्यमिक उद्योग– इन उद्योगों में खनन उद्योगों द्वारा निष्कर्षित माल को कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है। इन उद्योगों द्वारा निर्मित माल या तो अंतिम उपभोग के लिए उपयोग में लाया जाता है या दूसरे उद्योगों में आगे की प्रक्रिया में उपयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ- कच्चा लोहा खनन, प्राथमिक उद्योग है, तो स्टील का निर्माण करना द्वितीयक या माध्यमिक उद्योग है। माध्यमिक उद्योगों को आगे निम्न श्रेणियों में विभक्त किया सकता जाता है।

(i) **विनिर्माण उद्योग–** इन उद्योगों द्वारा कच्चे माल को प्रक्रिया में लेकर उन्हें अधिक उपयोगी बनाया जाता है। इस प्रकार ये प्रारूप उपयोगिता का सृजन करते हैं। ये उद्योग कच्चे माल से तैयार माल बनाते हैं, जिनका हम उपयोग करते हैं। विनिर्माणी उद्योगों को उत्पादन प्रक्रिया के आधार पर निम्न चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है–

- विश्लेषणात्मक उद्योग– ये उद्योग एक ही उत्पाद के विश्लेषण एवं पृथकीकरण द्वारा तत्त्वों को उत्पादित करते हैं, जैसे- तेल शोधक कारखाने।
- कृत्रिम उद्योग–ये उद्योग विभिन्न संघटकों को एकत्रित करके प्रक्रिया द्वारा एक नये उत्पाद का रूप देते हैं, जैसे- सीमेंट उद्योग।
- प्रक्रियायी या प्रक्रमीय उद्योग– वे उद्योग जो पक्के माल के निर्माण के लिए विभिन्न क्रमिक चरणों से गुजरते हैं। उदाहरणार्थ- चीनी तथा कागज़ उद्योग।
- सम्मेलित उद्योग– जो उद्योग एक नया उत्पाद तैयार करने के लिए विभिन्न पुर्जों को जोड़ते हैं। उदाहरणार्थ- टेलीविज़न, कार तथा कंप्यूटर आदि।

(ii) **निर्माण उद्योग–** ऐसे उद्योग, भवन, बांध, पुल, सड़क, सुरंग तथा नहरों जैसे निर्माण में संलग्न रहते हैं। इन उद्योगों में अभियांत्रिकी तथा वास्तुकलात्मक चातुर्य महत्वपूर्ण अंग होते हैं।

(ग) तृतीयक या सेवा उद्योग– इस प्रकार के उद्योग प्राथमिक तथा द्वितीयक उद्योगों को सहायक सेवाएँ सुलभ कराने में संलग्न होते हैं तथा व्यापारिक क्रियाकलापों को संपन्न कराते हैं। ये उद्योग सेवा-सुविधा सुलभ कराते हैं। व्यावसायिक क्रियाओं में, ये उद्योग वाणिज्य के सहायक अंग समझे जाते हैं क्योंकि ये उद्योग व्यापार की सहायता करते हैं। इस वर्ग में यातायात, बैंकिंग, बीमा, माल-गोदाम, दूरसंचार, डिब्बा-बंदी तथा विज्ञापन आदि आते हैं।

"मेक इन इंडिया"

देशीय एवं बहुद्देशीय कंपनियों को भारत में निर्माण कार्य प्रोत्साहित करने हेतु भारत सरकार द्वारा 25 सितम्बर, 2014 को 'मेक इन इंडिया' की पहल की गई। 'मेक इन इंडिया' पहल के मुख्य उद्देश्यों में अर्थव्यवस्था के 25 चयनित क्षेत्रों में रोज़गार सृजन एवं कौशल विकास को बढ़ावा देना है।

'मेक इन इंडिया' निम्नलिखित 25 क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करता है–

1. ऑटोमोबाइल।
2. ऑटोमोबाइल कलपुर्जे।
3. विमानन।
4. जैव प्रौद्योगिकी।
5. रसायन।
6. विनिर्माण।
7. रक्षा।
8. विद्युत मशीनरी।
9. इलेक्ट्रॉनिक तंत्र।
10. खाद्य प्रसंस्करण।
11. सूचना प्रौद्योगिकी एवं व्यापार प्रक्रिया प्रबंधन।
12. मीडिया एवं मनोरंजन।
13. खनन।
14. तेल एवं गैस।
15. औषधि।
16. बंदरगाह एवं जहाज़रानी।
17. रेलवे।
18. नवीकरणीय ऊर्जा।
19. सड़क एवं राजमार्ग।
20. अंतरिक्ष एवं खगोल विज्ञान।
21. वस्त्र एवं परिधान।
22. तापीय शक्ति।
23. पर्यटन एवं मेहमानदारी।
24. कल्याण।
25. चमड़ा उत्पाद।

1.7.2 वाणिज्य

वाणिज्य में दो प्रकार की क्रियाएँ सम्मिलित हैं, पहली वे जो माल की बिक्री अथवा विनिमय के लिए की जाती हैं, इन्हें व्यापार कहते हैं। दूसरी वे विभिन्न सेवाएँ जो व्यापार में सहायक होती हैं। इन्हें सेवाएँ अथवा व्यापार सहायक क्रियाएँ कहते हैं, जिनमें परिवहन, बैंकिंग, बीमा, दूरसंचार, विज्ञापन, पैकेजिंग एवं गोदाम व्यवस्था आदि सम्मिलित होती हैं। वाणिज्य, उत्पादक और उपभोक्ता के बीच की आवश्यक कड़ी का काम करता है। इसमें वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं, जो वस्तु एवं सेवाओं के अबाध प्रवाह को बनाए रखने के लिए आवश्यक होती हैं। अतः वाणिज्य को इस प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है कि ये वे क्रियाएँ हैं, जो विनिमय में आने वाली बाधाओं को दूर करती हैं। विनिमय संबंधी बाधा को व्यापार दूर करता है, जो वस्तुओं को उत्पादक से लेकर उपभोक्ता तक पहुँचाता है। परिवहन स्थान संबंधी बाधा को दूर करता है, जो वस्तुओं को उत्पादन स्थल से बिक्री स्थल तक ले जाता है। संग्रहण एवं भंडारण, समय संबंधी रुकावट को दूर करते हैं। इसमें माल को गोदाम में बिक्री के समय तक रखा जाता है। गोदाम में रखे माल एवं स्थानांतरण के समय मार्ग में माल की चोरी, आग, दुर्घटना आदि जोखिमों से हानि हो सकती है। इन जोखिमों से माल का

बीमा कर सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। इन सभी क्रियाओं के लिए आवश्यक पूँजी, बैंक तथा अन्य वित्तीय संस्थानों से प्राप्त होती है। विज्ञापन के द्वारा उत्पादक एवं व्यापारी, उपभोक्ताओं को बाज़ार में उपलब्ध वस्तुओं एवं सेवाओं के संबंध में सूचना देते हैं। अतः वाणिज्य से अभिप्राय उन क्रियाओं से है जो वस्तु एवं सेवाओं के विनिमय में आने वाली व्यक्ति, स्थान, समय, वित्त एवं सूचना संबंधी बाधाओं को दूर करती हैं।

1.7.3 व्यापार

व्यापार, वाणिज्य का अनिवार्य अंग है। इसका अर्थ – बिक्री, हस्तांतरण अथवा विनिमय से है। यह उत्पादित वस्तुओं को अंतिम उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराता है। आज के युग में, वस्तुओं का उत्पादन वृहद् पैमाने पर किया जाता है, लेकिन उत्पादकों के लिए अपनी वस्तुओं की बिक्री प्रत्येक उपभोक्ता को अलग-अलग कर पाना दुष्कर है। व्यापारी मध्यस्थ के रूप में व्यापारिक क्रियाएँ करते हुए विभिन्न बाज़ारों में उपभोक्ताओं को वस्तुएँ उपलब्ध कराते हैं। व्यापार व्यक्ति, अर्थात् उत्पादक तथा उपभोक्ता संबंधी बाधा को दूर करता है। व्यापार की अनुपस्थिति में बड़े पैमाने पर उत्पादन संभव नहीं हो सकता है।

व्यापार को दो बड़े वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- आंतरिक और बाह्य। आंतरिक अथवा देशी व्यापार में वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान एक ही देश की भौगोलिक सीमाओं के अंदर किया जाता है। इसी को आगे थोक और फुटकर व्यापार में विभाजित किया जा सकता है। जब वस्तुओं का क्रय-विक्रय भारी मात्रा में किया जाता है, तो उसे थोक व्यापार तथा जब वस्तुओं का क्रय-विक्रय अपेक्षाकृत कम मात्रा में किया जाता है, तो उसे फुटकर व्यापार कहा जाता है। बाह्य एवं विदेशी व्यापार में वस्तुओं एवं सेवाओं का आदान-प्रदान दो या दो से अधिक देशों के व्यक्तियों अथवा संगठनों के मध्य किया जाता है। यदि वस्तुओं का क्रय दूसरे देश से किया जाता है, तो उसे आयात व्यापार कहते हैं तथा जब वस्तुओं का विक्रय दूसरे देशों को किया जाता है, तो उसे निर्यात व्यापार कहते हैं। जब वस्तुओं का आयात किसी अन्य देश को निर्यात करने के लिए किया जाता है, तो उसे पुनर्निर्यात या आयात-निर्यात व्यापार कहते हैं।

1.7.4 व्यापार के सहायक

व्यापार में सहायक क्रियाओं को व्यापार का सहायक कहते हैं। इन क्रियाओं को सेवाएँ भी कहते हैं क्योंकि ये उद्योग एवं व्यापार में सहायक होती हैं। परिवहन, बैंकिंग, बीमा, भंडारण एवं विज्ञापन व्यापार के सहायक कार्य हैं, अर्थात् ये वे क्रियाएँ हैं जो सहायक की भूमिका निभाती हैं। वास्तव में, ये क्रियाएँ न केवल व्यापार में सहायक होती हैं, बल्कि उद्योग में भी सहायक होती हैं और इस प्रकार से पूरे व्यवसाय के लिए सहायक होती हैं। वास्तव में सहायक क्रियाएँ पूरे व्यवसाय का तथा विशेष रूप से वाणिज्य का अभिन्न अंग हैं। ये क्रियाएँ वस्तुओं के उत्पादन एवं वितरण में आने वाली बाधाओं को दूर करने में सहायक होती हैं। परिवहन, माल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में सहायक होता है। बैंकिंग, व्यापारियों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

बीमा, विभिन्न प्रकार के जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करता है। भंडारण, संग्रहण व्यवस्था के द्वारा समय की उपयोगिता का सृजन करता है। विज्ञापन के माध्यम से सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। दूसरे शब्दों में, ये क्रियाएँ माल के स्थानांतरण, संग्रहण, वित्तीयन, जोखिम से सुरक्षा एवं माल की बिक्री, संवर्धन को सरल बनाती हैं। सहायक कार्यों का संक्षेप में वर्णन निम्न है–

(क) परिवहन एवं संप्रेषण– वस्तुओं का उत्पादन कुछ विशिष्ट जगहों पर होता है, उदाहरणार्थ- चाय असम में, रुई गुजरात तथा महाराष्ट्र में, जूट पश्चिम बंगाल और ओडिशा में, चीनी उत्तर प्रदेश, बिहार तथा महाराष्ट्र आदि में, लेकिन उपभोग के लिए इन वस्तुओं की आवश्यकता देश के सभी भागों में होती है। स्थान संबंधी बाधा को सड़क परिवहन, रेल परिवहन या तटीय जहाज़रानी द्वारा दूर किया जाता है। परिवहन के द्वारा कच्चा माल उत्पादन स्थल पर लाया जाता है तथा तैयार माल को कारखाने से उपभोग के स्थान तक ले जाया जाता है। परिवहन के साथ संप्रेषण माध्यमों की भी आवश्यकता होती है जिससे कि उत्पादक, व्यापारी एवं उपभोक्ता एक-दूसरे से सूचनाओं का आदान-प्रदान कर सकें। अतः डाक एवं टेलीफोन सेवाएँ भी व्यावसायिक क्रियाओं की सहायक मानी जाती हैं।

(ख) बैंकिंग एवं वित्त– धन के बिना व्यवसाय का संचालन संभव नहीं, क्योंकि धन की आवश्यकता परिसंपत्तियों को क्रय करने तथा नित्य-प्रति के व्ययों को पूरा करने के लिए होती है। व्यवसायी आवश्यक धन राशि बैंक से प्राप्त कर सकते हैं। बैंक वित्त की समस्या का समाधान कर व्यवसाय की सहायता करते हैं वाणिज्यिक बैंक अधिविकर्ष एवं नकद साख, ऋण एवं अग्रिम के माध्यम से राशि उधार देते हैं। बैंक चैकों की वसूली धन अन्य स्थानों पर भेजने तथा व्यापारियों की ओर से बिलों को भुनाने का कार्य भी करते हैं। विदेशी व्यापर में, वाणिज्यिक बैंक आयातकों एवं निर्यातकों दोनों की ओर से भुगतान की व्यवस्था भी करते हैं। वाणिज्यिक बैंक जनसाधारण से पूंजी एकत्रित करने में भी कंपनी प्रवर्तकों की सहायता करते हैं।

(ग) बीमा– व्यवसाय में अनेकों प्रकार के जोखिम होते हैं। कारखाने की इमारत, मशीन, फर्नीचर आदि का आग, चोरी एवं अन्य जोखिमों से बचाव आवश्यक है। माल एवं अन्य वस्तुएँ चाहे गोदाम में हों या मार्ग में, उनके खोने अथवा क्षतिग्रस्त हो जाने का भय रहता है। कर्मचारियों की भी दुर्घटना अथवा व्यावसायिक जोखिमों से सुरक्षा आवश्यक है। बीमा इन सभी को सुरक्षा प्रदान करता है। एक साधारण से प्रीमियम की राशि का भुगतान कर बीमा कंपनी से हानि अथवा क्षति की राशि की एवं शारीरिक दुर्घटनावश चोट से होने वाली क्षति की पूर्ति कराई जा सकती है।

(घ) **भंडारण–** प्रायः वस्तुओं के उत्पादन के तुरंत पश्चात् ही उनका उपयोग या विक्रय नहीं होता। उन्हें आवश्यकता पड़ने पर सुलभ कराने के लिए गोदामों में सुरक्षित रखा जाता है। माल को क्षति से बचाने के लिए उसकी सुरक्षा आवश्यक होती है। इसलिए उसके सुरक्षित संग्रहण की विशेष व्यवस्था की जाती है। भंडारण व्यावसायिक इकाइयों को संग्रहण की कठिनाई को हल करने में सहायता प्रदान करता है तथा वस्तुओं को उस समय उपलब्ध कराता है, जब उनकी आवश्यकता होती है। वस्तुओं की लगातार आपूर्ति द्वारा मूल्यों को उचित स्तर पर रखा जा सकता है।

(ङ) **विज्ञापनः** विज्ञापन वस्तुओं के संवर्धन की महत्वपूर्ण विधियों में से एक है। विशेष रूप से उपभोक्ता वस्तुओं जैसे- इलैक्ट्रोनिक वस्तुएँ, स्वचालित वाहन, साबुन, डिटरजेंट पाउडर आदि। इनमें से अधिकांश का निर्माण एवं बाज़ार में आपूर्ति अनेकों छोटी-बड़ी इकाइयों द्वारा की जाती है। उत्पादकों एवं व्यापारियों का प्रत्येक उपभोक्ता से व्यक्तिगत रूप में मिलना संभव नहीं होता। विक्रय बढ़ाने हेतु विभिन्न उत्पादों (उनकी विशेषताएँ व मूल्य आदि) की सूचना प्रत्येक संभावित ग्राहक तक पहुँचाना आवश्यक होता है। साथ ही उपभोक्ता को वस्तुओं के प्रयोग, गुणवत्ता तथा मूल्य आदि के संबंध में स्पर्धात्मक जानकारी देकर अपने उत्पाद खरीदने को लुभाने के लिए वस्तुओं का विज्ञापन आवश्यक है। इस प्रकार विज्ञापन बाज़ार में उपलब्ध वस्तुओं के संबंध में सूचना देने एवं उपभोक्ता को वस्तु विशेष को क्रय करने के लिए तत्पर करने में सहायक होता है।

1.8 व्यवसाय के उद्देश्य

व्यवसाय का प्रारंभ बिंदु कोई उद्देश्य होता है। सभी व्यवसाय कुछ उद्देश्यों को प्राप्त करने के प्रति अभिमुख होते हैं। ये उद्देश्य उस ओर संकेत करते हैं कि व्यवसायी अपने कार्यों के बदले क्या प्राप्त करना चाहते हैं। साधारणतया यह समझा जाता है कि व्यवसाय का संचालन केवल लाभ कमाने के लिए होता है। व्यवसायी स्वयं भी यह दर्शाते हैं कि वस्तुओं अथवा सेवाओं के उत्पादन या वितरण करने में उनका मुख्य लक्ष्य लाभ कमाना ही है। प्रत्येक व्यवसायी का सामान्यतः यह प्रयास रहता है कि उसे नियोजित राशि से अधिक लाभ प्राप्त हो सके। दूसरे शब्दों में, व्यवसाय का उद्देश्य लाभ अर्जित करना है, जो लागत पर आगम का आधिक्य है। आज के युग में, यह सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया है कि व्यावसायिक इकाइयाँ समाज का एक अंग हैं और उनके कुछ उद्देश्य, सामाजिक उत्तरदायित्वों सहित होने चाहिए ताकि वे लंबे समय तक चल सके तथा प्रगति कर सकें। लाभ, अग्रणी उद्देश्य होता है, लेकिन एकमात्र नहीं।

यद्यपि लाभ कमाना ही व्यवसाय का एक उद्देश्य नहीं हो सकता, लेकिन इसके महत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती। प्रत्येक व्यवसाय का प्रयत्न होता है कि जो कुछ भी उसने निवेश किया है उससे अधिक प्राप्त किया जाए। लागत से आगम का आधिक्य लाभ कहलाता है। लाभ को विभिन्न कारणों से व्यवसाय का एक आवश्यक उद्देश्य माना जा सकता है-

(i) यह व्यवसायी के लिए आय का स्रोत है,

(ii) यह व्यवसाय के विचार के लिए आवश्यक वित्त का स्रोत हो सकता है,

(iii) यह व्यवसाय की कुशल कार्यशैली का द्योतक होता है,

(iv) यह व्यवसाय का समाज के लिए उपयोगी होने की स्वीकारोक्ति भी हो सकता है, तथा

(v) यह एक व्यावसायिक इकाई की प्रतिष्ठा को बढ़ाता है।

फिर भी, एक अच्छे व्यवसाय के लिए केवल लाभ पर बल देना तथा दूसरे उद्देश्यों को भुला देना खतरनाक साबित हो सकता है। यदि व्यवसाय के प्रबंधक केवल लाभ के मनोग्रस्त हो जाएँ, तो वे ग्राहकों, कर्मचारियों, विनियोजकों तथा समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को भुला सकते हैं तथा तत्काल लाभ कमाने के लिए समाज के विभिन्न वर्गों का शोषण भी कर सकते हैं। इसका नतीजा यह हो सकता है कि प्रभावित लोग उस व्यावसायिक इकाई के साथ असहयोग करें या उसके दुराचरण का विरोध करें। फलस्वरूप इकाई का धंधा चौपट हो सकता है। यही कारण है कि ऐसा व्यवसाय मुश्किल से ही मिलता है जिसका उद्देश्य केवल अधिक से अधिक लाभ कमाना हो।

1.9 व्यवसाय के बहुमुखी उद्देश्य

किसी उद्यम के लाभ में लगातार वृद्धि समाज को उपयोगी सेवाएँ प्रदान करने के कारण हो सकती है। वास्तव में उद्देश्य हर उस क्षेत्र में वांछनीय है जो प्रत्येक क्षेत्र में व्यवसाय को जीवित रखते हैं तथा समृद्धि को प्रभावित करते हैं। यदि किसी व्यवसाय को आवश्यकता तथा लक्ष्य में संतुलन रखना है तो उसे बहुमुखी उद्देश्यों को भी अपने सम्मुख रखना होगा। वह केवल एक लक्ष्य को सामने रखकर महारथ हासिल नहीं कर सकता। उद्देश्य प्रत्येक क्षेत्र में विशिष्ट तथा व्यवसाय के अनुरूप होने चाहिए। उदाहरणार्थ-विक्रय मात्रा का निर्धारण होना चाहिए, जो पूंजी एकत्रित करनी है उसका अनुमान होना चाहिए तथा उत्पाद की इकाइयों का लक्ष्य भी निर्धारित होना चाहिए। उद्देश्य यह बताते हैं कि व्यवसाय निश्चित रूप से यह कार्य करने जा रहा है ताकि वह अपने क्रियाकलापों का विश्लेषण कर सके तथा अपने कार्य के निष्पादन में सुधार ला सके। व्यवसाय के लिए उद्देश्यों की आवश्यकता प्रत्येक उस क्षेत्र में होती है, जहाँ निष्पादन परिणाम व्यवसाय के जीवित रहने और समृद्धि को प्रभावित करते हैं। उनमें से कुछ क्षेत्रों का वर्णन नीचे किया गया है-

(क) बाज़ार स्थिति– बाज़ार स्थिति से तात्पर्य एक उद्‌यम की उसके प्रतियोगियों से संबंधित अवस्था से है। एक उद्‌यम को अपने उपभोक्ताओं को प्रतियोगी उत्पाद उपलब्ध करवाने तथा उन्हें संतुष्ट रखने के लिए अपने पैरों पर मज़बूती से खड़े रहना चाहिए।

(ख) नवप्रवर्तन– नवप्रवर्तन से तात्पर्य नए विचारों का समावेश या जिस विधि से कार्य किया जाता है, उसमें कुछ नवीनता लाने से है। प्रत्येक व्यवसाय में नवप्रवर्तन की दो विधियाँ हैं–

- उत्पाद अथवा सेवा में नवप्रवर्तन; तथा
- उनकी पूर्ति में निपुणता व सक्रियता में नवप्रवर्तन की आवश्यकता।

कोई भी व्यवसाय आधुनिक प्रतियोगिता के युग में बिना नवप्रवर्तन के फल-फूल नहीं सकता। अतः नवप्रवर्तन एक महत्वपूर्ण उद्‌देश्य है।

(ग) उत्पादकता– उत्पादकता का मूल्यांकन उत्पादन के मूल्य की निवेश के मूल्य से तुलना करके किया जाता है। इसका प्रयोग कुशलता के माप के रूप में किया जाता है। लंबे समय तक चलते रहने तथा प्रगति के लिए प्रत्येक उद्‌यम को उपलब्ध स्रोतों का अधिकतम सदुपयोग करते हुए विशाल उत्पादकता की ओर लक्ष्य रखना चाहिए।

(घ) भौतिक एवं वित्तीय संसाधन– प्रत्येक व्यवसाय को संयंत्र (प्लांट), मशीन तथा कार्यालय इत्यादि जैसे भौतिक स्रोतों तथा वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होती है। इन कोषों की सहायता से संसाधनों, वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करके उपभोक्ताओं तक पहुँचा जा सकता है। व्यावसायिक इकाइयों को इन स्रोतों को अपनी आवश्यकतानुसार प्राप्त कर उनका दक्षतापूर्ण प्रयोग करना चाहिए।

(ङ) लाभार्जन– लाभार्जन से तात्पर्य विनियोजित पूँजी पर लाभार्जन से है। प्रत्येक व्यवसाय का एक मुख्य उद्‌देश्य लाभ कमाना होता है। लाभ व्यवसाय की सफलता का एक सुदृढ़ परीक्षण है।

(च) प्रबंध निष्पादन एवं विकास– प्रत्येक उद्‌यम की अपने प्रबंधक से यह अपेक्षा रहती है कि वह व्यावसायिक क्रियाओं में उचित आचार संहिता तथा सामंजस्य स्थापित करें। अतः प्रबंध निष्पादन एवं विकास बहुत ही महत्वपूर्ण उद्‌देश्य हैं। इस उद्‌देश्य के लिए उद्‌यमों को सक्रियता से कार्य करना चाहिए।

(छ) कर्मचारी निष्पादन एवं मनोवृत्ति– किसी भी (कर्तव्य) व्यवसाय की उत्पादकता तथा लाभार्जन क्षमता में योगदान की मात्रा कर्मचारियों द्‌वारा कार्य का निष्पादन एवं उनकी मनोवृत्ति निर्धारित करती है। अतः प्रत्येक व्यवसाय को कर्मचारियों द्‌वारा किए हुए कार्यों में सुधार लाना और कर्मचारियों के प्रति सकारात्मक व्यवहार का आश्वासन देने का प्रयत्न करना चाहिए।

(ज) सामाजिक उत्तरदायित्व– सामाजिक उत्तरदायित्व से तात्पर्य व्यावसायिक फर्मों के दायित्व से है, वे समाज की समस्याओं को सुलझाने के लिए आवश्यक स्रोत जुटाएँ तथा आवश्यकतानुसार सामाजिक सेवा का कार्य करें। अतः एक व्यावसायिक उपक्रम को विभिन्न व्यक्तियों तथा समुदायों के हित में अपने उत्तरदायित्व तथा उनकी समृद्धि के लिए अग्रसर रहना चाहिए।

1.10 व्यावसायिक जोखिम

व्यावसायिक जोखिम से आशय अपर्याप्त लाभ या फिर हानि होने की उस संभावना से है जो नियंत्रण से बाहर अनिश्चितताओं या आकस्मिक घटनाओं के कारण होती है। उदाहरणार्थ– किसी वस्तु विशेष की माँग में कमी, उपभोक्ताओं की रुचि या प्राथमिकताओं में परिवर्तन या उसी प्रकार के उत्पाद बेचने वाली प्रतियोगी संस्थाओं में प्रतिस्पर्धा अधिक होने से लाभ में कमी, बाज़ार में कच्चे माल की कमी के कारण मूल्यों में वृद्धि आदि। जो फर्म ऐसे कच्चे माल को उपयोग में ला रही हैं, उन्हें इसे क्रय करने के लिए अधिक राशि का भुगतान करना पड़ता है। परिणामतः लागत मूल्य बढ़ जाता है जिस कारण लाभ में कमी आ सकती है। व्यवसायों को निश्चित रूप से दो प्रकार के जोखिमों का सामना करना पड़ता है–अनिश्चित जोखिम और शुद्ध जोखिम। अनिश्चित जोखिमों में दोनों संभावनाएँ विद्यमान होती हैं– लाभ की भी तथा हानि की भी। संदिग्ध हानियाँ, बाज़ार की दशा जिसमें माँग व पूर्ति में उतार-चढ़ाव शामिल हैं तथा इस कारण मूल्यों में आए परिवर्तन से या ग्राहकों की रुचि या फैशन में परिवर्तन होने के कारण होती हैं। यदि बाज़ार की दशा व्यवसाय के पक्ष में है तो लाभ हो सकता है। दशा विपरीत होने की अवस्था में हानि की संभावना रहती है। शुद्ध हानियों में या तो हानि होगी अथवा हानि नहीं होगी। आग लगना, चोरी होना या हड़ताल होना, शुद्ध हानियों के उदाहरण हैं। यदि ये घटनाएँ घटित होती हैं तो हानि होगी तथा इन घटनाओं के घटित न होने पर हानि नहीं होगी।

1.10.1 व्यावसायिक जोखिमों की प्रकृति

व्यावसायिक जोखिमों को समझने के लिए इनकी विशिष्ट विशेषताओं का ज्ञान आवश्यक है–

(क) व्यावसायिक जोखिम अनिश्चितताओं के कारण होते हैं– अनिश्चितता से तात्पर्य भविष्य में होने वाली घटनाओं की अनभिज्ञता से है। प्राकृतिक आपदाएँ, माँग और मूल्य में परिवर्तन, सरकारी नीति में परिवर्तन, तकनीक में सुधार आदि ऐसे उदाहरण हैं जिनसे अनिश्चितता बनी रहती है, ये परिवर्तन व्यवसाय के लिए जोखिम के कारण हो सकते हैं। इन कारणों का पहले से ज्ञान नहीं हो सकता है।

(ख) जोखिम प्रत्येक व्यवसाय का आवश्यक अंग होता है– प्रत्येक व्यवसाय में जोखिम होता है। कोई भी व्यवसाय इससे अछूता नहीं है। यद्यपि व्यवसाय में हानि की मात्रा भिन्न हो सकती है। जोखिम को कम किया जा सकता है, लेकिन समाप्त नहीं किया जा सकता।

(ग) **जोखिम की मात्रा मुख्यतः व्यवसाय की प्रकृति एवं आकार पर निर्भर करती है–** व्यवसाय की प्रकृति (उत्पादित एवं विक्रित वस्तुओं और सेवाओं के प्रकार) तथा व्यवसाय का आकार (उत्पादन एवं विक्रय की मात्रा) मुख्य घटक हैं, जो व्यवसाय में जोखिम की मात्रा का निर्धारण करते हैं। उदाहरणार्थ- जो व्यवसाय फैशन की चीज़ों में लेन-देन करते हैं, उनमें जोखिम की मात्रा अधिक होती है। उसी प्रकार वृहद् स्तरीय व्यवसाय में लघु स्तरीय व्यवसाय की अपेक्षा जोखिम अधिक होता है।

(घ) **जोखिम उठाने का प्रतिफल लाभ होता है–** 'जोखिम नहीं तो लाभ नहीं' एक पुराना सिद्धांत है, जो सभी प्रकार के व्यवसायों में लागू होता है। किसी व्यवसाय में अधिक जोखिम होने पर लाभ अधिक होने का अवसर होता है। कोई भी उद्यमी भविष्य में अधिक लाभ पाने की लालसा में ही अधिक जोखिम उठाता है।

1.10.2 व्यावसायिक जोखिमों के कारण

व्यावसायिक जोखिमों के अनेकों कारण होते हैं, जिनको निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(क) **प्राकृतिक कारण–** प्राकृतिक आपदाएँ जैसे- बाढ़, भूचाल, बिजली गिरना, भारी वर्षा, अकाल आदि पर मनुष्य का लगभग नहीं के बराबर नियंत्रण है। व्यवसाय में इनसे संपत्ति एवं आय की भारी हानि हो सकती है।

(ख) **मानवीय कारण–** मानवीय कारणों में कर्मचारियों की बेईमानी, लापरवाही या अज्ञानता को सम्मिलित किया जा सकता है। बिजली फेल हो जाना, हड़ताल होना, प्रबंधकों की अकुशलता आदि भी मानवीय कारणों के उदाहरण हैं।

(ग) **आर्थिक कारण–** इन कारणों में माल की माँग में अनिश्चितता, प्रतिस्पर्धा, मूल्य, ग्राहकों से देय राशि, तकनीक में परिवर्तन या उत्पादन की विधि में परिवर्तन आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। वित्तीय समस्याओं में ऋण पर ब्याज दर में वृद्धि, करों की भारी उगाही आदि भी इस प्रकार के कारणों की श्रेणी में आते हैं। परिणामतः व्यवसाय संचालन लागत (व्यय) असंभावित रूप से अधिक हो जाती है।

(घ) **अन्य कारण–** इनमें अदृश्य घटनाएँ जैसे- राजनैतिक उथल-पुथल, मशीनों में खराबी, बॉयलर का फट जाना, मुद्रा विनिमय दर में उतार-उढ़ाव आदि हैं जिनके कारण व्यवसाय में जोखिमों की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

1.11 व्यवसाय का आरंभ–मूल घटक

किसी व्यवसाय को प्रारंभ करना ठीक उसी प्रकार का काम है, जैसे मनुष्य विभिन्न संसाधनों का उपयोग कर अपने प्रयत्नों से किसी निश्चित

जोखिमों से व्यवहार की विधियाँ

यद्यपि कोई भी व्यावसायिक उद्यम जोखिम से बचा हुआ नहीं है फिर भी बहुत सी ऐसी विधियाँ जिनके द्वारा जोखिम भरी परिस्थितियों से आसानी से निबटा जा सकता है। उदाहरण के लिए- उद्यम द्वारा (अ) अति जोखिम भरे सौदों को न करना; (ब) जोखिम कम करने के लिए अग्निशमन उपकरणों का सुरक्षात्मक उपयोग; (स) जोखिम का बीमा कंपनी को हस्तांरण करने के लिए बीमा पॉलिसी क्रय करना; (द) चालू वर्ष की आय में कुछ संभावित जोखिमों के लिए आयोजन करना- जैसा कि डूबते एवं संदिग्ध ऋणों के लिए आयोजन; अथवा (य) अन्य उद्यमों से जोखिमों को आपस में बाँटना जैसे- उत्पादक तथा थोक व्यापारी द्वारा कीमतों के कम होने से हुई हानि को विभाजित करने के लिए सहमत होना।

उद्देश्य को प्राप्त करे। नए व्यवसाय की सफलता मुख्यतः उसके उद्यमी अथवा प्रवर्तक की इस योग्यता पर निर्भर करता है कि वह संभावित समस्याओं का पूर्वानुमान लगाने तथा कम से कम लागत में उनका समाधान करने में कितना सक्षम है। आज के व्यावसायिक जगत में यह इसलिए और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रतिस्पर्धा बहुत ज्यादा है और जोखिम भी अधिक है। कुछ समस्याएँ जिनसे व्यावसायिक फर्मों को जूझना ही पड़ता है, वे बुनियादी प्रकृति की हैं। एक फैक्ट्री खोलने के लिए उसकी योजना बनाने तथा उसके क्रियान्वयन में व्यवसाय का स्थान, संभावित ग्राहक, साजो-सामान तथा उनकी किस्में, विन्यास, क्रय तथा वित्तीय समस्याएँ तथा कर्मचारियों के चयन आदि समस्याओं का ध्यान रखना। बड़े व्यवसाय में समस्याएँ और भी अधिक जटिल हो जाती हैं, फिर भी कुछ मूल घटक ऐसे हैं जिनका किसी व्यवसायी को व्यवसाय प्रारम्भ करते समय ध्यान रखना चाहिए। ये निम्नलिखित हैं–

(क) व्यवसाय के स्वरूप का चयन– किसी भी उद्यमी को नए व्यवसाय को प्रारंभ करने से पूर्व उसकी प्रकृति तथा प्रकार पर ध्यान देना चाहिए। स्वतः ही वह उस प्रकार के उद्योग या सेवा को चुनना पसंद करेगा जिसमें अधिक लाभ अर्जित करने की आशा हो, लेकिन यह निर्णय बाज़ार में ग्राहकों की आवश्यकता तथा उद्यमी के तकनीकी ज्ञान एवं उत्पाद विशेष के निर्माण में उसकी रुचि से प्रभावित होगा।

(ख) फर्म का आकार– व्यवसाय आरम्भ करते समय व्यवसाय का आकार या उसका विस्तार, ऐसा दूसरा महत्वपूर्ण निर्णय है जिसका ध्यान रखा जाना चाहिए। कुछ घटक बड़े आकार के पक्ष में होते हैं, तो अन्य उसे सीमित रखने के पक्ष में। यदि उद्यमी को यह विश्वास हो कि उसके उत्पाद की माँग बाज़ार में अच्छी होगी तथा वह व्यवसाय के लिए आवश्यक पूँजी का प्रबंध कर सकता है तो वह बड़े

पैमाने पर व्यवसाय प्रारंभ करेगा। यदि बाज़ार की दशा अनिश्चित है तथा जोखिम अत्यधिक है तो छोटे पैमाने का व्यवसाय ही बेहतर रहेगा।

(ग) स्वामित्व के स्वरूप का चुनाव– स्वामित्व के संबंध में संगठन का रूप एकाकी व्यापार, साझेदारी या संयुक्त पूँजी कंपनी का हो सकता है। उपयुक्त स्वामित्व स्वरूप का चुनाव पूँजी की आवश्यकता, स्वामियों के दायित्व, लाभ के विभाजन, विधिक औपचारिकताएँ, व्यवसाय की निरंतरता, हित-हस्तांतरण आदि पर निर्भर करेगा।

(घ) उद्‌यम का स्थान– व्यवसाय प्रारंभ करते समय ध्यान में रखने वाला एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है वह स्थान, जहाँ व्यावसायिक क्रियाओं का संचालन होगा। इसके संबंध में किसी भी त्रुटि का परिणाम ऊँची उत्पादन लागत, उचित प्रकार के उत्पादन निवेशों की प्राप्ति से असुविधा तथा ग्राहकों को अच्छी सेवा देने में कठिनाई के रूप में होगा। उद्‌यम के स्थान का चुनाव करने में कच्चे माल की उपलब्धि, श्रम, बिजली आपूर्ति, बैंकिंग, यातायात, संप्रेषण, भंडारण आदि महत्वपूर्ण विचारणीय घटक हैं।

(ङ) प्रस्थापन की वित्त व्यवस्था– वित्त व्यवस्था से अभिप्राय प्रस्तावित व्यवसाय को प्रारंभ करने तथा उसकी निरंतरता के लिए आवश्यक पूँजी की व्यवस्था करना है। पूँजी की आवश्यकता स्थायी संपत्तियों, जैसे- भूमि, भवन, मशीनरी तथा साजो-सामान तथा चालू संपत्तियों, जैसे- कच्चा माल, देनदार (पुस्तक ऋण), तैयार माल का स्टॉक आदि में निवेश करने के लिए पूंजी की आवश्यकता होती है। दैनिक व्ययों का भुगतान करने के लिए भी पूंजी की आवश्यकता होती है। समुचित वित्तीय योजना–(i) पूँजी की आवश्यकता; (ii) स्रोत, जहाँ से पूँजी प्राप्त हो सकेगी; तथा (iii) फर्म में पूँजी के सर्वोत्तम उपयोग की निश्चित रूपरेखा बनाई जानी चाहिए।

(च) भौतिक सुविधाएँ– व्यवसाय प्रारंभ करते समय भौतिक सुविधाओं की उपलब्धि का भी ध्यान रखना चाहिए, जिसमें मशीन तथा साजो-सामान, भवन एवं सहायक सेवाएँ शामिल हैं। महत्वपूर्ण घटक का निर्णय व्यवसाय की प्रकृति एवं आकार-वित्त की उपलब्धता तथा उत्पादन प्रक्रिया पर निर्भर करेगा।

(छ) संयंत्र अभिन्यास (प्लांट लेआउट)– जब भौतिक सुविधाओं की आवश्यकताएँ निश्चित हो जाएँ, तो उद्‌यमी को संयंत्र का ऐसा नक्शा बनाना चाहिए, जिसमें सभी आवश्यक सुविधाएँ शामिल हों। अभिन्यास (नक्शा) से आशय प्रत्येक उस वस्तु की व्यवस्था करने से है, जो किसी उत्पाद के निर्माण के लिए आवश्यक हो, जैसे- मशीन, मानव, कच्चा माल तथा निर्मित माल की भौतिक व्यवस्था।

(ज) सक्षम एवं वचनबद्ध कामगार बल– प्रत्येक उद्यम को विभिन्न कार्यों को पूरा करने के लिए सक्षम एवं वचनबद्ध कामगार बल की आवश्यकता होती है ताकि भौतिक तथा वित्तीय संसाधनों को वांछित उत्पाद में परिवर्तित किया जा सके। कोई भी उद्यमी सभी कार्यों को स्वयं नहीं कर सकता, अतः उसे कुशल और अकुशल श्रमिकों तथा प्रबंधकीय कर्मचारियों की आवश्यकताओं को पहचानना चाहिए। कर्मचारी अपने कार्य श्रेष्ठ तरीके से कर सकें, इसके लिए प्रशिक्षण तथा उत्प्रेरण की समुचित व्यवस्था भी करनी होगी।

(झ) कर संबंधी योजना– आजकल कर संबंधी योजना एक आवश्यक कार्य बन गया है क्योंकि विविध कानून व्यवसाय की कार्यविधि के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करते हैं। व्यवसाय के प्रवर्तक को विभिन्न कर कानूनों के अंतर्गत कर दायित्व तथा व्यावसायिक निर्णयों पर उनके प्रभाव के संबंध में पहले से सोचकर चलना चाहिए।

(ण) उद्यम प्रवर्तन– उपरोक्त घटकों के विषय में निर्णय लेने के उपरांत, एक उद्यमी एक उद्यम के वास्तविक प्रवर्तन के लिए कार्यवाही कर सकता है। इसका तात्पर्य विभिन्न संसाधनों को गतिशीलता प्रदान करना, आवश्यक कानूनी औपचारिकताओं की पूर्ति करना, उत्पादन प्रक्रिया आरंभ करना तथा विक्रय प्रवर्तन अभियान को प्रोत्साहन देना होगा।

मुख्य शब्दावली

आर्थिक क्रियाएँ	उद्योग	जोखिम	व्यवसाय
व्यापार	पेशा	वाणिज्य	रोज़गार
लाभ			

सारांश

व्यवसाय की अवधारणा तथा विशेषताएँ–

व्यवसाय से आशय उन आर्थिक क्रियाओं से है, जिनमें समाज में मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए लाभ कमाने के उद्देश्य से वस्तुओं और सेवाओं का सृजन एवं विक्रय किया जाता है। इसकी विशिष्ट विशेषताएँ हैं– 1. आर्थिक क्रिया; 2. वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन एवं प्राप्ति; 3. मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वस्तुओं और सेवाओं का विक्रय एवं विनिमय; 4. नियमित रूप से वस्तुओं और सेवाओं का लेन-देन; 5. लाभ अर्जन; 6. प्रतिफल की अनिश्चितता एवं; 7. जोखिम के तत्व।

व्यवसाय, पेशा तथा रोजगार में तुलना–

व्यवसाय का अभिप्राय उन आर्थिक क्रियाओं से है, जिनका संबंध लाभ कमाने के उद्देश्य से वस्तुओं का उत्पादन, या क्रय-विक्रय, या सेवाओं की पूर्ति से हो। पेशे में वे क्रियाएँ सम्मिलित हैं, जिनमें विशेष ज्ञान व दक्षता की आवश्यकता होती है और व्यक्ति इनका प्रयोग अपने धंधे में करता है। रोज़गार का अभिप्राय उन धंधों से है, जिनमें लोग नियमित रूप से दूसरों के लिए कार्य करते हैं और बदले में पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं। इन तीनों की तुलना स्थापना की विधि, कार्य की प्रकृति, आवश्यक योग्यता, पुरस्कार या प्रतिफल, पूँजी विनियोजन, जोखिम, हित हस्तांतरण तथा आचार संहिता के आधार पर किया जाता सकता है।

व्यावसायिक क्रियाओं का वर्गीकरण–

व्यावसायिक क्रियाओं को दो विस्तृत वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- उद्योग और वाणिज्य। उद्योग से तात्पर्य वस्तुओं एवं पदार्थों का उत्पादन अथवा संशोधित करना है। उद्योग प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक सेवा उद्योग हो सकते हैं। प्राथमिक उद्योगों में वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित हैं, जिनका संबंध प्राकृतिक संसाधनों के खनन एवं उत्पादन तथा पशु एवं वनस्पति के विकास से है। प्राथमिक उद्योग निष्कर्षण (जैसे- खनन) अथवा जननिक (जैसे- मुर्गी पालन) प्रकार के हैं। द्वितीयक या माध्यमिक उद्योगों में निष्कर्षण उद्योगों द्वारा निष्कर्षित माल को कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जाता है। ये उद्योग विनिर्माणी या रचनात्मक कहलाते हैं। विर्निर्माणी उद्योगों को विश्लेषणात्मक, कृत्रिम प्रक्रिया तथा व्यवस्थित के रूप में विभाजित किया जा सकता है। तृतीयक या सेवा उद्योग प्राथमिक तथा द्वितीयक उद्योगों को सहायक सेवाएँ सुलभ कराने में संलग्न रहते हैं तथा व्यापार संबंधित कार्यों में भी सहायता करते हैं।

वाणिज्य से तात्पर्य व्यापार और व्यापार की सहायक क्रियाओं से है। व्यापार का संबंध वस्तुओं के विक्रय, हस्तांतरण अथवा विनिमय से है। उसको आंतरिक (देशीय) तथा बाह्य (विदेशी) व्यापार के रूप में विभाजित किया जाता है। आंतरिक व्यापार को पुनः थोक व्यापार या फुटकर व्यापार में विभाजित किया जाता है। एक अन्य विभाजन बाह्य व्यापार, आयात, निर्यात अथवा पुनर्निर्यात व्यापार के रूप में भी हो सकता है। व्यापार की सहायक क्रियाएँ वे हैं, जो व्यापार को सहायता प्रदान करती हैं। इनमें परिवहन तथा संचार, बैंकिंग एवं वित्त, बीमा, भंडारण तथा विज्ञापन सम्मिलित हैं।

व्यवसाय के उद्देश्य– यद्यपि केवल लाभ कमाना ही व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य समझा जाता है। व्यवसाय के लिए उद्देश्यों की आवश्यकता प्रत्येक उस क्षेत्र में होती है, जो निष्पादन परिणाम व्यवसाय के जीवन और समृद्धि को प्रभावित करते हैं। उद्देश्यों में से कुछ हैं- क्षेत्र बाज़ार स्थिति, नवप्रवर्तन, उत्पादकता, भौतिक एवं वित्तीय संसाधन, लाभार्जन, प्रबंध निष्पादन एवं विकास, कर्मचारी निष्पादन एवं अभिवृत्ति तथा सामाजिक उत्तरदायित्व।

व्यावसायिक जोखिम– व्यावसायिक जोखिमों से आशय अपर्याप्त लाभ या फिर हानि होने की संभावना से है, जो अनिश्चितताओं या असंभावित घटनाओं के कारण होती है। इनकी प्रकृति को इनकी विशिष्ट विशेषताओं की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है, जो निम्न हैं–

1. व्यावसायिक जोखिम अनिश्चितताओं के कारण होते हैं;
2. जोखिम प्रत्येक व्यवसाय का अंग होता है;

3. जोखिम की मात्रा मुख्यतः व्यवसाय की प्रकृति एवं आकार पर निर्भर करती है; तथा
4. जोखिम उठाने का प्रतिफल लाभ होता है;

व्यावसायिक जोखिमों के अनेकों कारण होते हैं, जिनको निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे- प्राकृतिक, मानवीय, आर्थिक तथा अन्य कारण।

व्यवसाय का आरंभ– मूल घटक जिनका एक व्यवसायी को जो एक व्यवसाय प्रारंभ करने के पूर्व ध्यान में रखना चाहिए, वे व्यवसाय के स्वरूप का चयन, फर्म का आकार, स्वामित्व के रूप का चुनाव, उद्यम का स्थान, वित्त व्यवस्था प्रस्तावना, भौतिक सुविधाएँ, संयंत्र अभिन्यास तथा वचनबद्ध कामगार बल का आयोजन तथा उद्यम प्रवर्तन हो सकते हैं।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित में से कौन-सी क्रिया व्यावसायिक गतिविधि का चरित्र-चित्रण नहीं करती है?
   (क)वस्तुओं एवं सेवाओं का सृजन
   (ख)जोखिम की विद्यमानता
   (ग) वस्तुओं और सेवाओं की बिक्री अथवा विनिमय
   (घ) वेतन अथवा मज़दूरी
2. तेल शोधक कारखाने तथा चीनी मिलें किस उद्योग की विस्तृत श्रेणी में आते हैं?
   (क) प्राथमिक (ख) द्वितीयक
   (ग) तृतीयक (घ) किसी में नहीं
3. निम्नलिखित में से किसे व्यापार के सहायक की श्रेणी में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता?
   (क)खनन (ख) बीमा
   (ग) भंडारण (घ) यातायात
4. ऐसे धंधे को किस नाम से पुकारते हैं जिसमें लोग नियमित रूप से दूसरों के लिए कार्य करते हैं और बदले में पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं–
   (क) व्यवसाय (ख) रोज़गार
   (ग) पेशा (घ) इनमें से कोई नहीं
5. ऐसे उद्योगों को क्या कहते हैं, जो दूसरे उद्योगों को समर्थन सेवा सुलभ करते हैं–
   (क)प्राथमिक उद्योग (ख) द्वितीयक उद्योग
   (ग) तृतीयक उद्योग (घ) इनमें से कोई नहीं
6. निम्नलिखित में से किसको व्यावसायिक उद्देश्य की श्रेणी में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता–
   (क)विनियोग (ख) उत्पादकता
   (ग) नवप्रवर्तन (घ) लाभदायकता
7. व्यावसायिक जोखिम होने की संभावना नहीं होती है–
   (क)सरकारी नीति में परिवर्तन से (ख) अच्छे प्रबंध से

(ग) कर्मचारियों की बेईमानी से (घ) बिजली गुल होने से

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाएँ बताइए।
2. व्यवसाय को एक आर्थिक क्रिया क्यों समझा जाता है?
3. व्यवसाय का अर्थ बताइए?
4. व्यावसायिक क्रियाकलापों को आप कैसे वर्गीकृत करेंगे?
5. उद्योगों के विभिन्न प्रकार क्या हैं?
6. ऐसी किन्हीं दो व्यावसायिक क्रियाओं को स्पष्ट कीजिए जो व्यापार की सहायक होती हैं।
7. व्यवसाय में लाभ की क्या भूमिका होती है?
8. व्यावसायिक जोखिम क्या होता है? इसकी प्रकृति क्या है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. व्यवसाय को परिभाषित कीजिए। इसकी महत्वपूर्ण विशेषताओं की विवेचना कीजिए।
2. व्यवसाय की तुलना पेशा तथा रोज़गार से कीजिए।
3. उद्योग को परिभाषित कीजिए। विभिन्न प्रकार के उद्योगों को उदाहरण सहित समझाइए।
4. वाणिज्य से संबंधित क्रियाओं का वर्णन कीजिए।
5. व्यवसाय के किन्हीं पाँच उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
6. व्यावसायिक जोखिमों की अवधारणा को समझाइए तथा इनके कारणों को भी स्पष्ट कीजिए।
7. कोई व्यवसाय प्रारंभ करते समय कौन-कौन से महत्वपूर्ण कारकों को ध्यान में रखना चाहिए? समझाकर लिखिए।

परियोजना कार्य/क्रियाकलाप

1. अपने आस-पास किसी व्यावसायिक इकाई का दौरा कीजिए। व्यवसाय प्रारम्भ करने के चरणों को जानने हेतु स्वामी से वार्तालाप कीजिए। अपने दौरे की परियोजना रिपोर्ट तैयार कीजिए।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था के किन्हीं पाँच क्षेत्रों का चयन करें जिन पर 'मेक इन इंडिया' केंद्रित है। चयनित क्षेत्रों पर गत दो वर्षों में निवेशित धनराशि की सूचना एकत्रित करें, साथ ही उन सम्भावित कारणों को लिखें जिनसे इन चयनित क्षेत्रों में निवेशकों का रुझान रहा है।

   अपनी रिपोर्ट को नीचे दिए गए प्रारूप के अनुसार तैयार करें–

क्षेत्र	प्रथम वर्ष में निवेश	द्वितीय वर्ष में निवेश	परिवर्तन के मुख्य कारण

11109CH02

अध्याय 2

व्यावसायिक संगठन के स्वरूप

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप–

- व्यावसायिक संगठन के विभिन्न स्वरूपों की पहचान कर सकेंगे;
- व्यावसायिक संगठनों के विभिन्न स्वरूपों के लक्षण, गुण एवं सीमाओं को समझ सकेंगे;
- विभिन्न व्यावसायिक संगठनों के स्वरूपों में अंतर कर सकेंगे; और
- व्यावसायिक संगठन के उपयुक्त स्वरूप के चयन के निर्धारक तत्त्वों की चर्चा कर सकेंगे।

नेहा एक मेधावी छात्रा है, जिसे अपने परीक्षा परिणाम की घोषणा की प्रतीक्षा थी। जब वह घर पर थी, तब उसने खाली समय का उपयोग करने का निर्णय लिया। उसे चित्रकारी में रुचि थी। उसने मिट्टी के बर्तनों एवं प्यालों पर चित्रकारी शुरू कर दी। नेहा के काम में उसके मित्रों एवं अन्य मिलने वालों ने रुचि दिखाई जिससे वह बहुत उत्साहित हुई। अब उसने व्यापार करना तय किया। इस व्यापार को वह अपने घर से चलाने लगी जिससे किराये की बचत हो गई। एक-दूसरे से चर्चा के कारण वह एकल स्वामित्व के रूप में काफी प्रसिद्ध हो गई। परिणामस्वरूप उसके उत्पादनों की बिक्री में बढ़ोतरी हुई। गर्मियों की समाप्ति तक उसे लगभग 2500 रु. का लाभ हुआ। इससे उत्साहित होकर उसने इस काम को पेशे के रूप में अपना लिया। अतः उसने अपना व्यवसाय स्थापित करने का निर्णय लिया। यद्यपि वह इस व्यवसाय को एकल स्वामित्व के रूप में चलाने में समर्थ है, लेकिन उसे व्यवसाय के विस्तार के लिए अधिक धन की आवश्यकता भी है। अतः उसके पिता ने साझेदारी फर्म का विकल्प सुझाया, जिससे उसे अधिक पूँजी प्राप्त करने में भी सुविधा हो तथा उत्तरदायित्व एवं जोखिम में भी भागीदारी हो सके। उनका यह भी मत था कि संभव है कि भविष्य में व्यवसाय का और अधिक विस्तार हो और कंपनी का निर्माण भी करना पड़े। नेहा फिलहाल इस असमंजस में है कि वह किस प्रकार के व्यावसायिक संगठन के स्वरूप को चुने।

2.1 परिचय

यदि कोई व्यक्ति एक व्यवसाय प्रारंभ करने की योजना बना रहा है या वर्तमान व्यवसाय का विस्तार करना चाहता है, तो उसे संगठन के स्वरूप के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण निर्णय लेना होगा। सबसे उपयुक्त स्वरूप का निर्धारण करते समय व्यक्ति को अपने साधनों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक स्वरूप के लाभ एवं हानियों को देखकर निर्णय करना होगा। व्यवसाय संगठन के विभिन्न स्वरूप निम्न हैं–

(क) एकल स्वामित्व;

(ख) संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय;

(ग) साझेदारी;

(घ) सहकारी समिति, तथा;

(ङ) संयुक्त पूंजी कंपनी।

हम अपनी चर्चा को एकल व्यापार से प्रारंभ करते हैं जो व्यावसायिक संगठन का सरलतम स्वरूप है। उसके बाद अधिक जटिल संगठनों के रूपों का विश्लेषण करेंगे।

2.2 एकल स्वामित्व

आप कई बार सायंकाल अपने पास के छोटे स्टेशनरी स्टोर से रजिस्टर, पेन, चार्ट पेपर आदि खरीदने के लिए जाते होंगे। संभावना यही है कि आप इस सौदे के दौरान किसी एकल स्वामित्व के संपर्क में ही आते होंगे।

एकल व्यापार व्यावसायिक संगठन का एक प्रचलित रूप है तथा छोटे व्यवसाय के लिए अत्यंत उपयुक्त है, विशेषतः व्यवसाय के प्रारंभिक वर्षों में एकल स्वामित्व उस व्यवसाय को कहते हैं जिसका स्वामित्व, प्रबंधन एवं नियंत्रण एक ही व्यक्ति के हाथ में होता है तथा

वही संपूर्ण लाभ पाने का अधिकारी तथा हानि के लिए उत्तरदायी होता है। जैसा एकल स्वामित्व शब्द से ही स्पष्ट है 'एकल' शब्द का अर्थ है एकमात्र एवं 'प्रोप्राइटर' का अर्थ है स्वामी, अर्थात् वह एकल व्यवसाय का एकमात्र स्वामी होता है।

व्यवसाय का यह स्वरूप विशेष रूप से उन क्षेत्रों में प्रचलन में है, जिनमें व्यक्तिगत सेवाएँ प्रदान की जाती हैं, जैसे- ब्यूटी पार्लर, नाई की दुकान एवं छोटे पैमाने के व्यापार, जैसे- किसी क्षेत्र में एक फुटकर व्यापार की दुकान चलाना।

लक्षण

संगठन के एकल स्वामित्व स्वरूप की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं–

(क) निर्माण एवं समापन– एकल स्वामित्व वाले व्यवसाय को प्रारंभ करने के लिए शायद ही किसी वैधानिक औपचारिकता की आवश्यकता होती है। हाँ, कुछ मामलों में लाइसेंस की आवश्यकता हो सकती है। एकल स्वामित्व के नियमन के लिए अलग से कोई कानून नहीं है, व्यवसाय को बंद भी सरलता से किया जा सकता है। इस प्रकार से व्यवसाय की स्थापना एवं उसका समापन दोनों ही सरल हैं।

(ख) दायित्व– एकल स्वामी का दायित्व असीमित होता है। इसका अर्थ हुआ कि यदि व्यवसाय की संपत्तियाँ सभी ऋणों के भुगतान के लिए पर्याप्त नहीं हैं तो स्वामी इन ऋणों के भुगतान के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा। ऐसी स्थिति में इसके लिए उसकी निजी वस्तुएँ, जैसे- उसकी अपनी कार तथा अन्य संपत्तियाँ बेची जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, अगर व्यवसाय बंद करते समय एक ड्राईक्लीनर एकल स्वामित्व वाली इकाई की बाह्य देयताएँ ₹ 80,000 हैं, जबकि परिसंपत्तियाँ केवल ₹ 60,000 ही हैं, तो ऐसे में स्वामी को अपने निजी स्रोतों से ₹ 20,000 लाने होंगे। भले ही फर्म के ऋणों के भुगतान के लिए उसे अपनी निजी संपत्ति ही क्यों न बेचनी पड़े।

(ग) लाभ प्राप्तकर्त्ता तथा जोखिम वहनकर्त्ता– व्यवसाय की विफलता से जोखिम को एकल स्वामी को अकेले ही वहन करना होगा। यदि व्यवसाय सफल रहता है तो सभी लाभ भी उसी को प्राप्त होंगे। वह सभी व्यावसायिक लाभों का अधिकारी होता है जो उसके जोखिम उठाने का सीधा प्रतिफल है।

'एकल व्यापारी व्यवसाय एक ऐसी व्यावसायिक इकाई है जिसमें एक ही व्यक्ति पूँजी लगाता है, उद्‌यम का जोखिम उठाता है एवं प्रबंधन करता है।' **-जे.एल. हैन्सन**

'एकल स्वामित्व व्यवसाय संगठन का वह स्वरूप है जिसका मुखिया एक ऐसा व्यक्ति है जो उत्तरदायित्व लिए हुए है; जो परिचालन का निदेशन करता है एवं जो हानि का जोखिम उठाता है। **- एल.एच. हेनी**

(घ) नियंत्रण– व्यवसाय के संचालन एवं उसके संबंध में निर्णय लेने का पूरा अधिकार एकल स्वामी के पास होता है, वह बिना दूसरों के हस्तक्षेप के अपनी योजनाओं को कार्यान्वित कर सकता है।

(ङ) स्वतंत्र अस्तित्व नहीं– कानून की दृष्टि में एकल व्यापारी एवं उसके व्यवसाय में कोई अंतर नहीं है क्योंकि इसमें व्यवसाय का इसके स्वामी से अलग कोई अस्तित्व नहीं है। परिणामस्वरूप, व्यवसाय के सभी कार्यों के लिए स्वामी को ही उत्तरदायी ठहराया जाएगा।

(च) व्यावसायिक निरंतरता का अभाव– चूँकि व्यवसाय एवं उसके स्वामी का एक ही अस्तित्व है इसलिए एकल स्वामी की मृत्यु पर, पागल हो जाने पर, जेल में बंद होने पर, बीमारी अथवा दिवालिया होने पर सीधा एवं हानिकारक प्रभाव व्यवसाय पर पड़ेगा और हो सकता है कि व्यापार बंद भी करना पड़े।

गुण

एकल स्वामित्व के कई लाभ हैं। इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण लाभ निम्न हैं–

(क) शीर्घ निर्णय– एकल स्वामी को व्यवसाय से संबंधित निर्णय लेने की बहुत अधिक स्वतंत्रता होती है क्योंकि उसे किसी दूसरे से सलाह की आवश्यकता नहीं है इसलिए

स्फूर्तिदायक प्रारंभ– कोका-कोला प्रारंभ में एकल स्वामित्व का व्यवसाय था!

दुनियाभर को एक खास स्वाद से परिचित करवाने वाले कोका-कोला की शुरूआत 8 मई 1886 को एटलांटा, जॉर्जिया से हुई थी। डॉ. जॉन स्मिथ पैंबर्टन एक स्थानीय औषधि निर्माता थे। उन्होंने कोका-कोला के नाम से एक शर्बत बनाया। वे इस नए उत्पाद को एक पास में स्थित जैकब फार्मेसी में ले गए। वहाँ उसका नमूना चखा गया तथा उसे अद्‌भुत घोषित किया गया। एक सोडा पेय के रूप में वह पाँच सैंट प्रति गिलास बेचा जाने लगा। पैंबर्टन को अपने उत्पाद की निहित संभावनाओं का अहसास भी नहीं हुआ। उन्होंने धीरे-धीरे अपने व्यवसाय को टुकड़ों में अपने साझेदारों को बेच दिया और 1888 में अपनी मृत्यु के कुछ समय पहले ही कोका-कोला में अपने बचे-खुचे हितों को आसा जी. कैंडलर को बेच दिया। कैंडलर, व्यापारिक सूझ-बूझ वाला एटलांटावासी था। उसने व्यवसाय के अन्य हिस्से भी खरीद लिए तथा अंत में पूरे व्यवसाय को नियंत्रण में ले लिया।

1 मई, 1889 को आसा जी. कैंडलर ने 'द एटलांटा' पत्रिका में एक पूरे पृष्ठ का विज्ञापन दिया जिसमें उसने अपने दवाइयों के थोक एवं फुटकर व्यापार को कोका-कोला के एकमात्र स्वामी के रूप में घोषित किया। उसके विज्ञापन में कहा गया– **"कोका-कोला स्वादिष्ट! ताजगीदायक! स्फूर्तिदायक! शक्तिवर्धक! पेय!"** कोका-कोला का एकल स्वामित्व कैंडलर को 1891 में जाकर प्राप्त हुआ जिसके लिए उसे 2300 डॉलर निवेश करने की आवश्यकता पड़ी। 1892 में जाकर कैंडलर ने 'दि कोका-कोला कॉरपोरेशन' के नाम से एक कंपनी का गठन किया।

(**स्रोतः** कोका-कोला कंपनी की वेबसाइट से।)

वह तुरंत निर्णय ले सकता है। इसके कारण जब भी उसे कोई लाभ का अवसर प्राप्त होता है तो वह समय रहते उनका पूरा लाभ उठा सकता है।

(ख) सूचना की गोपनीयता– एकल स्वामी अकेले ही निर्णय लेने का अधिकार रखता है इसलिए वह व्यापार संचालन के संबंधों में सूचना को गुप्त रख सकता है तथा गोपनीयता बनाए रख सकता है। वह किसी कानून के अंतर्गत अपने लेखे-जोखे को प्रकाशित करने के लिए बाध्य भी नहीं है।

(ग) प्रत्यक्ष प्रोत्साहन– एकल स्वामी संपूर्ण लाभ का ग्रहणकर्ता होने के कारण प्रत्यक्ष रूप से अपने प्रयत्नों के लाभ को प्राप्त करता है। चूँकि वह अकेला ही स्वामी होता है इसलिए उसे लाभ में किसी के साथ हिस्सा बाँटने की आवश्यकता नहीं है। इससे उसे कठिन परिश्रम करने के लिए अधिकतम प्रोत्साहन मिलता है।

(घ) उपलब्धि का अहसास– अपने स्वयं के लिए काम करने से व्यक्तिगत संतोष प्राप्त होता है। इस बात का अहसास कि वह स्वयं ही अपने व्यवसाय की सफलता के लिए उत्तरदायी है, न केवल उसे आत्मसंतोष प्रदान करता है बल्कि स्वयं की योग्यताओं में आस्था एवं विश्वास की भावना भी उत्पन्न करता है।

(ङ) स्थापित करने एवं बंद करने में सुगमता– व्यवसाय में प्रवेश के लिए न्यूनतम वैधानिक औपचारिकताओं की आवश्यकता होती है। यह एकल स्वामित्व का एक महत्त्वपूर्ण लाभ है। एकल स्वामित्व को शासित करने के लिए अलग से कोई कानून नहीं है। चूँकि इसका स्वरूप ऐसा है कि इसके कम से कम नियमन हैं इसलिए इसको स्थापित करना एवं इसे बंद करना सुगम है।

सीमाएँ

उपरोक्त लाभों के होते हुए भी एकल स्वामित्व की भी कुछ सीमाएँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख सीमाएँ इस प्रकार हैं–

(क) सीमित संसाधन– एक एकल स्वामी के संसाधन उसके व्यक्तिगत बचत एवं दूसरों से ऋण लेने तक ही सीमित हैं। बैंक एवं दूसरे ऋण देने वाले संस्थान एक एकल स्वामी को दीर्घ अवधि ऋण देने में संकोच करेंगे। व्यापार का आकार साधारणतः छोटा ही रहता है तथा उसके विस्तार की संभावना भी कम होती है। इसका एक बड़ा कारण संसाधनों की कमी या अभाव है।

(ख) व्यावसायिक इकाई का सीमित जीवनकाल– कानून की दृष्टि में स्वामी एवं स्वामित्व दोनों ही एक माने जाते हैं। स्वामी की मृत्यु, दिवालिया होना अथवा बीमारी से व्यवसाय प्रभावित होता है तथा इनसे वह बंद भी हो सकता है।

(ग) असीमित दायित्व– एकल स्वामित्व की एक बड़ी हानि है स्वामी का असीमित

दायित्व। यदि व्यापार में असफलता रहती है तो लेनदार अपनी लेनदारी को न केवल व्यवसाय की परिसंपत्तियों बल्कि स्वामी की निजी संपत्तियों से भी वसूल कर सकते हैं। एक भी गलत निर्णय या फिर प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण स्वामी पर भारी वित्तीय भार पड़ सकता है। इसी कारण से एकल स्वामी परिवर्तन अथवा विस्तार का जोखिम उठाने के लिए कम ही तैयार होता है।

(घ) सीमित प्रबंध योग्यता– स्वामी पर प्रबंध संबंधित कई उत्तरदायित्व रहते हैं, जैसे- क्रय, विक्रय, वित्त आदि। शायद ही कोई व्यक्ति हो जो इन सभी क्षेत्रों में श्रेष्ठ हो। संसाधनों की कमी के कारण वह गुणी एवं महत्त्वाकांक्षी कर्मचारियों को न तो भर्ती कर सकते हैं और न ही उन्हें रोके रख सकते हैं।

सारांश यह है कि एकल स्वामित्व के दोषों के होते हुए भी अनेक उद्यमी इसी को अपनाते हैं क्योंकि यह उन व्यवसायों के लिए सर्वोत्तम है जिनका आकार छोटा है; जिन्हें कम पूँजी की आवश्यकता है तथा जहाँ ग्राहकों को व्यक्तिगत सेवाओं की आवश्यकता है।

2.3 संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय विशेष प्रकार का संगठन स्वरूप है जो केवल भारत में ही पाया जाता है। हमारे देश का यह सबसे पुराना स्वरूप है। इसका अभिप्राय उस व्यवसाय से है जिसका स्वामित्व एवं संचालन एक संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य करते हैं। इसका प्रशासन हिन्दू कानून के द्वारा होता है। परिवार विशेष में जन्म लेने पर वह व्यक्ति व्यवसाय का सदस्य बन जाता है एवं तीन पीढ़ियों तक व्यवसाय का सदस्य रह सकता है।

व्यवसाय पर परिवार के मुखिया का नियंत्रण रहता है, जो परिवार का सबसे बड़ा सदस्य होता है एवं 'कर्त्ता' कहलाता है। सभी सदस्यों का पूर्वज की संपत्ति पर बराबर का स्वामित्व होता है तथा उन्हें सह-समांशी कहा जाता है।

लक्षण

निम्न बिन्दु संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय की आवश्यक विशेषताओं को उजागर करते हैं–

(क) निर्माण– संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय के लिए परिवार में कम से कम दो सदस्य एवं वह पैतृक संपत्ति जो उन्हें विरासत में मिली हो, उनका होना आवश्यक है। व्यवसाय के लिए किसी अनुबंध की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसमें सदस्यता जन्म के कारण मिलती है। यह हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 द्वारा शासित होता है।

(ख) दायित्व– कर्ता को छोड़कर अन्य सभी सदस्यों का दायित्व व्यवसाय की सह-समांशी संपत्ति में उनके अंश तक सीमित होता है।

(ग) नियंत्रण– परिवार के व्यवसाय पर कर्ता का नियंत्रण होता है। वही सभी निर्णय लेता है तथा वही व्यवसाय के प्रबंधन के लिए अधिकृत होता है। उसके निर्णयों से दूसरे सभी सदस्य बाध्य होते हैं।

(घ) निरंतरता– कर्ता की मृत्यु होने पर व्यवसाय चलता रहता है क्योंकि सबसे बड़ी आयु का अगला सदस्य कर्ता का स्थान ले लेता है, जिससे व्यवसाय में स्थिरता आती है। सभी सदस्यों की संयुक्त स्वीकृति से ही व्यवसाय को समाप्त किया जा सकता है।

(ङ) नाबालिग सदस्य– व्यवसाय में व्यक्ति का प्रवेश संयुक्त हिन्दू परिवार में जन्म लेने के कारण होता है इसीलिए नाबालिग भी व्यवसाय के सदस्य हो सकते हैं।

गुण

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय के लाभ निम्न-लिखित हैं–

(क) प्रभावशाली नियंत्रण– कर्ता के पास निर्णय लेने के पूरे अधिकार होते हैं। इससे सदस्यों में पारस्परिक मतभेद नहीं होता क्योंकि उनमें से कोई भी उसके निर्णय लेने के अधिकार में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। इसके कारण निर्णय शीघ्र लिए जाते हैं तथा उनमें लचीलापन भी होता है।

(ख) स्थायित्व– कर्ता की मृत्यु से व्यवसाय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि अगला सबसे अधिक आयु का व्यक्ति उसका स्थान ले लेता है। परिणामस्वरूप, व्यवसाय का कार्य समाप्त नहीं होता तथा व्यवसाय की निरंतरता को किसी प्रकार का खतरा नहीं होता।

(ग) सदस्यों का सीमित दायित्व– कर्ता को छोड़कर अन्य सभी सह-समांशियों का दायित्व व्यवसाय में उनके अंश तक सीमित होता है इसीलिए उनके जोखिम स्पष्ट एवं निश्चित होते हैं।

(घ) निष्ठा एवं सहयोग में वृद्धि– क्योंकि व्यवसाय को एक परिवार के सदस्य मिलकर चलाते हैं, इसलिए एक-दूसरे के प्रति अधिक निष्ठावान होते हैं। व्यवसाय का विकास परिवार की उपलब्धि होती है, इसीलिए उसके लिए यह गर्व की बात होती है। इससे सभी सदस्यों का श्रेष्ठ सहयोग प्राप्त होता है।

संयुक्त हिन्दू परिवार में लिंग समता – एक वास्तविकता

हिन्दू (संशोधन) अधिनियम-2005 के अनुसार, संयुक्त हिन्दू परिवार के सह-समांशी की पुत्री जन्म लेते ही एक सह-समांशी बन जाती है। संयुक्त हिन्दू परिवार के बँटवारे के समय सह-समांशी संपत्तियाँ सभी सह-समांशियों में, उनके लिंग को ध्यान में रखे बिना, समान रूप से विभाजित की जाएँगी। संयुक्त हिन्दू परिवार का सबसे बड़ा सदस्य (पुरुष अथवा स्त्री) कर्ता बनता है। संयुक्त हिन्दू परिवार की संपत्ति में विवाहित पुत्री को समान अधिकार हैं।

सीमाएँ

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय की कुछ सीमाएँ नीचे दी गई हैं–

(क) सीमित साधन– संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय मूल रूप से पैतृक संपत्ति पर आश्रित रहता है इसलिए इसके सामने सीमित पूँजी की समस्या रहती है। इससे व्यवसाय के विस्तार की संभावना कम हो जाती है।

(ख) कर्ता का असीमित दायित्व– कर्ता पर न केवल निर्णय लेने एवं प्रबंध करने के उत्तरदायित्व का बोझ होता है बल्कि उस पर असीमित दायित्व का भी भार होता है। व्यवसाय के ऋणों को चुकाने के लिए उसकी निजी संपत्ति का भी उपयोग किया जा सकता है।

(ग) कर्ता का प्रभुत्व– कर्ता अकेला ही व्यवसाय का प्रबंध करता है जो कभी-कभी अन्य सदस्यों को स्वीकार्य नहीं होता। इससे उनमें टकराव हो जाता है, यहाँ तक कि पारिवारिक इकाई भंग भी हो सकती है।

(घ) सीमित प्रबंध कौशल– यह आवश्यक तो नहीं कि कर्ता सभी क्षेत्रों का विशेषज्ञ हो इसलिए व्यवसाय को उसके मूर्खतापूर्ण निर्णयों के परिणाम भुगतने होते हैं। यदि वह प्रभावी निर्णय नहीं ले पाता है तो उससे वित्त संबंधी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं, जैसे- कम लाभ होना या हानि होना।

अंत में हम कह सकते हैं कि संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय ढलान की ओर है क्योंकि देश में संयुक्त हिन्दू परिवारों की संख्या कम होती जा रही है।

2.4 साझेदारी

एकल स्वामित्व के व्यापारिक विस्तार के वित्तीयन एवं प्रबंधन संबंधित निहित दोष के कारण एक जीवंत विकल्प के रूप में साझेदारी का मार्ग प्रशस्त हुआ है। साझेदारी भारी पूँजी निवेश, विभिन्न प्रकार के कौशल एवं जोखिम में भागीदारी की आवश्कताओं को पूरा करती है।

लक्षण

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर साझेदारी संगठन की विशेषताओं का वर्णन निम्न है–

(क) स्थापना– व्यावसायिक संगठन का साझेदारी स्वरूप भारतीय साझेदारी अधिनियम-1932 द्वारा शासित है। साझेदारी कानूनी समझौते के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आती है जिसमें साझेदारों के मध्य संबंधों, लाभ एवं हानि को बाँटने एवं व्यवसाय के संचालन के तरीकों को निश्चित किया जाता है। विशिष्ट बात यह है कि व्यवसाय वैधानिक होना चाहिए एवं उसके संचालन का उद्देश्य लाभ कमाना होना चाहिए। अतः कोई दो व्यक्ति यदि धर्मार्थ सेवा के लिए एकजुट होते हैं तो यह साझेदारी नहीं होगी।?

(ख) देयता– फर्म के साझेदारों का दायित्व असीमित होता है। यदि व्यवसाय की परिसंपत्तियाँ अपर्याप्त हैं तो ऋणों को व्यक्तिगत संपत्तियों से चुकाया जाएगा। इसके अतिरिक्त, वे ऋणों को चुकता करने के लिए व्यक्तिगत रूप से एवं संयुक्त रूप से उत्तरदायी होंगे। संयुक्त रूप से प्रत्येक साझेदार ऋण भुगतान के लिए उत्तरदायी है तथा वह प्रत्येक व्यवसाय में अपने हिस्से के अनुपात में योगदान करेगा तथा उस सीमा तक देनदार होगा। व्यवसाय की देनदारी का भुगतान करने के लिए उस साझेदार को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, लेकिन ऐसी स्थिति में वह साझेदार अन्य साझेदारों से उनके हिस्से की देनदारी के बराबर राशि वसूल सकता है।

(ग) जोखिम वहन करना– व्यवसाय को एक टीम के रूप में चलाने से उत्पन्न जोखिम को साझेदार वहन करते हैं। इसके प्रतिफल के रूप में उन्हें लाभ प्राप्त होता है जिसे वे आपस में एक तय अनुपात में बाँट लेते हैं लेकिन उसी अनुपात में वे हानि को भी बाँटते हैं।

(घ) निर्णय लेना एवं नियंत्रण– साझेदार आपस में मिलकर दिन-प्रतिदिन के कार्यों के संबंध में निर्णय लेने एवं नियंत्रण करने के उत्तरदायित्व को निभाते हैं। निर्णय उनकी आपसी राय से लिए जाते हैं। अतः साझेदारी फर्म के कार्यों के प्रबंधन में उन सभी का योगदान रहता है।

(ङ) निरंतरता– साझेदारी में व्यवसाय की निरंतरता की कमी रहती है क्योंकि किसी भी साझेदार की मृत्यु, अवकाश ग्रहण करने, दिवालिया होने या फिर पागल हो जाने से यह समाप्त हो सकती है। बाकी साझीदार नए समझौते के आधार पर व्यवसाय को चालू रख सकते हैं।

(च) सदस्यता– किसी साझेदारी को प्रारंभ करने हेतु न्यूनतम दो सदस्यों की आवश्यकता होती है। कंपनी अधिनियम-2013 की धारा 464 के अनुसार किसी साझेदारी फर्म में साझेदारों की अधिकतम संख्या 100 तक हो सकती है। कंपनी विविध नियम-2014 के नियम 10 के अनुसार वर्तमान में किसी साझेदारी संगठन में अधिकतम 50 सदस्य हो सकते हैं।

(छ) एजेंसी संबंध– साझेदारी की परिभाषा इस तथ्य को रेखांकित करती है कि इसमें व्यवसाय को सभी साझेदार मिलकर या फिर सभी की ओर से कोई एक साझेदार चला सकता है। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक साझेदार एजेंट भी है एवं स्वामी भी। चूँकि वह दूसरे साझेदारों का प्रतिनिधित्व करता है इसलिए वह उनका एजेंट होता है तथा उसके कार्यों से अन्य साझेदार आबद्ध हो जाते हैं। प्रत्येक साझेदार स्वामी भी होता है तथा दूसरे साझेदारों के कार्यों से आबद्ध हो जाता है।

गुण

साझेदारी फर्म के लाभ नीचे दिए गए हैं–

(क) स्थापना एवं समापन सरल– एक साझेदारी फर्म को संभावित साझेदारों के बीच समझौते के द्वारा सरलता से बनाया जा सकता है जिसके अनुसार वह व्यवसाय को चलाते हैं तथा जोखिम को बाँटते हैं। फर्म का पंजीकरण अनिवार्य नहीं होता एवं इसे बंद करना भी सरल होता है।

(ख) संतुलित निर्णय– साझेदार अपनी-अपनी विशिष्टता के अनुसार अलग-अलग कार्यों को देख सकते हैं। एक व्यक्ति विभिन्न कार्यों को करने के लिए बाध्य नहीं होता तथा इससे निर्णय लेने में गलतियाँ भी कम होती हैं। परिणामस्वरूप, निर्णय अधिक संतुलित होते हैं।

(ग) अधिक कोष– साझेदारी में पूँजी कई साझेदारों द्वारा लगाई जाती है। इससे एकल स्वामित्व की तुलना में अधिक धन जुटाया जा सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर अतिरिक्त व्यावसायिक कार्य भी किए जा सकते हैं।

(घ) जोखिम को बाँटना– साझेदारी फर्म को चलाने में निहित जोखिम को सभी साझेदार बाँट सकते हैं। इससे अकेले साझेदार पर पड़ने वाला बोझ, तनाव एवं दबाव कम हो जाता है।

(ङ) गोपनीयता– एक साझेदारी फर्म के लिए अपने खातों को प्रकाशित करना एवं ब्यौरा देना कानूनी रूप से आवश्यक नहीं है इसलिए यह अपने व्यावसायिक कार्यों के संबंध में सूचना को गुप्त रख सकते हैं।

सीमाएँ

साझेदारी फर्म की निम्न सीमाएँ हैं–

(क)असीमित दायित्व– यदि फर्म की देनदारी को चुकाने के लिए व्यवसाय की संपत्तियाँ पर्याप्त नहीं हैं तो साझेदारों को इसका भुगतान अपने निजी स्रोतों से करना होगा। साझेदारों के दायित्व संयुक्त एवं पृथक दोनों होते हैं इसलिए यह उन साझेदारों के लिए अनुचित होगा जिनके पास अधिक व्यक्तिगत धन है। यदि अन्य साझेदार ऋण का भुगतान करने में असमर्थ रहते हैं तो इसका भुगतान धनी साझेदारों को करना होगा।

"साझेदारी उन लोगों के बीच का संबंध है जो अनुबंध के लिए सर्वथा योग्य हैं तथा जिन्होंने निजी लाभ के लिए आपस में मिलकर एक वैधानिक व्यापार करने का समझौता किया है।"

एल.एच. हेनी

"साझेदारी उन लोगों के मध्य संबंध है जिन्होंने किसी व्यवसाय में अपनी संपत्ति, श्रम अथवा निपुणता को मिला लिया है तथा वे आपस में उससे होने वाले लाभ को बाँट रहे हैं।"

भारतीय प्रसंविदा अधिनियम 1872

(ख) सीमित साधन– साझेदारों की संख्या सीमित होती है इसलिए बड़े पैमाने के व्यावसायिक कार्यों के लिए उनके द्वारा लगाई गई पूँजी अपर्याप्त रहती है। परिणामस्वरूप, साझेदारी फर्म एक निश्चित आकार से अधिक विस्तार नहीं कर पाती।

(ग) परस्पर विरोध की संभावना– साझेदारी का संचालन व्यक्तियों का एक समूह करता है जिनमें निर्णय लेने के अधिकार को बाँटा जाता है। कुछ मामलों में यदि मतभेद है तो इससे साझेदारों के बीच विवाद पैदा हो सकता है। इसी प्रकार से एक साझेदार के निर्णय से दूसरे साझेदार आबद्ध हो जाते हैं। इस प्रकार से किसी एक का अनुचित निर्णय दूसरों के लिए वित्तीय बर्बादी का कारण बन सकता है। कोई साझेदार यदि फर्म को छोड़ना चाहता है तो उसे साझेदारी को समाप्त करना होगा क्योंकि वह स्वामित्व का हस्तांतरण नहीं कर सकता।

(घ) निरंतरता की कमी– किसी भी एक साझेदार की मृत्यु, अवकाश ग्रहण करने, दिवालिया होने अथवा पागल होने से साझेदारी समाप्त हो जाती है। इसे सभी की सहमति से कभी भी समाप्त किया जा सकता है इसलिए इसमें स्थायित्व एवं निरंतरता नहीं होती।

(ङ) जनसाधारण के विश्वास की कमी– साझेदारी फर्म के लिए इसकी वित्तीय सूचनाओं एवं अन्य संबंधित जानकारी का प्रकाशन अथवा उजागर करना कानूनी रूप से अनिवार्य नहीं है इसलिए जनसाधारण के लिए फर्म की वित्तीय स्थिति को जानना कठिन हो जाता है। इससे जनता का विश्वास भी कम होता है।

2.4.1 साझेदारों के प्रकार

साझेदारी फर्म में विभिन्न प्रकार के साझेदार हो सकते हैं जिनकी अलग-अलग भूमिकाएँ एवं दायित्व होते हैं। इनके अधिकारों एवं उत्तरदायित्वों को भली-भाँति समझने के लिए इनके प्रकारों को समझना महत्त्वपूर्ण है। इनका वर्णन नीचे किया गया है–

(क) सक्रिय साझेदार– एक सक्रिय साझेदार वह है जो पूँजी लगाता है। फर्म के लेनदारों के प्रति उसका दायित्व असीमित होता है। यह साझेदार अन्य साझेदारों की ओर से व्यवसाय संचालन में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं।

(ख) सुप्त अथवा निष्क्रिय साझेदार– जो साझेदार व्यवस्था के दिन-प्रतिदिन के कार्यों में भाग नहीं लेते हैं, उन्हें सुसुप्त साझेदार कहते हैं। एक निष्क्रिय साझेदार फर्म में पूँजी लगाता है, लाभ-हानि को बाँटता है तथा उसका असीमित दायित्व होता है।

(ग) गुप्त साझेदार– यह वह साझेदार होता है जिसके फर्म से संबंध को साधारण जनता नहीं जानती। इस विशिष्टता को छोड़कर बाकी मामलों में वह अन्य साझेदारों के समान होता है। वह पूँजी लगाता है, प्रबंध में भाग लेता है, लाभ हानि को बाँटता है तथा लेनदारों के प्रति उसका दायित्व असीमित होता है।

(घ) नाममात्र का साझेदार– यह वह साझेदार होता है, जिसके नाम का प्रयोग फर्म करती है लेकिन वह इसमें कोई पूँजी नहीं लगाती है। वह फर्म के प्रबंध में सक्रिय रूप से भाग नहीं लेता है, न ही लाभ-हानि में भागीदार होता है लेकिन अन्य साझेदारों के समान फर्म के ऋणों के भुगतान के लिए तीसरे पक्षों के प्रति उत्तरदायी होता है।

(ङ) विबंधन साझेदार (एस्टॉपेल)– कोई व्यक्ति विबंधन साझेदार तब माना जाता है, जब वह अपनी पहल, आचरण अथवा व्यवहार से दूसरों को यह आभास कराता है कि वह किसी फर्म का साझेदार है। ऐसे साझेदार फर्म के ऋणों के भुगतान के लिए उत्तरदायी होते हैं क्योंकि अन्य पक्षों की दृष्टि में वे साझेदार होते हैं। भले ही वे इसमें पूँजी नहीं लगाते हैं और न ही इसके प्रबंध में भाग लेते हैं। उदाहरण के लिए, सीमा की एक मित्र है रानी, जोकि एक सॉफ्टवेयर फर्म 'सिम्पलैक्स सोल्यूशन' में साझेदार है। रानी, सीमा के साथ 'मोहन सॉफ्टवेयर' में व्यवसाय के सिलसिले में आयोजित एक बैठक में भाग लेने जाती है तथा एक सौदे को तय करने की कार्यवाही में सक्रिय रूप से भाग लेती है। रानी ऐसा आभास दिलाती है कि मानो वह 'सिम्पलैक्स सोल्यूशन' में एक साझेदार है। यदि इस बातचीत के आधार पर 'सिम्पलैक्स सोल्यूशन' को उधार की सुविधा दी जाती है तो रानी भी इस देनदारी के भुगतान के लिए ठीक उसी प्रकार उत्तरदायी होगी जैसे वह भी फर्म में एक साझेदार हो।

(च) प्रतिनिधि साझेदार (होल्डिंग आउट)– यह वह व्यक्ति होता है जो जान-बूझकर फर्म में अपने नाम को प्रयोग करने देता है अथवा अपने आपको इसका प्रतिनिधि मानने देता है। ऐसा व्यक्ति किसी भी उस ऋण के लिए उत्तरदायी होगा जो उसके ऐसे प्रतिनिधित्व के कारण दिए गए हैं। यदि वह वास्तव में साझेदार नहीं है तथा इस उत्तरदायित्व से मुक्त होना चाहता है तो उसे तुरंत इसे नकारना होगा तथा उसे अपनी स्थिति स्पष्ट कर यह बताना होगा कि वह साझेदार नहीं है। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह इस आधार पर हुई किसी भी प्रकार की हानि के लिए तीसरे पक्ष के प्रति उत्तरदायी होगा।

2.4.2 साझेदारी के प्रकार

साझेदारी को दो घटकों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है–अवधि एवं देयता।

अवधि के आधार पर साझेदारी दो प्रकार की हो सकती है–(i) ऐच्छिक साझेदारी; एवं (ii) विशिष्ट साझेदारी।

देयता के आधार पर भी साझेदारी दो प्रकार की होती है–(i) सीमित दायित्व वाली; एवं (ii) असीमित दायित्व वाली। इनका वर्णन आगे के खंडों में किया गया है।

अवधि के आधार पर वर्गीकरण

(क) ऐच्छिक साझेदारी– इस प्रकार की साझेदारी की रचना साझेदारों की इच्छा से होती है। यह उस समय तक चलती है जब तक कि अलग होने का नोटिस नहीं दिया जाता। किसी भी साझेदार द्वारा नोटिस देने पर यह समाप्त हो जाती है।

(ख) विशिष्ट साझेदारी– साझेदारी की रचना यदि किसी विशिष्ट परियोजनाएँ जैसे किसी भवन के निर्माण या कोई कार्य या फिर एक निश्चित अवधि के लिए की जाती है, तो इसे विशिष्ट साझेदारी कहते हैं। जिस उद्देश्य के लिए इसकी रचना की गई है उसके पूरा होने पर अथवा अवधि की समाप्ति पर यह समाप्त हो जाती है।

देयता के आधार पर वर्गीकरण

(क) सामान्य साझेदारी– सामान्य साझेदारी में साझेदारों का दायित्व असीमित एवं संयुक्त होता है। साझेदारों को प्रबंध में भाग लेने का अधिकार होता है तथा उनके कृत्यों से अन्य साझेदार तथा फर्म आबद्ध हो जाते हैं। ऐसे फर्म का पंजीयन ऐच्छिक होता है। फर्म का अस्तित्व साझेदारों की मृत्यु, पागलपन एवं अवकाश ग्रहण करने से प्रभावित होता है।

(ख) सीमित साझेदारी- सीमित साझेदारी में कम से कम एक साझेदार का दायित्व असीमित होता है तथा शेष साझेदारों का सीमित। ऐसी साझेदारी सीमित दायित्व वाले साझेदारों की मृत्यु, पागलपन अथवा दिवालिया होने से समाप्त नहीं होता है। सीमित दायित्व वाले साझेदार प्रबंध में भाग नहीं ले सकते तथा उनके कार्यों से न तो फर्म और न ही दूसरे साझेदार आबद्ध होते हैं। ऐसी साझेदारी का पंजीयन अनिवार्य है।

इस प्रकार की साझेदारी की पहले भारत में अनुमति नहीं थी। सीमित दायित्व वाले साझेदारी की अनुमति 1991 नवीन लघु उद्योग नीति लागू करने के पश्चात् दी गई। यह कदम छोटे पैमाने के उद्यमियों के मित्र एवं संबंधियों से समता पूँजी प्राप्त करने के लिए उठाया गया क्योंकि अन्यथा ये लोग साझेदारी फर्म में असीमित दायित्व की धारा के कारण सहायता करने से पीछे हटते थे।

2.4.3 साझेदारी संलेख

साझेदारी उन लोगों का ऐच्छिक संगठन है, जो समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एकजुट होते हैं। साझेदारी बनाने के लिए सभी शर्तें एवं साझेदारों से संबंधित सभी पहलुओं के संबंध में स्पष्ट समझौता आवश्यक है। ताकि बाद में साझेदारों में किसी प्रकार की गलतफहमी नहीं हो। यह समझौता मौखिक अथवा लिखित हो सकता है।

लिखित समझौते का होना आवश्यक नहीं है,

सारणी 2.1 साझेदारों के प्रकार का तुलनात्मक विश्लेषण

प्रकार	पूंजी का योगदान	प्रबंध	लाभ/हानि में हिस्सा	देनदारी
सक्रिय साझेदार	पूँजी लगाता है	प्रबंध में भागीदार है	लाभ/हानि मे भागीदार है	असीमित दायित्व है
सुप्त अथवा निष्क्रिय साझेदार	पूँजी लगाता है	प्रबंध में भाग लेता है	लाभ/हानि को बाँटता है	असीमित दायित्व है
गुप्त साझेदार	पूँजी लगाता है	प्रबंध में भाग लेता है पर गुप्त रूप से	लाभ-हानि बाँटता है	असीमित दायित्व है
नाम मात्र का साझेदार	पूँजी नहीं लगाता है	प्रबंध में भाग नहीं लेता है	साधारणतया लाभ/हानि में भागीदार नहीं होता है	असीमित दायित्व है
विबंधन साझेदार	पूँजी नहीं लगाता है	प्रबंध में भाग नहीं लेता है	लाभ/हानि में भागीदार नहीं होता है	असीमित दायित्व है
प्रतिनिधि साझेदार	पूँजी नहीं लगाता है	प्रबंध में भाग नहीं लेता है	लाभ-हानि में भागीदार नहीं होता है	असीमित दायित्व है

लेकिन अच्छा यही रहता है कि समझौता लिखित ही हो, क्योंकि यह निर्धारित शर्तों का प्रमाण है। लिखित समझौता जो साझेदारी को शासित करने के लिए शर्तों व परिस्थितियों का उल्लेख करता है साझेदारी संलेख कहलाता है। साझेदारी संलेख में सामान्यतः निम्न पहलू शामिल होते हैं-

- फर्म का नाम;
- व्यवसाय की प्रकृति एवं स्थान जहाँ वह स्थित है;
- व्यवसाय की अवधि;
- प्रत्येक साझेदार द्वारा किया गया निवेश;
- लाभ-हानि का बंटवारा;
- साझेदारों के कर्तव्य एवं दायित्व;
- साझेदारों का वेतन एवं आहरण;
- साझेदार के प्रवेश, अवकाश ग्रहण एवं हटाए जाने से संबंधित शर्तें;
- पूँजी एवं आहरण पर ब्याज;
- फर्म के समापन की प्रक्रिया;
- खातों को तैयार करना एवं उसका अंकेक्षण;
- विवादों के समाधान की पद्धति।

2.4.4 पंजीकरण

साझेदारी फर्म के पंजीकरण का अर्थ है फर्म के पंजीयन अधिकारी के पास रहने वाले फर्मों के रजिस्टर में फर्म का नाम तथा संबंधित विवरण की प्रविष्टि करना। यह फर्म की उपस्थिति का

पक्का प्रमाण होता है।

फर्म को पंजीकृत कराना ऐच्छिक होता है। परंतु जिस फर्म का पंजीयन नहीं हुआ है, वह कई लाभों से वंचित रह जाती है। फर्म का पंजीयन न कराने के निम्नलिखित परिणाम हो सकते हैं-

(अ) एक अपंजीकृत फर्म का साझेदार अपने फर्म अथवा अन्य साझेदारों की विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं कर सकता;

(ब) फर्म अन्य पक्षों के विरुद्ध मुकदमा नहीं चला सकती; तथा

(स) फर्म साझेदारों के विरुद्ध मुकदमा नहीं चला सकती।

अतः हम कह सकते हैं कि फर्म का पंजीयन यद्यपि अनिवार्य नहीं है फिर भी पंजीयन कराना ही उचित रहता है। भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 के अनुसार किसी फर्म की साझेदार फर्म को उस राज्य के रजिस्ट्रार के पास पंजीकरण करा सकती है जिस राज्य में वह स्थित है। एक फर्म के पंजीयन की प्रक्रिया निम्नलिखित है-

(1) फर्मों के रजिस्ट्रार, के पास निर्धारित प्रपत्र (फॅार्म) के रूप में आवेदन करना। इस आवेदन में निम्न विवरण दिया जाता है-

- फर्म का नाम;
- वह स्थान जहाँ फर्म स्थित है तथा वह स्थान जहाँ फर्म अपना व्यवसाय कर रही है;
- प्रत्येक साझेदार के फर्म में प्रवेश की तिथि;
- साझेदारों के नाम एवं पते, एवं
- साझेदारी की अवधि।

(2) इस आवेदन पर सभी साझेदारों के हस्ताक्षर होते हैं। फर्मों के रजिस्ट्रार के पास आवश्यक फीस जमा कराना।

(3) स्वीकृति के पश्चात रजिस्ट्रार फर्मों के रजिस्टर में प्रविष्टि कर देगा तथा तत्पश्चात पंजीयन प्रमाण पत्र जारी कर देगा।

2.5 सहकारी संगठन

सहकारी शब्द का अर्थ है किसी साझे उद्देश्य के लिए एक साथ मिलकर काम करना।

सहकारी समिति उन लोगों का स्वैच्छिक संगठन है, जो सदस्यों के कल्याण के लिए एकजुट हुए हैं। अधिक लाभ के लालची मध्यस्थों के हाथों संभावित शोषण को ध्यान में रखते हुए वे अपने आर्थिक हितों की रक्षा से प्रेरित होते हैं।

एक सहकारी समिति का सहकारी समिति अधिनियम 1912 के अंतर्गत पंजीकरण अनिवार्य है। इसकी प्रक्रिया सरल है एवं समिति का गठन करने के लिए कम से कम दस बालिग सदस्यों की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। समिति की पूँजी को अंशों का निर्गमन कर इसके सदस्यों से जुटाया जाता है। पंजीकरण के पश्चात् समिति एक स्वतंत्र वैधानिक अस्तित्व प्राप्त कर लेती है।

नाबालिग साझेदार

साझेदारी दो लोगों के बीच कानूनी अनुबंध पर आधारित होती है, जो उनके द्वारा संचालित व्यापार के लाभ-हानि को बाँटने का समझौता करते हैं, क्योंकि एक नाबालिग किसी के साथ अनुबंध नहीं कर सकता, इसलिए वह किसी फर्म में साझेदार नहीं बन सकता। फिर भी किसी नाबालिग को सभी अन्य साझेदारों की सहमति से फर्म के लाभों में भागीदार बनाया जा सकता है। ऐसे में उसका दायित्व फर्म में लगाई गई, उसकी पूँजी तक सीमित होगा। वह फर्म के प्रबंध में भाग नहीं ले सकेगा। अतः एक नाबालिग केवल लाभ में भागीदार होगा तथा वह हानि को वहन नहीं करेगा। हाँ, यदि वह चाहे तो फर्म के खातों को देख सकता है। नाबालिग की स्थिति उसके बालिग हो जाने पर बदल जाती है। वास्तव में बालिग हो जाने पर नाबालिग को यह निर्णय लेना होगा कि क्या वह फर्म में साझेदार बने रहना चाहता है। छः माह के अन्दर उसे अपने निर्णय का सार्वजनिक नोटिस देना होगा। यदि वह ऐसा करने मे असमर्थ रहता है, तो उसे पूर्णरूपेण साझेदार माना जाएगा तथा अन्य सक्रिय साझेदारों के समान ही फर्म की देनदारी के लिए उसका दायित्व भी असीमित होगा।

लक्षण

सहकारी समिति की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(क) स्वैच्छिक सदस्यता– सहकारी समिति की सदस्यता ऐच्छिक होती है। कोई भी व्यक्ति किसी सहकारी समिति में स्वेच्छा से सम्मिलित हो सकता है अथवा उसे छोड़ सकता है। किसी समिति में सम्मिलित होने अथवा उसे छोड़ने के लिए वह बाध्य नहीं होता। यद्यपि छोड़ने से पहले उसे एक नोटिस देना पड़ता है, लेकिन सदस्य बने रहने के लिए वह बाध्य नहीं होता है। इसकी सदस्यता खुली होती है तथा किसी भी धर्म, जाति अथवा लिंग भेद का कोई भी व्यक्ति इसका सदस्य बन सकता है।

(ख) वैधानिक स्थिति– सहकारी समिति का पंजीकरण अनिवार्य है, इससे समिति को अपने सदस्यों से अलग पृथक अस्तित्व प्राप्त हो जाता है। समिति अनुबंध कर सकती है एवं अपने नाम में परिसंपत्ति रख सकती है। दूसरों पर मुकदमा कर सकती है तथा दूसरे इस पर मुकदमा कर सकते हैं। इसके पृथक वैधानिक अस्तित्व के कारण सदस्यों के इसमें प्रवेश अथवा इसको छोड़ कर जाने का इस पर प्रभाव नहीं पड़ता।

(ग) सीमित दायित्व– एक सहकारी समिति के सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लगायी पूँजी की राशि तक सीमित रहता है। किसी भी सदस्य के लिए यह राशि अधिकतम जोखिम की सीमा है।

(घ) नियंत्रण– किसी भी सहकारी समिति में निर्णय लेने की शक्ति उसकी निर्वाचित प्रबंध कमेटी के हाथों में होती है। सदस्यों के पास वोट का अधिकार होता है, जिससे उन्हें प्रबंध समिति के सदस्यों को चुनने का अवसर मिलता है तथा सहकारी समिति का स्वरूप प्रजातान्त्रिक बनता है।

(ङ) सेवा भावना– सहकारी समिति के उद्देश्य पारस्परिक सहायता एवं कल्याण के मूल्यों

पर अधिक ज़ोर देते हैं। इसलिए इसके कार्यों में सेवाभाव प्रधान रहता है। अगर सहकारी समिति को आधिक्य की प्राप्ति होती है, तो इसे समिति के उपनियमों के अनुरूप सदस्यों में लाभांश के रूप में बाँट दिया जाता है।

गुण

सहकारी समिति के सदस्यों को अनेक लाभ होते हैं। सहकारी समिति के कुछ लाभ नीचे दिए जा रहे हैं।

(क) **वोट की समानता–** सहकारी समिति एक व्यक्ति एक वोट के सिद्धांत से शासित होती है। सदस्यों द्वारा लगायी गयी पूँजी की राशि से प्रभावित हुए बिना प्रत्येक सदस्य को वोट का समान अधिकार प्राप्त है।

(ख) **सीमित दायित्व–** सहकारी समिति के सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लगायी गयी पूँजी तक सीमित होता है। उनकी निजी संपत्तियों को व्यवसाय के ऋणों को चुकाने के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता।

(ग) **स्थायित्व–** सदस्यों की मृत्यु, दिवालिया होना अथवा पागलपन सहकारी समिति की निरंतरता को प्रभावित नहीं करता है। समिति इसीलिए सदस्यता में आए परिवर्तन से प्रभावित हुए बिना कार्य करती रहती है।

(घ) **मितव्ययी प्रचालन–** सदस्य समिति को साधारणतया अवैतनिक सेवाएँ देते हैं। क्योंकि ध्यान मध्यस्थ की समाप्ति पर ही केंद्रित होता है, इससे लागत में कमी आती है। अधिकांश ग्राहक समिति के सदस्य ही होते हैं। इसलिए डूबते ऋणों का जोखिम बहुत कम होता है।

(ङ) **सरकारी सहायता–** सहकारी समिति लोकतंत्र एवं धर्मनिर्पेक्षता का उदाहरण है। इसलिए इनको कम टैक्स, अनुदान, नीची ब्याज की दर के ऋण के रूप में सरकार से सहायता मिलती है।

(च) **सरल स्थापना–** सहकारी समिति कम से कम दस सदस्यों से प्रारंभ की जा सकती है। इसके पंजीकरण की प्रक्रिया सरल है तथा इसमें कानूनी औपचारिकताएँ कम

प्राइस वॉटर हाउस कूपर्स पूर्व में एक साझेदारी फर्म थी

आज अनेक कंपनियों का उद्गम साझेदारी है। विश्व की शीर्ष लेखांकन फर्म। प्राइस वॉटर हाउस कूपर्स को 1998 में प्राइस वॉटर हाउस एवं कूपर्स एंड लैब्रेंड दो कंपनियों को मिलाकर बनाया गया था। प्रत्येक का इतिहास 150 वर्ष पुराना है तथा 1900 शताब्दी में ग्रेट ब्रिटेन से जुड़ा है। 1850 में सैमुअल लोवैल प्राइस ने लंदन में लेखांकन व्यवसाय स्थापित किया। 1865 में विलियम एच होलीलैंड एवं एडविन वॉटरहाउस के साथ मिलकर उसने साझेदारी फर्म बनाई। जैसे-जैसे फर्म बढ़ी पेशेवर कर्मचारियों में से आवश्यक योग्यता प्राप्त लोगों को साझेदारी में सम्मिलित कर लिया गया। 1980 के अंत तक प्राइस वॉटर हाउस एक महत्त्वपूर्ण लेखांकन फर्म बन चुकी थी।
(**स्रोतः** कोलंबिया विश्वविद्यालय के प्राइस वॉटर हाउस कॉरपरेटर के अभिलेख।)

हैं। इसकी स्थापना सहकारी समिति अधिनियम 1912 में दी गई व्यवस्था के अनुसार होती है।

सीमाएँ

सहकारी संगठन की निम्न सीमाएँ हैं–

(क) सीमित संसाधन– सहकारी समिति के संसाधन सदस्यों की पूंजी से बनते हैं, जिनके साधन सीमित होते हैं। निवेश पर लाभांश की नीची दर के कारण भी अधिक सदस्य नहीं बन पाते।

(ख) अक्षम प्रबंधन– सहकारी समितियां ऊँचा वेतन नहीं दे पाती, इसलिए उसको कुशल प्रबंधक नहीं मिल पाते। जो सदस्य स्वेच्छा से अवैतनिक सेवाएँ देते हैं वे साधारणतया पेशेवर योग्यता प्राप्त नहीं होते हैं, अतः वे प्रभावी प्रबंधन नहीं कर पाते।

(ग) गोपनीयता की कमी– सदस्यों की सभा में खुलकर चर्चा होती है तथा समिति अधिनियम की धारा (7) के अनुसार प्रत्येक सहकारी समिति पर प्रगट करने का दायित्व है, इसीलिए समिति प्रचालन के संबंध में गोपनीयता बनाए रखना कठिन होता है।

(घ) सरकारी नियंत्रण– सहकारी समिति को सरकार सुविधाएँ देती है, लेकिन बदले में उसे खातों के अंकेक्षण, खाते जमा करना आदि से संबंधित कई नियमों का पालन करना होता है। सहकारी संगठन के कार्य संचालन पर नियंत्रण के बहाने राज्य सहकारी विभाग का हस्तक्षेप होता है। इससे समिति के प्रचालन की स्वतन्त्रता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

(ङ) विचारों की भिन्नता– परस्पर विरोधी विचारों के कारण आंतरिक कलह उत्पन्न हो सकती है, जिससे निर्णय लेने में कठिनाई उत्पन्न होती है। कल्याण के प्रयोजन पर व्यक्तिगत स्वार्थ हावी हो सकते हैं। यदि कुछ सदस्य व्यक्तिगत लाभ को प्राथमिकता दें, तो अन्य सदस्य का हित पीछे छूट सकता है।

2.5.1 सहकारी समितियों के प्रकार

प्रचालन की प्रकृति के आधार पर सहकारी समितियाँ कई प्रकार की होती हैं, जिनका वर्णन नीचे किया गया हैः

(क) उपभोक्ता सहकारी समितियाँ– उपभोक्ता सहकारी समितियों का गठन उपभोक्ताओं

"सहकारिता संगठन का वह स्वरूप है, जिनमें कुछ लोग मानवीयता एवं समानता के आधार पर अपने आर्थिक हितों के प्रोत्साहन हेतु स्वेच्छा से संगठित होते हैं।"

ई. एच. कैलवर्ट

"सहकारिता संगठन एक समिति है, जिसका उद्देश्य सहकारिता के सिद्धांतों के अनुसार अपने सदस्यों के आर्थिक हितों को प्रोतसाहित करना है।"

भारतीय सहकारिता अधिनियम-1912

के हितों की रक्षा के लिए किया जाता है। इसके सदस्य वे उपभोक्ता होते हैं, जो बढ़िया गुणवत्ता वाली वस्तुएँ उचित मूल्य पर प्राप्त करना चाहते हैं। ऐसी समिति का उद्देश्य मध्यस्थ को समाप्त करना होता है ताकि प्रचालन मितव्ययी हो। समिति थोक विक्रेता से वस्तुओं को सीधे बड़ी मात्रा में क्रय करती है तथा उन्हें अपने सदस्यों को बेच देती है। इस प्रकार बिचौलिए खत्म हो जाते हैं। यदि कुछ लाभ होता है तो वह सदस्यों के द्वारा क्रय के आधार पर बाँट दिया जाता है।

(ख) उत्पादक सहकारी समितियाँ– इन समितियों की स्थापना छोटे उत्पादकों के हितों की रक्षा के लिए की जाती है। इसके सदस्य वे उत्पादक होते हैं, जो उपभोक्ताओं की माँग को पूरा करने के लिए वस्तुओं के उत्पादन हेतु आगत जुटाते हैं। समिति का उद्देश्य बड़े पूँजीपतियों के विरुद्ध खड़े होना तथा छोटे उत्पादकों की सौदा करने की शक्ति को बढ़ाना है। यह सदस्यों को कच्चा माल, उपकरण एवं अन्य आगतों की आपूर्ति करती हैं तथा बिक्री के लिए उनके उत्पादों को भी खरीदती हैं। प्रचालन की प्रकृति के अनुसार लाभ को सदस्यों में उनके द्वारा उत्पादित अथवा विक्रय किए गए माल के आधार पर बाँट दिया जाता है।

(ग) विपणन सहकारी समितियाँ– विपणन समितियों का गठन छोटे उत्पादकों को उनके उत्पादों को बेचने में सहायता के लिए किया जाता है। इसके सदस्य वे उत्पादक होते हैं, जो अपने उत्पादों के उचित मूल्य वसूलना चाहते हैं। समिति का लक्ष्य मध्यस्थों को समाप्त करना तथा उत्पादों के लिए अनुकूल बाज़ार सुरक्षित कर सदस्यों की प्रतियोगी स्थिति में सुधार करना है। समिति प्रत्येक सदस्य के उत्पाद को एकत्रित करती है तथा उन्हें सर्वोत्तम मूल्य पर बेचने के लिए परिवहन, भंडारण, पैकेजिंग आदि विपणन कार्यों को करती है। लाभ को उत्पाद संघ के सदस्यों को योगदान के अनुपात में बाँट दिया जाता है।

(घ) किसान सहकारी समितियाँ– इन समितियों का गठन किसानों को उचित मूल्य पर आगत उपलब्ध कराकर उनके हितों की रक्षा के लिए किया जाता है। इसके सदस्य वे किसान होते हैं, जो मिलकर कृषि कार्यों को करना चाहते हैं। समिति का उद्देश्य बड़े पैमाने पर कृषि का लाभ उठाना एवं उत्पादकता को बढ़ाना है। ऐसी समितियाँ .फसलों के उगाने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले बीज, खाद, मशीनरी एवं अन्य आधुनिक तकनीक उपलब्ध कराती हैं। इससे न केवल किसानों की पैदावार तथा आय बढ़ती है बल्कि इससे खंडित भू-जोतों से संबंधित समस्याओं को हल करने में सहायता मिलती है।

(ङ) **सहकारी ऋण समितियाँ–** सहकारी ऋण समितियों की स्थापना सदस्यों को आसान शर्तों पर सरलता से कर्ज उपलब्ध कराने के लिए की जाती है। इसके सदस्य वे व्यक्ति होते हैं, जो ऋणों के रूप में वित्तीय सहायता चाहते हैं। ऐसी समितियों का लक्ष्य सदस्यों को साहूकारों के शोषण से संरक्षण प्रदान करना है जो ऋणों पर ऊँची दर से ब्याज लेते हैं। ऐसी समितियाँ अपने सदस्यों को सदस्यों से एकत्रित की गई पूंजी एवं उनकी जमा में से नीची दर पर ऋण देते हैं।

(च) **सहकारी आवास समितियाँ–** सहकारी आवास समितियों की स्थापना सीमित आय के लोगों को उचित लागत पर मकान बनाने में सहायता के लिए की जाती है। इसके सदस्य वे व्यक्ति होते हैं जो उचित मूल्य पर रहने का स्थान प्राप्त करने के इच्छुक हैं। इसका उद्देश्य सदस्यों की आवासीय समस्याओं का समाधान करना है। इसके लिए वह मकान बनाती है तथा किश्तों में भुगतान की सुविधा भी देती है। ये समितियाँ फ्लैट बनाती हैं या फिर सदस्यों को प्लॉटज़मीन देती हैं जिस पर वे स्वंय अपनी पसंद से भवन बना सकते हैं।

2.6 संयुक्त पूँजी कंपनी

कंपनी कुछ लोगों का एक ऐसा संघ है, जिसका गठन किसी व्यवसाय को चलाने के लिए किया गया हो तथा जिसका अपने सदस्यों से हटकर

सारणी 2.2 फॉर्च्यून ग्लोबल संगठनों के संघ में शामिल भारतीय कंपनियाँ

भारत में वरीयता कंपनी	भूमंडलीय श्रेणीक्रम	भारत में श्रेणीक्रम	आगम ($ मिलियन)	वेबसाइट
इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड	161	1	54,711	www.iocl.com
रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड	215	2	43,437	www.ril.com
टाटा मोटर्स लिमिटेड	226	3	42,092	www.tatamotors.com
भारतीय स्टेट बैंक	232	4	41,681	www.sbi.co.in
भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड	350	5	20,082	www.bharat petroleum.com
हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड	367	6	28,820	www.hindustanpetroleum.com
राजेश एक्सपोर्ट्स लिमिटेड	423	7	25,237	www.rajeshindia.com

वैधानिक अस्तित्व हो। कंपनी संगठन कंपनी अधिनियम 1956 द्वारा शासित होते हैं। कंपनी एक कृत्रिम व्यक्तित्व वाली संस्था है, जिसका अलग से एक वैधानिक अस्तित्व, शाश्वत उत्तराधिकार एवं सार्वमुद्रण है। कंपनी संगठन 'कंपनी अधिनियम-2013' द्वारा शासित होते हैं। कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 2(20) के अन्तर्गत दी गई परिभाषा के अनुसार कंपनी से आशय उन कंपनियों से है जिनका समामेलन कम्पनी अधिनियम 2013 में या इससे पूर्व किसी कंपनी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ है।

अंशधारक कंपनी के स्वामी होते हैं, जबकि निदेशक मंडल प्रमुख प्रबंधकर्त्ता जिन्हें अंशधारक चुनते हैं। साधारणतया कंपनी के स्वामियों का व्यवसाय पर परोक्ष रूप से नियंत्रण होता है। कंपनी की पूँजी छोटे-छोटे भागों में विभक्त होती है। जिन्हें अंश/शेयर कहते हैं जिन्हें एक अंशधारक किसी दूसरे व्यक्ति को स्वतंत्रता पूर्वक हस्तान्तरित कर सकता है (निजी कंपनी में नहीं)।

लक्षण

संयुक्त पूँजी कंपनी की परिभाषा उसके लक्षण स्पष्ट कर देती है। ये हैं–

(क) कृत्रिम व्यक्ति– कंपनी की रचना कानून द्वारा होती है तथा इसका अपने सदस्यों से अलग स्वतंत्र अस्तित्व होता है। एक प्राकृतिक व्यक्ति के समान कंपनी अपनी सम्पत्ति रख सकती है, ऋण ले सकती है, उधार ले सकती है, अनुबंध कर सकती है, दूसरों पर मुकदमा कर सकती है, दूसरे इस पर मुकदमा कर सकते हैं; लेकिन व्यक्तियों के समान यह सांस नहीं ले सकती, खा नहीं सकती, दौड़ नहीं सकती, बात नहीं कर सकती इसलिए इसे कृत्रिम व्यक्ति कहा जाता है।

(ख) पृथक वैधानिक अस्तित्व– समामेलन के दिन से ही कंपनी को एक अलग पहचान मिल जाती है, जो इसके सदस्यों से पृथक होती है। इसकी परिसंपत्तियाँ एवं इसकी देयताएं इसके स्वामियों की परिसंपत्तियों एवं देयताओं से पृथक होती हैं। कानून, व्यवसाय एवं इसके स्वामियों को एक नहीं मानता।

(ग) स्थापना– कंपनी की स्थापना अधिक समय लेने वाली, खर्चीली एवं जटिल प्रक्रिया है। इसके कार्य प्रारंभ से पहले कई प्रलेख तैयार करना तथा कई कानूनी आवश्यकताओं का पालन करना होता है। कंपनियों का समामेलन कंपनी अधिनियम 2013 अथवा किसी पूर्व कंपनी अधिनियम में होना अनिवार्य है। वे सभी कंपनियाँ जिनका समामेलन कंपनी अधिनियम, 1956 अथवा उससे पूर्व के कंपनी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ है, उन्हें किसी भी कम्पनियों की सूची में सम्मिलित किया जाएगा।

(घ) शाश्वत उत्तराधिकार– कंपनी की रचना कानून द्वारा होती है तथा कानून ही इसका अंत कर सकता है। इसके अस्तित्व का अंत केवल तभी होगा जबकि इसको बंद करने की प्रक्रिया जिसे समापन कहते हैं, पूरी हो जाएगी। सदस्य आते रहेंगें और जाते रहेंगें लेकिन इसका अस्तित्व बना रहेगा।

(ङ) नियंत्रण– कंपनी के मामलों का प्रबंध एवं नियंत्रण निदेशक मण्डल करता है, जो कंपनी के व्यवसाय को चलाने के लिए उच्च प्रबंध अधिकारियों की नियुक्ति करता है। निदेशकों की स्थिति अत्यधिक महत्व की होती है, क्योंकि कंपनी के कार्यों के लिए वे अंशधारकों के प्रति सीधे उत्तरदायी होते हैं। वैसे अंशधारियों को व्यवसाय के दिन-प्रतिदिन के संचालन में भाग लेने का अधिकार नहीं है।

(च) दायित्व– हानि होने की स्थिति में सदस्यों का दायित्व कंपनी में उनके द्वारा लगाई पूँजी तक सीमित होता है। लेनदार अपने दावों का निवारण करने के लिए केवल कंपनी की परिसंपत्तियों का ही उपयोग कर सकते हैं, क्योंकि ऋण का भार कंपनी पर

अमूल का अद्भुत सहकारिता उपक्रम

अमूल प्रतिदिन 21 लाख 20 हजार किसानों से (जिनमें अनेकों अनपढ़ हैं) 4,47,000 लीटर दूध इकट्ठा करता है। दूध को पैकिंग किए ब्रांड उत्पादों में परिवर्तित करता है तथा 6 करोड़ के मूल्य का माल देशभर में फैले 5,00,000 फुटकर विक्रय केंद्रों को पहुँचाता है।

इसकी शुरूआत दिसम्बर 1946 में किसानों के समूह द्वारा की गई जो स्वयं को मध्यस्थों के चंगुल से मुक्त कराना चाहते थे, बाज़ार में सीधी पहुँच द्वारा अपने परिश्रम का पूरा लाभ सुनिश्चित करना चाहते थे। आनन्द नामक गाँव में स्थित केयरा जिला दूध सहकारिता संघ (जो अब अमूल के नाम से प्रसिद्ध है) ने चमत्कारिक विस्तार किया। इसने अन्य दूध सहकारी समितियों को मिलाया तथा गुजरात में फैला इनका जाल, अब 21.2 लाख किसान, 10,411 ग्राम स्तर के दूध एकत्रण केन्द्र, 14 जिलास्तर के संयंत्रों को गुजरात सहकारी दुग्ध उत्पादन संघ की देख-रेख में संचालित कर रहा है। अमूल विभिन्न संघों द्वारा उत्पादित विभिन्न प्रकार के दुग्ध उत्पादों का एक साझा ब्रांड हैं। ये उत्पाद हैं– तरल दूध, पाउडर, मक्खन घी, पनीर, कोको उत्पाद, मिठाइयाँ, आइसक्रीम एवं गाढ़ा किया गया दूध। अमूल के कुछ उपब्रांड हैं, अमूल स्प्रे, अमूल लस्सी, अमूल्या एवं न्यूट्रामूल। खाद्य तेल उत्पादों का समूह धारा एवं लोकधारा के नाम से, जल-धारा नाम से पेयजल तथा फलों का रस सफल के नाम से बेचा जाता है।

(**स्रोतः** पंकज चन्द्रा के लेख पर आधारित। *“Rediff.com”*, बिजनेस स्पेशल, सितंबर, 2005.)

‘पूर्व कंपनी अधिनियम’ से आशय निम्न में से किसी भी एक अधिनियम से है–

1. भारतीय कंपनी अधिनियम, 1866 (1866 का 10) से पूर्व कंपनियों से संबंधित लागू अधिनियम।
2. भारतीय कंपनी अधिनियम, 1866 (1866 का 10)
3. भारतीय कंपनी अधिनियम, 1882 (1882 का 6)
4. भारतीय कंपनी अधिनियम, 1913 (1913 का 6)
5. स्थानांतरित कंपनियाँ पंजीकरण अध्यादेश, 1942 (1942 का अध्यादेश 42)
6. कंपनी अधिनियम, 1956

है न कि इसके सदस्यों पर। सदस्यों से हानि में योगदान के लिए उनके हिस्से की अदत्त राशि तक के ही लिया जा सकता है उदाहरण के लिए अक्षय किसी कंपनी का अंशधारी है। उसके पास 10 रु के 2,000 अंश है जिनपर उसने 7 रु का भुगतान कर दिया है। यदि कंपनी को हानि होती है तो उसकी देनदारी 6,000 रु की होगी जो कि 2,000 अंशों पर 3 रु प्रति अंश से अदत्त राशि है। कंपनी की इससे और अधिक हानि के लिए वह उत्तरदायी नहीं होगा।

(छ) सार्वमुद्रण– एक कंपनी की सार्वमुद्रा हो भी सकती है और नहीं भी। यदि कंपनी की सार्वमुद्रा है तो वह कंपनी की प्रपत्रों (जैसे समझौते) पर अनिवार्य रूप से लगी होनी चाहिए। यदि कंपनी की सार्वमुद्रा न हो तो प्रपत्रों पर हस्ताक्षर करने वाला व्यक्ति संचालक मंडल के संकल्प से प्राधिकृत होना चाहिए।

(ज) जोखिम उठाना– कंपनी में हानि के जोखिम को सभी अंशधारक वहन करते हैं न कि एक या कुछ व्यक्ति जैसा एकल स्वामित्व अथवा साझेदारी में होता है। वित्तीय कठिनाई के समय सभी अंशधारकों को कंपनी की पूँजी में अपने-अपने हिस्से की सीमा तक ऋण में योगदान देना होता है। अतः हानि की जोखिम को बड़ी संख्या में अंश धारकों में बाँट दिया जाता है।

गुण

कंपनी के अनेक लाभ हैं जिनमें से कुछ की चर्चा नीचे की गई है–

(क) सीमित दायित्वः अंशधारक अपने अंशों की अदत्त राशि की सीमा तक उत्तरदायी होते हैं तथा ऋणों के निपटान के लिए कंपनी की परिसंपत्तियों का ही उपयोग किया जा सकता है। स्वामी की निजी संपत्ति हर प्रकार के प्रभार से मुक्त रहती है। इससे निवेशक का जोखिम कम हो जाता है।

(ख) हितों का हस्तांतरण– स्वामित्व के हस्तांतरण में सरलता कंपनी में निवेश का अतिरिक्त लाभ है, क्योंकि एक सार्वजनिक कंपनी के अंशों को बाज़ार में बेचा जा सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर इन्हें आसानी से रोकड़ में बदलाजा सकता है। इससे निवेश में बाधा नहीं आती तथा निवेश की दृष्टि से कंपनी एक आकर्षक माध्यम बन जाता है।

(ग) स्थायी अस्तित्व– कंपनी का अपने सदस्यों से पृथक अस्तित्व होता है तथा इस पर उनकी मृत्यु, अवकाश ग्रहण, त्याग-पत्र, दिवालिया होना एवं पागलपन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कंपनी के सभी सदस्यों की मृत्यु पर भी कंपनी अस्तित्व में रहती है। इसका समापन कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार ही हो सकता है।

(घ) **विस्तार की संभावना–** संगठन के एकल स्वामित्व और साझेदारी में तुलना करने पर एक कंपनी के पास वित्त के अधिक स्रोत हैं। एक कंपनी जनता से धन की व्यवस्था के साथ-साथ बैंक और वित्तिय संस्थानों से ऋण भी ले सकती है। इसमें विस्तार की व्यापक संभावना है। निवेशक का शेयर में पूँजी लगाने की ओर झुकाव रहता है, क्योंकि इसमें सीमित दायित्व, स्वामित्व का हस्तांतरण और अधिक लाभ प्राप्ति की संभावना होती है।

(ङ) **पेशेवर प्रबंध–** कंपनी, विशेषज्ञों एवं पेशेवर लोगों को ऊँचा वेतन देने में सक्षम होती है इसलिए वह विभिन्न क्षेत्रों में निपुण लोगों को नियुक्त कर सकती है। उसके प्रचालन के पैमाने के विस्तृत होने के कारण कार्य विभाजन भी संभव हो पाता है। प्रत्येक विभाग एक कार्य विशेष को करता है तथा उसका मुखिया एक निपुण प्रबंधक होता है। इससे कंपनी के निर्णय संतुलित होते हैं एवं उसका प्रचालन अधिक कुशल होता है।

सीमाएँ

कंपनी की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं–

(क) **निर्माण में जटिल–** कंपनी के निर्माण के लिए अधिक समय, प्रयत्न एवं कानूनी आवश्यकताओं एवं निर्माण प्रक्रिया के विस्तृत ज्ञान की आवश्यकता होती है। अतः एकल व्यापारी एवं साझेदारी की तुलना में कंपनी का निर्माण अधिक जटिल होता है।

(ख) **गोपनीयता की कमी–** कंपनी अधिनियम के अनुसार एक सार्वजनिक कंपनी को समय-समय पर कंपनी रजिस्ट्रार के कार्यालय में अनेकों सूचनाएँ देनी होती हैं। ये समस्त सूचनाएँ जनसाधारण को उपलब्ध होती हैं। इसीलिए कंपनी प्रचालन के संबंध में पूरी गोपनीयता रखना कठिन होता है।

(ग) **अवैयक्तिक कार्य वातावरण–** स्वामित्व एवं प्रबंध में पृथकता से एक ऐसा वातावरण बन जाता है जिसमें कंपनी के अधिकारीगण न तो प्रयत्न करते हैं और न ही व्यक्तिगत रूप से रुचि लेते हैं। कंपनी के बड़े आकार के कारण स्वामी एवं उच्च प्रबंधकों के लिए कर्मचारी, ग्राहक एवं लेनदारों से व्यक्तिगत संपर्क रखना कठिन हो जाता है।

(घ) **अनेकानेक नियम–** कंपनी के कार्य संचालन के संबंध में कई कानूनी प्रावधान एवं बाध्यताएँ हैं। कंपनी पर अंकेक्षण, वोट देने, विवरण जमा करने एवं प्रलेख तैयार करने के संबंध में अनेकों प्रतिबंध होते हैं तथा इसे रजिस्ट्रार, सेबी, कंपनी लॉ बोर्ड जैसी अनेकों संस्थाओं से विभिन्न प्रमाण पत्र लेने होते हैं। इससे कंपनी की प्रचालन संबधी स्वतंत्रता कम हो जाती है तथा इन औपचारिकताओं में काफी समय, प्रयत्न एवं पैसा लगता है।

सारणी 2.3 निजी कंपनी और सार्वजनिक कंपनी में अंतर

क्र. सं.	आधार	सार्वजनिक कंपनी	निजी कंपनी
1.	सदस्य	न्यूनतम 7, अधिकतम कोई सीमा नहीं।	न्यूनतम 2, अधिकतम 200
2.	निदेशकों की न्यूनतम संख्या	3	2
3.	सदस्यों की अनुक्रमणिका	अनिवार्य है।	अनिवार्य नहीं है।
4.	अंशों का हस्तांतरण	हस्तांतरण पर कोई प्रतिबंध नहीं है।	हस्तांतरण पर प्रतिबंध होता है।
5.	अंशों के क्रय हेतु जनता को आमंत्रण	अंशों एवं ऋणपत्रों के क्रय हेतु जनता को आमंत्रित कर सकती है।	अंशों एवं ऋणपत्रों के क्रय के लिए जनता को आमंत्रित नहीं कर सकती।

(ङ) निर्णय में देरी– कंपनी का प्रबंध लोकतांत्रिक ढंग से निदेशक मंडल के माध्यम से होता है, जिसके बाद प्रबंधन के विभिन्न स्तर उच्च, मध्य एवं निम्न स्तर के प्रबंध आते हैं। विभिन्न प्रस्तावों के संप्रेषण एवं अनुमोदन की प्रक्रिया के कारण न केवल निर्णय लेने में बल्कि उन्हें क्रियान्वित करने में देरी होती है।

(च) अल्पतंत्रीय प्रबंधन– सिद्धांततः कंपनी एक लोकतांत्रिक संस्था है, जिसमें निदेशक मंडल स्वामियों यानि कि अंशधारकों के प्रतिनिधि होते हैं परन्तु व्यवहार में अधिकांश बड़े आकार के संगठनों में, जिनमें बड़ी संख्या में अंशधारी होते हैं, स्वामियों का कंपनी के नियंत्रण एवं उसके संचालन में बहुत कम हाथ होता है। क्योंकि अशंधारी पूरे देश में फैले होते हैं तथा उनका बहुत कम प्रतिशत साधारण सभा में उपस्थित होता है। परिणामस्वरूप निदेशक मंडल को अपने अधिकारों को प्रयोग करने की पूरी आज़ादी मिल जाती है तथा कभी-कभी वह अंशधारकों के हितों के विरुद्ध भी इसका उपयोग करते हैं। साधारणतया एक अंशधारक जो प्रबंध से संतुष्ट नहीं हैं के समक्ष अपने अंशों को बेच देने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहता, क्योंकि निदेशकों को सभी प्रमुख निर्णयों को लेने का अधिकार होता है इसलिए कंपनी का शासन कुछ लोगों के हाथ में ही होता है।

(छ) हितों का टकराव– कंपनी के विभिन्न अंशधारकों के हितों में टकराव हो सकता है। उदाहरण के लिए कर्मचारियों की रुचि ऊँचे वेतन में होगी, तो उपभोक्ता कम कीमत पर अच्छी गुणवत्ता वाली वस्तु एवं सेवाएँ चाहेंगे, वहीं अंशधारी चाहेंगें कि उन्हें ऊँची दर से लाभांश मिले एवं उनके अंशों का वास्तविक मूल्य बढ़े। इन परस्पर विरोधी हितों को संतुष्ट करना कंपनी के प्रबंधन में अकसर समस्याओं को जन्म देता है।

भारत हैवी इलैक्ट्रीक्लस लि. - एक सार्वजनिक कंपनी की गुणवत्ता यात्रा

बी.एच.ई.एल. (भारत हैवी इलैक्ट्रीक्लस लि.) आज भारत की ऊर्जा आधारभूत ढाँचा संबंधी क्षेत्र का सबसे बड़ा इंजीनियरिंग एवं विनिर्माण उद्यम है। बी.एच.ई.एल. की स्थापना 40 वर्ष से अधिक पहले की गई थी। इसकी स्थापना के साथ भारत में देसी भारी विद्युत उपकरण उद्योग ने प्रवेश किया बी.एच.ई.एल. में न केवल हमारे स्वप्न को पूरा किया बल्कि उससे कहीं आगे निकल। यह कंपनी 1971-72 से लगातार लाभ कमा रही है तथा 1976-77 से लाभांश दे रही है। बी.एच.ई.एल. 30 मुख्य उत्पाद समूहों के 180 से अधिक उत्पादों का उत्पादन कर रही है तथा भारतीय अर्थव्यवस्था के मूल क्षेत्र जैसे- बिजली उत्पादन एवं संचारण, उद्योग, परिवहन, दूरसंचार, नवीनीकरण योग्य ऊर्जा आदि की आवश्यकताओं को पूरा कर रही है।

बी.एच.ई.एल. गुणवत्ता प्रबंधन प्रणाली (ISO-9001) पर्यावरण प्रबंध प्रणाली (ISO-14001) एवं पेशेवर स्वास्थ्य एवं सुरक्षा प्रबंध प्रणाली (OHSAS-18001) से प्रमाणित है तथा पूर्ण गुणवत्ता प्रबंध की दिशा में अग्रसर है।

बी.एच.ई.एल. की मुख्य उपलब्धियाँ निम्न हैं-

1. बी.एच.ई.एल. ने सुविधाएँ एवं औद्योगिक उपयोगकर्ताओं के लिए 90,000 से भी अधिक मैगावॉट बिजली के उत्पादन के लिए उपकरण लगाए हैं।
2. 400 कि.वाट (ए.सी. व डी.सी.) तक के संचारण एवं वितरण के जाल में प्रचालन के लिए 2,25,000 मैगावाट के संचारण क्षमता एवं अन्य उपकरणों की आपूर्ति की।
3. बिजली परियोजनाओं, पैट्रोकैमीकल्स, रिफाइनरीज, इस्पात, अल्यूमीनियम, रासायनिक खाद, सीमेंट, सीमेंट संयंत्र आदि को 25000 से ऊपर ड्राइव नियंत्रण प्रणाली वाली मोटरों की आपूर्ति की है।
4. 12000 कि.मी. से भी अधिक रेलवे लाइन के जाल को विद्युत ट्रैक्शन एवं एसी/डीसी लोको की आपूर्ति की है।
5. पावरसंयंत्र एवं अन्य उद्योगों को 10 लाख वाल्वों की आपूर्ति की।

बी.एच.ई.एल. का दिव्य स्वप्न एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर का इंजीनियरिंग उद्यम बनने का है, जिससे उसकी भागीदारी में बढ़ोतरी होगी। कंपनी अपनी इन आकांक्षाओं को मूर्तरूप देने एवं देश की वैश्विक स्तर पर कार्य करने की आशा को पूरा करने के लिए प्रयत्नशील है। बीएचईएल की प्रमुख शक्ति उसके कुशल और समर्पित 43,500 कर्मचारी हैं। सभी कर्मचारी को अपने विकास और भविष्य को उज्जवल बनाने का समान अवसर दिया जाता है। लगातार प्रशिक्षण और पुनप्रशिक्षण, भविष्य की योजना, अनुकूल कार्य संस्कृति और प्रबंध की भागीदारी इन सभी से प्रतिबद्ध और प्रेरित कार्यबल को स्थापित करके उत्पादकता, गुणवत्ता और जवाबदेही के मानक हैं।

स्त्रोतः बीएचईएल की वेबसाईट

2.6.1 कंपनियों के प्रकार

कंपनी दो प्रकार की हो सकती है निजी कंपनी एवं सार्वजनिक कंपनी। इनका विस्तार से वर्णन नीचे दिया गया है–

निजी कंपनी

निजी कंपनी से अभिप्राय उस कम्पनी से है–

(क) जो अपने सदस्यों पर अंशों के हस्तान्तरण

पर रोक लगाती है;

(ख) जिसमें वर्तमान एवं भूतपूर्व कर्मचारियों को छोड़ कर न्यूनतम 2 एवं अधिकतम 200 सदस्य होते हैं; और

(ग) जो अंश पूंजी लगाने के लिए जनता को आमंत्रित नहीं करती हैं।

यदि कोई निजी कंपनी ऊपर दिए प्रावधानों में से किसी एक का भी उल्लघंन करती है तो यह निजी कंपनी नहीं रहेगी तथा इसको प्राप्त सभी छूटें एवं सुविधाओं से वंचित हो जाएगी। निजी कंपनी को प्राप्त विशेषाधिकारों से कुछ निम्नलिखित हैं–

(क) एक निजी कंपनी के निर्माण के लिए केवल दो सदस्यों की आवश्यकता होती है, जबकि सार्वजनिक कंपनी के निर्माण के लिए 7 व्यक्तियों की।

(ख) प्रविवरण पत्र जारी करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि निजी कंपनी के अंशों के अभिदान के लिए जनता को आमंत्रित नहीं किया जाता है।

(ग) न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त किए बिना भी अंशों का आवंटन किया जा सकता है।

(घ) एक निजी कंपनी समामेलन प्रमाण-पत्र प्राप्त होते ही व्यवसाय प्रारंभ कर सकती है। जबकि सार्वजनिक को व्यवसाय प्रारंभ करने के लिए व्यापार प्रारंभ प्रमाण-पत्र की प्राप्ति तक रुकना होता है।

कलम तलवार से अधिक शक्तिशाली होती है–
लक्जर राइटिंग इंस्ट्रयूमेंट्स प्रा. लि. का उदाहरण

1963 में देवेन्द्र कुमार जैन नाम के नौजवान ने लेखन सामग्री के क्षेत्र में नया अध्याय आरंभ किया। यह नौजवान मेहनत का धनी एवं महत्वाकांक्षी था। 19 वर्ष की कच्ची उम्र में उसने सदर बाज़ार में बिना किसी मशीन के सहायता के समुच्चय करने की छोटी दुकान शुरू की, जहाँ वह लक्जर राइटिंग इन्सट्रयूमेंट प्रा. लि. (LWIPL) के नाम से पेनों का उत्पादन करने लगा था।

लगातार तीन वर्ष तक **'नम्बर वन राइटिंग इन्सट्रयूमेंट एक्सपोर्टर'** का पारितोषक LWIPL को दिया गया। इसी के परिणामस्वरूप LWIPL को चार अंतर्राष्ट्रीय ब्रांड- पाइलॉट, पेपरमेट, पार्कर एवं वाटरमैन के भारत में विनिर्माण एवं वितरण के एकमात्र अधिकार दिए गए हैं।

लक्जर राइटिंग इन्सट्रयूमेंट्स प्रा. लि. की आज लेखन उपकरण बाज़ार में 20 प्रतिशत से भी अधिक भागीदारी है, जो सबसे अधिक भागीदारी है। इसका आवर्त 150 करोड़ को भी पार कर गया है। आज की तारीख में लक्जर भारत का लेखनयन्त्रों का अग्रणी विनिर्माता एवं निर्यातक है। कुल निर्यात में इसका हिस्सा 15 प्रतिशत से भी ऊपर है तथा नई दिल्ली में चार एवं मुम्बई में तीन विनिर्माण इकाइयाँ हैं, जिनमें 600 से अधिक कर्मचारी हैं। बाज़ार के अधिकांश खण्डों मे यह अग्रणी है। यह विभिन्न उपयोगों एवं आवश्यकताओं के लिए विभिन्न प्रकार के पेनों का उत्पादन एवं वितरण करता है।

(**स्रोत**: *http://www.luxorparker.com)*

(ङ) एक निजी कंपनी में दो निदेशक होने चाहिए, जबकि सार्वजनिक कंपनी में कम से कम तीन निदेशकों की आवश्यकता होती है।

(च) निजी कंपनी को सदस्यों की अनुक्रमणिका रखने की आवश्यकता नहीं होती है जबकि सार्वजनिक कंपनी के लिए यह आवश्यक है।

(छ) एक निजी कंपनी में निदेशकों को ऋण देने पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं है। ऋण की स्वीकृति बिना सरकारी अनुमति के दी जा सकती है, जबकि सार्वजनिक कंपनी में इसके लिए सरकार की अनुमति आवश्यक है।

एक निजी कंपनी के लिए अपने नाम के 'पीछे प्राइवेट लिमिटेड' शब्द लगाना अनिवार्य है।

सार्वजनिक कंपनी

एक सार्वजनिक कंपनी वह कंपनी है जो निजी कंपनी नहीं है। भारतीय कंपनी अधिनियम के अनुसार एक सार्वजनिक कंपनी वह है–

(अ) जिसमें कम से कम 7 सदस्य हों तथा अधिकतम संख्या की कोई सीमा नहीं है;

(ब) जिसमें अंशों के हस्तांतरण पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

(स) जो अपनी अंश पूँजी के अभिदान के लिए जनता को आमंत्रित कर सकती है तथा जन साधारण इसकी सार्वजनिक जमा में

तालिका 2.4 संगठन के स्वरूप के चुनाव को प्रभावित करने वाले कारक

चयन	अधिकतम लाभ	न्यूनतम लाभ
पूँजी की उपलब्धता	कंपनी	एकल स्वामित्व
स्थापना की लागत	एकल स्वामित्व	कंपनी
स्थापना आसान	एकल स्वामित्व	कंपनी
स्वामित्व का स्थांतरण	कंपनी	एकल स्वामित्व
प्रबंधन की योग्यता	कंपनी	एकल स्वामित्व
अंतर्नियम	एकल स्वामित्व	कंपनी
लचीलापन	एकल स्वामित्व	कंपनी
निरंतरता	कंपनी	एकल स्वामित्व
दायित्व	कंपनी	एकल स्वामित्व

रुपया जमा करा सकते हैं।

यदि एक निजी कंपनी सार्वजनिक कंपनी की सहायक कंपनी है तो वह भी सार्वजनिक कंपनी के समान मानी जाएगी।

2.7 व्यावसायिक संगठन के स्वरूप का चयन

व्यावसायिक संगठनों के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन करने के पश्चात यह स्पष्ट ही है कि प्रत्येक स्वरूप के कुछ लाभ एवं कुछ हानियाँ हैं। उचित स्वरूप का चयन कई महत्त्वपूर्ण घटकों पर निर्भर करता है। इसीलिए यह आवश्यक हो जाता है कि उपयुक्त स्वरूप का चयन करते समय कुछ आधारभूत घटकों को ध्यान में रखा जाए। संगठन के चयन के महत्वपूर्ण निर्धारक घटकों को तालिका 2.4 में दर्शाया गया है तथा उनकी चर्चा नीचे की गई है–

(क) प्रारंभिक लागत– जहाँ तक व्यवसाय की प्रारंभिक लागत का संबंध है, एकल स्वामित्व सबसे कम खर्चीला सिद्ध होता है। तथापि इसकी कानूनी औपचारिकताएँ न्यूनतम होती हैं एवं कार्यकलापों का पैमाना छोटा। साझेदारी में भी सीमित पैमाने पर उद्यम के कारण कम कानूनी औपचारिकताओं एवं कम लागत का लाभ मिलता है। सहकारी समितियों एवं कंपनियों का पंजीयन अनिवार्य है। कंपनी के निर्माण की कानूनी प्रक्रिया लम्बी एवं खर्चीली होती है। जहाँ तक प्रारंभिक लागत का संबंध है एकल स्वामित्व पहली पसंद है, क्योंकि इस पर न्यूनतम व्यय आता है। इसके विपरीत कंपनी संगठन के निर्माण की प्रक्रिया जटिल है तथा इस पर अधिक व्यय होता है।

(ख) दायित्व– एकल स्वामित्व एवं साझेदारी में स्वामी का दायित्व असीमित होता है। अतः आवश्यकता पड़ने पर ऋणों का भुगतान स्वामियों की निजी परिसंपत्तियों से किया जाता है। संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय में केवल कर्ता का ही दायित्व असीमित होता है। सहकारी समितियों एवं कंपनियों में दायित्व सीमित होता है तथा लेनदारों को अपने दावों के भुगतान के लिए कंपनी की परिसंपत्तियों पर ही संतोष करना पड़ता है। निवेशकों के लिए कंपनी संगठन अधिक उचित है, क्योंकि इसमें जोखिम बंट जाता है।

(ग) निरंतरता– एकल स्वामित्व एवं साझेदारी फर्मों में इनके स्वामियों की मृत्यु, दिवालिया होने या पागल हो जाने जैसी घटनाओं से उनकी निरंतरता प्रभावित होती है। संयुक्त हिन्दू व्यवसायों, सहकारी समितियों एवं कंपनियों की निरंतरता पर ऊपर वर्णित घटनाओं का प्रभाव नहीं पड़ता है। यदि व्यवसाय को स्थायी ढाँचे की आवश्यकता है तो कंपनी अधिक उपयुक्त रहती है जबकि थोड़ी अवधि के उपक्रमों के लिए एकल स्वामित्व अथवा साझेदारी को प्राथमिकता दी जाती है।

तालिका 2.5 संगठनों के स्वरूप का तुलनात्मक विश्लेषण

तुलना के आधार	एकल स्वामित्व	साझेदारी	संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय	सहकारी समिति	कंपनी
निर्माण/ स्थापना	न्यूनतम विधिक औपचारिकताएँ, सरल स्थापना	पंजीयन ऐच्छिक, स्थापना सरल	विधियक औपचारिकताएँ कम, पंजीयन की आवश्यकता नहीं, स्थापना सरल	पंजीयन अनिवार्य विधियक औपचारिकताएं अधिक	पंजीयन अनिवार्य, निर्माण प्रक्रिया लंबी एवं खर्चीली
सदस्य	केवल स्वामी	न्यूनतम-2 अधिकतम-50	परिवार की संपत्ति के विभाजन के लिए कम से कम दो सदस्य, कोई अधिकतम सीमा नहीं	कम से कम 10 बालिग सदस्य कोई अधिकतम सीमा नहीं	निजी कंपनी न्यूनतम-2 सार्वजनिक कंपनी-7 निजी कंपनी अधिकतम-50 सार्वजनिक कंपनी-कोई सीमा नहीं
पूँजी	सीमित वित्त	सीमित, परंतु एकल स्वामित्व से अधिक	पूर्वजों की संपत्ति	सीमित	ब\ड़ी मात्रा में वित्तीय संसाधन
दायित्व	असीमित	असीमित एवं संयुक्त	असीमित (कर्ता) सीमित (अन्य सदस्य)	सीमित	सीमित
प्रबंध एवं नियंत्रण	स्वामी ही सभी निर्णय लेता है शीघ्र निर्णय	साझेदार निर्णय लेते हैं, सभी साझेदारो की स्वीकृति आवश्यक	कर्ता निर्णय लेता है	चुने गए प्रतिनिधि, अर्थात प्रबंध समिति निर्णय लेती है	स्वामी एवं प्रबंध पृथक
निरंतरता	व्यवसाय में अनिश्चितता व्यवसाय एवं स्वामी एक ही व्यक्ति	अधिक स्थायित्व लेकिन साझेदारों की स्थिति से प्रभावित	कर्ता की मृत्यु पर भी स्थायित्व आगे व्यवसाय चलता रहता है	पृथक वैधानिक अस्तित्व के कारण स्थायित्व	पृथक वैधानिक अस्तित्व के कारण स्थायित्व

(घ) प्रबंधन की योग्यता– एक एकल स्वामी के लिए प्रचालन के सभी क्षेत्रों में विशेषज्ञों की सेवाएँ प्राप्त करना कठिन होता है। जबकि अन्य प्रकार के संगठन जैसे- साझेदारी एवं कंपनी में इसकी संभावना अधिक है। श्रम विभाजन के कारण प्रबंधक कुछ क्षेत्र विशेषों में विशिष्टता प्राप्त कर लेते हैं, जिससे निर्णयों की श्रेष्ठता बढ़ जाती है। लेकिन लोगों में विचार भिन्नता के कारण टकराव की स्थिति भी पैदा हो सकती है। इसके अतिरिक्त यदि संगठन के कार्यों की प्रकृति जटिल है तथा जिनके लिए पेशेवर प्रबंध की आवश्यकता हो तो कंपनी को पसंद किया जाएगा। दूसरी ओर, जहाँ प्रचालन सरल है वहाँ एकल स्वामित्व अथवा साझेदारी अधिक उपयुक्त रहेगी, क्योंकि सीमित कौशल रखने वाले व्यक्ति भी ऐसे व्यवसायों को चला सकते हैं। अतः व्यवसाय के कार्यों की प्रकृति एवं पेशेवर प्रबंध की आवश्यकता संगठन के स्वरूप के चयन को प्रभावित करेंगे।

(ङ) पूँजी की आवश्यकता– बड़ी मात्रा में पूंजी जुटाने के लिए कंपनी अधिक श्रेष्ठ स्थिति में होती है क्योंकि इसके लिए यह बड़ी संख्या में विनियोगकर्ताओं को अंशों का निर्गमन कर सकती है। साझेदारी फर्म को भी सभी साझेदारों के इकट्ठा संसाधनों का लाभ मिल जाता है। लेकिन एक एकल स्वामी के साधन सीमित होते हैं। इसीलिए यदि प्रचालन बड़े पैमाने पर है तो कंपनी अधिक उपयुक्त रहेगी जबकि मध्य एवं छोटे आकार के व्यवसायों के लिए साझेदारी या एकल स्वामित्व अधिक उपयुक्त रहेंगे। विस्तार के लिए कंपनी अधिक उचित रहेगी क्योंकि इसे बड़ी मात्रा में वित्त उपलब्ध हो जाता है।

(च) नियंत्रण– व्यवसाय प्रचालन पर सीधे नियंत्रण एवं निर्णय लेने का पूर्ण अधिकार चाहिए तो एकल स्वामित्व को पसंद किया जाएगा। लेकिन यदि स्वामियों को नियंत्रण एवं निर्णय लेने में भागीदारी से परहेज नहीं है तो साझेदारी अथवा कंपनी को अपनाया जा सकता है। कंपनी में स्वामी एवं प्रबंधक पृथक-पृथक होते हैं।

(छ) व्यवसाय की प्रकृति– जहाँ ग्राहकों से सीधे संपर्क की आवश्यकता है जैसे कि परचून की दुकान वहाँ एकल स्वामित्व अधिक उपयुक्त रहेगा। बड़ी विनिर्माण इकाइयों के लिए जहाँ ग्राहक से सीधे व्यक्तिगत संपर्क की आवश्यकता नहीं है, कंपनी स्वरूप को अपनाया जा सकता है। इसी प्रकार से जहाँ पेशेवर सेवाओं की आवश्यकता होती है वहाँ साझेदारी अधिक उपयुक्त रहती है।

अंत में कह सकते हैं कि ऊपर जितने घटकों की चर्चा की गई है वे सब एक दूसरे से संबंधित है। पूंजी का योगदान एवं जोखिम, व्यवसाय के आकार एवं प्रकृति के अनुसार बदलते हैं। अतः व्यवसाय संगठन का जो स्वरूप दायित्व की दृष्टि से छोटे पैमाने पर व्यवसाय चलाने पर उपयुक्त हों वही बड़े पैमाने पर व्यवसाय चलाने के लिए अनुपयुक्त सिद्ध होगा। इसलिए उपयुक्त संगठन स्वरूप चुनने के पहले सभी प्रासंगिक घटकों को ध्यान में रखना चाहिए।

मुख्य शब्दावली

एकल स्वामित्व | साझेदारी | संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय
सहकारी संगठन | संयुक्त पूँजी कम्पनी

सारांश

व्यवसाय संगठन के विभिन्न स्वरूप निम्न हैं– 1. एकल स्वामित्व 2. संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय 3. साझेदारी 4. सहकारी समिति तथा 5. संयुक्त पूँजी कंपनी

एकल स्वामित्व–

एकल स्वामित्व उस व्यवसाय को कहते हैं, जिसका स्वामित्व, प्रबंधन एवं नियंत्रण एक ही व्यक्ति के हाथ में होता है तथा वही संपूर्ण लाभ पाने का अधिकारी तथा हानि के लिए उत्तरदायी होता है। एकल स्वामित्व के कई लाभ हैं। इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण लाभ निम्न हैं- 1. शीर्घ निर्णय 2. सूचना की गोपनीयता 3. प्रत्यक्ष प्रोत्साहन 4. उपलब्धि का अहसास 5. स्थापित करने एवं बंद करने में सुगमता। उपरोक्त लाभों के होते हुए भी एकल स्वामित्व की भी कुछ सीमाएँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख सीमाएँ इस प्रकार हैं- 1. सीमित संसाधन 2. व्यावसायिक इकाई का सीमित जीवनकाल 3. असीमित दायित्व 3. सीमित प्रबंध योग्यता।

संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय–

इसका अभिप्राय उस व्यवसाय से है जिसका स्वामित्व एवं संचालन एक संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य करते हैं। इसका प्रशासन हिन्दू कानून के द्वारा होता है। व्यवसाय पर परिवार के मुखिया का नियंत्रण रहता है। वह परिवार सबसे बड़ी आयु का व्यक्ति होता है एवं 'कर्त्ता' कहलाता है। संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय के लाभ निम्नलिखित हैं- 1. प्रभावशाली नियंत्रण 2. स्थायित्व 3. सदस्यों का सीमित दायित्व 4. निष्ठा एवं सहयोग में वृद्धि। संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय की कुछ सीमाएँ नीचे दी गई हैं- 1. सीमित साधन 2. कर्ता का असीमित दायित्व 3. कर्ता का प्रभुत्व 4. सीमित प्रबंध कौशल।

साझेदारी

साझेदारी भारी पूँजी निवेश, विभिन्न प्रकार के कौशल एवं जोखिम में भागीदारी की आवश्कताओं को पूरा करती है। साझेदारी फर्म के लाभ निम्न हैं– 1. स्थापना एवं समापन सरल 2. संतुलित निर्णय 3. अधिक कोष 4. जोखिम को बाँटना 5. गोपनीयता। साझेदारी फर्म की निम्न सीमाएँ हैं–

1. असीमित दायित्व 2. सीमित साधन 3. परस्पर विरोध की संभावना 4. निरंतरता की कमी 5. जनसाधारण के विश्वास की कमी। साझेदारी फर्म में विभिन्न प्रकार के साझेदार हो सकते है– 1. सक्रिय साझेदार 2. सुप्त अथवा निष्क्रिय साझेदार 3. गुप्त साझेदार 4. नाममात्र का साझेदार 5. विबन्धन साझेदार (इसटॉपेल) 6. प्रतिनिधी साझेदार (होल्डिंग आऊट)।

अवधि के आधार पर साझेदारी दो प्रकार की हो सकती हैः 1. ऐच्छिक साझेदारी 2. विशिष्ट साझेदारी। देयता के आधार पर भी साझेदारी के दो प्रकार हैं– 1. सीमित दायित्व वाली एवं 2. असीमित दायित्व वाली।

व्यावसायिक संगठन के स्वरूप

सहकारी संगठन

सहकारी समिति उन लोगों का स्वैच्छिक संगठन है जो सदस्यों के कल्याण के लिए एकजुट हुए हैं। सहकारी समिति के सदस्यों को अनेक लाभ होते हैं- 1. वोट की समानता 2. सीमित दायित्व 3. स्थायित्व 4. मितव्ययी प्रचालन 5. सरकारी सहायता 6. सरल स्थापना। सहकारी संगठन की निम्न सीमाएँ हैं- 1. सीमित संसाधन 2. अक्षम प्रबंधन 3. गोपनीयता की कमी 4. सरकारी नियंत्रण 5. विचारों की भिन्नता। प्रचालन की प्रकृति के आधार पर सहकारी समितियाँ कई प्रकार की होती हैं जिनका वर्णन नीचे किया गया हैः 1. उपभोक्ता सहकारी समितियां 2. उत्पादक सहकारी समितियाँ 3. विपणन सहकारी समितियाँ 4. किसान सहकारी समितियाँ 5. सहकारी ऋण समितियाँ 6. सहकारी आवास समितियाँ।

कंपनी-

कंपनी एक कृत्रिम व्यक्तित्व वाली संस्था है, जिसका अलग से एक वैधानिक अस्तित्व, शाश्वत उत्तराधिकार एवं सार्वमुद्रण है। कंपनी के अनेक लाभ हैं जिनमें से कुछ की चर्चा नीचे की गई है-
1. सीमित दायित्व 2. हितों का हस्तांतरण 3. स्थायी अस्तित्व 4. विस्तार की संभावना 5. पेशेवर प्रबंध। कंपनी की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं- 1. निर्माण में जटिल 2. गोपनीयता की कमी 3. वैयक्तिक कार्य वातावरण 4. अनेकानेक नियम 5. निर्णय में देरी 6. अल्पतंत्रीय प्रबंधन 7. हितों का टकराव। कंपनी दो प्रकार की हो सकती है निजी कंपनी एवं सार्वजनिक कंपनी। निजी कंपनी से अभिप्राय उस कंपनी से है, जो अपने सदस्यों पर अंशों के हस्तांतरण पर रोक लगाती है। जो अंश पूंजी लगाने के लिए जनता को आमंत्रित नहीं करती हैं। एक सार्वजनिक कंपनी वह कंपनी है जो निजी कंपनी नहीं है। जो अपनी अंश पूँजी के अभिदान के लिए जनता को आमंत्रित कर सकती है तथा जन साधारण इसकी सार्वजनिक जमा में रुपया जमा करा सकते हैं। जिसमें अंशों के हस्तांतरण पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

व्यावसायिक संगठन के स्वरूप का चयन-

उचित स्वरूप का चयन कई महत्त्वपूर्ण घटकों पर निर्भर करता है। उपयुक्त स्वरूप का चयन करते समय कुछ आधारभूत घटकों को ध्यान में रखा जाए- 1. प्रारंभिक लागत 2. दायित्व 3. निरंतरता 4. प्रबंधन की योग्यता 5. पूँजी की आवश्यकता 5. पूँजी की आवश्यकता 6. नियंत्रण 7. व्यवसाय की प्रकृति।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

सही उत्तर पर निशान (✓) लगाइए।

1. ढाँचे, जिसमें स्वामित्व एवं प्रबंध पृथक-पृथक होते हैं, वह ----- कहलाता है।
   (क) एकल स्वामित्व (ख) साझेदारी
   (ग) कंपनी (घ) सभी व्यावसायिक संगठन
2. संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय में कर्ता का दायित्व ---- होता है।
   (क) सीमित
   (ख) असीमित
   (ग) ऋणों के लिए कोई दायित्व नहीं
   (घ) संयुक्त

3. सहकारी समितियों में जिस सिद्धांत का अनुपालन किया जाता है, वह है ----- ।
   (क) एक अंश एक वोट (ख) एक व्यक्ति एक वोट
   (ग) वोट नहीं (घ) बहु (अनेक) वोट
4. संयुक्त पूँजी कंपनी के निदेशक मंडल का चुनाव ----- के द्वारा होता है।
   (क) सामान्य जन (ख) सरकारी संस्थाएं
   (ग) अंशधारक (घ) कर्मचारी
5. लाभ का बँटवारा आवश्यक नहीं। यह कथन ----- से संबंधित है।
   (क) साझेदारी (ख) संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय
   (ग) एकल स्वामित्व (घ) कंपनी
6. कंपनी की पूँजी विभिन्न भागों में विभक्त होती है, जिसका प्रत्येक भाग कहलाता है–
   (क) लाभांश (ख) लाभ
   (ग) ब्याज (घ) अंश
7. संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय के मुखिया को ----- कहते हैं।
   (क) स्वामी (ख) निदेशक
   (ग) कर्ता (घ) प्रबंधक
8. सदस्यों का उचित-मूल्य पर आवासीय स्थान उपलब्ध कराना ----- का उद्देश्य है।
   (क) उत्पादक सहकारी समिति (ख) उपभोक्ता सहकारी समिति
   (ग) आवास सहकारी समिति (घ) ऋण सहकारी समिति
9. एक साझेदार जिसके फर्म से संबंध के बारे में जनता अपरिचित है, ----- कहलाता है।
   (क) सक्रिय साझेदार (ख) सुषुप्त साझेदार
   (ग) नाम-मात्र साझेदार (घ) गुप्त साझेदार

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय में नाबालिग की स्थिति की साझेदारी फर्म में उसकी स्थिति से तुलना कीजिए।
2. यदि पंजीयन ऐच्छिक है तो साझेदारी फर्म स्वयं को पंजीकृत कराने के लिए वैधानिक औपचारिकताओं को पूरा करने के लिए क्यों इच्छुक रहती हैं? समझाइए।
3. एक निजी कंपनी को उपलब्ध महत्त्वपूर्ण सुविधाओं को बताइए।
4. सहकारी समिति किस प्रकार जनतांत्रिक एवं धर्म-निरपेक्षता का आदर्श प्रस्तुत करती है?
5. 'प्रदर्शन द्वारा साझेदार' का क्या अर्थ है? समझाइए।
6. 50 शब्दों में संक्षिप्त टिप्पणी करें।
   (क) कर्ता (ख) सार्वमुद्रा
   (ग) कृत्रिम व्यक्ति (घ) शाश्वत उत्तराधिकार

व्यावसायिक संगठन के स्वरूप

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. एकल स्वामित्व फर्म से आप क्या समझते हैं? इसके गुणों एवं सीमाओं को समझाइए।
2. साझेदारी के विभिन्न प्रकारों में व्यावसायिक स्वामित्व तुलनात्मक रूप से लोकप्रिय क्यों नहीं है? इसके गुणों एवं सीमाओं को समझाइए।
3. एक उपयुक्त संगठन का स्वरूप चुनना क्यों महत्त्वपूर्ण है? उन घटकों का विवेचन कीजिए जो संगठन के किसी खास स्वरूप के चुनाव में सहायक होते हैं।
4. सहकारी संगठन स्वरूप के लक्षण, गुण एवं सीमाओं का विवेचन कीजिए। विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों को भी संक्षेप में समझाइए।
5. एक संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय एवं साझेदारी में अंतर कीजिए।
6. आकार एवं संसाधनों की सीमाओं के होते हुए भी लोग एकल व्यवसाय को अन्य संगठनों की तुलना में प्राथमिकता क्यों देते हैं?

व्यावहारिक प्रश्न

1. किस संगठन स्वरूप में एक स्वामी के व्यापारिक करार अन्य स्वामियों को भी बाध्य कर देते हैं। उत्तर के समर्थन में कारण बताइए।
2. एक संगठन की व्यावसायिक परिसंपत्तियों की राशि 50,000 रुपए है लेकिन अदत्त देय राशि 80,000 रुपए है। लेनदार निम्न स्थितियों में क्या कार्यवाही कर सकते हैं–
   (क)यदि संगठन एक एकल स्वामित्व इकाई है।
   (ऽ)यदि एक संगठन साझेदारी फर्म है जिसमें एन्थोनी और अकबर साझेदार हैं लेनदार इन दो में से किस साझेदार के पास अपनी लेनदारी के भुगतान हेतु संपर्क साध सकते हैं। कारण सहित समझाइए।
3. किरन एक एकल व्यवसायी है। पिछले दशक में उसका व्यवसाय पड़ोस के एक कोने की दुकान से, जिसमें वह नकली आभूषण, बैग, बालों की क्लिप, नेलपॉलिश आदि बेचती थी, से बढ़ कर तीन शाखाओं वाली फुटकर शृंखला में बदल गया है। यद्यपि वह सभी शाखाओं के विभिन्न कार्यों को स्वयं देखती हैं परंतु अब सोच रही है कि व्यवसाय के बेहतर प्रबंधन के लिए उसे एक कंपनी का निर्माण करना चाहिए या नहीं। उसकी योजना देश के अन्य भागों में शाखाएँ खोलने की भी है।
   (क) एकल स्वामी बने रहने के दो लाभों को समझाइए।
   (ख) संयुक्त पूँजी कंपनी में परिवर्तित करने के दो लाभ बताइए।
   (ग) राष्ट्रीय स्तर पर व्यवसाय करने के निर्णय पर संगठन के स्वरूप के चुनाव में उसकी भूमिका क्या होगी?
   (घ) कंपनी को रूप व्यवसाय करने के लिए उसे किन-किन कानूनी औपचारिकताओं को पूरा करना होगा?

परियोजना कार्य

कक्षा में विद्यार्थियों को कई टीमों में विभक्त कर निम्न पर कार्य करने लिए बाँट दीजिए–

(क) पड़ोस की किन्ही पाँच परचून/स्टेशनरी की दुकानों के अध्ययन हेतु;
(ऽ) संयुक्त हिन्दू परिवार व्यवसाय के कार्य संचालन के अध्ययन हेतु;
(ग) किन्हीं पाँच साझेदारी फर्मों के अध्ययन हेतु;
(घ) अपने क्षेत्र की सहकारी समितियों की विचारधारा एवं कार्य संचालन के अध्ययन हेतु–
(ङ) किन्हीं पाँच कंपनियों (जिसमें निजी एवं सार्वजनिक दोनों प्रकार की कंपनियाँ शामिल हों) के अध्ययन हेतु।

टिप्पणियाँ

1. निम्न में से कुछ पक्षों के उपर्युक्त अध्ययनों हेतु विद्यार्थियों को कार्य सौंपा जा सकता हैः व्यवसाय की प्रकृति, निवेशित पूंजी के आधार पर मापा गया व्यवसाय का आकार, कार्यरत व्यक्तियों की संख्या अथवा विक्रय आवर्तन, समस्याएँ, प्रोत्साहन, एकल स्वरूप विशेष के चयन का कारण, निर्णय लेने का ढंग, विस्तार की इच्छा एवं आवश्यक ध्यान रखने योग्य बातें, स्वरूप की उपयोगिता इत्यादि।
2. विद्यार्थियों की विभिन्न टीमों को प्रोत्साहित करें कि वह अपने अध्ययन के परिणामों एवं निष्कर्षों को परियोजना प्रतिवेदन एवं मल्टीमीडिया के रूप में प्रस्तुत करें।

11109CH03

अध्याय 3

निजी, सार्वजनिक एवं भूमंडलीय उपक्रम

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

- संगठनों को निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में वर्गीकृत कर सकेंगे;
- सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के विभिन्न स्वरूपों की विशेषताओं को समझ सकेंगे, ये स्वरूप हैं- विभागीय, संवैधानिक निगम एवं सरकारी कंपनियाँ;
- सार्वजनिक क्षेत्र की बदलती भूमिका की समीक्षा कर सकेंगे,
- भूमंडलीय उपक्रम की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे; तथा
- संयुक्त उपक्रमों के लाभों को समझ सकेंगे।

कक्षा 11 की विद्‌यार्थी अनीता कुछ समाचार पत्र पढ़ रही थी। जो सुर्खियाँ उसके सामने थीं, वे घोषणा कर रही थीं कि सरकार की कुछ कंपनियों में अपने अंशों को छोड़ने की योजना है। दूसरे दिन एक और समाचार था कि सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियाँ भारी घाटे में हैं तथा उन्हें बीमार इकाई मानकर बंद किया जा रहा है। इसके ठीक विपरीत उसने एक और समाचार पढ़ा कि कैसे रिलायंस के झंडे तले की कंपनियाँ काफी अच्छा परिणाम दे रही थीं। उसे यह जानने की उत्कंठा हुई कि सार्वजनिक क्षेत्र, विनिवेश, निजीकरण जैसे शब्दों का क्या अर्थ है। तभी उसे इस बात का ज्ञान हुआ कि कुछ क्षेत्रों में केवल सरकार ही कार्य करती है, जैसे- रेलवे, जबकि अन्य कुछ क्षेत्रों में निजी स्वामित्व एवं सरकार द्‌वारा संचालित दोनों ही व्यवसाय चल रहे हैं। उदाहरण के लिए, भारी उद्‌योग में सेल (SAIL), भेल (BHEL) एवं टिस्को (TISCO), रिलायंस, एयरटेल, बिरला सभी तो हैं। टेलीकॉम क्षेत्र में टाटा, रिलायंस, एयरटेल तथा एयरलाइंस क्षेत्र में सहारा एवं जेट जैसी कंपनियों ने अभी सरकारी स्वामित्व की कंपनियों, जैसे- एम.टी.एन.एल. (MTNL), इंडियन एयरलाइंस, एयर इंडिया के साथ प्रवेश किया है। फिर उसे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि कोका-कोला, पेप्सी, हुन्डई कंपनियाँ कहाँ से आईं? क्या वह प्रारंभ से ही यहाँ थीं या फिर वह कहीं और किसी दूसरे देश में अपना व्यवसाय कर रही थीं? वह पुस्तकालय गई तथा उसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि इसके संबंध में पुस्तकों, व्यवसाय संबंधी पत्रिकाओं एवं 'दि इकोनोमिक टाइम्स' में काफी जानकारी दी हुई थी।

3.1 परिचय

आप अपने रोज़मर्रा के जीवन में सभी प्रकार के व्यावसायिक संगठनों को देखते हैं। आपके पड़ोस के बाज़ार में एकल स्वामित्व की दुकानें हैं। बड़े फुटकर व्यापार संगठन हैं, जिनका संचालन कोई कंपनी करती है। इसके साथ ही आपको कानूनी सेवा, स्वास्थ्य सेवा तथा अन्य सेवाएँ प्रदान करने वाली इकाइयाँ हैं जिनके स्वामी एक से अधिक व्यक्ति हैं, अर्थात्‌ ये साझेदारी फर्में हैं। ये सभी निजी स्वामित्व के संगठन हैं। इसी प्रकार से अन्य कार्यालय अथवा व्यवसाय हैं, जिन पर सरकार का स्वामित्व है। उदाहरण के लिए, रेलवे एक ऐसा संगठन है जिसका स्वामित्व एवं प्रबंधन पूर्णतया सरकार के पास है। आपके मुहल्ले का डाकघर भारत सरकार के डाक एवं तार विभाग के स्वामित्व में है, यद्‌यपि उनकी डाक सेवाओं पर हमारी निर्भरता बहुत कम हो गई है क्योंकि इस क्षेत्र में अब कई निजी कुरियर सेवा फर्में कार्य कर रही हैं। इसके अलावा ऐसी अनेकों व्यावसायिक इकाइयाँ भी हैं जो एक से अधिक देशों में अपना व्यवसाय चला रही हैं। इन्हें भूमंडलीय उद्‌यम कहते हैं। अतः आपने देखा कि देश में सभी प्रकार के संगठन व्यवसाय कर रहे हैं, फिर चाहे वे निजी, सार्वजनिक अथवा भूमंडलीय हों। इस अध्याय में हम यह अध्ययन करेंगे कि किस प्रकार से अर्थव्यवस्था दो क्षेत्रों- निजी एवं सार्वजनिक में विभक्त है। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्‌यमों के प्रकार एवं उनकी भूमिका तथा वैश्विक उद्‌यम के बारे में भी अध्ययन करेंगे।

3.2 निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र

हमारे देश में सभी प्रकार के व्यावसायिक संगठन हैं-छोटे एवं बड़े, औद्योगिक या व्यापारिक, निजी स्वामित्व के एवं सरकारी स्वामित्व वाले। ये संगठन हमारे दैनिक आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं इसलिए ये हमारी अर्थव्यवस्था के अंग हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में निजी स्वामित्व एवं सरकारी स्वामित्व वाले दोनों व्यावसायिक उद्यम होते हैं इसीलिए इसे मिश्रित अर्थव्यवस्था कहते हैं। भारत सरकार ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को चुना जिसमें निजी क्षेत्र एवं सरकारी क्षेत्र, दोनों क्षेत्रों के उद्यमों के परिचालन की छूट है। इसीलिए हमारी अर्थव्यवस्था को दो क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता है- निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र।

जैसा कि आप पहले अध्याय में पढ़ चुके हैं, निजी क्षेत्र में व्यवसायों के स्वामी व्यक्ति होते हैं अथवा व्यक्तियों का समूह। इसमें संगठन के विभिन्न स्वरूप हैं- एकल स्वामित्व, साझेदारी, संयुक्त हिंदू परिवार, सहकारी समितियाँ एवं कंपनी।

सार्वजनिक क्षेत्र में जो संगठन होते हैं, उनकी स्वामी सरकार होती है और सरकार ही उनका प्रबंध करती है। इन संगठनों का स्वामित्व पूर्ण रूप से अथवा आंशिक रूप से राज्य सरकार अथवा केंद्रीय सरकार के पास होता है। ये संगठन किसी मंत्रालय के अधीन भी हो सकते हैं या फिर संसद द्वारा पारित विशेष अधिनियम द्वारा इनकी स्थापना हो सकती है। इन्हीं उद्यमों के माध्यम से सरकार देश की आर्थिक गतिविधियों में भाग लेती है।

सरकार समय-समय पर घोषित अपने आर्थिक नीति प्रस्तावों में उन कार्यक्षेत्रों को परिभाषित करती है जिनमें निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र अपने कार्यकलापों का परिचालन कर सकते हैं। 1948 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में सरकार ने औद्योगिक क्षेत्र के विकास के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट किया, निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र दोनों की भूमिका को स्पष्ट शब्दों में परिभाषित किया तथा सरकार दोनों क्षेत्रों के कार्यकलापों पर विभिन्न अधिनियमों एवं नियमों के माध्यम से निगरानी रखती थी। 1956 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए भी विकास एवं औद्योगिकीकरण की दर में तेज़ी लाने के उद्देश्य से कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए। सार्वजनिक क्षेत्र को यद्यपि काफी महत्व दिया गया, फिर भी निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्रों की एक-दूसरे पर निर्भरता पर अधिक ज़ोर दिया गया। 1991 की औद्योगिक नीति पिछली औद्योगिक नीतियों से भिन्न थी क्योंकि इसमें सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र में विनिवेश पर विचार किया एवं निजी क्षेत्र को और अधिक स्वतंत्रता दी गई। साथ ही भारत से बाहर के व्यावसायिक गृहों को भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए आमंत्रित किया गया। इस प्रकार से बहुराष्ट्रीय निगम एवं भूमंडलीय उद्यम जो अपना कारोबार एक से अधिक देशों में कर रहे थे, उनको भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रवेश मिला। अतः आज हमारे देश में सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयाँ, निजी क्षेत्र के उद्यम एवं वैश्विक उद्यम हैं जो भारतीय अर्थव्यवस्था में साथ-साथ कार्यरत हैं।

3.3 सार्वजनिक क्षेत्र के उद्‌यमों के संगठनों के स्वरूप

देश के व्यावसायिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में सरकार की भागीदारी के लिए संगठनात्मक ढाँचे की आवश्यकता होती है। आप निजी क्षेत्र के व्यवसाय संगठन के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन कर चुके हैं। ये स्वरूप हैं– एकल स्वामित्व, साझेदारी, अविभाजित हिन्दू परिवार, सहकारी समितियाँ एवं कंपनी।

सार्वजनिक क्षेत्र के संबंध में प्रश्न यह उठता है कि इसकी संगठन संरचना एवं स्वरूप क्या हो? सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण में सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लेकिन सरकार तो जनता, अपने कार्यालयों तथा अपने कर्मचारियों के माध्यम से कार्य करती है तथा वे ही सरकार की ओर से निर्णय लेते हैं। इसी उद्‌देश्य से सरकार ने देश की आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए सार्वजनिक उद्‌यमों की संरचना की। आज विश्व के इस उदारीकरण एवं प्रतिस्पर्धा के दौर में इनसे अपेक्षा की जाती है कि वे देश के आर्थिक विकास में योगदान करेंगे। इन सार्वजनिक उद्‌यमों की स्वामी जनता है तथा ये संसद के माध्यम से जनता के प्रति ही जवाबदेह हैं। सर्वजन का स्वामित्व, इनकी क्रियाओं के लिए जनता के कोष का प्रयोग तथा जनता के प्रति जवाबदेही इसकी विशेषताएँ हैं।

एक सार्वजनिक उपक्रम, संगठन के किसी भी स्वरूप को अपना सकता है लेकिन यह उसके कार्यों की प्रकृति एवं सरकार से उसके संबंधों पर निर्भर करता है। संगठन का कौन-सा स्वरूप उपयुक्त रहेगा, यह उपक्रम की आवश्यकताओं पर निर्भर करेगा। इसके साथ ही सामान्य सिद्‌धांत यह कहते हैं कि किसी भी सार्वजनिक उपक्रम को संगठनात्मक कार्य- निष्पादन, उत्पादकता एवं गुणवत्ता के मानकों को सुनिश्चित करना चाहिए।

सार्वजनिक उद्‌यमों के संगठन के निम्नलिखित स्वरूप हो सकते हैं–

(क) विभागीय उपक्रम।

(ख) वैधानिक निगम।

(ग) सरकारी कंपनी।

3.3.1 विभागीय उपक्रम

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का यह सबसे पुराना एवं परंपरागत स्वरूप है। इसमें उपक्रम को किसी मंत्रालय के एक विभाग के रूप में स्थापित किया जाता है एवं यह मंत्रालय का ही एक भाग या फिर उसका विस्तार माना जाता है। सरकार इन्हीं विभागों के माध्यम से कार्य करती है तथा ये सरकार की गतिविधियों के महत्वपूर्ण भाग होते हैं। इनका गठन स्वायत्त एवं स्वतंत्र संस्था के रूप में नहीं किया जाता एवं इनका स्वतंत्र वैधानिक अस्तित्व नहीं होता। ये सरकार के अधिकारियों के माध्यम से कार्य करते हैं तथा इनके कर्मचारी सरकारी कर्मचारी होते हैं। ये उपक्रम केंद्र अथवा राज्य सरकार के अधीन हो सकते हैं तथा इनमें केंद्रीय अथवा राज्य सरकारों के नियम लागू होते हैं। इन उपक्रमों के उदाहरण हैं- रेलवे तथा डाक एवं तार विभाग।

विशेषताएँ

इन उपक्रमों की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

(क) इन उपक्रमों के लिए धन सरकारी खजाने से सीधे आता है तथा इसका नियोजन सरकार के बजट में किया जाता है। इनके द्वारा अर्जित राजस्व को सरकारी खजाने में जमा कराया जाता है;

(ख) अन्य सरकारी क्रियाओं के समान इन पर भी लेखांकन एवं अंकेक्षण नियंत्रण लागू होते हैं;

(ग) इन उपक्रमों के कर्मचारी सरकारी कर्मचारी कहलाते हैं तथा इनकी भर्ती एवं सेवा शर्तें वही होती हैं जो सरकार के सीधे तौर पर अधीन कर्मचारियों की हैं। इनके मुखिया आईएएस अधिकारी एवं नागरिक सेवा से होते हैं तथा इनका स्थानांतरण एक मंत्रालय से दूसरे मंत्रालय में हो सकता है;

(घ) यह सरकारी विभाग का प्रमुख उपमंडल माना जाता है तथा सीधे मंत्रालय के नियंत्रण में होता है; तथा

(ङ) ये मंत्रालय के प्रति जवाबदेह होते हैं क्योंकि इनका प्रबंधन सीधे संबंधित मंत्रालय द्वारा किया जाता है।

लाभ

संगठन के इस स्वरूप के निम्नलिखित लाभ हैं-

(क) संसद के लिए इनका प्रभावी नियंत्रण सुगम होता है;

(ख) इसमें उच्च स्तर की सार्वजनिक जवाबदेही सुनिश्चित होती है;

(ग) इसमें उपक्रम की अर्जित आगम सीधे सरकारी खजाने में चली जाती है अतः यह सरकार की आय का स्रोत है; तथा

(घ) राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से यह सबसे अधिक उपयुक्त स्वरूप है क्योंकि यह मंत्रालय के सीधे नियंत्रण एवं निरीक्षण में होता है।

सीमाएँ

इस प्रकार के संगठन की कुछ गंभीर सीमाएँ हैं जो इस प्रकार हैं-

(क) इस प्रकार के संगठन में लचीलेपन की कमी होती है जबकि व्यवसाय को सुगमता से चलाने के लिए लचीलापन आवश्यक होता है;

(ख) कर्मचारी एवं विभागाध्यक्ष बिना संबंधित मंत्रालय के अनुमोदन के किसी भी मामले में स्वतंत्र निर्णय नहीं ले सकते। इस कारण उन्हें ऐसे निर्णय लेने में भी देरी हो जाती है जिनमें तुरंत निर्णय की आवश्यकता हो;

(ग) ये उपक्रम व्यावसायिक अवसरों का लाभ नहीं उठा पाते। सरकारी अधिकारियों द्वारा अनुमति प्रदान करने में अत्यधिक सतर्कता बरतने एवं रूढ़िवादिता के कारण ये उपक्रम जोखिम भरे कार्य नहीं करते;

(घ) दिन-प्रतिदिन के कार्यों में अत्यधिक लाल-फीताशाही है तथा उचित प्रक्रिया के पूरा होने पर ही कोई कार्यवाही प्रारंभ हो सकती है;

(ङ) मंत्रालय के माध्यम से राजनीतिक हस्तक्षेप होता है; तथा

(च) ये संगठन उपभोक्ता की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील नहीं होते तथा इनके द्‌वारा प्रदत्त सेवाएँ भी अपर्याप्त होती हैं।

3.3.2 वैधानिक निगम

वैधानिक निगम वे सार्वनिक उद्‌यम हैं जिनकी स्थापना संसद के विशेष अधिनियम के द्‌वारा की जाती है। ये अधिनियम ऐसे उद्‌यमों के अधिकार एवं कार्य, इनके कर्मचारियों से संबंधित नियम एवं कानून तथा सरकार के विभिन्न विभागों से इनके संबंधों को परिभाषित करते हैं।

ऐसा उद्‌यम निगमित संगठन है जिसकी स्थापना विधान मंडल द्‌वारा की जाती है। इसके कार्य एवं शक्तियाँ पूर्णतः परिभाषित होते हैं। यह वित्त मामलों में स्वतंत्र होता है तथा निर्धारित क्षेत्र पर व विशेष प्रकार की वाणिज्यिक क्रियाओं पर इसका स्पष्ट नियंत्रण होता है। वैधानिक निगमों के पास जहाँ एक ओर सरकारी अधिकार होते हैं, वहीं दूसरी ओर निजी उद्‌यम के समान परिचालन में पर्याप्त लचीलापन होता है।

विशेषताएँ

वैधानिक निगमों की कुछ विशिष्टताएँ इस प्रकार हैं–

(क) इनकी स्थापना संसद द्‌वारा पारित अधिनियम द्‌वारा होती है तथा इसी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार इनका संचालन किया जाता है। अधिनियम इनके अधिकार, उद्‌देश्य एवं विशेषाधिकारों को परिभाषित करता है;

(ख) ये पूर्णतया सरकार के स्वामित्व में होते हैं। वित्त के संबंध में अंतिम उत्तरदायित्व सरकार का होता है तथा वही लाभों का विनियोजन भी करती है। यदि कोई हानि होती है तो उसे भी सरकार ही वहन करती है;

(ग) ये निगमित संगठन हैं, अतः इन पर मुकदमा किया जा सकता है तथा ये दूसरों पर मुकदमा कर सकते हैं। ये अनुबंध कर सकते हैं तथा अपने नाम पर संपत्ति खरीद सकते हैं;

(घ) साधारणतः अपनी वित्त की आवश्यकता को ये स्वयं पूरा करते हैं। ये सरकार से ऋण लेकर अथवा जनता से वस्तुओं एवं सेवाओं की बिक्री द्‌वारा आय अर्जन कर धन जुटाते हैं।

(ङ) सरकारी विभागों के लिए लेखांकन एवं अंकेक्षण की जो प्रक्रिया है, वह इन निगमों पर लागू नहीं होती। केंद्र सरकार के बजट से इसका कोई सरोकार नहीं होता; तथा

(च) इन उपक्रमों के कर्मचारी राज्य अथवा नागरिक सेवा के अधिकारी नहीं होते तथा ये सरकारी सेवा शर्तों, नियम एवं कानूनों से शासित नहीं होते। इनकी सेवा शर्तें

अधिनियम में ही दी हुई होती हैं। कभी-कभी इन संगठनों के मुखिया के पद पर दूसरे विभागों से अधिकारी प्रतिनियोजित किये जाते हैं।

लाभ

इस प्रकार के संगठन के कुछ प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं–

(क) ये अपने कार्य संचालन के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्र होते हैं तथा इनके कार्य परिचालन में उच्च स्तर का लचीलापन होता है। इन पर सरकार के अवांछित नियम एवं कानून भी लागू नहीं होते;

(ख) चूँकि इनके लिए धन की व्यवस्था केंद्रीय बजट में नहीं होती इसीलिए इनकी आय एवं प्राप्तियों पर सरकार का कोई अधिकार भी नहीं होता और इनके वित्तीय मामलों में सरकारी हस्तक्षेप नहीं होता है;

(ग) चूँकि ये स्वयत्त संगठन होते हैं इसीलिए अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारों की परिधि में रहकर ये स्वयं अपनी नीतियों एवं प्रक्रियाओं का निर्धारण करते हैं, तथापि अधिनियम में कुछ मुद्दों/विषयों के लिए मंत्रालय विशेष की पूर्व अनुमति के लिए प्रावधान है; तथा

(घ) वैधानिक निगम आर्थिक विकास का एक मूल्यवान उपकरण है। इसके पास सरकार के अधिकार एवं निजी उद्यम की पहल क्षमता होती है।

सीमाएँ

इस प्रकार के संगठन की भी कई सीमाएँ होती हैं जो निम्नलिखित हैं–

(क) वास्तव में इनके कार्य परिचालन में ऊपर वर्णित लचीलापन नहीं होता। इनके प्रत्येक कार्य नियम एवं कानून के अनुसार होते हैं;

(ख) इनके प्रत्येक महत्वपूर्ण निर्णयों एवं कार्यों में जिनमें भारी धन व्यय होता है, सदा सरकारी एवं राजनीतिक हस्तक्षेप होता है;

(ग) जहाँ कहीं भी जनता से लेन-देन की आवश्यकता होती है, वहाँ अनियंत्रित भ्रष्टाचार व्याप्त है; तथा

(ङ) सरकार निगमों के बोर्ड में सलाहकार नियुक्त करती रही है। इस कारण अनुबंधों एवं अन्य निर्णयों में निगम की स्वतंत्रता सीमित हो जाती है। जब भी मतभेद होता है तो मामले को सरकार के पास अंतिम निर्णय के लिए भेज दिया जाता है। इससे कार्य में और विलंब हो जाता है।

3.3.3 सरकारी कंपनी

इन कंपनियों की स्थापना भारतीय कंपनी अधिनियम-2013 के अंतर्गत की जाती है। ये सरकारी कंपनियाँ होती हैं लेकिन निजी क्षेत्र की कंपनियों के समान इनका भी पंजीकरण एवं संचालन कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार होता है। इनकी स्थापना विशुद्ध रूप से व्यवसाय करने के लिए की जाती है तथा ये निजी

क्षेत्र की कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्धा करती हैं।

कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 2(45) के अनुसार एक सरकारी कंपनी वह कंपनी है जिसकी कम से कम 51 प्रतिशत चुकता अंशपूँजी या तो केंद्र सरकार के पास है या फिर राज्य सरकारों के पास है या फिर कुछ केंद्र सरकार के पास और शेष एक या एक से अधिक राज्य सरकारों के पास है तथा उसमें वह कंपनी भी सम्मिलित है जो किसी सरकारी कंपनी की सहायक कंपनी है।

उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि सरकार का ऐसी कंपनी की चुकता पूँजी पर नियंत्रण होता है। इस कंपनी के अंशों को भारत के राष्ट्रपति के नाम से क्रय किया जाता है। चूँकि सरकार ही बड़ी अंशधारक है तथा प्रबंध पर उसी का नियंत्रण है इसीलिए इसे सरकारी कंपनी कहा जाता है।

विशेषताएँ

सरकारी कंपनियों की कुछ विशेषताएँ हैं जो उनको संगठन के दूसरे स्वरूप से भिन्न करती हैं। ये निम्नलिखित हैं

(क) यह भारतीय कंपनी अधिनियम-1956 के तहत स्थापित संगठन है।

(ख) कंपनी किसी भी अन्य पक्ष के विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा दायर कर सकती है तथा अन्य कोई पक्ष इस पर मुकदमा कर सकता है।

(ग) कंपनी अनुबंध कर सकती है तथा अपने नाम से संपत्ति क्रय कर सकती है।

(घ) अन्य किसी भी सार्वजनिक कंपनी के समान इसका प्रबंधन कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार होता है।

(ङ) कंपनी में कर्मचारियों की नियुक्ति कंपनी के उद्देश्य पत्र एवं अंतर्नियम में दिए गए नियमों के अनुसार होती है। कंपनी के उद्देश्य पत्र एवं अंतर्नियम इसके मुख्य प्रलेख होते हैं जिनमें कंपनी के उद्देश्य एवं नियम दिए होते हैं। ये न तो सरकारी व्यक्ति होते हैं और न ही नागरिक सेवा के व्यक्ति। केवल उच्च प्रबंधक जैसे कि चेयरमैन अथवा प्रबंध निदेशक ही सरकार से अथवा नागरिक सेवाओं से प्रतिनियोजन पर आए व्यक्ति हो सकते हैं।

(च) ये कंपनियाँ लेखांकन एवं अंकेक्षण नियमों से मुक्त रहती हैं। लेखा परीक्षक की नियुक्ति केंद्रीय सरकार करती है तथा वार्षिक अनुवेदन रिपोर्ट संसद या राज्य विधान मंडल में प्रस्तुत की जाती है।

(छ) सरकारी कंपनी अपने लिए वित्त की व्यवस्था सरकारी अंशधारी और प्राइवेट अंशधारी से करती है। वह पूँजी बा\ज़ार से भी वित्त की व्यवस्था कर सकती है।

लाभ

सरकारी कंपनी के कुछ लाभ निम्नलिखित हैं–

(क) एक सरकारी कंपनी की स्थापना भारतीय कंपनी अधिनियम की औपचारिकताओं को पूरा करने से होती है। इसके लिए संसद में अलग से किसी विशेष अधिनियम की

आवश्यकता नहीं है;

(ख) इनका सरकार से पृथक कानूनी अस्तित्व होता है;

(ग) प्रबंधन संबंधी निर्णय लेने में इनको पूर्ण स्वतंत्रता मिली होती है तथा ये सभी कदम व्यावसायिक दूरदर्शिता के अनुसार उठाते हैं; तथा

(घ) उचित मूल्य पर वस्तुएँ एवं सेवाओं को उपलब्ध करा ये बा\ज़ार पर हावी हो जाती हैं तथा अस्वस्थ व्यावसायिक व्यवहार पर अंकुश लगाती हैं।

सीमाएँ

सरकारी कंपनियों की कुछ सीमाएँ हैं जो इस प्रकार हैं–

(क) चूँकि कुछ कंपनियों में सरकार ही अंशधारक है इसलिए कंपनी अधिनियम के प्रावधानों का कोई औचित्य नहीं रह जाता।

(ख) ये संवैधानिक उत्तरदायित्व से बचती हैं जबकि सरकारी वित्त वाली कंपनी होने के कारण इन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। ये सीधे संसद के प्रति जवाबदेह नहीं हैं।

(ग) एकमात्र अंशधारक सरकार होने कारण इनका प्रबंध एवं प्रशासन दोनों ही सरकार के हाथ में होता है। इस प्रकार अन्य कंपनियों के समान पंजीकृत होने के बावजूद कंपनी होने का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है।

3.4 सार्वजनिक क्षेत्र की बदलती भूमिका

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय यह आशा की गई थी कि सार्वजनिक क्षेत्र उद्‌यम व्यवसाय में प्रत्यक्ष रूप में भाग लेकर अथवा एक उत्प्रेरक के रूप में अर्थव्यवस्था के कुछ उद्देश्यों को प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे। उम्मीद यह थी कि सार्वजनिक क्षेत्र अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के लिए आधारभूत ढाँचा तैयार करेगा तथा मूलभूत क्षेत्रों में निवेश करेगा। जिन परियोजनाओं में भारी निवेश की आवश्यकता थी तथा फल प्राप्ति की अवधि लंबी थी, उनमें निजी क्षेत्र निवेश करने का इच्छुक नहीं था। इसीलिए सरकार ने मूलभूत ढाँचे के विकास एवं अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं को प्रदान करने का दायित्व अपने ऊपर लिया।

भारतीय अर्थव्यवस्था आज परिवर्तन के दौर से गुज़र रही है। विकास के प्रारंभिक दौर में पंचवर्षीय योजनाओं ने सार्वजनिक क्षेत्र को काफी महत्व दिया। 90 के दशक के उत्तरार्ध में नई आर्थिक नीतियों ने उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमंडलीकरण पर अधिक ज़ोर दिया। सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका की पुनः व्याख्या की गई। अब इसकी भूमिका उदासीनता की न होकर सक्रिय रूप से भाग लेने एवं उसी उद्‌योग की निजी क्षेत्र की कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्धा में रहने की निश्चित की गई। अब घाटे एवं निवेश पर प्रतिफल के लिए इन्हें उत्तरदायी ठहराया गया। यदि सार्वजनिक क्षेत्र का कोई उद्‌यम निरंतर घाटे में चलता तो उसे औद्‌योगिक वित्त एवं पुनर्निर्माण

बोर्ड को प्रेषित कर दिया जाता ताकि या तो इसका कायापलट किया जाए अन्यथा इसे बंद कर दिया जाए। सार्वजनिक क्षेत्र की अकुशल इकाइयों के कार्यों की समीक्षा के लिए कई कमेटियों का गठन किया गया तथा उनसे इस पर रिपोर्ट माँगी गई कि उनकी प्रबंधकीय कुशलता एवं लाभप्रदता में सुधार कैसे किया जाए। अब सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका वैसी बिल्कुल भी नहीं रही जिसकी कल्पना 60 एवं 70 के दशकों में थी।

(क) मूलभूत ढाँचे का विकास

किसी भी देश में मूलभूत ढाँचे का विकास औद्योगिकीकरण की पूर्व-शर्त है। स्वतंत्रता के पूर्व आधारभूत ढाँचे का विकास नहीं किया गया था इसीलिए औद्योगिकीकरण की गति धीमी थी। औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया को बिना पर्याप्त परिवहन एवं संचार सुविधाओं, ईंधन एवं ऊर्जा तथा मूलभूत एवं भारी उद्योगों के जीवित नहीं रखा जा सकता। निजी क्षेत्र ने भारी उद्योगों में निवेश करने अथवा किसी भी रूप में इसका विकास करने में कोई पहल नहीं की। उनके पास न तो प्रशिक्षित कर्मचारी थे और न ही पर्याप्त धन जिससे वे तत्काल भारी उद्योगों की स्थापना करते जोकि अर्थव्यवस्था की माँग थी।

वो सरकार ही थी जो भारी पूँजी जुटा सकती थी, औद्योगिक निर्माण में समन्वय स्थापित कर सकती थी एवं तकनीशियनों तथा कर्मचारियों को प्रशिक्षित कर सकती थी। रेल, सड़क, समुद्र, वायु परिवहन सरकार का उत्तरदायित्व था। इनके विस्तार का औद्योगिकीकरण में भारी योगदान रहा है तथा इन्होंने भविष्य के आर्थिक विकास को सुनिश्चित किया। सार्वजनिक उद्यमों को कुछ ही क्षेत्रों में व्यवसाय करना था। जिन क्षेत्रों में उसे निवेश करना था, वे थे–

(i) मूल क्षेत्र के लिए आधारभूत ढाँचा तैयार करना जिसके लिए भारी पूँजी निवेश, जटिल एवं आधुनिक तकनीक, बड़े एवं प्रभावी संगठन ढाँचों जैसे कि स्टील संयंत्र, बिजली उत्पादन संयंत्र, नागरिक उड्डयन, रेल, पेट्रोलियम, राज्य व्यापार, कोयला आदि की आवश्यकता होती है;

(ii) उस मूल क्षेत्र में निवेश करना जहाँ निजी क्षेत्र के उद्यम अपेक्षित दिशा में कार्य नहीं कर रहे हों, जैसे- रासायनिक खाद, दवा उद्योग, पेट्रोरसायन, अखबारी कागज़, मध्यम एवं भारी अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग);

(iii) भावी निवेश को दिशा देना, जैसे- होटल, परियोजना प्रबंध, सलाहकार एजेंसी, वस्त्र उद्योग, ऑटोमोबाइल आदि।

(ख) क्षेत्रीय संतुलन

सभी क्षेत्रों एवं राज्यों का संतुलित विकास करना एवं क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करना सरकार का दायित्व है। स्वतंत्रता से पूर्व अधिकांश औद्योगिक विकास कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित था, जैसे कि बंदरगाही शहर। 1951 के पश्चात् सरकार ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में यह निश्चित किया कि उन क्षेत्रों पर अधिक ध्यान दिया जाएगा जो

पिछड़ रहे हैं तथा वहाँ सोची समझी योजना के अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम स्थापित किए गए। औद्योगिक विकास को गति प्रदान करने के लिए पिछड़े क्षेत्रों में स्टील के चार प्रमुख संयंत्र स्थापित किए गए। लोगों को रोज़गार दिलाने एवं सहायक उद्योगों को विकसित करने के लिए इन स्टील संयंत्रों की स्थापना की गई। इन उद्देश्यों को बहुत सीमा तक प्राप्त कर लिया गया लेकिन फिर भी करने को बहुत कुछ बाकी है। योजनाबद्ध विकास का एक प्रमुख उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों का विकास करना है ताकि देश में क्षेत्रीय संतुलन सुनिश्चित किया जा सके। इसके लिए सरकार को पिछड़े क्षेत्रों में नए उद्यमों की स्थापना करनी पड़ी तथा साथ-साथ पहले से ही उन्नत क्षेत्रों में निजी क्षेत्र की कुकरमुत्ते की तरह हो रही वृद्धि को रोकना पड़ा।

(ग) बड़े पैमाने के लाभ

जिन क्षेत्रों में भारी पूँजी वाले बड़े पैमाने के उद्योगों की आवश्यकता होती है, वहाँ बड़े पैमाने के लाभों को प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र आगे आया। बिजली संयंत्र, प्राकृतिक गैस, पेट्रोलियम एवं टेलीफोन उद्योग ऐसे कुछ उदाहरण हैं जिनमें सार्वजनिक क्षेत्र में बड़े पैमाने की इकाइयों की स्थापना की गई। इन इकाइयों के मित्तव्ययी परिचालन के लिए बड़े आधार की आवश्यकता थी जो सरकारी संसाधनों व बड़े पैमाने पर उत्पादन से ही संभव था।

(घ) आर्थिक शक्ति के केंद्रित होने पर रोक

सार्वजनिक क्षेत्र, निजी क्षेत्र पर नियंत्रण रखता है। निजी क्षेत्र में कुछ ही औद्योगिक घराने होते हैं जो भारी उद्योगों में निवेश के इच्छुक होते हैं। इस कारण धन कुछ ही हाथों में केंद्रित हो जाता है जिससे एकाधिकार को बढ़ावा मिलता है। इससे आय की असमानता पैदा होती है जो समाज के लिए अहितकर होती है।

सार्वजनिक क्षेत्र बड़े-बड़े उद्योग-धंधों की स्थापना करते हैं जिनमें भारी निवेश की आवश्यकता होती है। लेकिन इसको जो लाभ होता है, उसमें बड़ी संख्या में कर्मचारी एवं श्रमिक भी हिस्सा बँटाते हैं। इससे निजी क्षेत्र के लोगों के हाथों में धन एवं आर्थिक शक्ति केंद्रित नहीं हो पाती।

(ङ) आयात की प्रतिस्थापना

दूसरी एवं तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं के कार्यकाल में भारत का लक्ष्य कई क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होना था। विदेशी मुद्रा प्राप्त करना एक समस्या थी तथा सुदृढ़, औद्योगिक आधार के लिए भारी मशीनों का आयात करना कठिन था। यह वो समय था जब सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों ने भारी इंजीनियरिंग उद्योगों की स्थापना की जिससे इनके आयात की आवश्यकता की पूर्ति हो सके। इसके साथ-साथ राज्य व्यापार निगम एवं धातु एवं व्यापार निगम जैसी सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों ने देश के विदेशी व्यापार के विस्तार में भी अहम भूमिका निभाई।

(च) 1991 से सरकार की सार्वजनिक क्षेत्र संबंधी नीति

1991 में अपनाई गई नई औद्योगिक नीति में सार्वजनिक क्षेत्र में चार प्रमुख सुधार किए गए। सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सरकार की नीति स्पष्ट एवं निश्चित है। इसके प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं–

- क्षमता की संभावनाओं वाले सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (P.S.U.) को पुनर्गठित एवं पुनर्जीवित करना;
- जिन P.S.U. को पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता उन्हें को बन्द करना;
- यदि आवश्यकता हो तो गैर-महत्त्वपूर्ण P.S.U. में सरकार के समता अंशों को 26% या उससे कम लाना; एवं
- कर्मचारियों के हितों को पूर्ण संरक्षण देना।

(i) **सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योगों की संख्या को घटाकर 17 से 8 कर देना (तत्पश्चात 3 कर देना)-** 1956 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 17 उद्योग-धन्धों को आरक्षित किया गया था। 1991 में केवल 8 उद्योगों को आरक्षित किया गया जो आणविक ऊर्जा, अस्त्र-शस्त्र, संप्रेषण, खनन, रेलवे तक सीमित थे। 2001 में केवल तीन उद्योगों को ही सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित किया गया। ये हैं– आणविक ऊर्जा, अस्त्र-शस्त्र एवं रेलवे परिवहन। इसका अर्थ हुआ कि निजी क्षेत्र इन तीन को छोड़कर सभी में व्यवसाय कर सकता है तथा सार्वजनिक क्षेत्र को उनकी प्रतियोगिता में व्यवसाय करना होगा।

हमारी अर्थव्यवस्था के विकास में सार्वजनिक क्षेत्र की अहम भूमिका रही है लेकिन निजी क्षेत्र भी राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया में काफी योगदान देने में सक्षम है। इसलिए राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए दोनों, अर्थात् सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र को एक-दूसरे का पूरक समझना चाहिए। निजी क्षेत्र की इकाइयों को जनता के प्रति अधिक उत्तरदायी बनना होगा तथा सार्वजनिक क्षेत्र को आज के अत्यधिक प्रतियोगी बाज़ार में अधिक उपलब्धियों पर ध्यान देना होगा।

(ii) **सार्वजनिक क्षेत्र की चुनिंदा व्यावसायिक इकाइयों के अंशों का विनिवेश–** विनिवेश में सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के समता अंशों को निजी क्षेत्र की इकाइयों एवं जनता को बेचा जाता है। इसका उद्देश्य इन इकाइयों के लिए संसाधन जुटाना एवं आम जनता एवं कर्मचारियों की भागीदारी को व्यापक बनाना है। सरकार ने औद्योगिक क्षेत्र से अपने आपको अलग करने एवं सभी उपक्रमों में से अपनी समता अंशपूँजी को कम करने का निर्णय लिया था। आशा थी

कि इससे प्रबंध में सुधार होगा एवं वित्तीय अनुशासन आएगा। लेकिन इस मामले में अभी भी बहुत कुछ करने को बाकी है।

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के निजीकरण के प्राथमिक उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- ऐसे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (PSEs) जिनका रणनीतिक महत्त्व नहीं हैं, उनमें अटकी सार्वजनिक पूँजी की बड़ी राशि को बाहर लाना ताकि उन्हें सामाजिक प्राथमिकता वाले क्षेत्रों, जैसे–मूलभूत स्वास्थ्य सेवाओं, परिवार कल्याण एवं प्राथमिक शिक्षा आदि के उपयोग में लाया जा सके;
- सार्वजनिक ऋण की भारी राशि एवं ब्याज के भार को कम करना;
- वाणिज्यिक जोखिम को निजी क्षेत्र को हस्तांतरित करना ताकि कोषों का अधिक उपयोगी परियोजना में निवेश किया जा सके;
- इन इकाइयों को सरकारी नियंत्रण से मुक्त करना तथा निगमित शासन में लाना; एवं
- जिन क्षेत्रों में अब तक सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार रहा था। उदाहरण के लिए, टेली संप्रेषण क्षेत्र, उनमें उपभोक्ताओं को अधिक चयन की सुविधा, कम मूल्य एवं और अधिक श्रेष्ठ गुणवत्ता वाले उत्पाद एवं सेवाओं का लाभ प्रदान करना।

(iii) **बीमार इकाइयों एवं निजी क्षेत्र के लिए एक समान नीतियाँ–** सभी सार्वजनिक क्षेत्र की बीमार इकाइयों को औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड को यह निर्णय लेने के लिए सौंपा जाता है ताकि उनका पुनर्गठन किया जाए या फिर उन्हें बन्द कर दिया जाए। बोर्ड ने कुछ मामलों में ऐसी इकाइयों को पुनः सक्रिय करने एवं पुर्नस्थापन की योजना का पुनरावलोकन किया है तथा कुछ को बंद करने का निर्णय लिया है। कर्मचारियों में इन इकाइयों के बंद करने के संबंध में भारी विरोध है। सरकार ने राष्ट्रीय नवीनीकरण कोष का गठन किया, जिसका उद्देश्य है सेवानिवृत्त औद्योगिक मज़दूरों को सेवा में लगाए रखना, अथवा उन्हें दोबारा रख लेना तथा जो कर्मचारी स्वेच्छा से अवकाश ग्रहण करना चाहते हैं उन्हें क्षतिपूर्ति का भुगतान करना।

सार्वजनिक क्षेत्र के कई उपक्रम (PSUs) बीमार उपक्रम हैं तथा उनके खातों में इतनी हानि इकट्ठा हो चुकी है कि उन्हें फिर से सक्रिय करना कठिन है। सार्वजनिक वित्त के भारी दवाब में होने के कारण केंद्रीय एवं राज्य सरकारें भी उन्हें अधिक दिन तक जीवित नहीं रख सकतीं। ऐसी स्थिति में सरकार के पास कर्मचारियों एवं श्रमिकों को सुरक्षा प्रदान करने के पश्चात् इन इकाइयों को बंद करने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं रह जाता। राष्ट्रीय नवीनीकरण कोष के पास

स्वैच्छिक प्रथक्करण ग्रहण योजना अथवा स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना की लागत को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं हैं।

(iv) **समझौता विवरणिका (Memorandum of Understanding)–** समझौता विवरणिका प्रणाली के माध्यम से निष्पादन में सुधार किया जा सकता है इसके अनुसार प्रबंधन को अधिक स्वायत्ता प्रदान की जा सकती है परन्तु साथ ही उसे निर्धारित परिणामों के लिए उत्तरदायी भी ठहराया जाता है। इस प्रणाली के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के स्पष्ट लक्ष्य निर्धारित किए गए तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए परिचालन की स्वायत्तता प्रदान की गई। यह ज्ञापन किसी सार्वजनिक क्षेत्र की विशेष इकाई एवं उसके प्रशासनिक मंत्रालय के बीच आपसी संबंधों एवं स्वायत्तता को परिभाषित करता है।

3.5 भूमंडलीय उपक्रम

कभी न कभी आपके सामने बहुराष्ट्रीय निगमों (MNC) द्वारा उत्पादित वस्तुएं अवश्य आई होंगी। पिछले दस वर्ष में एम.एन.सी. ने भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बहुराष्ट्रीय कंपनीयाँ दुनिया के अधिकांश विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की सामान्य विशेषता बन चुकी हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ विशाल निगम हैं, जिनका कारोबार अनेकों देशों में फैला हुआ है। इनकी विशेषताएँ हैं उनका विशाल आकार, उत्पादों की बड़ी संख्या, उन्नत तकनीक, विपणन की रणनीतियाँ एवं पूरे विश्व में फैला व्यवसाय। इस प्रकार से भूमंडलीय उपक्रम वे विशाल औद्योगिक संगठन हैं जिनकी औद्योगिक एवं विपणन क्रियाएँ उनकी शाखाओं के तंत्र के माध्यम से अनेकों देशों में फैली हुई हैं।

इन शाखाओं को बहुस्वामित्व विदेशी संबद्ध (एम.ओ.एफ.ए.) कहते हैं। ये संगठन अनेक क्षेत्रों में व्यवसाय करते हैं, अनेक वस्तुओं का उत्पादन करते हैं तथा इनका व्यवसाय अनेक देशों में फैला होता है। यह एक या दो उत्पादों से अधिकतम लाभ कमाने के स्थान पर अपनी शाखाओं का पूरे विश्व में विस्तार करते हैं। इनका प्रभाव अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर भी पड़ता है। इसकी पुष्टि इस तथ्य से हो जाती है कि 1998 में 200 शीर्षस्थ निगमों की कुल बिक्री दुनियाँ की सकल घरेलू उत्पाद के 28.3 प्रतिशत के बराबर थी। इससे यह स्पष्ट है कि 200 शीर्ष बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ विश्व अर्थव्यवस्था के एक-चौथाई से भी अधिक पर नियंत्रण किए हुए हैं। जाहिर है कि ये अपनी पूँजीगत संसाधनों, नवीनतम तकनीकी एवं ख्याति के कारण विश्व अर्थव्यवस्था पर भारी कब्जा किए हुए हैं। इसी के कारण वे किसी भी उत्पाद को विभिन्न देशों में बेच सकते हैं। इनमें से कुछ निगम प्रकृति से थोड़ा अनुचित लाभ उठाने वाले भी हो सकते हैं, जो उपभोक्ता वस्तुओं एवं विलासिता की वस्तुओं को बेचने पर अधिक ध्यान देते हैं तथा विकासशील देशों के लिए सदा वांछनीय नहीं होते।

विशेषताएँ

इन निगमों की कुछ विशिष्टताएँ होती हैं जो उन्हें अन्य निजी क्षेत्र की कंपनियों एवं सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों से अलग करती हैं। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(क) **विशाल पूंजीगत संसाधन-** इन उपक्रमों की पहली विशेषता यह है कि इनके पास भारी मात्रा में पूँजी होती है तथा ये विभिन्न स्रोतों से वित्त जुटा सकते हैं। वे जनता को समता-अंश, ऋण-पत्र एवं बॉन्ड जारी कर सकते हैं। वित्तीय संस्थानों एवं अंतर्राष्ट्रीय बैंकों से ऋण लेने की स्थिति में होते हैं। पूँजी बाज़ार में इनकी साख है। मे ज़बान देश के निवेशक एवं बैंक उनमें निवेश करना चाहते हैं। अपनी वित्तीय शक्ति के कारण वे हर परिस्थिति में सुरक्षित रहते हैं।

(ख) **विदेशी सहयोग-** बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ सामान्यतः तकनीकी के विक्रय, अंतिम उत्पादों के लिए ब्रांड के नाम का उपयोग तथा, उत्पादन करने के लिए भारतीय कंपनियों से करार कर लेती हैं। ये बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र की कंपनियों के साथ सहयोग कर सकती हैं। इनके साथ करार में अकसर प्रतिबंधित वाक्यांश होते हैं, जिनका संबंध, तकनीकी के हस्तांतरण, मूल्य निर्धारण, लाभांश का भुगतान, विदेशी तकनीशियनों के नियंत्रण आदि से होता है। जो बड़े औद्योगिक घराने अपने व्यवसाय में विविधता लाना एवं विस्तार करना चाहते हैं उन्हें बहुराष्ट्रीय कंपनियों से पेटेंट, संसाधन, विदेशी विनिमय आदि में सहयोग के कारण बड़ा लाभ हुआ है लेकिन इस विदेशी सहयोग के कारण एकाधिकार को भी बढ़ावा मिला है तथा शक्ति कुछ हाथों में केंद्रित हुई है।

(ग) **उन्नत तकनीकें–** इन व्यावसायिक इकाइयों के पास उत्पादन की श्रेष्ठ तकनीकी है। अतः वे अंतर्राष्ट्रीय मानदण्ड एवं निर्धारित गुणवत्ता को प्राप्त कर सकते हैं। इससें उस देश का भी औद्योगिक विकास होता है, जिसमें ये व्यवसाय करते हैं, क्योंकि ये स्थानीय संसाधनो साधनों एवं कच्चे माल का श्रेष्ठतम उपयोग कर सकते हैं। आज कम्प्यूटर एवं अन्य क्षेत्रों में तमाम नए आविष्कार बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा उच्च स्तर की तकनीकी को उपलब्ध कराने के कारण संभव हुए हैं।

(घ) **उत्पादन में नवीनता–** इन उपक्रमों की एक और विशेषता है कि इनके उच्च आधुनिक अनुसंधान एवं विकास विभाग हैं जो नए उत्पादों के विकास एवं वर्तमान उत्पादों की बेहतर डिज़ाइन बनाने के कार्य में जुटे हैं। गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान के लिए भारी निवेश की आवश्यकता होती है जिनसे केवल वैश्विक उपक्रम ही वहन कर सके हैं।

(ङ) **विपणन रणनीतियाँ-** इनकी विपणन की रणनीतियाँ अन्य कंपनियों की रणनीतियों

की तुलना में अधिक प्रभावी होती हैं। थोड़ी अवधि में अपनी बिक्री को बढ़ाने के लिए ये आक्रामक विपणन रणनीति अपनाते हैं। इनके पास बाज़ार संबंधी अधिक विश्वसनीय एवं नवीनतम सूचना प्रणाली होती है। इनके विज्ञापन एवं बिक्री संवर्धन की तकनीक भी अधिक प्रभावी होती है। क्योंकि विश्व बाज़ार में ये अपना स्थान बना चुके होते हैं तथा इनके ब्रांड भी प्रसिद्ध हैं इसलिए इन्हें अपने उत्पादों की बिक्री में कठिनाई नहीं आती।

(च) **बा\ज़ार क्षेत्र का विस्तार-** इनकी व्यावसायिक क्रियाएँ इनके अपने देश की भौतिक सीमाओं के पार होती हैं। इनकी अंतर्राष्ट्रीय छवि का निर्माण होता है तथा इनकी विपणन सीमा में विस्तार होता है। इससे ये एक अंतर्राष्ट्रीय ब्रांड बन जाते हैं। यह मेज़बान देशों में सहायक कंपनियों, शाखाओं एवं संबद्ध कंपनियों के जाल के माध्यम से कार्य करते हैं। अपने विशाल आकार के कारण ये बाज़ार में दूसरों पर हावी रहते हैं।

(छ) **केंद्रीकृत नियंत्रण–** इनका मुख्यालय इनके अपने देश में होता है तथा ये सभी शाखाओं एवं सहायक इकाइयों पर नियंत्रण रखते हैं। लेकिन यह नियंत्रण जनक कंपनी के व्यापक नीतिगत ढाँचे तक सीमित रहता है और वे यह दिन-प्रतिदिन के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करते हैं।

3.6 संयुक्त उपक्रम

अर्थ

जैसा कि आप पहले ही अध्ययन कर चुके हैं व्यावसायिक संगठन कई प्रकार के हो सकते हैंः- निजी, सरकारी एवं वैश्विक। कोई भी व्यावसायिक संगठन यदि चाहे तो अन्य व्यावसायिक संगठनों से पारस्परिक लाभ के लिए हाथ मिला सकता है। ये संगठन निजी, सरकारी या विदेशी कंपनी हो सकते हैं। जब दो इकाईयाँ समान उद्देश्य एवं पारस्परिक लाभ के लिए इकट्ठा होना तय करती हैं, तो इससे संयुक्त उपक्रम का उदय होता है। किसी भी आकार की इकाई लंबी अवधि या फिर लघु अवधि परियोजनाओं में भागीदारी को सुदृढ़ करने के लिए संयुक्त उपक्रम स्थापित कर सकती है। एक संयुक्त उपक्रम संबंधित पक्षों की आवश्यकतानुसार लोचपूर्ण हो सकता है। इन आवश्यकताओं को संयुक्त उपक्रम के करार में स्पष्ट रूप से लिखना चाहिए ताकि बाद में कोई मतभेद पैदा न हो।

एक संयुक्त उपक्रम दो भिन्न देशों की दो व्यावसायिक इकाइयों के बीच करार का परिणाम हो सकते हैं। इस मामले में दो देशों की सरकारों द्वारा निर्धारित प्रावधानों को मानना होगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संयुक्त उपक्रम का अर्थ अलग-अलग हो सकता है, जो इस बात पर निर्भर करता है कि हम इसे किस संदर्भ में प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन व्यापक अर्थों में संयुक्त उपक्रम का अर्थ है दो या दो से अधिक व्यावसायिक इकाईयों के द्वारा एक निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए संसाधनों एवं विशेषज्ञता को एक साथ मिला लेना। व्यवसाय

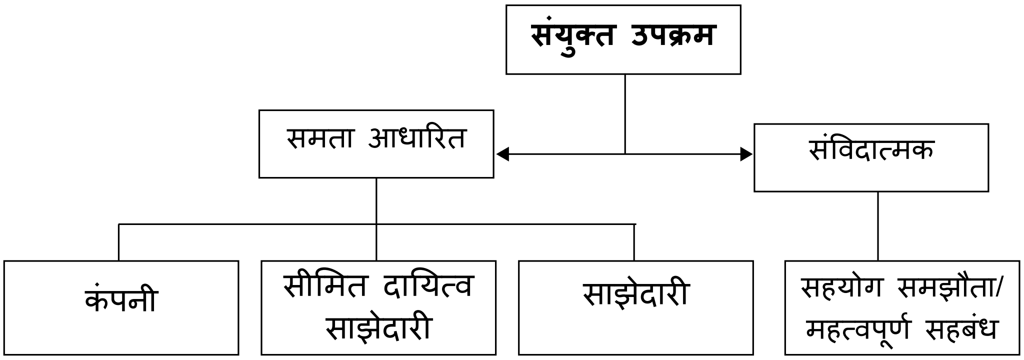

संयुक्त उपक्रमों के प्रकार

के जोखिमों एवं प्रतिफल को भी परस्पर बाँट लिया जाता है। संयुक्त उपक्रम स्थापित करने के कारणों में व्यावसाय का विस्तार, नए उत्पादों का विकास या फिर नए बाज़ारों, विशेषकर अन्य देश के बाज़ारों में कार्य करना सम्मिलित हैं। अब कंपनियों के द्वारा अन्य व्यावसायिक इकाइयों/ कंपनियों के साथ संयुक्त उपक्रम का निर्माण एवं उनके साथ नीतिगत गठजोड़ एक आम बात होती जा रही है। इन गठजोड़ों का कारण एक दूसरे की पूरक क्षमताएँ एवं साधन जैसे कि वितरण प्रणली, तकनीकी, वित्त आदि हो सकते हैं। इस प्रकार के संयुक्त उपक्रम में दो या दो से अधिक (जनक) कंपनियाँ एक नई इकाई, जिसमें उन सभी का नियंत्रण हो, का निर्माण करने के लिए पूँजी, तकनीकी, मानव संसाधन, जोखिम एवं प्रतिफल में हिस्सा बंटाने के लिए सहमत होते हैं।

भारत में संयुक्त उपक्रम कंपनियाँ व्यवसाय के लिए सर्वोत्तम हैं। इनके लिए कोई अलग से कानून नहीं है। भारत में संयुक्त उपक्रमों को घरेलू आंतरिक कंपनी के समकक्ष रखा जाता है। संयुक्त उपक्रम दो प्रकार के होते हैं–

संविदात्मक संयुक्त उपक्रम

समता आधारित संयुक्त उपक्रम

3.6.1 संयुक्त उपक्रमों के प्रकार

(प) **संविदात्मक संयुक्त उपक्रम**

संविदात्मक संयुक्त उपक्रम में संयुक्त स्वामित्व वाली एक नई इकाई का निर्माण नहीं किया जाता। यहाँ केवल साथ-साथ कार्य करने का एक समझौता होता है। वे व्यवसाय में स्वामित्व को नहीं बाँटते, बल्कि संयुक्त उपक्रम में नियंत्रण के कुछ तत्वों का उपयोग करते हैं। फ्रैंचाइजी संबंध संविदात्मक संयुक्त उपक्रम का एक प्रारूपिक उदाहरण है। ऐसे संबंध में मुख्य तत्व हैं–

(क) दो अथवा अधिक पक्षों का एक सामान्य इष्टार्थ होता है–व्यवसाय उपक्रम को चलाना।

(ख) प्रत्येक पक्ष कुछ निर्विष्टियाँ लाता है।

(ग) दोनों पक्ष व्यवसाय उपक्रम पर कुछ नियंत्रण रखते हैं।

(घ) यह लेन-देन से लेन-देन का संबंध नहीं है बल्कि तुलनात्मक रूप से दीर्घकालिक होता है।

(ii) **समता आधारित संयुक्त उपक्रम**

समता आधारित संयुक्त उपक्रम वह है जिसमें एक अलग व्यावसायिक इकाई, जिसमें दो अथवा अधिक पक्षों का संयुक्त स्वामित्व हो, का निर्माण पक्षों के बीच समझौते से होता है। व्यावसायिक इकाई का स्वरूप अलग-अलग हो सकता है- कंपनी, साझेदारी फर्म, ट्रस्ट, सीमित दायित्व साझेदारी फर्म, उपक्रम, पूँजी निधि इत्यादि।

(क) यहाँ या तो एक नई इकाई बनाने का अथवा वर्तमान इकाई में किसी एक पक्ष द्वारा स्वामित्व ग्रहण करने का समझौता होता है।

(ख) संबद्ध पक्षों द्वारा सहभाजित स्वामित्व।

(ग) संयुक्त स्वामित्व वाली इकाई का सहभाजित प्रबंधन।

(घ) पूँजी निवेश तथा अन्य वित्तीयन व्यवस्थाओं के बारे में सहभाजित उत्तरदायित्व।

(ङ) समझौते के अनुसार सहभाजित लाभ और हानि।

एक संयुक्त उपक्रम अनिवार्यतः एक ऐसे समझौता-पत्र पर आधारित होता है जिसे संयुक्त उपक्रम समझौतों के आधारों को उजागर करते हुए दोनों पक्षों द्वारा हस्ताक्षरित किया जाता है। बाद में किसी भी कानूनी पेचीदगी से बचने हेतु समझौते की शर्तों की पूर्णतया चर्चा तथा मोल-तोल कर लेना चाहिए। समझौता तथा शर्तें दोनों पक्षों की सांस्कृतिक तथा कानूनी पृष्ठभूमि के अनुसार होनी चाहिए। संयुक्त उपक्रम समझौते में यह अवश्य उल्लेखित होना चाहिए कि एक विशिष्ट अवधि में सभी आवश्यक सरकारी अनुमोदन तथा लाइसेंस प्राप्त कर लिए जाएँगे।

3.6.2 लाभ

एक साझीदार के साथ संयुक्त उपक्रम से व्यवसाय में असंभाव्य लाभ प्राप्त होते हैं। संयुक्त उपक्रम दोनों पक्षों के लिए बेहद लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं। एक पक्ष के पास वृद्धि एवं नवीन विचारों की योग्यता हो सकती है, फिर भी संयुक्त उपक्रम से उसे लाभ हो सकता है, क्योंकि इससे उसकी क्षमता, संसाधन एवं तकनीकी विशेषज्ञता में वृद्धि होती है। संयुक्त उपक्रमों के मुख्य लाभ निम्नोक्त हैं–

(क) संसाधन एवं क्षमता में वृद्धि– किसी दूसरे के साथ हाथ मिलाने से, अर्थात् दूसरे से जुड़ जाने से उपलब्ध संसाधन साधनों एवं क्षमता में वृद्धि होती है, जिससे संयुक्त उपक्रम पूँजी अधिक तेज़ी से बढ़ता तथा विस्तृत होता है। नए व्यवसाय को संयुक्त वित्तीय एवं मानव संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं तथा वह बाज़ार की चुनौतियों का सामना कर सकते हैं एवं नए अवसरों से लाभ उठा सकते हैं।

(ख) नए बाज़ार एवं वितरण तंत्र का लाभ– जब एक व्यावसायिक इकाई किसी दूसरे देश की इकाई की साझेदारी में संयुक्त उपक्रम

बनाती है तो इससे इसे एक बड़ा बाज़ार क्षेत्र उपलब्ध हो जाता है। उदाहरण के लिए जब कोई विदेशी कंपनी भारत की कंपनी के साथ मिलकर संयुक्त उपक्रम की रचना करती है तो उन्हें भारत का विशाल बाज़ार मिलता है। जिन उत्पादों की बिक्री उनके अपने घरेलू बाज़ार में परिपूर्णता की स्थिति तक पहुँच चुकी होती है उन्हें नए बाज़ार में बेचा जा सकता है।

(ग) नई तकनीकी का लाभ– संयुक्त उपक्रम बनाने का एक महत्वपूर्ण कारण तकनीकी है। उत्पादन की उन्नत तकनीक से श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली वस्तुओं का उत्पादन होता है और क्योंकि अपनी तकनीकी का विकास नहीं करना पड़ता इसलिए समय, ऊर्जा एवं निवेश की बचत होती है। तकनीकी से कार्य क्षमता एवं प्रभावशीलता बढ़ती है, जिससे लागत में कमी आती है।

(घ) नवीनता– आज बाज़ार में नई एवं कुछ वस्तुओं की माँग है। संयुक्त उपक्रम के कारण बाज़ार में नई-नई एवं रचनात्मक वस्तुएँ आ पाती हैं। नए-नए विचार एवं तकनीकी के कारण विदेशी साझेदार नए प्रकार की वस्तुओं को बाज़ार में लाए हैं।

(ङ) उत्पादन लागत में कमी– जब भी कोई अंतर्राष्ट्रीय निगम भारत में पूँजी निवेश करता है तो उन्हें उत्पादन की कम लागत का भरपूर लाभ मिलता है। उन्हें अपनी वैश्विक आवश्यकताओं के लिए श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली वस्तुएँ उपलब्ध हो जाती हैं। आज भारत अनेक उत्पादों का प्रतियोगी एवं महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय स्त्रोत है।

इसके कई कारण हैं, जैसे– कच्चे माल एवं श्रम की कम लागत, तकनीकी योग्यता प्राप्त श्रमशक्ति, पेशेवर प्रबंधक, वकील, चार्टर्ड अकाउंटेन्ट, इंजीनियर, वैज्ञानिक आदि के रूप में अद्‌भुत मानव शक्ति। अंतर्राष्ट्रीय साझेदार को इस प्रकार से आवश्यक गुणवत्ता एवं विशिष्ट प्रकार की वस्तुएँ उनके अपने देश की तुलना में कम मूल्य पर मिल जाती हैं।

(च) एक स्थापित ब्रांड का नाम– जब दो व्यावसायिक इकाईयाँ संयुक्त उपक्रम का निर्माण करती हैं तो एक पक्ष को दूसरे पक्ष की पहले से स्थापित ख्याति का लाभ मिलता है। यदि संयुक्त उपक्रम भारत में स्थित है तथा वह भारतीय कंपनी के साथ है तो भारतीय कंपनी को उत्पादों एवं वितरण प्रणाली के लिए ब्रांड के विकास के लिए समय एवं धन का व्यय नहीं करना होगा। उत्पाद को बाज़ार में लाने के लिए पहले से बाज़ार तैयार है। इस प्रक्रिया से निवेश की बचत हो जाती है।

3.7 सार्वजनिक निजी भागीदारी (पी.पी.पी.)

सार्वजनिक निजी भागीदारी प्रतिरूप सार्वजनिक तथा निजी भागीदारों के बीच सर्वोत्कृष्ट तरीके से कार्यों, दायित्वों तथा जोखिमों का बँटवारा

करता है। पी.पी.पी. के अंतर्गत सार्वजनिक भागीदारों में होती हैं सरकारी इकाइयाँ, जैसे– मंत्रालय, विभाग, नगर निगम अथवा सरकारी स्वामित्व वाले उपक्रम। निजी भागीदारों में तकनीकी अथवा वित्तीय विशेषज्ञता वाले व्यवसायों अथवा निवेशकों सहित स्थानीय अथवा विदेशी (अंतर्राष्ट्रीय) भागीदार सम्मिलित हो सकते हैं। पी.पी.पी. के अंतर्गत गैर-सरकारी संगठन तथा/अथवा समुदाय-आधारित संगठन, जो परियोजना से प्रत्यक्षतः प्रभावित होने वाले हितधारी हों, सम्मिलित होते हैं। इसीलिए पी.पी.पी. को आधारभूत संरचना एवं अन्य सेवाओं के संदर्भ में सार्वजनिक तथा निजी इकाइयों के बीच एक संबंध के रूप में परिभाषित किया जाता है। पी.पी.पी. प्रतिरूप के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा यह सुनिश्चित करता है कि सामाजिक उत्तरदायित्व निभाए जा रहे हैं और क्षेत्र सुधार व सार्वजनिक निवेश सफलता से पूरे किए जा रहे हैं। पी.पी.पी. में सरकार का योगदान, निवेश हेतु पूँजी तथा संपत्तियों के हस्तांतरण के रूप में होता है, जो सामाजिक उत्तरदायित्व, पर्यावरण जागरूकता और स्थानीय जानकारी के अतिरिक्त भागीदारी की सहायता करता है। भागीदारी में निजी क्षेत्र की भूमिकाओं में, प्रचालनों में अपनी विशेषज्ञता का प्रयोग करना, कार्यों का प्रबंधन तथा प्रभावी तरीके से व्यवसाय संचालन हेतु नवप्रवर्तन सम्मिलित हैं।

विश्व भर के जिन क्षेत्रों में पी.पी.पी. लागू की जा रही है, वे हैं- ऊर्जा उत्पादन एवं वितरण, जल एवं सफाई व्यवस्था, कचरा निस्तारण, पाइप लाइनें, अस्पताल, विद्यालय भवन व शिक्षण सुविधाएँ, स्टेडियम, हवाई यातायात नियंत्रण, जेलें, रेलवे, सड़कें, बिलिंग व अन्य सूचना प्रोद्योगिकी प्रणाली तथा आवास।

पी.पी.पी. प्रतिरूप

विशेषताएँ–
- लोक सुविधा के अभिकल्पन तथा निर्माण हेतु निजी पक्ष से अनुबंध।
- सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा सुविधा का वित्तपोषण एवं स्वामित्व।
- अभिकल्प एवं निर्माण जोखिम का हस्तांतरण मुख्य संचालक है।

उपयुक्तता–
- लघु प्रचालन आवश्यकता वाली पूँजी परियोजनाओं हेतु उपयुक्त।
- उन पूँजी परियोजनाओं हेतु उपयुक्त, जहाँ सार्वजनिक क्षेत्र प्रचालन उत्तरदायित्व अपने पास रखना चाहता है।

गुण–
- अभिकल्प तथा निर्माण जोखिम का हस्तांतरण।
- परियोजना तेज़ी से आगे बढ़ने की संभावना।

कमज़ोरियाँ–
- पक्षों के बीच पर्यावरणीय मुद्दों पर मतभेद उत्पन्न हो सकते हैं।
- निजी वित्त को सुगमता से आकर्षित नहीं करते।

उदाहरण–
- कुंडली मानेसर एक्सप्रेस-वे लिमिटेड। 135 किमी. के इस एक्सप्रैसवे में सरकार द्वारा भूमि उपलब्ध कराई गई है तथा कंपनी द्वारा सड़क बिछाई गई है।

निजी, सार्वजनिक एवं भूमंडलीय उपक्रम

मुख्य शब्दावली

सार्वजनिक क्षेत्र	विभागीय उपक्रम	निजीकरण
सार्वजनिक उपक्रम	सरकारी कंपनी	भूमंडलीकरण
वैधानिक निगम	विनिवेश	भूमंडलीय उपक्रम
संयुक्त उपक्रम	सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम	सार्वजनिक निजी भागीदारी

सारांश

निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र- हमारे देश में सभी प्रकार के व्यावसायिक संगठन हैं- छोटे या बड़े औद्योगिक या व्यापारिक, निजी स्वामित्व के या सरकारी स्वामित्व वाले। ये संगठन हमारे दैनिक आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं, इसलिए ये हमारी अर्थव्यवस्था के अंग हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में निजी स्वामित्व एवं सरकारी स्वामित्व वाले दोनों व्यावसायिक उद्यम होते हैं इसीलिए इसे मिश्रित अर्थव्यवस्था कहते हैं। भारत सरकार ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को चुना, जिसमें निजी क्षेत्र एवं सरकारी क्षेत्र, दोनों क्षेत्रों के उद्यमों के परिचालन की छूट थी। इसीलिए हमारी अर्थव्यवस्था को दो क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता है- निजी क्षेत्र एवं सार्वजनिक क्षेत्र। निजी क्षेत्र में जैसा कि तुम पहले अध्याय में पढ़ चुके हो, व्यवसायों के स्वामी व्यक्ति होते हैं अथवा व्यक्तियों का समूह। इसमें संगठन के विभिन्न स्वरूप हैं- एकल स्वामित्व, साझेदारी, संयुक्त हिंदू परिवार, सहकारी समितियाँ एवं कंपनी। सार्वजनिक क्षेत्र में जो संगठन होते हैं उनकी स्वामी सरकार होती है और सरकार ही उनका प्रबंध करती है। इन संगठनों का स्वामित्व पूर्ण रूप से अथवा आंशिक रूप से राज्य सरकार अथवा केंद्र सरकार के पास होता।

सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के संगठनों के स्वरूप- देश के व्यावसायिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में सरकार की भागीदारी के लिए किसी प्रकार के संगठनात्मक ढाँचे की आवश्यकता होती है। एक सार्वजनिक उपक्रम, व्यवसायिक संगठन के किसी भी स्वरूप को अपना सकता है लेकिन यह इसके कार्यों की प्रकृति एवं सरकार से इसके संबंधों पर निर्भर करता है। संगठन का कौन-सा स्वरूप इसके लिए उपयुक्त रहेगा यह इसकी आवश्यकताओं पर निर्भर करेगा। सार्वजनिक उद्यमों के विभिन्न स्वरूप निम्नलिखित हैं-

(i) विभागीय उपक्रम

(ii) वैधानिक निगम

(iii) सरकारी कंपनी

विभागीय उपक्रम- सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम की स्थापना मंत्रालय के एक विभाग के रूप में की जाती है एवं यह मंत्रालय का ही एक भाग या फिर उसका विस्तार माना जाता है। सरकार इन्हीं विभागों के माध्यम से कार्य करती है तथा यह सरकार की गतिविधियों के महत्वपूर्ण भाग होते हैं।

वैधानिक निगम- वैधानिक निगम वे सार्वजनिक उद्‌यम हैं, जिनकी स्थापना संसद के विशेष अधिनियम के द्‌वारा की जाती है। यह अधिनियम इनके अधिकार एवं कार्य, इसके कर्मचारियों को शासित करने से संबंधित नियम एवं कानून तथा सरकार के विभिन्न विभागों से इनके संबंधों को परिभाषित करता है। ये निगमित संगठन होते हैं जिनकी स्थापना विधान मंडल द्‌वारा की जाती है, इनके कार्य एवं शक्तियाँ पूर्ण परिभाषित हाती हैं। ये वित्त मामलों में स्वतंत्र होते हैं तथा इनका निर्धारित क्षेत्र पर तथा विशेष प्रकार की वाणिज्यिक क्रियाओं पर स्पष्ट नियंत्रण होता है।

सरकारी कंपनी- एक सरकारी कंपनी वह कंपनी है, जिसकी कम से कम 51 प्रतिशत चुकता अंशपूँजी या तो केंद्र सरकार के पास है या फिर राज्य सरकारों के पास, या फिर कुछ केंद्र सरकार के पास और शेष एक या एक से अधिक राज्य सरकारों के पास हैं तथा उसमें वह कंपनी भी सम्मिलित है जो किसी सरकारी कंपनी की सहायक कंपनी है।

सार्वजनिक क्षेत्र की परिवर्तित भूमिका- स्वतंत्रता प्राप्ति के समय यह आशा की गई थी कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्‌यम व्यवसाय में प्रत्यक्ष रूप में भाग लेकर अथवा एक उत्प्रेरक के रूप में अर्थव्यवस्था के कुछ उद्‌देश्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे। भारतीय अर्थव्यवस्था आज परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। 90 के दशक के उत्तरार्ध में नई आर्थिक नीतियों ने उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमंडलीकरण पर अधिक ज़ोर दिया। सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका की पुनः व्याख्या की गई।

मूलभूत ढाँचे का विकास- औद्‌योगीकरण की प्रक्रिया को बिना पर्याप्त परिवहन एवं संचार सुविधाओं, ईंधन एवं ऊर्जा तथा मूलभूत एवं भारी उद्‌योगों को जीवित नहीं रखा जा सकता। यह सरकार ही थी, जो भारी पूँजी जुटा सकती थी, औद्‌योगिक निर्माण में समन्वय स्थापित कर सकती थी एवं तकनीशियनों तथा कर्मचारियों को प्रशिक्षित कर सकती थी।

क्षेत्रीय संतुलन- सभी क्षेत्रों एवं राज्यों का संतुलित विकास करना एवं क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करना सरकार का दायित्व है। इसके लिए सरकार को पिछड़े क्षेत्रों में नए उद्‌यमों की स्थापना करनी पड़ी तथा साथ-साथ पहले से ही उन्नत क्षेत्रों में निजी क्षेत्र की कुकरमुते की तरह हो रही वृद्‌धि को रोकना पड़ा।

बड़े पैमाने के लाभ- जिन क्षेत्रों में भारी पूँजी वाले बड़े पैमाने के उद्‌योगों की आवश्यकता होती है वहाँ बड़े पैमाने के लाभों को प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र आगे आया।

आर्थिक शक्ति के केंद्रित होने पर रोक- सार्वजनिक क्षेत्र निजी क्षेत्र पर नियंत्रण रखता है। निजी क्षेत्र में कुछ ही औद्‌योगिक घराने होते हैं, जो भारी उद्‌योगों में निवेश के इच्छुक होते हैं।

आयात का पूरक- दूसरी एवं तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं के कार्यकाल में भारत का लक्ष्य कई क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होना था। यह वह समय था जब सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों ने भारी इंजीनियरिंग उद्‌योगों की स्थापना की, जिससे इनके आयात का प्रतिस्थापन्न हो सके।

1991 से सरकार की सार्वजनिक क्षेत्र के विषय में नीति- इसके प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं-

- क्षमता की संभावनाओं वाले सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (पी.एस.यू) को पुनर्गठित एवं पुनर्जीवित करना;
- ऐसे पी.एस.यू., जिनको पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता, को बन्द करना; एवं
- गैर महत्त्वपूर्ण पी.एस.यू. में, यदि आवश्यकता हो तो सरकार के समता अंश को 26% या उससे कम लाना;

- कर्मचारियों के हितों को पूर्ण संरक्षण देना।
- अतः भारत सरकार ने निम्नोक्त कदम उठाए-

(क) सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योग-धंधों की संख्या को घटाकर 17 से 8 कर किया (तत्पश्चात 3 कर दिया)।

(ख) सार्वजनिक क्षेत्र की चुनिंदा व्यावसायिक इकाइयों के अंशों का विनिवेश– विनिवेश में सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के समता अंशों को निजी क्षेत्र की इकाइयों एवं जनता को बेचा जाता है। इसका उद्देश्य इन इकाइयों के लिए संसाधन जुटाना एवं आम जनता एवं कर्मचारियों की भागीदारी को व्यापक बनाना है। सरकार ने औद्योगिक क्षेत्र से अपने आपको अलग करने एवं सभी उपक्रमों में से अपनी समता अंश पूँजी को कम करने का निर्णय लिया था।

(ग) बीमार इकाइयों एवं निजी क्षेत्र के लिए एक समान नीतियाँ– सभी सार्वजनिक क्षेत्र की बीमार इकाइयों को औद्योगिक एवं वित्तीय पुननिर्माण बोर्ड को यह निर्णय लेने के लिए सौंपा जाता है कि एक बीमार इकाई का पुनर्गठन किया जाए या फिर उसे बन्द कर दिया जाए।

समझौता विवरणिका– समझौता विवरणिका प्रणाली के माध्यम से निष्पादन में सुधार किया जा सकता है। प्रबंध को अधिक स्वायतता प्रदान की जाती है परन्तु निर्धारित परिणामों के लिए उत्तरदायी भी ठहराया जाता है।

भूमंडलीय उपक्रम– पिछले दस वर्ष में एमएनसी ने भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनकी विशेषताएँ हैं उनका विशाल आकार, उत्पादों की बड़ी संख्या, उन्नत तकनीक, विपणन की रणनीति, एवं पूरे विश्व में फैला व्यवसाय तंत्र। इस प्रकार से भूमंडलीय उपक्रम वे विशाल औद्योगिक संगठन हैं, जिनकी औद्योगिक एवं विपणन क्रियाएँ उनकी शाखाओं के तंत्र के माध्यम से अनेकों देशों में फैली हुई हैं।

विशेषताएँ– इन निगमों की कुछ विशिष्टताएँ होती हैं, जो उन्हें अन्य निजी क्षेत्र की कंपनियों एवं सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों से अलग करती हैं। ये विशेषताएँ निम्नलिखित है–
(क) विशाल पूँजीगत संसाधन (ख) विदेशी सहयोगः (ग) उन्नत तकनीकें (ङ) उत्पादन में नवीनता (च) विपणन की रणनीति (छ) बाज़ार क्षेत्र का विस्तार (ज) केंद्रीकृत नियंत्रण

संयुक्त उपक्रम– एक संयुक्त उपक्रम दो भिन्न देशों की दो व्यावसायिक इकाइयों के बीच करार का परिणाम हो सकते हैं। इस मामले में दो देशों की सरकारों द्वारा निर्धारित प्रावधानों को मानना होगा। व्यापक अर्थों में संयुक्त उपक्रम का अर्थ है दो या दो से अधिक व्यावसायिक इकाइयों के द्वारा एक निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए संसाधनों एवं विशेषज्ञता को एक स्थान पर एकत्रित कर लेना। व्यवसाय की जोखिमों एवं प्रतिफल को आपस में बाँट लिया जाता है। संयुक्त उपक्रम स्थापित करने के कारणों में व्यावसाय का विस्तार, नए उत्पादों का विकास या फिर नए बाज़ारों, विशेषकर अन्य देश के बाज़ारों में कार्य करना सम्मिलित हैं।
लाभ– एक साझीदार के साथ संयुक्त उपक्रम से व्यवसाय में असंभाव्य लाभ प्राप्त होते हैं।
(क) संसाधन एवं क्षमता में वृद्धि (ख) नए बाज़ार एवं वितरण तंत्र का लाभ (ग) नई तकनीकी का लाभ (घ) नवीनता (ङ) उत्पादन लागत की लागत में कमी।
सार्वजनिक निजी भागीदारी– सार्वजनिक निजी भगीदारी प्रतिरूप सार्वजनिक तथा निजी भागीदारों के बीच सर्वोत्कृष्ट तरीके से कार्यों, दायित्वों तथा जोखिमों का बँटवारा करता है।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. एक सरकारी कंपनी वह कंपनी है, जिसमें सरकार की उस कंपनी की चुकता अंश पूँजी में हिस्सेदारी ----- से कम नहीं है।
   (क)49% (ख) 51%
   (ग) 50% (घ) 25%
2. बहुराष्ट्रीय कंपनी में केन्द्रिकृत नियंत्रण इसके द्वारा किया जाता है–
   (क)शाखाएँ (ख) सहायकी
   (ग) मुख्यालय (घ) संसद
3. सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम वे संगठन हैं जिनका स्वामित्व ----- का है।
   (क)संयुक्त हिन्दू परिवार (ख) सरकार
   (ग) विदेशी कंपनियों (घ) निजी उपक्रम
4. सार्वजनिक क्षेत्र की बीमार इकाईयों का पुनर्रचना ----- के द्वारा की जाती है।
   (क)एम.ओ.एफ.ए (ख) एम.ओ.यू.
   (ग) बी.आई.एफ.आर. (घ) एन.आर.एफ.
5. सार्वजनिक क्षेत्र की इकाईयों में विनिवेश से तात्पर्य है–
   (क)निजी/सार्वजनिक क्षेत्र को समता अशों की बिक्री
   (ख)परिचालनों को बंद करना
   (ग) नए क्षेत्रों में निवेश करना
   (घ) सार्वजनिक क्षेत्र की इकाईयों के अंशों को खरीदकर
6. समता आधारित संयुक्त उपक्रम में क्या सम्मिलित नहीं है।
   (क)सहयोग समझौता (ख) कंपनी
   (ग) साझेदारी (घ) सीमित दायित्व साझेदारी

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र की अवधारणा की व्याख्या कीजिए।
2. निजी क्षेत्र के विभिन्न संगठनों के बारे में बताइए।

3. सार्वजनिक क्षेत्र में आने वाले संगठन कौन-कौन से है?
4. सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों के नाम बताओ तथा उनका वर्गीकरण करो।
5. सार्वजनिक क्षेत्र के अन्य विविध संगठनों की तुलना में सरकारी कंपनी संगठन को प्राथमिकता क्यों दी जाती है?
6. सरकार देश में क्षेत्रीय संतुलन कैसे बनाए रखती है?
7. सार्वजनिक निजी भागीदारी का अर्थ समझाएँ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सार्वजनिक क्षेत्र की 1991 की औद्यौगिक नीति का वर्णन कीजिए।
2. 1991 से पहले सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका क्या थी?
3. क्या सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी लाभ तथा दक्षता की दृष्टि से निजी क्षेत्र से प्रतिस्पर्धा कर सकती है? अपने उत्तर के कारण बताएँ।
4. भूमंडलीय उपक्रम अन्य व्यवसाय संगठन से श्रेष्ठ क्यों माने जाते है?
5. संयुक्त उपक्रम और सार्वजनिक निजी भागीदारी में प्रवेश के क्या लाभ हैं?

परियोजना कार्य

1. उन भारतीय कंपनियों की लिस्ट बनाईए जिन्होने विदेशी कंपनीयों के साथ संयुक्त उपक्रम में प्रवेश किया है। इस प्रकार के उपक्रमों के लाभों की व्याख्या कीजिए।

11109CH04

अध्याय 4

व्यावसायिक सेवाएँ

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप–

- सेवाओं की विशेषता का उल्लेख कर सकेंगे;
- सेवाओं और वस्तुओं में अंतर कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक सेवाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- ई-बैंकिंग की अवधारणा को समझ सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार की बीमा पॉलिसियों की पहचान कर सकेंगे एवं उनका वर्गीकरण कर सकेंगे; तथा
- विभिन्न प्रकार के भंडारगृहों का वर्णन कर सकेंगे।

हम सब ने पेट्रोल पंप देखें हैं। आपने कभी सोचा है कि किसी पेट्रोल पंप का मालिक एक गाँव में किस प्रकार से अपना व्यापार चलाता है? वह किस प्रकार दूर-दराज के गाँवों में पेट्रोल एवं डीजल ले जाता है? बड़ी मात्रा में पेट्रोल एवं डीजल खरीदने के लिए वह कैसे पैसे जुटाता है? अपनी आवश्यकता को बताने के लिए वह पेट्रोल डिपो से तथा अपने ग्राहकों से कैसे संप्रेषण करता है? वह अपने व्यवसाय से जुड़े जोखिमों से अपना बचाव कैसे करता है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर व्यावसायिक सेवाओं को समझने से मिलता है। पेट्रोल एवं डीजल को तेल शोधक कारखानों से पेट्रोल पंप तक माल रेलगाड़ी एवं टैंकरों से ले जाया जाता है (परिवहन सेवा)। फिर इनका भारत में फैले सभी प्रमुख नगरों में स्थित तेल कंपनियों के डिपों में संग्रहण किया जाता है (भंडारण सेवाएँ)। आवश्यकता पड़ने पर पेट्रोल पंप के स्वामी ग्राहकों, बैकों एवं डिपो से संपर्क साधने के लिए डाक एवं टेलीफोन सेवाओं का नियमित उपयोग करते हैं (संप्रेषण सेवाएँ)। तेल कंपनियाँ पेट्रोल एवं डी.जल को अग्रिम भुगतान प्राप्त कर बेचते हैं। मालिक क्रय के लिए आवश्यक धन जुटाने के लिए बैंको से ऋण एवं अग्रिम राशि लेते हैं (बैंकिंग सेवाएँ)। पेट्रोल एवं डीजल जोखिम भरे उत्पाद होते हैं। मालिकों को विभिन्न जोखिमों से अपनी सुरक्षा करनी होती है। इसलिए वे अपने व्यवसाय का, उत्पादों का, अपने यहाँ कार्यरत कर्मचारियों का बीमा करा लेते हैं (बीमा सेवाएँ)।

अतः हम देखते हैं कि कहने को तो पेट्रोल एवं डीजल उपलब्ध कराना एकल व्यवसाय है परंतु वास्तव में यह विभिन्न व्यावसायिक सेवाओं का साझा परिणाम है। इन सेवाओं का उपयोग तेल शोधक कारखानों से पूरे भारत में फैले विक्रय बिन्दु पेट्रोल पम्पों तक, पेट्रोल एवं डीजल को पहुँचाने की प्रक्रिया में किया जाता है।

4.1 परिचय

आप सभी का कभी न कभी व्यावसायिक गतिविधियों से वास्ता अवश्य पड़ा होगा। आइए व्यावसायिक गतिविधियों के कुछ उदाहरणों को देखें, जैसे-एक स्टोर से आइसक्रीम खरीदना एवं एक जलपान गृह में आइसक्रीम खाना, किसी सिनेमा हॉल में सिनेमा देखना या फिर एक वीडियो कैसेट/सीडी को खरीदना, स्कूल बस खरीदना या फिर इसे ट्रांसपोर्टर से पट्टे (Lease) पर लेना। यदि आप इन सभी क्रियाओं का विश्लेषण करें तो पाएँगे कि क्रय करने एवं खाने में, देखने एवं क्रय करने में तथा क्रय करने एवं पट्टे पर लेने में अंतर है। इन सभी में जो समानता है, वह यह है कि एक में किसी वस्तु का क्रय किया जा रहा है तो दूसरे में सेवाएँ प्राप्त होती हैं। लेकिन वस्तुओं एवं प्रदत्त सेवाओं में अंतर अवश्य है।

एक अनभिज्ञ व्यक्ति के लिए सेवाएँ मूलतः अमूर्त होती हैं। सेवाओं के क्रय से कोई भौतिक वस्तु प्राप्त नहीं होती। उदाहरण के लिए, आप एक डॉक्टर से सलाह ले सकते हैं, उसे खरीद नहीं सकते। सेवाएँ वे आर्थिक क्रियाएँ हैं जो अमूर्त होती हैं। इनमें सेवा देने वाले एवं उपभोक्ता के बीच सेवाओं का आदान-प्रदान होता है। सेवाएँ वे क्रियाएँ हैं जिनको अलग से पहचाना जा सकता है, जो अमूर्त हैं, जो किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं एवं यह आवश्यक नहीं कि वे किसी उत्पाद अथवा अन्य सेवा के विक्रय से जुड़ी हों।

वस्तु एक भौतिक पदार्थ है जिसकी किसी क्रेता को सुपुर्दगी दी जा सकती है तथा जिसके

स्वामित्व का विक्रेता से क्रेता को हस्तांतरण हो सकता है। वस्तुओं से अभिप्राय सेवाओं को छोड़कर उन सभी प्रकार के पदार्थों एवं वस्तुओं से है जिनमें व्यापार एवं वाणिज्य होता है।

4.2 सेवाओं की प्रकृति

सेवाओं की पाँच आधारभूत विशेषताएँ होती हैं। यही विशेषताएँ इन्हें वस्तुओं से भिन्न करती हैं। इन्हें सेवा के पाँच तत्त्व कहते हैं। इनकी चर्चा नीचे की जा रही है।

(क) अमूर्त– सेवाएँ अमूर्त हैं, अर्थात् इन्हें छुआ नहीं जा सकता। इनको अनुभव किया जा सकता है। डॉक्टर के इलाज का कोई स्वाद नहीं होता तथा मनोरंजन छूने की चीज़ नहीं है। इन्हें तो केवल अनुभव किया जा सकता है। इसका एक निहितार्थ यह है कि उपभोग से पहले इसकी गुणवत्ता का निर्धारण संभव नहीं है, अर्थात् बिना गुणवत्ता की जाँच के इसका क्रय किया जा सकता है। सेवा प्रदानकर्ताओं के लिए इसीलिए यह महत्त्वपूर्ण है कि वह इच्छित सेवाओं के सृजन में सतर्कता बरतें ताकि वह ग्राहक को संतुष्ट कर सकें। उदाहरण के लिए, डॉक्टर के इलाज का अनुकूल परिणाम आना चाहिए।

(ख) असंगतता– सेवा की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता इनमें एकरूपता का न होना है। सेवाएँ कोई मानकीय मूर्त उत्पाद तो हैं नहीं, बल्कि हर बार इनका निष्पादन अलग से किया जाता है। अलग-अलग

सेवाओं एवं वस्तुओं में अंतर

आधार	सेवाएँ	वस्तुएँ
प्रकृति	एक क्रिया अथवा प्रक्रिया, जैसे- सिनेमा हॉल में फिल्म देखना।	एक भौतिक वस्तु, जैसे- किसी फिल्म का वीडियो कैसेट।
प्रकार	विषमजातीय	समजातीय
अमूर्त	अमूर्त, जैसे- चिकित्सक द्वारा इलाज	मूर्त, जैसे - दवाएँ
विभिन्न रूपता	अलग-अलग ग्राहक, अलग-अगल माँगें, जैसे- मोबाइल सेवाएँ।	अलग-अलग ग्राहक मानव माँगों की पूर्ति, जैसे- मोबाइल फोन।
अभिन्नता	उत्पादन एवं उपभोग एक साथ, जैसे- जलपान ग्रह में आइसक्रीम खाना।	उत्पादन एवं उपभोग में अलगाव, जैसे- दुकान से आइसक्रीम खरीदना।
रहतिया (इन्वेन्ट्री)	स्टॉक में नहीं रख सकते, जैसे- रेल यात्रा करना।	स्टॉक में रखा जा सकता है, जैसे- रेल यात्रा के लिए टिकट।
संबद्धता	सेवाएँ उपलब्ध कराते समय ग्राहकों की भागीदारी, जैसे- फास्ट फूड स्टॉल पर स्वयं सेवा।	सुपुर्दगी के समय भाग लेना संभव नहीं, जैसे- किसी वाहन का विनिर्माण।

ग्राहकों की अलग-अलग माँगें एवं अपेक्षाएँ होती हैं। सेवा प्रदानकर्ताओं को ग्राहकों की आवश्यकताओं की पूर्ण संतुष्टि करने के लिए अपनी सेवाओं में परिवर्तन करने के अवसर होने चाहिए। मोबाइल सेवाओं में इसका उदाहरण यह देखने को मिलता है।

(ग) **अभिन्नता–** सेवा की एक और महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि इसके उत्पादन एवं उपभोग की क्रियाएँ साथ-साथ संपन्न होती हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि सेवाओं का उत्पादन एवं उनका उपभोग अभिन्न है। यदि हम आज एक कार का विर्निमाण करते हैं तो एक महीने के पश्चात् भी उसकी बिक्री कर सकते हैं। सेवाओं के लिए यह संभव नहीं है क्योंकि इनका उपभोग उनके उत्पादन के साथ ही होता है। सेवा प्रदानकर्ता उस प्रक्रिया में लगे व्यक्ति के स्थान पर उपयुक्त तकनीक का उपयोग कर सकते हैं लेकिन सेवा की मुख्य विशेषता है ग्राहक से संपर्क। बैंक से रुपये निकालने अथवा चेक जमा कराने के लिए नियुक्त क्लर्क का स्थान ए.टी.एम. ले सकता है लेकिन ग्राहकों का होना तो आवश्यक है तथा इस प्रक्रिया में ग्राहक की भागीदारी का प्रबंधन भी अनिवार्य है।

(घ) **इन्वेन्ट्री संभव नहीं–** सेवाओं के कोई भौतिक घटक नहीं होते इसीलिए इनको तैयार कर भविष्य के लिए जमा करना संभव नहीं है। सेवाएँ शीघ्र नष्ट होती हैं और सेवा प्रदानकर्त्ता इनसे जुड़ी वस्तुओं को तो जमा कर सकते हैं लेकिन सेवाओं को नहीं। इसका अर्थ हुआ कि माँग एवं पूर्ति का प्रबंधन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि सेवाओं का निष्पादन उसी समय किया जाता है जब ग्राहक इसकी माँग करता है। इनका निष्पादन उपभोग के समय से पहले संभव नहीं होता। उदाहरण के लिए, रेल यात्रा के लिए आवश्यक टिकट को तो संभालकर रखा जा सकता है लेकिन रेल यात्रा तो उसी समय की जाएगी जबकि रेलवे उसकी सेवा प्रदान करेगी।

(ङ) **संबद्धता–** सेवाओं की विशेषताओं में से सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता सेवा प्रदान करने की प्रक्रिया में ग्राहक का सहयोग है। ग्राहक अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार सेवाओं में सुधार करा सकता है।

4.2.1 सेवाओं एवं वस्तुओं में अंतर

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि सेवाओं को वस्तुओं से भिन्न दर्शाने वाली दो विशेषताएँ हैं– पहली कि इसमें स्वामित्व का हस्तांतरण संभव नहीं तथा दूसरी सेवा प्रदानकर्ता एवं उपभोक्ता दोनों की मौजूदगी। वस्तुओं का उत्पादन होता है जबकि सेवाओं को प्रदान किया जाता है। सेवा एक क्रिया है जिसे घर नहीं ले जाया जा सकता। हम सेवाओं के प्रभाव को ही घर ले जा सकते हैं।

4.3 सेवाओं के प्रकार

सेवाओं को व्यापक रूप से तीन वर्गों में बांटा जा सकता है– व्यावसायिक सेवाएँ, सामाजिक सेवाएँ एवं व्यक्तिगत सेवाएँ। इनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है–

(क) **व्यावसायिक सेवाएँ–** व्यावसायिक सेवाएँ वे सेवाएँ हैं जिन्हें व्यावसायिक उद्‌यम अपने कार्य संचालन में प्रयुक्त करते हैं। इनके उदाहरण हैं– बैंकिग, बीमा, परिवहन, भंडारण एवं संप्रेषण सेवाएँ।

(ख) **सामाजिक सेवाएँ–** ये सेवाएँ कुछ सामाजिक उद्‌देश्यों को पाने के लिए स्वेच्छा से प्रदान की जाती हैं। इनके उद्‌देश्य हो सकते हैं– समाज के कमज़ोर वर्ग के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना, उनके बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करना तथा कच्ची बस्तियों में स्वास्थ्य एवं सफाई की व्यवस्था करना। साधारणतया ये सेवाएँ स्वैच्छिक संगठनों द्‌वारा प्रदान की जाती हैं, जो इसके बदले कुछ राशि लेते हैं ताकि वे लागत पूरी कर सकें। उदाहरण के लिए, कुछ गैर-सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) एवं सरकारी एजेंसियों के द्‌वारा प्रदत्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा संबंधी सेवाएँ।

(ग) **व्यक्तिगत सेवाएँ–** ये वे सेवाएँ हैं जिनका अनुभव विभिन्न ग्राहकों द्‌वारा अलग-अलग तरीके से होता है। इनमें एकरूपता नहीं हो सकती। ये सेवाएँ प्रदान करने वाले के अनुसार भिन्न-भिन्न होती हैं। साथ ही ये ग्राहकों की पसंद एवं आवश्यकता पर भी निर्भर करती हैं। इनके उदाहरण हैं– पर्यटन, मनोरंजन सेवाएँ एवं जलपान गृह।

व्यावसायिक जगत को ठीक प्रकार से समझने के लिए हम अपनी आगे की परिचर्चा को सेवा क्षेत्र के प्रथम वर्ग; अर्थात् व्यावसायिक सेवाओं तक ही सीमित रखेंगे।

4.3.1 व्यावसायिक सेवाएँ

आज कड़ी प्रतियोगिता का युग है तथा आज का सिद्‌धांत है कि जो सर्वथा योग्य है, वही टिक पाता है। आज अकर्मण्यों के लिए कोई स्थान नहीं है। इसीलिए कंपनियाँ वही करती

अर्थव्यवस्था के क्षेत्र एवं भारत का सकल घरेलू उत्पाद (GDP)

भारतीय अर्थव्यवस्था को मुख्यतः तीन क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया है– कृषि और समवर्गी, उद्‌योग एवं सेवाएँ। इनमें से सेवा का क्षेत्र विस्तृत है। चालू कीमतों पर वर्ष 2016-17 के लिए सेवा क्षेत्र का अनुमानिक सकल वर्धित मूल्य (GVA) भारतीय मुद्रा में 73.79 लाख-करोड़ रु. आँका गया है। इसके समरूप भारत का कुल सकल वर्धित मूल्य, जोकि 137.51 लाख-करोड़ रु है, का 53.66% सेवा क्षेत्र में आता है`जबकि 39.90 लाख-करोड़ पर उद्‌योग क्षेत्र का केवल 29.05% योगदान है तथा कृषि क्षेत्र का योगदान 23.82 लाख-करोड़ है जोकि भारतीय अर्थव्यवस्था का केवल 23.82% है। यदि वर्ष 2011-12 की कीमतों के आधार पर देखा जाए तो कृषि एवं समवर्गी क्षेत्र, उद्‌योग क्षेत्र और सेवा क्षेत्र का योगदान क्रमशः 15.11%, 31.12% और 53.77% रहा है।

चालू कीमत पर सकल वर्धित मूल्य (रु. करोड़ में)

	क्षेत्र	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	2016-17	% अंश
1	**कृषि एवं समवर्गी क्षेत्र**	1,501,816	1,680,798	1,932,692	2,067,935	2,172,910	2,382,289	17-32%
1.1	मत्स्य ग्रहण	1,501,816	1,680,798	1,932,692	2,067,935	2,172,910	2,382,289	17.32%
2	**उद्योग क्षेत्र**	2,635,052	2,921,262	3,188,270	3,455,221	3,683,358	3,989,791	29.02%
2.1	खनिज उत्खनन	261,035	285,776	295,716	313,844	296,041	309,178	2.25%
2.2	उत्पादन	1,409,986	1,572,830	1,713,445	1,883,929	2,065,093	2,278,149	16.57%
2.3	विद्युत, गैस, जल आपूर्ति एवं उपयोगिता	186,668	215,164	259,840	279,456	321,765	338,396	2.46%
2.4	निर्माण	777,363	847,492	919,269	977,992	1,000,459	1,064,068	7.74%
3	**सेवा क्षेत्र**	3,969,789	4,603,255	5,245,305	5,947,260	6,595,670	7,378,705	53.66%
3.1	व्यापार, होटल, यातायात, संचार और प्रसारण संबंधी सेवाएँ	1,413,116	1,664,083	1,874,443	2,095,337	2,294,367	2,538,162	18.46%
3.2	वित्त एवं अचल संपत्ति	1,530,691	1,776,023	2,069,386	2,363,328	2,632,432	2,896,300	21.06%
3.3	सार्वजनिक प्रशासन, रक्षा एवं अन्य सेवाएँ	1,025,982	1,163,149	1,301,476	1,488,595	1,668,871	1,944,243	14.14%
मूल कीमतों पर सकल वर्धित मूल्य		**8,106,656**	**9,205,315**	**10,366,266**	**11,470,415**	**12,451,938**	**13,750,786**	**100.00%**

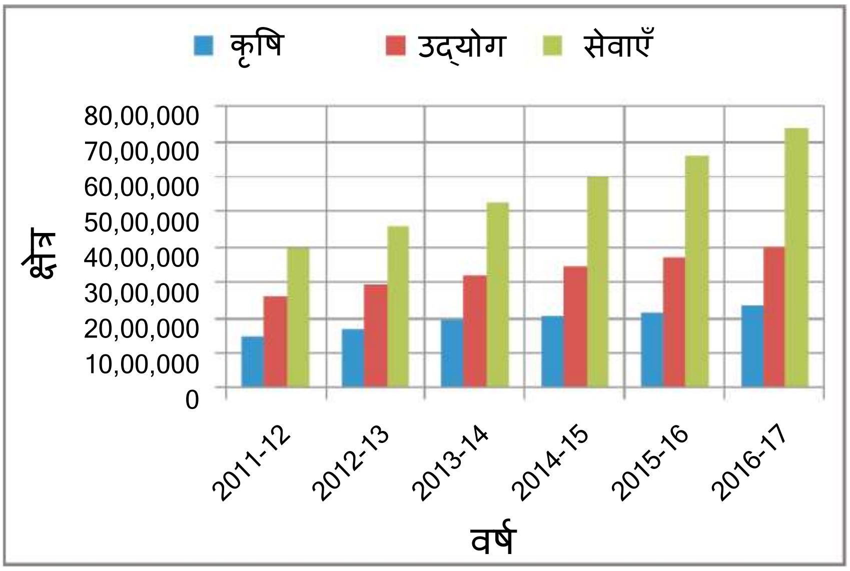

स्रोतः ***http://statisticstimes.com/economy/sectorwisegdpcalculationofindia***.php

हैं जिसे वह सर्वश्रेष्ठ ढंग से कर सकती हैं। आज व्यावसायिक इकाइयाँ पेशेवर व्यावसायिक सेवाओं पर अधिक निर्भर कर रही हैं ताकि वे भी स्पर्धा में टिक सकें। व्यावसायिक इकाइयाँ धन की प्राप्ति के लिए बैंकों, अपने संयंत्र, मशीनरी, माल आदि के बीमे के लिए बीमा कंपनियों, कच्चे माल एवं तैयार माल को ढोने के लिए परिवहन कंपनियों एवं अपने विक्रेताओं, आपूर्तिकर्ताओं एवं ग्राहकों से संपर्क के लिए दूरसंचार एवं डाक सेवाओं पर निर्भर करती हैं। आज के वैश्विक जगत में भारत तेज़ी से बदल रहे सेवा उद्योग में प्रवेश कर चुका है। जब बात दुनिया के विकसित देशों को सेवाएँ उपलब्ध करवाने की हो तो भारत अन्य विकासशील देशों से प्रतियोगिता में काफी आगे हैं। बहुत-सी विदेशी कंपनियाँ चाहती हैं कि भारत उनके देश में व्यावसायिक सेवाएँ प्रदान करे। वे अपने व्यवसाय के कुछ कार्यों को भारत में हस्तांतरित भी कर रहे हैं। इन पर विस्तार से चर्चा अगले पाठ में की जाएगी।

4.4 बैंकिंग

वाणिज्यिक बैंक अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण संस्थाएँ हैं जो अपने ग्राहकों को संस्थागत ऋण उपलब्ध कराते हैं। भारत में एक बैंकिग कंपनी वह है, जो बैंकिग का व्यापार करती है। यह ऋण देती है तथा जनता से ऐसी जमा स्वीकार करती है जिन्हें माँगने पर अथवा अन्य किसी समय पर भुगतान करना होता है तथा जिन्हें ग्राहक चेक, ड्राफ्ट, आर्डर या अन्य किसी माध्यम से निकाल सकते हैं। और सरल शब्दों में बैंक जमा के रूप में धन स्वीकार करते हैं जिसे माँगने पर लौटाना ही होता है तथा ऋण देकर लाभ कमाते हैं। बैंक लोगों की बचत को जमा करते हैं तथा व्यवसाय को उसके पूँजीगत एवं आयगत व्ययों के लिए धन उपलब्ध कराते हैं। यह वित्तीय विलेखों में

लेन-देन करते हैं तथा एक निर्धारित मूल्य पर वित्तीय सेवाओं जैसे- ब्याज, बट्टा, कमीशन आदि से भी संबंध रखते हैं।

4.4.1 बैंकों के प्रकार

बैंकिंग के केंद्र बिन्दु कई हैं, बैंकिंग सेवा की आवश्यकताएँ भी विभिन्न प्रकार की हैं एवं पद्धतियाँ भी अलग-अलग हैं। इसलिए इन जटिलताओं का सामना करने के लिए हमें अलग-अलग प्रकार के बैंकों की आवश्यकता होती है।

बैंकों को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है–

(क) वाणिज्यिक बैंक।

(ख) सहकारी बैंक।

(ग) विशिष्ट बैंक।

(घ) केंद्रीय बैंक।

(क) वाणिज्यिक बैंक– वाणिज्यिक बैंक वे संस्थान हैं जो मुद्रा में व्यापार करते हैं। ये 'भारतीय बैंक नियमन अधिनियम–1949' द्वारा शासित होते हैं। इस अधिनियम के अनुसार बैंकिग का अर्थ, ऋण देने अथवा विनियोग के लिए जनता से जमा स्वीकार करना है। वाणिज्यिक बैंक दो प्रकार के होते हैं– निजी क्षेत्र के बैंक एवं सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक वे होते हैं जिनमें सरकार का एक बड़ा हिस्सा होता है तथा सामान्यतः सामाजिक उद्देश्यों पर ज़ोर दिया जाता है; लाभ कमाना इनका उद्देश्य नहीं होता। निजी क्षेत्र के बैंकों का स्वामित्व, प्रबंधन एवं नियंत्रण निजी प्रवर्तकों के हाथों में होता है तथा ये बाज़ार की शक्तियों के अनुसार काम करने को स्वतंत्र होते हैं। देश में कई सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक हैं, जैसे– भारतीय स्टेट बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, इंडियन ओवरसीज बैंक इत्यादि तथा अन्य निजी क्षेत्र के बैंक हैं जिनमें प्रमुख हैं– एच.डी.एफ.सी. बैंक, आई.सी.आई.सी.आई. बैंक, कोटक महिन्द्रा बैंक एवं जम्मू-कश्मीर बैंक।

(ख) सहकारी बैंक– सहकारी बैंक 'राज्य सहकारी समितियाँ अधिनियम' के प्रावधानों से शासित होते हैं तथा ये अपने सदस्यों को सस्ती दर पर ऋण उपलब्ध कराते हैं।

बैंकिंग एवं सामाजिक उद्देश्य

पिछले कुछ समय में नीति निर्माताओं ने बैंकिंग को सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में उन्मुख होने के लिए ठोस कदम उठाए हैं। देश की बैंकिंग नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है–

पहले		अब
(i) शहरी झुकाव	-	ग्रामीण झुकाव
(ii) वर्ग बैंकिंग	-	जन बैंकिंग
(iii) पारंपरिक	-	नवप्रवर्तन प्रक्रिया
(iv) अल्प अवधि उद्देश्य	-	विकास उद्देश्य

ये भारत में ग्रामीण ऋण अर्थात् कृषि वित्तीयन का प्रमुख स्रोत हैं।

(ग) विशिष्ट बैंक– विशिष्ट बैंक विदेशी बैंक, औद्यौगिक बैंक, विकास बैंक, आयात निर्यात बैंक होते हैं, जो इन विशिष्ट क्रियाओं की विशेष जरूरतों को पूरा करते हैं। ये बैंक औद्योगिक इकाइयों, दिशा बदलने वाली भारी परियोजनाओं एवं विदेशी व्यापार को वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं।

(घ) केंद्रीय बैंक– किसी भी देश का केंद्रीय बैंक उस देश के सभी वाणिज्यिक बैंकों की गतिविधियों का पर्यवेक्षण, नियंत्रण एवं नियमन करता है। यह सरकार का बैंक होता है। यह देश की मुद्रा एवं साख संबंधी नीतियों का नियंत्रण एवं समन्वय करता है। भारतीय रिजर्व बैंक देश का केंद्रीय बैंक है।

4.4.2 वाणिज्यिक बैंक के कार्य

बैंक कई प्रकार के कार्य करते हैं। कुछ कार्य तो आधारभूत एवं प्राथमिक कार्य होते हैं तथा अन्य एजेन्सी अथवा सामान्य उपयोगी सेवाएँ उपलब्ध करवाते हैं। इनके महत्त्वपूर्ण कार्यों का संक्षेप में नीचे वर्णन किया गया है–

(क) जमा स्वीकार करना– बैंक के ऋण प्रचालन का आधार जमा है क्योंकि बैंक ऋण लेता भी है और देता भी है। उधार लेने पर वे ब्याज देते हैं और ऋण देने पर उस राशि पर ब्याज लेते हैं। इन जमाओं को वे चालू खातों, बचत खातों एवं निश्चित कालीन जमा खातों के रूप में लेते हैं। चालू खातों में से उसमें जमा राशि की सीमा तक बिना पूर्व सूचना के कभी भी जमा को निकाला जा सकता है।

बचत खाते लोगों में बचत को प्रोत्साहित करने के लिए होते हैं। बैंक इन जमा राशियों पर रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित दर से ब्याज देते हैं। इन खातों में से कितनी राशि एवं एक अवधि में कितनी बार निकाली जा सकती है पर कुछ प्रतिबंध होता है। स्थायी जमा खाते सावधिक जमा होते हैं, जिन पर बचत खातों की तुलना में ऊँची दर से ब्याज दिया जाता है। निर्धारित समय से पूर्व राशि निकाली जा सकती है परंतु तब कुछ प्रतिशत ब्याज कम मिलता है।

(ख) ऋण देना– वाणिज्यिक बैंकों का दूसरा कार्य जमा के माध्यम से प्राप्त राशि में से ऋण एवं अग्रिम देना होता है। यह ऋण एवं अग्रिम अधिविकर्ष, नकद ऋण, व्यापारिक बिलों को बट्टागत करना, अवधिक ऋण, उपभोक्ता ऋण तथा अन्य मिले-जुले अग्रिमों के माध्यम से दिए जाते हैं। बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋणों का व्यापार, उद्योग, परिवहन एवं अन्य व्यावसायिक क्रियाओं में बहुत बड़ा योगदान रहता है।

(ग) चेक सुविधा– दूसरे बैंकों पर लिखे चेकों की राशि की वसूली करना; वो सबसे महत्त्वपूर्ण

सेवा है, जो बैंक अपने ग्राहकों को देते हैं। चेक सर्वाधिक विकसित साख प्रपत्र है तथा बैंकों में जमा राशि को निकालने का एक विशिष्ट तरीका है। यही विनिमय का सर्वाधिक सुविधाजनक एवं मितव्ययी माध्यम है। चेक दो प्रकार के होते हैं- (क) वाहक चेक जिन्हें बैंक खिड़की पर तुरंत भुनाया जा सकता है; एवं (ख) रेखांकित चेक जिन्हें केवल भुगतानकर्ता के खाते में ही जमा कराया जा सकता है।

(घ) **धन का हस्तांतरण-** वाणिज्यिक बैंक का एक और मुख्य कार्य धन के एक स्थान से दूसरे स्थान तक हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करना है, जो वे अपनी शाखाओं के तन्त्र द्वारा कर पाते हैं। कोषों का हस्तांतरण बैंक ड्राफ्ट, भुगतान आदेश (पे-आर्डर) या डाक द्वारा हस्तांतरण के माध्यम से किया जाता है तथा इसके बदले बैंक नाममात्र का कमीशन लेते हैं। इसके लिए बैंक निश्चित राशि का अपनी स्वयं की अन्य स्थान पर स्थित शाखाओं पर ड्राफ्ट जारी करता है अथवा उन स्थानों पर स्थित अन्य बैंकों पर ज़ारी करता है। भुगतान प्राप्तकर्ता अपने पास के जिस बैंक पर ड्राफ्ट लिखा गया है, उससे राशि प्राप्त कर लेता है।

(ङ) **सहयोगी सेवाएँ-** उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त बैंक कुछ सहायक सेवाएँ भी प्रदान करते हैं, जैसे- बिलों का भुगतान, लॉकर की सुविधा, अभिगोपन सेवाएँ। वह अन्य सेवाएँ भी देते हैं, जैसे- निदेशानुसार अंशों एवं ऋण पत्रों का क्रय-विक्रय एवं

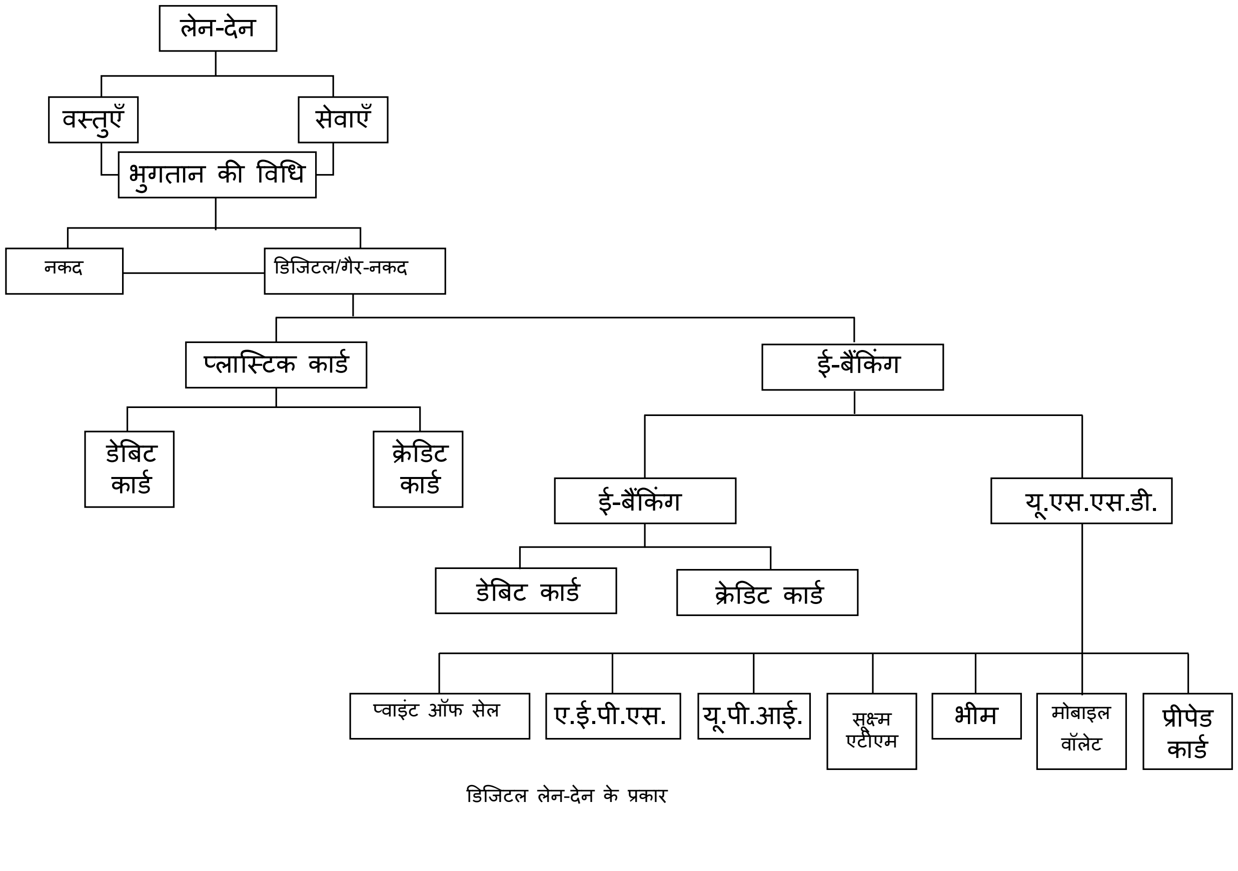

डिजिटल लेन-देन के प्रकार

अन्य व्यक्तिगत सेवाएँ, जैसे– बीमे की किश्त का भुगतान, लाभांश की वसूली आदि।

4.4.3 ई-बैंकिंग

इंटरनैट एवं ई-कॉमर्स प्रतिदिन की दिनचर्या में नाटकीय ढंग से परिवर्तन ला रहे हैं। वर्ल्ड-वाइड वेब (www) एवं ई-कॉमर्स ने दुनिया को एक डिजिटल भूमण्डलीय गाँव में परिवर्तित कर दिया है। सूचना तकनीक में अत्याधुनिक लहर इंटरनेट बैंकि्ंग की है। यह भी साधारण बैंकिग का भाग है तथा ग्राहकों को भुगतान का एक और माध्यम है।

सरल शब्दों में इंटरनेट बैंकिंग का अर्थ है कि कोई भी व्यक्ति जिसके पास अपना कंप्यूटर (PC) है, तो वह वेबसाइट खोलकर बैंकों के वेबसाइट से जुड़ सकता है तथा बैंकों के सामान्य कार्यों को कर सकता है और बैंक की किसी भी सेवा का लाभ प्राप्त कर सकता है। ग्राहक की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किसी मानवीय प्रचालक की आवश्यकता नहीं होती। बैंक का केंद्रीकृत डैटाबेस होता है जिसे वेब-साइट पर डाला जा सकता है; जिन सेवाओं को बैंक इंटरनेट के द्वारा प्रदान करना चाहता है, उन्हें मैन्यू पर दर्शाया जाता है। पहले किसी भी सेवा का चुनाव किया जाता है फिर आगे की कार्यवाही उसकी प्रकृति के अनुसार की जाती है।

इस नए डिजिटल बाजार में बैंक एवं अन्य वित्तीय संस्थानों ने इन्टरनेट पर सेवाएँ प्रदान करनी प्रारंभ कर दी हैं।

इंटरनेट पर बैंकों की सेवाएँ प्रदान करने को ई-बैंकिंग कहते हैं। यह लेन-देनों की लागत को कम करता है, बैंकि्ंग संबंधों को प्रगाढ़ करता है और साथ ही ग्राहकों को समर्थ बनाता है। ई-बैंकि्ंग इलैक्ट्रॉनिक बैंकि्ंग होती है, अर्थात् बैंकि्ंग जिसमें इलैक्ट्रॉनिक मीडिया का उपयोग किया गया हो। अतः ई-बैंकि्ंग बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली वह सेवा है, जो ग्राहक को अपनी बचतों के प्रबंधन, खातों के निरीक्षण, ऋण के लिए आवेदन, बिलों के भुगतान जैसे बैंक संबंधी लेन-देनों को इंटरनेट पर करने की सुविधा देता है। इसमें ग्राहक निजी कंप्यूटर, मोबाइल टेलीफोन या फिर हाथ के कंप्यूटर (पर्सनल डिजिटल अस्सिटेंट) का प्रयोग करता है। ई-बैंकिंग जिन विभिन्न सेवाओं को प्रदान करता है, वे हैं स्वचालित टेलर मशीन (ए.टी.एम.) एवं विक्रय बिन्दु (पी.ओ.एस.), इलैक्ट्रॉनिक डेटा इन्टरचेन्ज (ई.डी.आई.), क्रेडिट कार्ड, इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल रोकड़, इलेक्ट्रॉनिक कोष हस्तांतरण (ई.एफ.टी.)।

इलेक्ट्रॉनिक तरीके से धन हस्तांतरण के दो प्रकार हैं– नेशनल इलैक्ट्रोनिक्स फंड ट्रांसफर (एन.ई.एफ.टी.) तथा रियल टाइम ग्रॉस सेटलमेंट (आर.टी.जी.एस.)।

लाभ

ई-बैंकिंग से ग्राहकों को अनेकों लाभ हैं जो इस प्रकार हैं–

(i) ई-बैंक्िंग बैंक के ग्राहकों को वर्ष के 365 दिन 24 घण्टे सेवाएँ प्रदान करता है।

(ii) ग्राहक मोबाइल फोन के द्वारा कुछ अनुमति प्रदत्त लेन-देनों को दफ्तर, घर या फिर यात्रा के दौरान कर सकता है।

(iii) चूँकि इससे प्रत्येक लेन-देन का अभिलेखन हो जाता है इसलिए यह वित्तीय अनुशासन लाता है।

(iv) ग्राहक अधिक संतुष्ट होता है क्योंकि ग्राहक की बैंक तक असीमित पहुँच होती है, जो शाखाओं तक सीमित नहीं होती और जिसमें कम जोखिम होता है। ग्राहकों को अधिक सुरक्षा मिलती है क्योंकि उन्हें यात्रा के दौरान रोकड़ ले जाने की आवश्यकता नहीं होती।

ई-बैंक्िंग से बैंकों को भी लाभ होता है। ये लाभ निम्न हैं–

(i) इससे बैंक की प्रतियोगी शक्ति बढ़ती है जिसका उसे लाभ मिलता है।

(ii) यह बैंक को असीमित क्रियात्मक जाल उपलब्ध कराता है तथा यह शाखाओं की संख्या तक सीमित नहीं है। यदि किसी के पास मॉडम से जुड़ा निजी कंप्यूटर है तथा इन्टरनेट से जुड़ा टेलीफोन है तो ग्राहक धन राशि बैंक से निकाल सकता है।

(iii) केंद्रीकृत डेटाबेस स्थापित कर तथा लेखांकन के कुछ कार्यों को करके शाखाओं पर कार्य भार को काफी कम किया जा सकता है।

4.5 बीमा

जीवन अनिश्चितताओं से भरा है। ऐसी घटनाओं का घटना जिनसे हानि हो सकती है, काफी अनिश्चित होती हैं। अनेकों जोखिम हो सकते हैं, जैसे– मनुष्य की मृत्यु हो सकती है अथवा वह विकलांग हो सकता है, संपत्ति को आग एवं चोरी से हानि पहुँच सकती है, जहाज़ से माल भेजने में भी कई खतरे हैं। यदि इनमें से एक भी घटना घटती है तो व्यक्ति और संगठन को भारी हानि उठानी पड़ सकती है जो कभी-कभी उनकी जोखिम उठाने की शक्ति से अधिक होती है। इन अनिश्चितताओं को न्यूनतम करने के लिए बीमा की आवश्यकता होती है। कारखानों, मानव या भारी उपकरणों अथवा अन्य परिसंपत्तियों में निवेश करना तब तक संभव ही नहीं है, जब तक कि इनके जोखिमों से बचने की व्यवस्था न की जाए। इसको ध्यान में रखते हुए एक समान जोखिम रखने वाले लोग एक साथ मिल जाते हैं तथा समान कोष में राशि जमा करते हैं। इससे किसी जोखिम विशेष से एक व्यक्ति को जो हानि होती है, उसे अन्य ऐसे लोगों में बाँट दिया जाता है, जिन्हें इसी जोखिम से हानि हो सकती है।

अतः बीमा एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा किसी अनिश्चित घटना के घटने से होने वाली संभावित हानि को उन लोगों में बाँट दिया

अपेक्षित तथ्यों के उदाहरण

अग्नि बीमा– भवन का निर्माण, अग्नि संवेदी और अग्नि रोधक उपकरण; इसके उपयोग की प्रकृति
मोटर बीमा– वाहनों के प्रकार; ड्राइवर का ब्यौरा।
व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा– आयु, कद, वजन, व्यवसाय, पूर्व चिकित्सीय ब्यौरा।
जीवन बीमा– आयु, पूर्व चिकित्सीय ब्यौरा, धूम्रपान/मद्यपान आदतें।

जाता है जिन्हें ऐसी हानि हो सकती है तथा जो इस घटना के विरुद्ध बीमा कराने के लिए तैयार हैं। यह एक ऐसी प्रसंविदा अथवा समझौता है जिसके अन्तर्गत एक पक्ष दूसरे पक्ष को एक निश्चित प्रतिफल के बदले एक तयशुदा राशि देता है ताकि दुर्घटनावश हुई बीमाकृत वस्तु की हानि, क्षति अथवा चोट से हुए नुकसान की भरपाई की जा सके। यह प्रसंविदा अथवा समझौता लिखित में किया जाता है तथा इसे पॉलिसी कहते हैं। जिस व्यक्ति के जोखिम का बीमा किया जाता है, उसे बीमित कहते हैं तथा जो व्यक्ति अथवा फर्म बीमा करती है, उसे बीमाकार या बीमा अभिगोपनकर्ता कहते हैं।

4.5.1 बीमा का आधारभूत सिद्धांत

बीमा का आधारभूत सिद्धांत है कि एक व्यक्ति अथवा व्यावसायिक संगठन संभावित अनिश्चित हानि की भारी राशि के बदले एक निश्चित राशि खर्च करता है। अतः बीमा वास्तव में एक संभावित बड़ी राशि के जोखिम के स्थान पर आवधिक छोटी राशि (प्रीमियम) का भुगतान है।

हानि की संभावना फिर भी बनी रहती है, लेकिन जब हानि होती है तो इस घाटे को उन अनेकों पॉलिसी धारकों पर फैला दिया जाता है जो उसी प्रकार के जोखिम का सामना कर रहे हैं। उनसे एकत्रित प्रीमियम से जिस पॉलिसी धारक को हानि हुई है, उसकी भरपाई की जाती है। इस प्रकार से जोखिम को दूसरों में बाँट दिया जाता है। पिछली घटनाओं के विश्लेषण से बीमाकार (बीमा कंपनी अथवा अभिगोपक) बीमा में सम्मिलित प्रत्येक प्रकार के जोखिम से होने वाली संभावित हानि को जानता है।

अतः बीमा एक प्रकार से जोखिम का प्रबंधन है जिसका उपयोग मूलतः संभावित वित्तीय हानि के जोखिम के विरुद्ध सुरक्षा के लिए किया जाता है। सैद्धांतिक रूप से बीमा को संभावित हानि के जोखिम को समता के आधार पर एक सामान्य फीस के बदले एक पक्ष से दूसरे पक्ष को हस्तांतरित करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। बीमा कंपनी इसीलिए एक ऐसा निगम अथवा संगठन होती है जो फीस (प्रीमियम) के बदले सभी वैध दावों का भुगतान करने का व्यवसाय करती है।

बीमा एक सामाजिक व्यवस्था है जिसमें एक व्यक्ति (बीमाकृत) दूसरे पक्ष (बीमाकार) को जोखिम का हस्तांतरण कर देता है, जिससे वह जोखिम साझा हो जाता है तथा इसमें हानि की पूर्ति उस कोष में से की जाती है जिसमें सभी सदस्यों की राशि (प्रीमियम) जमा है। बीमा का उद्देश्य बीमाकृत को उन अनिश्चित घटनाओं से सुरक्षा प्रदान करना है जिनसे उसे हानि हो सकती है।

4.5.2 बीमा के कार्य

बीमा के विभिन्न कार्य निम्नलिखित हैं–

(क) निश्चितता प्रदान करना– जोखिम से हानि होने पर बीमा उसके भुगतान को सुनिश्चित करता है। हानि किस समय होगी एवं कब होगी, यह अनिश्चित होता है। बीमा इन अनिश्चितताओं को दूर करता है तथा इससे बीमाकृत को हानि की राशि प्राप्त होती है। बीमाकार इस सुनिश्चितता के लिए प्रीमियम लेता है।

(ख) सुरक्षा– बीमा का दूसरा मुख्य कार्य हानि के संभावित अवसरों से सुरक्षा प्रदान करना है। बीमा किसी जोखिम अथवा घटना को रोक नहीं सकता लेकिन इससे होने वाली हानि की पूर्ति कर सकता है।

(ग) जोखिम को बाँटना– यदि जोखिम वाली घटना घटित हो जाती है तो इससे होने वाली हानि को वे सभी व्यक्ति बाँट लेते हैं, जिन्हें इन जोखिमों का सामना करना है। सभी बीमाकृत सदस्यों से प्रीमियम के रूप में उनका हिस्सा प्राप्त कर लिया

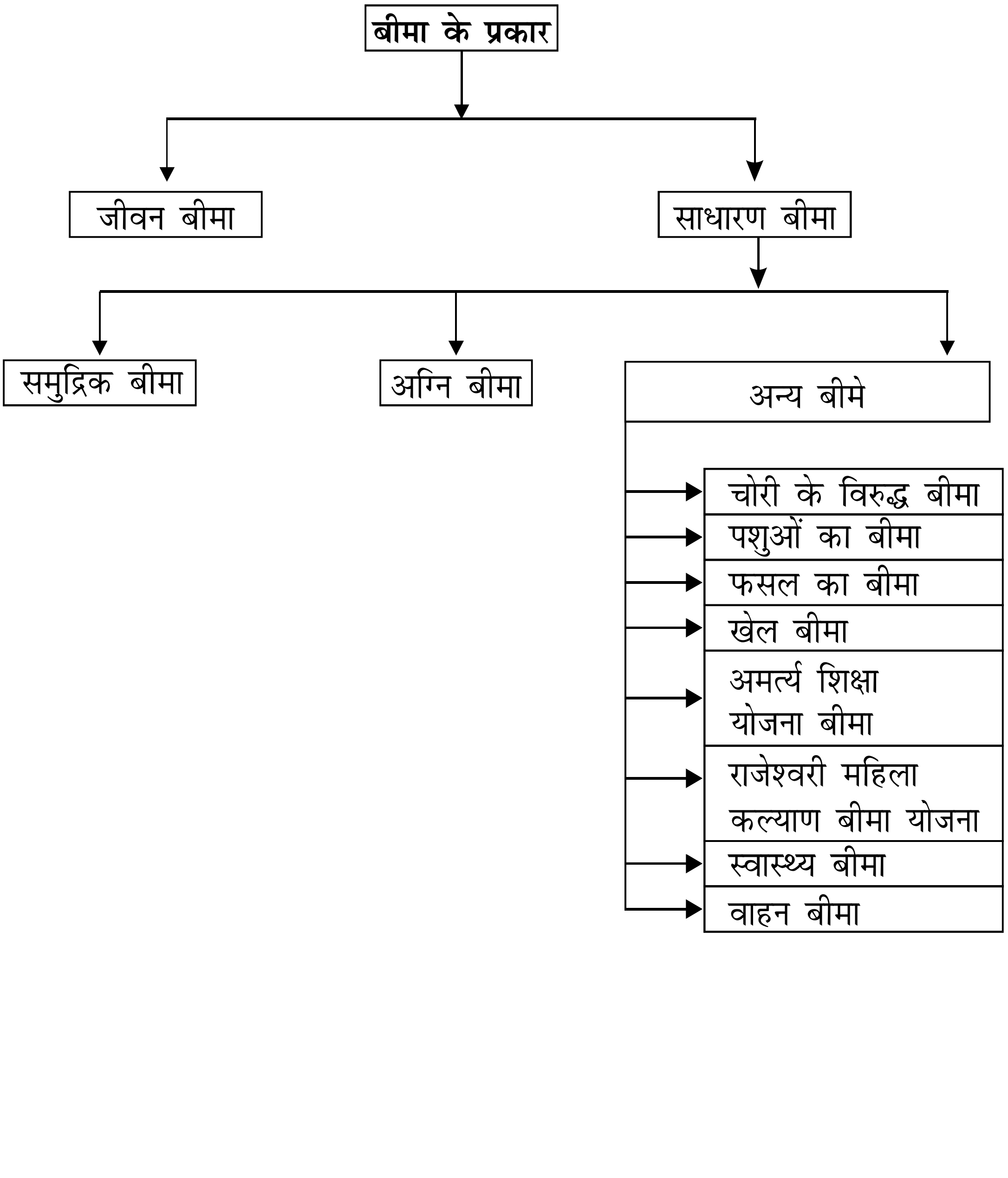

जाता है।

(घ) **पूँजी निर्माण में सहायक–** बीमा कराने वालों से प्रीमियम के रूप में जो राशि प्राप्त होती है, उससे एकत्रित कोष का विभिन्न ऐसी योजनाओं में विनियोग कर दिया जाता है जिनसे आय होती है।

4.5.3 बीमा के सिद्धांत

बीमा के सिद्धांत, कार्यवाही अथवा आचरण के वे नियम हैं जिन्हें बीमा व्यवसाय में लगे हिताधिकारियों ने अपनाया है। किसी वैध बीमा प्रसंविदा के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशिष्ट सिद्धांत निम्न हैं–

(क) **पूर्ण सद्विश्वास–** बीमा प्रसंविदा पूर्ण सद्विश्वास (Uberrimae Fidei) की प्रसंविदा, अर्थात् पूर्ण सद्विश्वास पर आधारित प्रसंविदा होती है। बीमाकार एवं बीमाकृत दोनों को प्रसंविदा के संबंध में एक-दूसरे के प्रति सद्विश्वास दिखाना चाहिए। बीमाकार का दायित्व है कि वह स्वेच्छा से प्रस्तावित जोखिम के लिए महत्त्वपूर्ण सभी तथ्यों की संपूर्ण एवं सही जानकारी दे तथा बीमाकार को बीमा प्रसंविदा की सभी शर्तों को स्पष्ट करे। अतः प्रस्तावक प्रस्तावित बीमा की विषय-वस्तु से संबंधित महत्त्वपूर्ण तथ्यों को बताने के लिए बाध्य है। कोई भी तथ्य जो एक विवेकशील बीमाकार की बुद्धि को, बीमा प्रस्ताव को स्वीकार करने का निर्णय लेने या प्रीमियम की दर निर्धारित करने के लिए प्रभावित कर सकता है, उसे इस उद्देश्य के लिए महत्त्वपूर्ण तथ्य माना जाएगा। बीमाकृत यदि महत्व के तथ्य को उजागर नहीं करता है तो यह बीमाकार के निर्णय पर निर्भर करेगा कि चाहे तो वह बीमा प्रसंविदा को रद्द कर दे।

(ख) **बीमायोग्य हित–** बीमाकृत का बीमा की विषय-वस्तु में बीमायोग्य हित का होना आवश्यक है। इस सिद्धांत का एक आधारभूत तथ्य यह है कि मकान, जहाज़, मशीन, जीवन की संभावित देयता का बीमा नहीं किया जाता है बल्कि उनमें निहित आर्थिक स्वार्थ का बीमा किया जाता है। बीमायोग्य हित का अर्थ है, बीमा प्रसंविदा की विषय-वस्तु में आर्थिक स्वार्थ। किसी वस्तु अथवा जीवन के सुरक्षित रहने में ही बीमाकृत का हित हो यह कानूनी रूप से होना चाहिए, तभी तो जिस घटना के विरुद्ध उसने बीमा कराया है उसके घटित होने के कारण उसे वित्तीय हानि होगी। यदि संपत्ति का बीमा कराया गया है तो बीमाकृत का बीमा विषय में घटना के घटित होने पर बीमायोग्य हित होना चाहिए। बीमायोग्य हित के लिए यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति संपत्ति का स्वामी ही हो। उदाहरण के लिए, न्यासी दूसरों की ओर से संपत्ति का अधिकारी होता है लेकिन उसका उस संपत्ति में बीमायोग्य हित माना जाएगा।

(ग) क्षतिपूर्ति– अग्नि बीमा अथवा समुद्रिक बीमा की सभी क्षतिपूर्ति की प्रसंविदाएँ होती हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार बीमाकार हानि होने पर बीमाकृत को उसी स्थिति में लाने का वचन देता है, जिस स्थिति में वह बीमा की घटना के घटित होने से पहले था। दूसरे शब्दों में बीमाकार बीमा करायी गई संपत्ति के नष्ट होने अथवा उसको क्षति पहुँचने के कारण हुई हानि की पूर्ति का दायित्व लेता है। क्षतिपूर्ति की राशि एवं हानि की राशि को मुद्रा में मापा जाता है। क्षतिपूर्ति का सिद्धांत जीवन बीमा पर लागू नहीं होता है।

(घ) निकटतम कारण– इस सिद्धांत के अनुसार बीमा पॉलिसी केवल उन हानियों की पूर्ति करती है जो पॉलिसी में वर्णित जोखिमों का परिणाम होती हैं। जब हानि दो या दो से अधिक कारणों से होती है तो हानि की पूर्ति तभी होगी, जब वह निकटतम कारण से हुई हो। हानि के निकटतम कारण का अर्थ है– सर्वाधिक प्रमुख एवं सर्वाधिक प्रभावी कारण जिसके कारण हानि होना स्वाभाविक है। यदि कोई दुर्घटना होती है तो दुर्घटना के निकटतम कारण को ही ध्यान में रखना चाहिए।

(ङ) अधिकार समर्पण– इस सिद्धांत से अभिप्राय बीमाकार के बीमाकृत के वैकल्पिक स्रोत से वसूली के अधिकार की सीमा तक दावे के निपटारे के पश्चात् उसका स्थान ले लेने से है। जिस संपत्ति का बीमा बीमाकृत ने कराया है, उसकी हानि होने पर अथवा उसे क्षति पहुँचने पर उस हानि अथवा क्षति की पूर्ति हो गई है तो उस संपत्ति का स्वामित्व बीमाकार को हस्तांतरित हो जाता है। ऐसा इसलिए होता है ताकि बीमाकृत, क्षतिग्रस्त संपत्ति को बेचकर अथवा गुम हुई संपत्ति के मिल जाने से लाभ न कमा ले।

(च) योगदान– इस सिद्धांत के अनुसार बीमा के अंतर्गत दावे का भुगतान कर देने के पश्चात् बीमाकार अन्य देनदार बीमाकारों से हानि की राशि में उनके भाग को वसूल कर सकता है। इसका अर्थ हुआ की दोहरे बीमे में बीमाकार हानि को उसके द्वारा की गई बीमा की राशि के अनुपात में बाँटेंगे। किसी एक ही संपत्ति पर यदि एक से अधिक पॉलिसी ली गई हैं तो वह वास्तविक हानि की राशि से अधिक प्राप्त नहीं कर सकता। यदि एक ही बीमाकार से वह पूरी रकम वसूल कर लेता है तो वह दूसरे से और भुगतान प्राप्त नहीं कर सकता।

(छ) हानि को कम करना– यह सिद्धांत कहता है कि यह बीमाकार का कर्तव्य है कि वह बीमा करायी गई संपत्ति की हानि अथवा क्षति को न्यूनतम करने के लिए आवश्यक कदम उठाए। मान लें कि भंडारगृह में रखे माल को आग लग जाती है, तो माल के स्वामी कि चाहिए की वह माल को आग से बचा कर कम से कम हानि होने दे।

बीमाकृत को विवेकशीलता का परिचय देना चाहिए तथा केवल इसीलिए लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए, क्योंकि इसका बीमा कराया हुआ है। यदि किसी विवेकशील व्यक्ति के समान उचित ध्यान नहीं रखा गया है तो बीमा कंपनी से उसे क्षतिपूर्ति का अधिकार नहीं होगा।

4.5.4 बीमा के प्रकार

बीमा कंपनियाँ किस प्रकार के बीमा करती हैं तथा बीमा व्यवसाय के नियंत्रण के लिए विभिन्न अधिनियमों में क्या व्यवस्थाएँ हैं, ये घटक बीमा के विभिन्न प्रकारों को निश्चित करते हैं। मोटे तौर पर बीमा को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है।

जीवन बीमा

जीवन अनिश्चित है इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति भविष्य में एक निश्चित राशि की प्राप्ति को सुनिश्चित करना चाहता है ताकि जिन घटनाओं के संबंधों में पहले से अनुमान नहीं लगाया जा सकता, उनसे बचाव किया जा सके। जीवन में हर व्यक्ति को कोई न कोई जोखिम उठाना पड़ ही जाता है।

जोखिम मृत्यु का भी होता है, जो निश्चित है। ऐसी स्थिति में यदि एक व्यक्ति की आय पर अन्य व्यक्ति आश्रित हैं तो उसकी मृत्यु पर उनका क्या होगा? दूसरा जोखिम है व्यक्ति के अधिक आयु पाने पर अर्थात् उसके अवकाश ग्रहण कर लेने पर उसकी आय अर्जित करने में असमर्थता। ऐसी परिस्थितियों में कोई भी व्यक्ति इन जोखिमों से अपनी सुरक्षा चाहेगा और बीमा कंपनी यह सुरक्षा प्रदान करती है।

जीवन बीमा जीवन की अनिश्चितता से सुरक्षा प्रदान करने के लिए प्रारंभ किया गया था। लेकिन धीरे-धीरे इसका क्षेत्र बढ़ता गया और अब व्यक्तियों की आवश्यकतानुकूल कई प्रकार की जीवन बीमा पॉलिसियाँ हैं। उदाहरण के लिए, अपंगता का बीमा, स्वास्थ्य बीमा, वार्षिक वृत्ति बीमा एवं सामान्य जीवन बीमा।

जीवन बीमा को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है- यह एक ऐसा अनुबंध है जिसके अंतर्गत बीमाकार, प्रीमियम की इकट्ठा राशि अथवा समय-समय पर भुगतान की गई राशि के बदले में बीमाकृत को अथवा उस व्यक्ति को जिसके हित में यह पॉलिसी ली गई है, मनुष्य के जीवन से संबंधित अनिश्चित घटना के घटित होने पर अथवा एक अवधि की समाप्ति पर बीमित राशि का भुगतान करने का समझौता करता है। अतः बीमा कम्पनी एक निश्चित राशि, अर्थात् प्रीमियम के बदले में एक व्यक्ति के जीवन का बीमा करती है। प्रीमियम का भुगतान एकमुश्त अथवा समय-समय पर किया जा सकता है, जैसे– प्रति माह, छमाही अथवा वार्षिक। इसके साथ ही कंपनी व्यक्ति की मृत्यु पर अथवा उसके निश्चित आयु प्राप्त कर लेने पर एक निर्धारित राशि के भुगतान का वचन देती है। अतः यह सुनिश्चित हो जाता है कि व्यक्ति द्वारा निश्चित आयु की प्राप्ति पर या फिर उसकी मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारियों को एक निश्चित राशि प्राप्त हो जाएगी।

समझौता अथवा प्रसंविदा जिसमें सभी शर्तें लिखी हुई हैं, उसे पॉलिसी कहते हैं। जिस व्यक्ति के जीवन का बीमा किया गया है, उसे बीमाकृत, बीमा कंपनी को बीमाकार, एवं बीमाकृत द्वारा दिए गए प्रतिफल को प्रीमियम कहते हैं। प्रीमियम का नियत अवधि पर किश्तों में भी भुगतान किया जा सकता है।

व्यक्ति की समय से पहले मृत्यु होने पर बीमा उसके परिवार को सुरक्षा प्रदान करता है या फिर व्यक्ति के बूढ़े होने पर जब उसकी आय अर्जन क्षमता कम हो जाती है तो उसे पर्याप्त राशि का भुगतान करता है। बीमा केवल सुरक्षा ही प्रदान नहीं करता बल्कि यह एक प्रकार का निवेश भी है क्योंकि बीमाकृत को उसकी मृत्यु पर अथवा एक निश्चित अवधि की समाप्ति पर एक निश्चित राशि लौटा दी जाती है।

जीवन बीमा बचत को बढ़ावा देता है क्योंकि इसमें नियमित रूप से प्रीमियम का भुगतान करना होता है। इस प्रकार बीमा, बीमाकृत एवं उस पर आश्रित व्यक्तियों में सुरक्षा की भावना पैदा करता है।

कुछ अपवादों को छोड़ बीमा के साधारण सिद्धांत, जिनका वर्णन पीछे किया जा चुका है, जीवन बीमा पर भी लागू होते हैं। जीवन बीमा प्रसंविदा के मुख्य तत्व इस प्रकार हैं–

(i) जीवन बीमा प्रसंविदा में एक वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्व, जैसे– प्रस्ताव एवं उसकी स्वीकृति, स्वतंत्र स्वीकृति, अनुबंध करने की क्षमता, कानूनी प्रतिफल एवं कानूनी उद्देश्य होने चाहिए।

(ii) जीवन बीमा प्रसंविदा सम्पूर्ण सद्विश्वास की प्रसंविदा है। बीमाकृत को ईमानदारी से बीमा कंपनी को सत्य सूचना दे देनी चाहिए। अपने स्वास्थ्य के संबंध में उसे सभी अर्थपूर्ण तथ्यों को उजागर कर देना चाहिए। यदि बीमाकार नहीं भी माँगता है तो भी उसे वे सभी महत्त्वपूर्ण तथ्यों को, जो उसे ज्ञात हैं, उजागर करना उसका कर्तव्य है।

(iii) जीवन बीमा प्रसंविदा में बीमित जीवन में बीमाकृत का बीमायोग्य हित होना आवश्यक है। बिना बीमायोग्य हित के बीमा अनुबंध निरस्त हो जाएगा। बीमा कराते समय जीवन बीमा में बीमा योग्य हित होना आवश्यक है, भले ही इसकी परिपक्वता पर न हो। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति का अपने जीवन में एवं इसके प्रत्येक भाग में बीमायोग्य हित होता है। इसी प्रकार ऋणदाता का ऋणी के जीवन में एवं किसी ड्रामा कंपनी का उसके अभिनेताओं के जीवन में बीमायोग्य हित होता है।

(iv) जीवन बीमा अनुबंध क्षतिपूर्ति का अनुबंध नहीं है। किसी व्यक्ति के जीवन की क्षति की पूर्ति संभव नहीं है। केवल एक निश्चित राशि का भुगतान ही किया जा सकता है। इसीलिए जीवन बीमा में घटना के घटित होने पर देय राशि का पहले से ही निर्धारण

जीवन बीमा, अग्नि बीमा एवं सामुद्रिक बीमा में अंतर

क्र.स.	अंतर का आधार	जीवन बीमा	अग्नि बीमा	सामुद्रिक बीमा
1.	विषय-वस्तु	बीमा की विषय-वस्तु मनुष्य का जीवन हैं।	विषय-वस्तु भौतिक संपत्ति अथवा परिसंपत्ति।	विषय-वस्तु जहाज़, माल अथवा भाड़ा।
2.	तत्व	जीवन बीमा में सुरक्षा एवं निवेश दोनों तत्व हैं।	अग्नि बीमा में केवल सुरक्षा तत्व होता है, निवेश का नहीं।	सामुद्रिक बीमे में केवल सुरक्षा का तत्व होता है।
3.	बीमायोग्य हित	बीमायोग्य हित बीमा करवाते समय आवश्यक है परन्तु दावे की राशि देय होते समय आवश्यक नहीं है।	विषय-वस्तु में बीमायोग्य हित बीमा करवाते समय एवं हानि के समय दोनों में होना आवश्यक है।	दावा की स्थिति उत्पन्न होने पर अथवा हानि के समय बीमायोग्य हित होना अनिवार्य है।
4.	अवधि	जीवन बीमा पॉलिसी एक वर्ष से अधिक वर्ष के लिए होती है तथा लंबी अवधि के लिए ली जाती है जो 5 वर्ष से 30 वर्ष अथवा पूरे जीवन के लिए हो सकती है।	अग्नि बीमा पॉलिसी सामान्यतः एक वर्ष से अधिक के लिए नहीं होती।	सामुद्रिक बीमा पॉलिसी एक यात्रा के लिए, एक अवधि के लिए अथवा दोनों को मिलाकर होती है।
5.	क्षतिपूर्ति	जीवन बीमा क्षतिपूर्ति के सिद्धांत पर आधारित नहीं है। बीमित राशि का भुगतान निश्चित घटना के घटित होने पर या फिर पॉलिसी की परिपक्वता पर किया जाता है।	अग्नि बीमा प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा है। बीमाकृत, बीमाकार से केवल हानि की वास्तविक रकम का ही दावा कर सकता है। अग्नि से हानि की पूर्ति की अधिकतम सीमा बीमा पॉलिसी की राशि है।	सामुद्रिक बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा है। बीमाकृत को केवल जहाज़ के बाज़ार मूल्य, नष्ट माल की लागत की क्षति की पूर्ति की जाएगी।
6.	हानि का मापन	हानि मापी नहीं जा सकती।	हानि मापी जा सकती है।	हानि मापी जा सकती है।
7.	समर्पण मूल्य अथवा चुकता मूल्य	जीवन बीमा, पॉलिसी का समर्पण मूल्य अथवा मूल्य होता है।	अग्नि बीमा पॉलिसी का समर्पण मूल्य अथवा मूल्य नहीं होता।	सामुद्रिक बीमे का समर्पण मूल्य अथवा मूल्य नहीं होता।

8.	पॉलिसी की राशि	जीवन बीमा कितनी भी राशि का कराया जा सकता है।	अग्नि बीमा विषय-वस्तु के मूल्य से अधिक का नहीं कराया जा सकता।	सामुद्रिक बीमा जहाज़ अथवा माल के बाज़ार मूल्य की राशि का कराया जा सकता है।
9.	जोखिम की संभावना	निश्चितता का तत्व होता है। घटना अर्थात् मृत्यु या पॉलिसी की परिपक्वता सुनिश्चित है इसलिए दावा भी सुनिश्चित है।	घटना अर्थात् अग्नि से क्षति होनी आवश्यक नहीं है। अनिश्चितता का तत्व होता है। दावा अनिवार्य नहीं है।	घटना अर्थात् समुद्र में हानि का होना आवश्यक नहीं है। अनिश्चितता का तत्व होता है। दावा अनिवार्य नहीं है।

कर लिया जाता है। एक बार देय राशि निश्चित कर ली जाती है तो फिर यह स्थायी हो जाती है। अतः जीवन बीमा प्रसंविदा क्षतिपूर्ति की प्रसंविदा नहीं है।

जीवन बीमा पॉलिसियों के प्रकार

एक प्रलेख जो बीमाकार एवं बीमाकृत के बीच लिखित प्रसंविदा है तथा जिसमें बीमे की शर्तें भी होती है, उसे पॉलिसी कहते हैं। बीमाकृत (प्रस्तावक) द्वारा प्रस्तावना का फार्म भरने तथा बीमाकार (बीमा कंपनी) द्वारा इसे तथा प्रीमियम को स्वीकार कर लेने के पश्चात् बीमाकृत को पॉलिसी जारी कर दी जाती है।

हर व्यक्ति की अलग-अलग आवश्यकताएँ होती हैं और उन्हीं के अनुसार उन्हें पॉलिसियों की आवश्यकता होती है। ये आवश्यकताएँ पारिवारिक, बच्चों से संबंधित, बूढ़ा होने से संबंधित अथवा कोई विशिष्ट आवश्यकता हो सकती है। बीमाकारों ने बीमाकृत की ऐसी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न पॉलिसी निकाली हैं, जैसे– आजीवन बीमा पॉलिसी, बंदोबस्ती जीवन बीमा पॉलिसी, बच्चों की बीमा योजनाएँ एवं वार्षिक वृत्ति योजनाएँ। इनमें से कुछ का वर्णन नीचे किया जा रहा है–

(क) आजीवन बीमा पॉलिसी– इस प्रकार की बीमा पॉलिसी में बीमा राशि बीमाकृत को बीमा किए गए व्यक्ति की मृत्यु से पहले नहीं मिलेगी। उसके पश्चात् यह राशि केवल लाभार्थी अथवा मृतक के उत्तराधिकारियों को ही मिल सकेगी।

प्रीमियम का भुगतान निश्चित अवधि (20 अथवा 30 वर्ष) अथवा बीमाकृत के पूरे जीवन के लिए किया जाएगा। यदि प्रीमियम का भुगतान निर्धारित अवधि के लिए किया जाना है तो पॉलिसी बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु तक चलती रहेगी।

(ख) बंदोबस्ती जीवन बीमा पॉलिसी– इस प्रकार की पॉलिसी में बीमाकार (बीमा कंपनी) बीमाकृत को एक निश्चित राशि एक निश्चित उम्र पाने अथवा उसकी मृत्यु पर, जो भी पहले हो, देने का वचन देता है। बीमाकृत की मृत्यु पर बीमा राशि उसके

विधिसम्मत उत्तराधिकारी अथवा मनोनीत व्यक्ति को दे दी जाएगी अन्यथा यह राशि बीमाकृत को एक निश्चित अवधि की समाप्ति पर या फिर एक निश्चित आयु प्राप्त कर लेने पर दी जाएगी। अतः बंदोबस्ती बीमा पॉलिसी सीमित वर्षों में परिपक्व हो जाती है।

(ग) **संयुक्त बीमा पॉलिसी–** यह पालिसी दो या दो से अधिक व्यक्तियों के द्वारा ली जाती है। प्रीमियम का भुगतान वे मिलकर करते हैं या फिर उनमें से कोई एक करता है, जो किश्तों में अथवा एकमुश्त की जा सकती है। बीमित राशि अथवा पालिसी में लिखित राशि का भुगतान, उनमें से किसी एक की मृत्यु हो जाने पर अन्य बचे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को कर दिया जाता है। साधारणतया यह पॉलिसी पति-पत्नी मिलकर अथवा फर्म के दो साझेदारों द्वारा ली जाती है जिसकी राशि का भुगतान किसी एक की मृत्यु पर दूसरे जीवित व्यक्ति को कर दिया जाता है।

(घ) **वार्षिक वृत्ति पॉलिसी–** इस पॉलिसी के अंतर्गत बीमित राशि अथवा पॉलिसी की राशि एक आयु की प्राप्ति पर मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक किश्तों में भुगतान की जाती है। प्रीमियम की राशि किश्तों में अथवा एकमुश्त दी जा सकती है। यह उन लोगों के लिए अधिक उपयुक्त है जो एक निश्चित आयु की प्राप्ति के पश्चात् नियमित आय चाहते है।

(ङ) **बच्चों की बंदोबस्ती बीमा पॉलिसी–** इस पालिसी को लोग अपने बच्चों की पढ़ाई अथवा शादी के खर्चों के लिए लेते हैं। अनुबंध के अनुसार बीमाकार बच्चे की एक निर्धारित आयु पर एक निश्चित राशि का भुगतान करता है। प्रीमियम की राशि अनुबंध करने वाले व्यक्ति द्वारा दी जाती है। यदि उस व्यक्ति की पॉलिसी के परिपक्व हो जाने से पहले ही मृत्यु हो जाती है, तो आगे कोई प्रीमियम नहीं देना होता।

अग्नि बीमा

अग्नि बीमा एक ऐसी प्रसंविदा है जिसमें बीमाकार प्रीमियम के प्रतिफल के बदले पॉलिसी में वर्णित राशि तक एक निर्धारित अवधि के दौरान आग से होने वाली क्षति की पूर्ति का दायित्व लेता है। सामान्यतः अग्नि बीमा एक वर्ष के लिए होता है, जिसका प्रतिवर्ष नवीनीकरण कराना होता है। प्रीमियम एकमुश्त भी दिया जा सकता है और किश्तों में भी। अग्नि से होने वाली क्षति के दावे के लिए नीचे दी गई दो शर्तों को पूरा करना आवश्यक है–

(i) हानि वास्तव में हुई हो; एवं

(ii) अग्नि दुर्घटनावश लगी हो एवं जान-बूझकर न लगाई गई हो।

अग्नि बीमा अनुबंध आग के कारण अथवा अन्य किसी निकटतम कारणों से हुई हानि के लिए होता है। यदि बिना आग की लपटों के मात्र अत्याधिक गर्म हो जाने से क्षति हुई है तो यह अग्नि से हुई हानि नहीं मानी जाएगी तथा इसकी

पूर्ति बीमाकार नहीं करेगा।

अग्नि बीमा प्रसंविदा कुछ आधारभूत सिद्धांतों पर आधारित है जिनका वर्णन हम साधारण सिद्धांतों में कर चुके हैं। अग्नि बीमा प्रसंविदा के प्रमुख तत्व निम्न हैं–

(क) अग्नि बीमा में बीमाकृत का बीमे की विषय-वस्तु में बीमायोग्य हित होना चाहिए। बिना बीमोचित स्वार्थ के बीमा प्रसंविदा निरस्त हो जाएगा। अग्नि बीमा में जीवन बीमा से भिन्न बीमायोग्य हित बीमा कराते समय एवं हानि के समय अर्थात् दोनों समय होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, किसी भी व्यक्ति का उसकी संपत्ति जिसका वह स्वामी है, में बीमायोग्य हित होता है। इसी प्रकार से एक व्यापारी का स्टॉक, संयंत्र एवं मशीनरी तथा भवन में, एक साझी का फर्म की संपत्ति में, रहनदार का बंधक रखी गई संपत्ति में बीमायोग्य हित होता है।

(ख) जीवन बीमा के समान अग्नि बीमा प्रसंविदा भी पूर्ण सद्भाव की प्रसंविदा है। बीमाकृत को ईमानदारी से बीमा कंपनी को बीमा की विषय-वस्तु के संबंध में सत्य जानकारी देनी चाहिए। यह उसका दायित्व है कि वह संपत्ति के संबंध में एवं उससे जुड़े जोखिमों के संबंध में सभी तथ्यों को उजागर करे। बीमा कंपनी को भी प्रस्तावक को पॉलिसी के संबंध में सभी तथ्यों को बता देना चाहिए।

(ग) अग्नि बीमा अनुबंध पूर्णतः क्षतिपूर्ति का अनुबंध है। क्षति होने की स्थिति में वह वास्तविक हानि को बीमाकार से वसूल सकता है। यह राशि भी बीमा की राशि से अधिक नहीं होनी चाहिए। उदाहरण के लिए माना एक व्यक्ति ने अपने घर का बीमा 4,00,000 रु. में कराया है। यह आवश्यक नहीं है कि बीमाकार इस पूरी राशि का भुगतान करे भले ही पूरा मकान आग से जलकर नष्ट क्यों न हो गया हो। वह 4,00,000 रु की अधिकतम सीमा तक ह्रास लगाकर वास्तविक हानि का ही भुगतान करेगा। इसका उद्देश्य यही है कि कोई व्यक्ति बीमा से लाभ न कमा सके।

(घ) बीमाकार क्षति की पूर्ति केवल उस स्थिति में ही करेगा, जब क्षति हानि के निकटतम कारण से हुई हो।

सामुद्रिक बीमा

सामुद्रिक बीमा प्रसंविदा एक ऐसा अनुबंध है जिसके तहत बीमाकार समुद्री जोखिमों के विरुद्ध तय रीति से एवं तय राशि तक बीमाकृत की क्षतिपूर्ति का वादा करता है। सामुद्रिक बीमा समुद्र मार्ग से यात्रा एवं समुद्री जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करता है। समुद्री यात्रा के जोखिम हैं– जहाज़ का चट्टान से टकरा जाना, दुश्मनों द्वारा जहाज़ पर हमला, आग लग जाना, समुद्री डाकुओं द्वारा बंधक बना लेना या फिर जहाज़ के कप्तान अथवा अन्य कर्मचारियों की गलती। इन समुद्री जोखिमों के कारण जहाज़ अथवा उसमें

लदा माल नष्ट हो सकता है, क्षति हो सकती है अथवा अलोप हो सकता है या भाड़े का भुगतान न किया जाए। इसीलिए समुद्री बीमे में जहाज़, उसमें लदा सामान एवं भाड़े का बीमा किया जाता है। यह एक ऐसी पद्धति है जिसके अनुसार बीमाकार जहाज़ के स्वामी अथवा माल के स्वामी को संपूर्ण अथवा आंशिक सामुद्रिक हानि की पूर्ति का वचन देता है। बीमाकार समुद्री यात्रा से संबंधित जोखिमों से जहाज़ एवं माल को हुई हानि की पूर्ति करने की गारन्टी देता है। यहाँ बीमाकार एक अभिगोपनकर्ता है तथा गारन्टी एवं सुरक्षा के बदले बीमित प्रीमियम का भुगतान करता है। समुद्री बीमा अन्य बीमों से थोड़ा भिन्न है। इसमें तीन चीजें सम्मिलित हैं- जहाज़, माल एवं भाड़ा।

(क) जहाज़ बीमा– जहाज़ के लिए समुद्र में अनेकों जोखिम मौजूद हैं। बीमा पॉलिसी जहाज़ को पहुँची क्षति से होने वाली हानि की पूर्ति के लिए होती है।

(ख) माल का बीमा– जहाज़ से जब माल भेजा जाता है तो इसे भी अनेकों जोखिम होते हैं। ये खतरे बंदरगाह पर चोरी, माल के गुम हो जाने या फिर मार्ग में हानि के रूप में हो सकते हैं। अतः बीमा पॉलिसी माल को इन जोखिमों के विरुद्ध जारी की जाती है।

(ग) भाड़ा बीमा– मार्ग में क्षति अथवा नष्ट हो जाने से माल यदि गन्तव्य स्थान तक न पहुँचे तो जहाज़ी कंपनी को भाड़ा नहीं मिलेगा। भाड़ा बीमा जहाज़ी कंपनी अर्थात् बीमाकृत को भाड़े की हानि को पूरा करने के लिए होता है।

समुद्री बीमे के आधारभूत सिद्धांत बीमे के सामान्य सिद्धांत ही हैं। एक समुद्री बीमा प्रसंविदा के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं–

(i) जीवन बीमा से अलग समुद्री बीमा प्रसंविदा क्षतिपूर्ति की प्रसंविदा होती है। हानि होने पर बीमाकृत बीमाकार से वास्तविक हानि की राशि को प्राप्त कर सकता है। किसी भी परिस्थिति में बीमाकृत को समुद्री बीमे से लाभ कमाने की छूट नहीं दी जा सकती। माल की पॉलिसी वास्तविक क्षति की पूर्ति नहीं करती। यह वाणिज्यिक क्षतिपूर्ति करती है। बीमाकार, बीमाकृत को तय रीति एवं राशि तक की क्षति की पूर्ति का वचन देता है। हर पॉलिसी में बीमा राशि वर्तमान बाज़ार मूल्य के बराबर होती है, उससे अधिक नहीं।

(ii) जीवन बीमा व अग्नि बीमा के समान समुद्री बीमा प्रसंविदा पूर्ण सद्विश्वास की प्रसंविदा होती है। बीमाकार एवं बीमाकृत दोनों को ही उन सभी तथ्यों को उजागर कर देना चाहिए जिसका उनको ज्ञान है एवं जो भी बीमा प्रसंविदा को प्रभावित कर सकते हैं। यह बीमाकृत का कर्तव्य है कि वह सभी तथ्यों को पूरी ईमानदारी से प्रकट करे जिनमें माल की प्रकृति एवं माल को जिन जोखिमों से क्षति हो सकती है, सम्मिलित हैं।

(iii) बीमायोग्य हित का हानि के समय होना अनिवार्य है, भले ही पॉलिसी लेने के समय वह न हो।

विभिन्न प्रकार के बीमा

1. स्वास्थ्य बीमा– स्वास्थ्य बीमा चिकित्सा संबंधी व्ययों में वृद्धि से सुरक्षा प्रदान करता है। स्वास्थ्य बीमा, बीमाकार एवं व्यक्ति अथवा समूह के बीच एक प्रसंविदा है जिसमें बीमाकार निर्धारित मूल्य (प्रीमियम) के बदले निश्चित स्वास्थ्य बीमा करने का समझौता करता है। प्रीमियम की राशि का एकमुश्त अथवा किश्तों में भुगतान किया जाता है। जो बीमा पालिसी पर निर्भर करता है। स्वास्थ्य बीमा में सामान्यतः बीमारी अथवा क्षतिचोट पर व्ययों का या तो सीधा भुगतान होता है या फिर व्यय के पश्चात् उनको चुकता किया जाता है। स्वास्थ्य बीमा की लागत एवं उसके द्वारा प्रदत्त विभिन्न प्रकार की सुरक्षा, बीमाकार एवं पॉलिसी पर निर्भर करती है। भारत में वर्तमान में स्वास्थ्य बीमा मूल रूप से मेडीक्लेम पॉलिसी के रूप में प्रचलित है जिसे व्यक्ति अथवा समूह, संगठन अथवा कंपनी को दिया जाता है।

2. मोटर वाहन बीमा– मोटर वाहन बीमा सामान्य बीमा वर्ग में आता है। इस प्रकार का बीमा बहुत लोकप्रिय हो रहा है तथा दिन-प्रतिदिन इसका महत्व बढ़ता जा रहा है। मोटर बीमा में मोटर के स्वामी अथवा ड्राइवर की गलती से यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है अथवा उसे क्षति पहुँचती है, तो उस दशा में व्यक्ति के क्षतिपूर्ति के दायित्व को बीमा कंपनी अपने ऊपर ले लेती है। अधिक व्यवसाय के कारण इस प्रकार के बीमा में प्रीमियम की राशि मानकीकृत होती है।

3. चोरी का बीमा– चोरी के विरुद्ध बीमा संपत्ति का बीमा के अंतर्गत आता है। चोरी के विरुद्ध पॉलिसी चोरी, ठगी, सेंधमारी, ताला तोड़ना तथा अन्य इसी प्रकार के कार्यों से घरेलू सामान अथवा संपत्ति की हानि अथवा पहुँचने वाली क्षति एवं व्यक्तिगत हानि के लिए दी जाती है। इसमें वास्तविक हानि की पूर्ति की जाती है।

क. इसमें हानि के समय बीमायोग्य हित होना आवश्यक है, भले ही पॉलिसी लेते समय न हो।

ख. इसमें हानि का निकटतम कारण का सिद्धांत लागू होता हैं। बीमा कंपनी केवल उस विशेष अथवा निकटतम कारण जिसके लिए पॉलिसी की गई है, उससे होनेवाली हानि का भुगतान करने के लिए बाध्य होगी। उदाहरण के लिए, यदि हानि अनेकों कारणों से हुई है तो केवल निकटतम कारण को ही माना जायेगा।

4. पशुओं का बीमा– पशु बीमा प्रसंविदा एक वह प्रसंविदा है जिसमें बीमाकृत को बैल, भैंस, गाय एवं बछड़े जैसे पशुओं के मरने पर एक निश्चित राशि प्रदान करना सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रसंविदा के अनुसार यह राशि पशुओं की दुर्घटना, बीमारी, प्रसव अथवा गर्भधारण के कारण मृत्यु होने पर दी जाती है।

बीमाकार सामान्यतः हानि होने पर आधिक्य का भुगतान करने का दायित्व लेता है।

5. फसल का बीमा– फसल का बीमा वह प्रसंविदा है जिसके द्वारा सूखा पड़ने अथवा बाढ़ के कारण फसल के नष्ट हो जाने की दशा में किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस प्रकार का बीमा चावल, गेहूँ, मक्का, तिलहन एवं दाल आदि के उत्पादन से संबंधित सभी प्रकार की हानि अथवा क्षति की जोखिमों के विरुद्ध होता है। हमारे देश में अभी तक सभी फसलों की सभी प्रकार की हानियों अथवा क्षति के विरुद्ध बीमे का प्रारंभ नहीं हुआ है।

6. खेल का बीमा– यह पॉलिसी शौकिया खिलाड़ियों के खेल का सामान, व्यक्तिगत हानि, वैधानिक दायित्व एवं स्वयं की दुर्घटना जैसे जोखिमों के विरुद्ध एक व्यापक बीमा होता है।

यदि चाहे तो इसमें खिलाड़ी द्वारा नामित उसके साथ रह रहे परिवार के सदस्य को सम्मिलित किया जा सकता है। इस प्रकार का बीमा व्यावसायिक खिलाड़ियों के लिए नहीं होता। यह बीमा निम्न में से एक या अधिक खेलों का हो सकता है– एंगलिंग, बैडमिंटन, क्रिकेट, गोल्.फ, लॉन टेनिस, स्क्वैश, खेल की बंदूक का प्रयोग।

7. अमर्त्यसेन शिक्षा योजना बीमा– सामान्य बीमा कंपनी द्वारा जारी यह पॉलिसी आश्रित बच्चों की शिक्षा को सुरक्षा प्रदान करती है। बीमाकृत अभिभावक वैधानिक अभिभावक को दुर्घटना से, बाह्य झगड़े एवं अन्य दृष्टव्य कारण से यदि कोई शारिरिक क्षति पहुँचती है एवं यदि इस चोट से 12 माह के भीतर उसकी मृत्य हो जाती है अथवा स्थायी रूप से उसे विकलांग बना देती है, तो बीमाकार बीमाकृत विद्यार्थी की इस दुर्घटना के होने की तिथि से लेकर पॉलिसी की अवधि की समाप्ति अथवा पॉलिसी में निश्चित अवधि के पूरा होने तक, जो भी पहले हो, पॉलिसी में वर्णित खर्चों को पूरा करेगा। यह राशि बीमा राशि से अधिक नहीं होगी।

8. राजेश्वरी महिला कल्याण बीमा योजना– यह पॉलिसी बीमाकृत स्त्री के परिवार के सदस्यों को किसी भी दुर्घटना के कारण उसकी मृत्यु अथवा विकलांग होने पर एवं अथवा केवल स्त्रियों से जु\ड़ी समस्याओं के कारण उसकी मृत्यु और अथवा विकलांगता की स्थिति में, सहायता प्रदान करने के लिए दी जाती है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ

1. अटल पेंशन योजना

यह योजना 18 से 40 वर्ष के बीच के व्यक्तियों के लिए है। व्यक्ति से यह अपेक्षा है कि 60 वर्ष की आयु होने तक इस योजना में अंशदान करे। यह योजना वृद्धावस्था पेंशन की सुविधा हेतु एक निवेश के रूप में कार्य करती है।

2. प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना

यह योजना 12 रु. प्रतिवर्ष के प्रीमियम पर 2 लाख रु. का दुर्घटना तथा विकलांगता बीमा कवर उपलब्ध कराती है। कोई भी बचत खाताधारी व्यक्ति इस योजना में सम्मिलित हो सकता है।

3. प्रधानमंत्री जन-धन योजना

यह योजना बिना किसी न्यूनतम शेष के एक बचत खाता उपलब्ध कराती है। इसके साथ 'रूपे एटीएम-सह डेबिट कार्ड' आता है जिसके अंतर्गत 1 लाख रु. तथा 30,000 रु. का क्रमशः दुर्घटना तथा जीवन सुरक्षा कवर होता है।

4. प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना

यह योजना 330 रु. प्रतिवर्ष के प्रीमियम के साथ पॉलिसीधारक की मृत्यु होने पर उसके आश्रितों को 2,00,000 रु. का शुद्ध सावधि बीमा सुरक्षा कवर उपलब्ध कराती है। 18-70 वर्ष की आयु का कोई भी व्यक्ति, जिसका बचत खाता हो, इस योजना को चुन सकता है।

(iv) इसमें हानि के निकटतम कारण का सिद्धांत लागू होता है। बीमा कंपनी भुगतान के लिए उसी परिस्थिति में देनदार होगी जब हानि के निकटतम कारण के विरुद्ध बीमा करा रखा हो। उदाहरण के लिए, मान लें कि हानि अनेकों कारणों से हो सकती है तो ऐसी स्थिति में हानि का निकटतम कारण ही मान्य होगा।

4.6 संप्रेषण सेवाएँ

संप्रेषण सेवाएँ व्यावसायिक इकाई के बाह्य जगत से संपर्क में सहायक होती हैं। इनमें आपूर्तिकर्ता, ग्राहक, प्रतियोगी आदि शामिल हैं। कोई भी व्यावसायिक इकाई अकेले व्यवसाय नहीं कर सकती। उसे अपने विचारों एवं सूचनाओं को दूसरों तक पहुँचाने के लिए संप्रेषण की आवश्यकता होती है। प्रभावी संप्रेषण के लिए संप्रेषण सेवाओं का सक्षम, सही एवं द्रुतगामी होना आवश्यक है। इस तेज़ी से बढ़ती एवं प्रतियोगी दुनिया के लिए सूचना के शीघ्र आदान-प्रदान के लिए उन्नत तकनीक का होना आवश्यक है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया इस रूपान्तर के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी है। व्यवसाय की सहायक मुख्य सेवाओं को डाक एवं दूरसंचार में बाँटा जा सकता है।

डाक सेवाएँ

भारतीय डाक एवं तार विभाग पूरे भारत में विभिन्न डाक सेवाएँ प्रदान करता है। इन सेवाओं को प्रदान करने के लिए पूरे देश को 22 डाक समूहों में बाँटा गया है। ये केन्द्र अपने क्षेत्र एवं खण्डों के माध्यम से प्रधान डाक घर, उपडाक घर एवं शाखा डाक घरों के प्रचालन का प्रबंधन करते हैं। डाक विभाग द्वारा प्रदत्त सुविधाओं को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है–

(क) वित्तीय सुविधाएँ– ये सुविधाएँ डाक घर की विभिन्न बचत योजनाओं के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती हैं। ये योजनाएँ हैं– पी.पी.एफ., किसान विकास पत्र एवं राष्ट्रीय बचत प्रमाण पत्र। इनके अतिरिक्त सामान्य बैंकिंग कार्य भी हैं, जैसे– मासिक आय योजना, आवर्ती जमा खाता, बचत खाता, सावधि जमा एवं मनी ऑर्डर सुविधा।

(ख) डाक सुविधाएँ– डाक सेवाएँ, जैसे- पार्सल सेवा अर्थात् वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजना। रजिस्ट्री की सुविधा, जो भेजी गई वस्तुओं को सुरक्षा प्रदान करती है। बीमा सेवा, जो भेजी गई डाक को रास्ते के जोखिमों के विरुद्ध बीमा करती है।

डाक विभाग अन्य सहायक सुविधाएँ भी प्रदान करता है, जो निम्न हैं–

1. बधाई संदेश- हर अवसर के लिए आनन्ददायक बधाई कार्ड।
2. मीडिया संदेश- भारतीय निगमों के लिए अपने ब्रांड उत्पादों के विज्ञापन का एक नवीन एवं प्रभावी माध्यम। वे अपना विज्ञापन पोस्टकार्ड, लिफाफे, एयरोग्राम, टेलीग्राम एवं डाक बक्सों पर कर सकते हैं।

3. सीधी डाक सीधे विज्ञापन के लिए होती है। यह किसी नियत पते के अथवा बिना किसी पते के हो सकती है।
4. संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी वित्तीय सेवा संघ के सहयोग से अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा हस्तांतरण- इसके कारण 185 देशों से भारत को मुद्रा का हस्तांतरण संभव है।
5. पासपोर्ट की सुविधा- पासपोर्ट के लिए आवेदन पत्र कार्यवाही के लिए विदेश मंत्रालय से इसका अद्‌भुत सहयोग है।
6. स्पीड पोस्ट- यह भारत के लगभग 1,000 निर्दिष्ट स्थानों पर भेजी जा सकती है तथा यह विश्व के लगभग 97 प्रमुख देशों को जोड़ती है।
7. ई-बिल डाक- डाक विभाग की यह नवीनतम सेवा है जिसमें यह बी.एस. एन.एल. एवं भारती एयरटेल के बिलों की राशि डाकघरों में स्थित खिड़की पर एकत्रित करती है।

टेलीकॉम सेवाएँ

अंतर्राष्ट्रीय स्तर का दूरसंचार का ढाँचा देश के तीव्र आर्थिक एवं सामाजिक विकास का मूल है। वास्तव में यह सभी व्यावसायिक क्रियाओं की रीढ़ है। आज जब समस्त विश्व का एक गाँव के समान ध्रुवीकरण हो चुका है, तब यदि दूरसंचार का ढाँचा नहीं है तो महाद्वीपों में व्यवसाय करना मात्र एक स्वप्न ही रह जाएगा। दूरसंचार, सूचना प्रौद्‌योगिकी (आई.टी.), उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स एवं मीडिया उद्‌योग में दूरगामी प्रगति हुई है।

जीवन की गुणवत्ता की वृद्‌धि की संभावना को देखते हुए एवं 2025 तक भारत को आई.टी. की महाशक्ति बनाने के स्वप्न को वास्तविकता में बदलने के लिए भारत सरकार ने 1999 में नई टेलीकॉम नीति का ढाँचा एवं 2004 में एक विस्तृत नीति तैयार की। इस ढाँचे के माध्यम से सरकार अब तक के अछूते क्षेत्रों को सर्वव्यापी सेवाएँ एवं देश की अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उच्चस्तरीय सेवाएँ प्रदान करना चाहती है।

विभिन्न प्रकार की टेलीकॉम सेवाएँ निम्नलिखित हैं-

(i) **सेल्यूलर मोबाइल सेवाएँ-** यह सभी प्रकार की मोबाइल टेलीकॉम सेवाएँ हैं जिनमें ज़बानी एवं गैर-ज़बानी संदेश, डाटा सेवाएँ एवं पी.सी.ओ. सेवाएँ सम्मिलित हैं। ये अपने क्षेत्र में किसी भी प्रकार के नेटवर्क उपकरणों का प्रयोग कर सकते हैं। यदि कोई अन्य टेलीकॉम सेवा किसी के द्‌वारा प्रदान की जा रही है तो वे उनसे सहयोग कर सीधे आंतरिक गठबंधन कर सकते हैं।

(ii) **स्थायी लाइन सेवाएँ-** यह सभी प्रकार की स्थायी सेवाएँ होती हैं जिनमें ज़बानी एवं गैर ज़बानी संदेश एवं डाटा सेवाएँ भी सम्मिलित हैं जो लम्बी दूरी तक संदेश भेजने के लिए उपयुक्त होती हैं। इसमें पूरे देश में बिछाए गए फाइबर ऑप्टिक

तारों के द्वारा जुड़े नेटवर्क उपकरणों का उपयोग होता है। इनसे अन्य टेलीकॉम सेवाओं से तालमेल रखा जा सकता है।

(iii) **केबल/तार सेवाएँ–** ये सीधी जुड़ी सेवाएँ एवं एक लाइन से दूसरी पर हस्तांतरित करने की सेवाएँ हैं, जो मीडिया सेवाओं के संचालन के लिए एक लाइसेंस प्राप्त क्षेत्र में कार्यरत होती हैं। यह एकतरफा मनोरंजन से संबंधित सेवाएँ हैं। केबल नेटवर्क के माध्यम से भविष्य में द्विमार्गीय संप्रेषण जिनमें जबानी डाटा एवं सूचना सेवाएँ सम्मिलित हैं, में महत्त्वपूर्ण होकर उभरेंगी। केबल नेटवर्क के माध्यम से दी जाने वाली सेवाएँ स्थायी सेवाओं के समान होंगी।

(iv) **वी.एस.ए.टी. सेवाएँ (वेरी स्मॉल अपरचर टर्मिनल)–** यह उपग्रह आधारित संप्रेषण सेवा है। यह व्यवसाय एवं सरकारी एजेन्सियों को शहरी एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में बेहद लचीली एवं विश्वसनीय संप्रेषण की सुविधा देती है। थल आधारित सेवाओं की तुलना में वी.एस.ए.टी. विश्वसनीय एवं निर्बाध सेवा प्रदान करता है, जो थल आधारित सेवाओं के समान और कहीं-कहीं तो उनसे भी बेहतर होती है। इसका उपयोग देश के दूर-दराज़ के क्षेत्रों को जोड़ने तथा टेली मेडीसिन, ऑनलाइन समाचार पत्र, बाज़ार भाव एवं टेली शिक्षा जैसे नवीन प्रयोगों के लिए किया जा सकता है।

(v) **डी.टी.एच. सेवाएँ (डायरेक्ट टू होम)–** यह भी सेल्यूलर कंपनियों द्वारा दी जाने वाली उपग्रह आधारित मीडिया सेवा है। एक छोटे डिश एन्टीना एवं एक सेट टॉप बॉक्स की सहायता से कोई भी व्यक्ति सीधे उपग्रह से मीडिया सेवाएँ प्राप्त कर सकता है। डी.टी.एच. सेवाएँ प्रदान करने वाला अनेकों चैनलों का विकल्प देता है। इनको हम अपने टेलीविज़न पर केबल नेटवर्क की सेवा प्रदान करने वाले पर निर्भर हुए बिना देख सकते हैं।

4.7 परिवहन

परिवहन में भाड़ा आधारित सेवाएँ एवं उनकी समर्थक एवं सहायक सेवाएँ सम्मिलित हैं, जो परिवहन के सभी माध्यम अर्थात् रेल, सड़क एवं समुद्र के द्वारा माल एवं यात्रियों को ढोने से संबंधित हैं। आप पहले ही परिवहन के विभिन्न माध्यमों के लाभ व हानियों का तुलनात्मक अध्ययन कर चुके हैं। इनकी सेवाएँ व्यवसाय के लिए महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं क्योंकि व्यावसायिक लेन-देनों के लिए गति अत्यावश्यक है। परिवहन स्थान संबंधित बाधा को दूर करता है, अर्थात् यह वस्तुओं को उत्पादन स्थल से उपभोक्ताओं तक पहुँचाता है। हमें अपनी अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवहन प्रणाली को विकसित करना है। हमें और अच्छी, चौड़ी एवं बेहतर की सड़कों की आवश्यकता है। हमारे कम बंदरगाह हैं, उनमें भी भीड़ है। सरकार एवं उद्योग

को सक्रिय हो जाना चाहिए तथा यह समझना चाहिए कि परिवहन सेवा का प्रभावी संचालन व्यवसाय के लिए जीवन रेखा का काम करता है। कृषि एवं खाद्य क्षेत्र में परिवहन एवं संग्रहण प्रक्रिया के दौरान उत्पादों की भारी हानि होती है।

4.8 भंडारण

भंडारण सदा ही आर्थिक विकास का एक महत्त्वपूर्ण पहलू रहा है। भंडारगृह को प्रारंभ में वस्तुओं को वैज्ञानिक ढंग एवं रीति से सुरक्षित रखने एवं संग्रहण की एक स्थिर इकाई के रूप में माना जाता था। इससे इनकी मौलिक गुणवत्ता, कीमत एवं उपयोगिता बनी रहती थी। भंडारगृह में माल रेल, ट्रक एवं बैलगाड़ियों से आता था। वस्तुओं को भंडारगृह में संग्रहीत करने के लिए लोग स्वयं ढोते थे तथा फर्श पर ही उनके ढेर रख दिए जाते थे। भारत में भंडारगृहों का उपयोग विनिर्माता, आयातक, निर्यातक, थोक विक्रेता, ट्रांसपोर्टर एवं कस्टम विभाग करते हैं।

आज भंडारगृह की भूमिका मात्र संग्रहण सेवा प्रदान करने की नहीं रही है, बल्कि ये कम कीमत पर भंडारण एवं वहाँ से वितरण की सेवा भी उपलब्ध कराते हैं, अर्थात् यह अब सही मात्रा में, सही स्थान पर, सही समय पर, सही स्थिति में, सही लागत पर, माल को उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। आधुनिक भंडारगृह आज माल को एक स्थान से दूसरे स्थान के हस्तान्तरण के लिए स्वचालित पट्टियाँ, कंप्यूटर द्वारा संचालित क्रेन एवं फोर्क लिफ्ट का प्रयोग करते हैं तथा भंडारगृह प्रबंध के लिए कंप्यूटरों का प्रयोग होता है जिससे यह स्वचालित क्रिया बन जाती है।

भंडारगृहों के प्रकार

(क) निजी भंडारगृह– निजी भंडारगृह वे भंडारगृह होते हैं जिनका परिचालन कोई व्यवसायी अपने माल के भंडारण के लिए करता है। यह उसके अपने हो सकते हैं अथवा पट्टे पर लिए हो सकते हैं। इनमें प्रमुख हैं– शृंखलाबद्ध दुकानें अथवा बहु-ब्रांड बहु-उत्पाद कंपनियाँ। सामान्यतः एक सक्षम भंडारगृह वह है, जिसमें माल की व्यवस्था की ऐसी प्रणाली हो कि इससे उत्पाद की आवाजाही अधिक से अधिक सुचारू रूप से हो सके। निजी भंडारगृहों के लाभ हैं– प्रभावी नियंत्रण, लचीलापन तथा ग्राहकों से बेहतर संबंध।

(ख) सार्वजनिक भंडारगृह– सार्वजनिक भंडारगृहों को कोई भी विनिर्माता, व्यापारी अथवा अन्य कोई व्यक्ति संग्रहण की आवश्यक फीस देकर अपने माल के संग्रहण के लिए उपयोग कर सकता है। ऐसे भंडारगृहों के प्रचालन के नियमन के लिए सरकार निजी व्यवसायियों को लाइसेंस देती है।

केंद्रीय भंडारण निगम

वर्तमान में पूरे देश में व्यवसायियों को इस प्रकार की सेवाएं केंद्रीय सरकार का उपक्रम केंद्रीय भंडारण निगम प्रदान कर रहा है। निजी भंडारण कंपनियां, जैसे– टी.सी.आई., शंकर इंटरनेशनल, ब्ल्यूडार्ट, डी.एच.एल. आदि माल के परिवहन एवं भंडारण की सुविधाएँ प्रदान कर रही हैं।

एक भंडारगृह का स्वामी इसमें संग्रहीत माल के स्वामी का एजेन्ट होता है तथा उससे अपेक्षा की जाती है कि वह माल की ठीक से देखभाल करे।

ये भंडारगृह रेल अथवा सड़क से परिवहन जैसी सुविधाएँ भी प्रदान करते हैं। इन पर माल की पूरी सुरक्षा का उत्तरदायित्व होता है। छोटे विनिर्माताओं के लिए यह सर्वाधिक सुविधाजनक रहता हैं क्योंकि वे अपने भंडारगृहों का निर्माण नहीं कर सकते।

इन भंडारगृहों के अन्य लाभ हैं, ये जगह-जगह स्थित होते हैं, इनकी लागत निश्चित नहीं होती है तथा ये पैकेजिंग एवं लेबल लगाने जैसी मूल्यवर्द्धन सेवाएँ भी प्रदान करते हैं।

(ग) बंधक माल गोदाम– बंधक माल गोदाम, वे माल गोदाम होते हैं जिन्हें सरकार से बिना आयात कर दिए आयातित माल को रखने के लिए लाइसेंस मिला होता है। आयातकों को, जब तक वह आयात कर का भुगतान न कर दें, बन्दरगाह अथवा हवाई अड्डे से माल को ले जाने की अनुमति नहीं होती।

ऐसा भी हो सकता है कि आयातक पूरे आयात कर का भुगतान करने की स्थिति में नहीं हो या फिर उसे पूरे माल की तुरंत आवश्यकता न हो। कस्टम अधिकारी तब तक माल को बंधक माल गोदामों में रखते हैं, जब तक कि आयात कर का भुगतान न कर दिया जाए। इनमें रखा माल बंधक माल कहलाता है।

इन भंडारगृहों में ब्रांडिंग, पैकेजिंग, श्रेणीकरण एवं मिश्रण की सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। आयातक अपने ग्राहकों को लाकर वस्तुओं का निरीक्षण करा सकते हैं तथा उनकी आवश्यकतानुसार वस्तुओं की पुनः पैकेजिंग कर सकते हैं। इस प्रकार से ये वस्तुओं के विपणन में सहायक होते हैं।

आयातक की आवश्यकतानुसार माल के कुछ भाग को ले जाया जा सकता है तथा आयात कर का भुगतान इस प्रकार से किश्तों में किया जा सकता है।

इस प्रकार आयातकों को वस्तुओं की बिक्री अथवा उनका उपयोग करने से पूर्व आयात कर चुकाकर पूँजी को निष्क्रिय करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि आयातक आयातित माल का पुनः निर्यात करना चाहता है, तो उसे आयात कर चुकाने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार से बंधक माल गोदाम पुनःनिर्यात व्यापार को भी सुविधाजनक बनाते हैं।

(घ) सरकारी भंडारगृह– ये माल गोदाम पूरी तरह से सरकार के स्वामित्व एवं नियन्त्रण में होते हैं। सरकार इनका प्रबंध सार्वजनिक उपक्रमों के माध्यम से करती है। इनके उदाहरण हैं– भारतीय खाद्य निगम, राज्य व्यापार निगम एवं केंद्रीय भंडारण।

(ङ) सहकारी भंडारगृह– कुछ विपणन सहकारी समितियों अथवा कृषि सहकारी समितियों ने अपने सदस्यों के लिए अपने निजी भंडारगृह स्थापित किए हैं।

भंडारगृहों के कार्य–

सामान्यतः भंडारगृहों के निम्नलिखित कार्य होते हैं–

(क) संचयन– भंडारगृहों के पास विभिन्न उत्पादकों से माल एवं वस्तुएँ आती हैं जिनका वे संचय करते हैं तथा वहाँ से उन सभी को सीधे निश्चित ग्राहक को एक साथ भेज देते हैं।

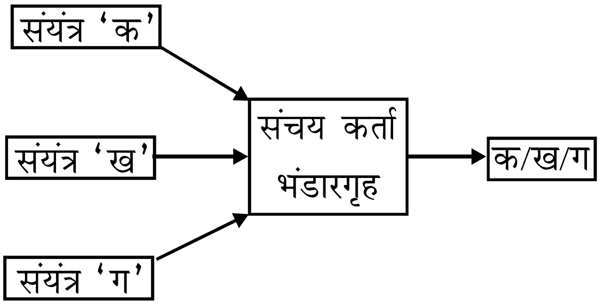

(ख) भारी मात्रा का विघटन– उत्पादन संयन्त्रों से भारी मात्रा में माल प्राप्त होता है, भंडार गृहों में इनका छोटी मात्राओं में विघटन कर दिया जाता है। इस प्रकार से छोटी मात्रा में वस्तुओं को ग्राहकों की आवश्यकतानुसार उनको भेज दिया जाता है।

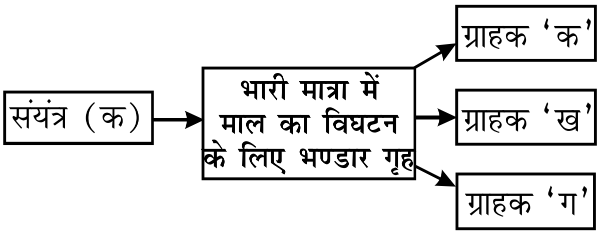

(ग) संग्रहीत स्टॉक– कुछ चुनिंदा व्यवसायों में मौसम के अनुसार माल प्राप्त होता है जिसका संग्रहण भंडारगृहों में किया जाता है। जिन वस्तुओं अथवा कच्चे माल की बिक्री अथवा विनिर्माण के लिए तुरंत आवश्यकता नहीं होती, उन्हें भी भंडारगृहों में संग्रहीत कर लिया जाता है, इन्हें व्यवसायियों को उनके ग्राहकों की माँग के अनुसार उपलब्ध कराया जाता है। ऐसे कृषि उत्पाद जिनकी फसल एक समय विशेष के दौरान उगाई जाती है लेकिन उनका उपभोग पूरे वर्ष होता है, उनको भी संचित करना होता है तथा उन्हें फिर थोड़ी-थोड़ी मात्रा में गोदाम से निकाला जाता है।

(घ) मूल्य वर्द्धन सेवाएँ– भंडारगृह कुछ मूल्य वर्द्धन सेवाएँ, जैसे– हस्तांतरण के पूर्व मिश्रण, पैकेजिंग एवं लेबलिंग आदि प्रदान करते हैं। संभावित ग्राहक जब वस्तुओं का निरीक्षण करते हैं तो वस्तुओं के पैकेजिंग को खोलकर उनकी पुनः पैकेजिंग एवं लेबलिंग की जाती है। यह सुविधा भी भंडारगृह देते हैं। इसी प्रकार वस्तुओं को छोटे भागों में विभक्त करने एवं उनके श्रेणीकरण की सुविधा भी प्रदान करते हैं।

(ङ) मूल्यों में स्थिरता– माँग के अनुसार आपूर्ति का समायोजन कर भंडारण मूल्यों में स्थिरता लाता है। जब माँग में कमी एवं पूर्ति में वृद्धि होती है अथवा इसकी उलट स्थिति में भंडारण मूल्यों में स्थिरता लाता है।

(च) वित्तीयन– भंडारगृहों के स्वामी वस्तुओं की जमानत पर माल के स्वामियों को अग्रिम धन प्रदान करते हैं।

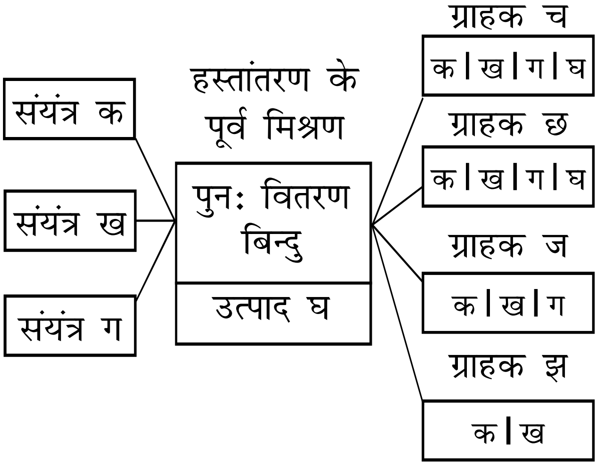

मुख्य शब्दावली

व्यावसायिक सेवाएँ	बैंकिंग	ई-बैंकिंग
बीमा	वाणिज्यिक बैंक	बीमायोग्य हित
अग्नि बीमा	सामुद्रिक बीमा	दूरसंचार सेवाएँ
जीवन बीमा	योगदान क्षतिपूर्ति	निकटतम समर्पण
अधिकार समर्पण	हानि को कम करना	

सारांश

सेवाओं की प्रकृति

सेवाएँ वे क्रियाएँ हैं जिन्हें अलग से पहचाना जा सकता है, जो अमूर्त हैं तथा जो आवश्यकताओं की संतुष्टि करती हैं तथा जो किसी वस्तु अथवा अन्य सेवा की बिक्री से जुड़ी नहीं होती। सेवाओं की पाँच आधारभूत विशेषताएँ होती हैं जो उन्हें वस्तुओं से भिन्न करती हैं, इन्हें पाँच तत्त्व कहते हैं। ये हैं– अमूर्तता, अनुरूपता की कमी, अभिन्नता, रहतिया संबद्धता।

सेवाओं के प्रकार– व्यावसायिक सेवाएँ, सामाजिक सेवाएँ एवं व्यक्तिगत सेवाएँ।

व्यावसायिक सेवाएँ– व्यावसायिक इकाइयाँ अधिक से अधिक विशिष्ट सेवाओं पर निर्भर कर रही हैं, ताकि वे प्रतियोगी बन सकें। व्यावसायिक इकाइयाँ कोष प्राप्ति के लिए बैंकों, संयंत्र, मशीन, माल आदि के बीमे के लिए बीमा कंपनियों; कच्चे माल एवं तैयार माल के परिवहन के लिए ट्रांसपोर्ट कंपनियों एवं विक्रेताओं; आपूर्तिकर्ताओं एवं ग्राहकों से संपर्क करने के लिए टेलीकॉम एवं डाक सेवाओं पर निर्भर करती हैं।

सेवाओं एवं वस्तुओं में अंतर– वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है जबकि सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। सेवाएँ क्रियाएँ हैं, जिनको घर नहीं ले जाया जा सकता, केवल उनका परिणाम ही घर ले जाया जा सकता है। सेवाओं को उपभोग बिन्दु पर ही बेचा जाता है, इनका स्टॉक नहीं होता।

बैंकिंग– भारत में बैंकिंग कंपनी वह है, जो बैंकिंग लेन-देन का व्यवसाय करती हैं। बैंकिंग लेन-देनों का अर्थ है– जनता से जमा स्वीकार करना एवं दूसरों को ऋण देना एवं निवेश करना। इस जमा को जमाकर्ता माँग पर अथवा चेक, ड्राफ्ट, आर्डर या अन्य किसी ढंग से निकाल सकते हैं।

बैंकों के प्रकार– बैंकों को वाणिज्यिक बैंक, सहकारी बैंक, विशिष्ट बैंक, केंद्रीय बैंक में बाँटा जा सकता है।

वाणिज्यिक बैंकों के कार्य– बैंक के कुछ कार्य मूल कार्य या प्राथमिक कार्य होते हैं जबकि अन्य एजेन्सी अथवा सामान्य उपयोगी सेवाएँ होती हैं। जमा स्वीकार करना, ऋण देना, चेक की सुविधा, धन का हस्तांतरण आदि सहायक सेवाएँ।

ई-बैंकिंग– सूचना तकनीक में नवीनतम परिवर्तन इन्टरनेट बैंकिंग का है। यह बैंकिंग का एक अंग है एवं ग्राहकों के लिए सेवा प्राप्ति का एक और माध्यम। ई-बैंकिंग, इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग अथवा बैंकिंग में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का उपयोग। ई-बैंकिंग कई बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएँ जिसके अंतर्गत ग्राहक व्यक्तिगत कंप्यूटर (पी.सी.), मोबाइल टेलीफोन या हस्तस्थ कंप्यूटर (पी.डी.ए.) के माध्यम से बैंक संबंधित लेन-देन, जैसे– बचत का प्रबंधन, खातों की जाँच, ऋणों के लिए आवेदन या बिलों का भुगतान कर सकता है।

बीमा– बीमा एक ऐसी व्यवस्था है, जिसके द्वारा किसी अनिश्चित घटना के घटने से होने वाली संभावित हानि को उन लोगों में बाँट दिया जाता है, जिन्हें उसका सामना करना प\ड़ सकता है, तथा जो इस घटना के विरुद्ध बीमा कराने के लिए तैयार हैं। यह एक ऐसी प्रसंविदा अथवा समझौता है जिसके अनुसार एक पक्ष प्रतिफल के बदले दूसरे पक्ष को एक अनिश्चित घटना के परिणामस्वरूप किसी मूल्यवान वस्तु की जिसमें बीमाकृत का आर्थिक हित है, होने वाली हानि, क्षति अथवा चोट की पूर्ति के लिए एक निश्चित राशि को भुगतान करने के लिए तैयार होता है।

बीमा का आधारभूत सिद्धांत– बीमा का आधारभूत सिद्धांत है कि एक व्यक्ति या व्यावसायिक इकाई एक भविष्य की अनिश्चित हानि की भारी राशि के बदले पूर्वनिर्धारित राशि खर्च करने को तैयार हो जाता है। इसीलिए बीमा एक प्रकार से जोखिम का प्रबंधन है, जिसे संभावित वित्तीय हानि के जोखिम के विरुद्ध सुरक्षा के लिए किया जाता है।

बीमा के कार्य– सुनिश्चितता, सुरक्षा, जोखिम का आवंटन, पूँजी निर्माण में सहायक।

बीमा के सिद्धांत

पूर्ण सद्विश्वास– बीमा प्रसंविदा परम सद्विश्वास का प्रसंविदा अर्थात् पूर्ण सद्विश्वास पर आधारित प्रसंविदा है। बीमाकार एवं बीमाकृत दोनों को प्रसंविदा के संबंध में एक-दूसरे के प्रति सद्विश्वास दिखाना चाहिए।

बीमायोग्य हित– बीमाकृत का बीमा की विषय-वस्तु में बीमायोग्य हित होना अनिवार्य है। बीमायोग्य हित का अर्थ है– बीमा प्रसंविदा की विषय-वस्तु में आर्थिक स्वार्थ।

क्षतिपूर्ति– इस सिद्धांत के अनुसार बीमाकार हानि होने पर बीमाकृत को उसी स्थिति में लाने का वचन देता है, जिस स्थिति में वह बीमा की घटना के घटित होने से पहले था।

निकटतम कारण– जब हानि दो या दो से अधिक कारणों से होती है तो हानि की पूर्ति तभी होगी जबकि वह निकटतम कारण से हुई हो। हानि के निकटतम कारण का अर्थ है, सर्वाधिक प्रमुख एवं सर्वाधिक प्रभावी कारण जिसके कारण हानि होना स्वाभाविक है।

अधिकार सम्प्रेषण– इस सिद्धांत से अभिप्राय बीमाकार के बीमाकृत के वैकल्पिक स्रोत से वसूली की सीमा तक दावे के निपटारे के पश्चात उसका स्थान ले लेने से है।

योगदानः इस सिद्धांत के अनुसार बीमा के अंतर्गत दावे का भुगतान कर देने के पश्चात बीमाकार को अन्य देनदार बीमाकारों से हानि की राशि में उनके भाग को वसूल करने का अधिकार है।

हानि को कम करना– बीमाकार का कर्तव्य है कि वह बीमा करायी गई संपति की हानि क्षति को न्यूनतम करने के लिए कदम उठाए।

बीमा के प्रकार

जीवन बीमा– यह एक ऐसा अनुबंध है जिसके अंतर्गत बीमाकार प्रीमियम की एकमुश्त राशि अथवा समय-समय पर भुगतान की गई राशि के बदले में बीमाकृत को अथवा उस व्यक्ति को जिसके हित में यह पॉलिसी ली गई है। मनुष्य के जीवन से संबंधित अनिश्चित घटना के घटने पर अथवा एक अवधि की समाप्ति पर बीमित राशि का भुगतान करने का समझौता करता है।

यदि व्यक्ति की समय से पहले मृत्यु हो जाती है तो यह बीमा उसके परिवार को सुरक्षा प्रदान

करता है या फिर व्यक्ति के बूढ़ा हो जाने पर जब उसकी आय अर्जन क्षमता कम हो जाती है तो उसे पर्याप्त राशि का भुगतान करता है। बीमा केवल सुरक्षा ही प्रदान नहीं करता, बल्कि यह एक प्रकार का निवेश भी है क्योंकि बीमाकृत को उसकी मृत्यु पर अथवा एक निश्चित अवधि की समाप्ति पर एक निश्चित राशि लौटा दी जाती है।

जीवन बीमा प्रसंविदा के प्रमुख तत्व हैं–

(i) इसमें एक वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्व होने चाहिए।
(ii) यह अनुबंध पूर्ण सद्विश्वास का अनुबंध है।
(iii) जीवन बीमा में बीमाकृत का बीमित जीवन में बीमोचित स्वार्थ का होना आवश्यक है।
(iv) जीवन बीमा प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा नहीं है।

जीवन बीमा पॉलिसी के प्रकार-

इनमें से कुछ का वर्णन नीचे किया गया है-

(i) आजीवन बीमा पॉलिसी।
(ii) बंदोबस्ती जीवन बीमा पॉलिसी।
(iii) संयुक्त बीमा पॉलिसी।
(iv) वार्षिक वृत्ति पॉलिसी।
(v) बच्चों की बंदोबस्ती बीमा पॉलिसी।

अग्नि बीमा

अग्नि बीमा एक ऐसी प्रसंविदा है जिसमें बीमाकार प्रीमियम के प्रतिफल के बदले पॉलिसी में वर्णित राशि तक एक निर्धारित अवधि के दौरान आग से होने वाली क्षति की पूर्ति का दायित्व लेता है।

अग्नि बीमा प्रसंविदा के प्रमुख तत्व निम्न हैं–

(i) अग्नि बीमा में बीमाकृत का बीमे की वस्तु-विषय में बीमायोग्य हित होना चाहिए।
(ii) जीवन बीमे के समान अग्नि बीमा प्रसंविदा भी पूर्ण सद्भाव की प्रसंविदा है।
(iii) अग्नि बीमा अनुबंध पूर्णतः क्षतिपूर्ति का अनुबंध है।
(iv) बीमाकार क्षति की पूर्ति केवल उस स्थिति में ही करेगा, जबकि क्षति हानि के निकटतम कारण से हुई हो।

सामुद्रिक बीमा

एक सामुद्रिक बीमा प्रसंविदा एक ऐसा अनुबंध है, जिसके तहत बीमाकार समुद्री जोखिमों के विरुद्ध तय रीति से एवं तय राशि तक बीमाकृत की क्षतिपूर्ति का वादा करता है। सामुद्रिक बीमा समुद्र मार्ग से यात्रा एवं समुद्री जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करता है।

समुद्री बीमा अन्य बीमों से थोड़ा भिन्न हैं। इसमें तीन चीजें सम्मिलित हैं - जहाज़, माल एवं भाड़ा। एक समुद्री प्रसंविदा के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं-

(i) जीवन बीमा से अलग समुद्री बीमा प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है। हानि होने पर बीमित बीमाकार से वास्तविक हानि की राशि को प्राप्त कर सकता है।
(ii) जीवन बीमा अग्नि बीमा के समान समुद्री बीमा प्रसंविदा पूर्ण सद्विश्वास का प्रसंविदा होती है।
(iii) बीमायोग्य हित का हानि के समय होना अनिवार्य है।

(iv) इसमें हानि के निकटतम कारण का सिद्धांत लागू होता है।

संप्रेषण सेवाएँ– व्यावसायिक इकाई के बाह्य जगत से संपर्क में सहायक होती हैं। इनमें आपूर्तिकर्ता, ग्राहक, प्रतियोगी आदि शामिल हैं। व्यवसाय की सहायक मुख्य सेवाओं को डाक एवं दूरसंचार में बाँटा जा सकता है।

डाक विभाग द्वारा प्रदत्त सुविधाओं को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है–

1. वित्तीय सुविधाएँ
2. डाक सुविधाएँ

टेलीकॉम सेवाएँ

विभिन्न प्रकार की टेलीकॉम सेवाएँ निम्नलिखित हैं–

1. सेल्यूलर मोबाइल सेवाएँ
2. रेडियो पेजिंग सेवाएँ
3. स्थायी लाइन सेवाएँ
   - केबल/तार सेवाएँ
   - वी.एस.ए.टी. सेवाएँ (वेरी स्मॉल अपरचर टर्मिनल)
   - डी.टी.एच. सेवाएँ (डायरेक्ट टू होम)

परिवहन

परिवहन में भाड़ा आधारित सेवाएँ एवं उनकी समर्थक एवं सहायक सेवाएँ सम्मिलित हैं, जो परिवहन के सभी माध्यम अर्थात् रेल, सड़क एवं समुद्र के द्वारा माल एवं यात्रियों को ढोने से संबंधित हैं।

भंडारण

भंडारगृह को प्रारंभ में वस्तुओं को वैज्ञानिक ढंग से एवं रीति से सुरक्षित रखने एवं संग्रहण की एक स्थिर इकाई के रूप में माना जाता था। इससे इनकी मौलिक गुणवत्ता कीमत एवं उपयोगिता बनी रहती थी।

आज भंडारगृह की भूमिका मात्र संग्रहण सेवा प्रदान करने की नहीं रही है, बल्कि ये उन कम कीमत पर भंडारण एवं वहाँ से वितरण की सेवा भी उपलब्ध कराते हैं, अर्थात् यह अब सही मात्रा में, सही स्थान पर, सही समय पर, सही स्थिति में, सही लागत पर, माल को उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं।

भंडारगृहों के प्रकार–

निजी भंडारगृह, सार्वजनिक भंडारगृह, बंधक माल गोदाम, सरकारी भंडारगृह, सहकारी भंडारगृह।

भंडारगृहों के कार्य–

सामान्यतः भंडारगृहों के निम्नलिखित कार्य होते है–

संचयन, भारी मात्रा का विघटन, संग्रहीत स्टॉक, मूल्य वर्द्धन सेवाएँ, मूल्यों में स्थिरता, वित्तीयन।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. डीटीएच सेवाएँ कौन प्रदान करता है?
   (क) परिवहन कंपनियाँ (ख) बैंक
   (ग) सेल्यूलर कंपनियाँ (घ) इनमें से कोई नहीं
2. सार्वजनिक संग्रहण के लाभों में शामिल है–
   (क) नियंत्रण (ख) लचीलापन
   (ग) विक्रेता संबंध (घ) इनमें से कोई नहीं
3. बीमा के कार्यों में शामिल नहीं है–
   (क) जोखिम का बँटवारा (ख) पूँजी निर्माण में सहायक
   (ग) ऋण देना (घ) इनमें से कोई नहीं
4. जीवन बीमा संविदा में निम्न में से क्या लागू नहीं है–
   (क) सशर्त संविदा (ख) एक पक्षीय संविदा
   (ग) क्षतिपूर्ति संविदा (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
5. सी.डब्ल.यू.सी. का अर्थ है–
   (अ) सेंटर वाटर कमीशन (ब) सेंट्रल वेयरहाउसिंग कमीशन
   (स) सेंट्रल वेयरहाउसिंग कार्पोरेशन (द) सेंट्रल वाटर कार्पोरेशन

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. वस्तुओं और सेवाओं को परिभाषित कीजिए।
2. ई-बैंकिंग क्या है? ई-बैंकिंग के लाभ क्या हैं?
3. व्यवसाय वर्द्धन करने के लिए कौन-कौन सी दूरसंचार सेवाएँ उपलब्ध हैं? टिप्पणी कीजिए।
4. उपयुक्त उदाहरण देकर बीमा सिद्धांतों की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
5. भंडारण की व्याख्या करें और इसके कार्य बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सेवाएँ क्या है? उनके लक्षणों की व्याख्या कीजिए।
2. प्रत्येक वाणिज्यिक बैंक के कार्यों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
3. भारतीय डाक विभाग द्वारा प्रदत्त विविध सुविधाओं पर विस्तृत टिप्पणी कीजिए।
4. विभिन्न प्रकार के बीमों का वर्णन करें। प्रत्येक बीमा द्वारा रक्षित जोखिमों की प्रकृति की जाँच कीजिए।
5. भंडारण सेवाओं की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिए।

परियोजना कार्य/क्रियाकलाप

1. आपके द्‌वारा नियमित रूप से प्रयोग में लायी जाने वाली विभिन्न सेवाओं की सूची बनाएँ और उनकी विशेषताओं को पहचानें।
2. बैंक सेवाओं पर परियोजना कार्य तैयार करें। पड़ोस के बैंक में जाएँ और उनके द्‌वारा प्रस्तावित विविध सूचनाओं का संग्रह करें और विभिन्न योजनाओं के विशिष्ट लक्षणों के बारे में सूचिकाओं का संग्रह करें। उन अतिरिक्त सेवाओं के बारे में सुझाव दीजिए और उनका संग्रह कीजिए जिनके बारे में आप सोचते हैं कि वे बैंकों को प्रदान करनी चाहिए।
3. अपने निकट की बैंक शाखा में जाएँ और पता करें कि बैंक ग्राहकों के लिए उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप कितने प्रकार के बैंक खाते उपलब्ध हैं।

   इस गतिविधि के दूसरे चरण में कॉलम 'अ' में दी गई जानकारी को कॉलम 'ब' में दी गई जानकारी से मिलान करें।

क्रं. सं.	कॉलम 'अ'	कॉलम 'ब'
1	बहु विकल्प निवेश	यह खाता तीसरे पक्ष द्‌वारा अस्थायी रूप से तब तक धारित किया जाता है, जब तक दो पक्षों के बीच लेन-देन की प्रक्रिया पूर्णतः समाप्त नहीं हो जाती।
2	बचत खाता	विभिन्न बैंकों द्‌वारा प्रस्तुत योजना जिसमें बचत खाते में रखी अनावश्यक धनराशि को स्थायी निवेश खाते में हस्तांतरित कर दिया जाता है और खाताधारक अधिक ब्याज दर से लाभान्वित होता है। इस प्रकार खाताधारक को एक तरु आंशिक आहरण सहित लोचनीय अवधि निवेश का लाभ मिलता हैं वहीं दूसरी तरफ शेष धनराशि पर बेहतर ब्याज दर प्राप्त होती है।
3	चालू खाता	इसे संचित निवेश योजना भी कहा जाता है। कोई भी आवासीय व्यक्ति, संस्था, क्लब, एजेंसी, संस्थान इस खाते को एकल अथवा संयुक्त नाम से खोल सकते हैं। यह खाता छः माह से लेकर 120 माह की अवधि में मासिक किस्त पर खोला जा सकता है। प्रत्येक किस्त पर देय धनराशि और किस्तों की संख्या परिवर्तनीय नहीं है। इस खाते पर ब्याज दर त्रैमासिक संयोजित होती है और परिपक्वता पर अंतिम राशि का भुगतान किया जाता है।
4	स्थायी निवेश खाता	कोई भी आवासीय, व्यक्ति, संस्था, क्लब आदि इस प्रकार के खाते को खोल सकते हैं। इसमें प्रत्येक वर्ष दो चैकबुक निःशुल्क प्रदान की जाती हैं। ई-बैंकिंग की सुविधा बिना किसी प्रभार के दी जाती है। मोबाइल फोन के द्‌वारा बैंक पासबुक में शेष की जानकारी, एन.ई.एफ.टी., बिल भुगतान, मोबाइल रिचार्ज की सुविधा भी दी जाती है। शिक्षार्थी इस खाते को शून्य खाता शेष सुविधा के साथ खुलवा सकते हैं, जिसके लिए उन्हें आवश्यक दस्तावेज़ जमा कराने होंगे।

5	डी. मेट. खाता	यह खाता किसी भी आवासीय, व्यक्ति, संस्था, लिमिटेड कंपनी, धार्मिक संस्था, शैक्षिक संस्थान, परोपकारी संस्था, क्लब आदि द्वारा खोला जा सकता है। इस खाते से अनगिनत बार धनराशि निकाली जा सकती है। देश के किसी भी दूर-दराज़ क्षेत्र से भी धन निकासी हो सकती है। यह खाता ई-बैंकिंग और ओवरड्रा.फ्ट की सुविधा प्रदान करता है।
6	एस्क्रो खाता	इस खाते को लघु निवेश और स्थायी निवेश में वर्गीकृत किया गया है। **(क) लघु निवेश रसीद** (i) ग्राहक न्यूनतम 7 दिन से 10 वर्ष की अवधि तक निवेश कर सकते हैं। (ii) न्यूनतम 7 दिन और अधिकतम 179 दिन तक के निवेश को लघु निवेश कहा जाता है। (iii) 7-14 दिनों तक निवेश के लिए न्यूनतम जमा 5 लाख रु. है। **(ख) स्थायी निवेश रसीद** (i) कोई भी आवासीय, व्यक्ति, संस्था, अवयस्क, सोसाइटी, क्लब आदि यह खाता खोल सकते हैं। (ii) शहरी शाखाओं में न्यूनतम राशि 10,000 रु. और ग्रामीण शाखाओं एवं वरिष्ठ नागरिकों के लिए 5,000 रु. है। (iii) ब्याज दर, निवेश की अवधि, बैंक प्रभार और प्रत्येक बैंक के लिए अलग-अलग है। (iv) वरिष्ठ नागरिकों को 0.5% अधिक ब्याज दर एक वर्ष से अधिक अवधि के निवेश पर दी जाती है।
7	आवर्ती निवेशखाता	(i) यह खाता अंशों के क्रय-विक्रय के लिए दबाव सहित लेन-देन से संबंधित है। (ii) कोई भी आवासीय, व्यक्ति, गैर आवासीय भारतीय, विदेशी संस्थान निवेशक, कॉरपोरेट, न्यास, वित्तीय संस्थान, म्यूचुअल फंड, बैंक और अन्य न्यासी खाता आदि इस खाते को खोल सकते हैं। (iii) इस खाते को खोलने के लिए आवेदक को एक फॉर्म, फोटो, आधार कार्ड/वोटर आई.डी/अन्य कोई पहचान पत्र की कॉपी प्रस्तुत करनी होती है। इसके पश्चात् आवेदक को डीमैट संख्या जारी होती है और वह प्रतिभूति बाज़ार से लेन-देन कर सकता है।

11109CH05

अध्याय 5

व्यवसाय की उभरती पद्धतियाँ

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के उपरांत आप–

- ई-व्यवसाय का अर्थ बता सकेंगे;
- ई-व्यवसाय के रूप में ऑनलाइन क्रय एवं विक्रय प्रक्रिया की व्याख्या कर सकेंगे;
- ई-व्यवसाय का पारंपरिक व्यवसाय से विभेद कर सकेंगे;
- इलेक्ट्रॉनिक पद्धति की ओर अंतरण के लाभ बता सकेंगे;
- ई-व्यवसाय में फर्म के पहल की आवश्यकताओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- व्यवसाय करने की इलेक्ट्रॉनिक पद्धति के प्रमुख सुरक्षा सरोकारों की पहचान कर सकेंगे;
- व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण की आवश्यकता का विवेचन कर सकेंगे; एवं
- व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण की संभावनाओं को समझ सकेंगे।

‘आओ कुछ खरीददारी करते हैं’, रीता ने अपने गाँव की सहेली रेखा को जगाया, जोकि छुट्टियों में दिल्ली आई हुई है। अपनी आँखें मलते हुए रेखा बोली, “इस आधी रात में! इस समय कौन अपनी दुकान तुम्हारे लिए खोले बैठा होगा?”

‘ओह! शायद मैं तुम्हे यह ठीक से नहीं बता सकी’, रीता बोली। "हम कहीं जा नहीं रहे हैं! मैं तो इंटरनेट पर ऑनलाइन खरीददारी की बात कर रही हूँ।"

"हाँ! मैंने भी ऑनलाइन खरीददारी के बारे में सुना है लेकिन कभी की नहीं है,"... और रेखा सोचने लगी। "इंटरनेट पर क्या बेचते होंगे? वह सामान को खरीददारों के पास कैसे पहुँचाते होंगे? उनके भुगतान का क्या होता होगा? और इंटरनेट अब तक गाँवों में लोकप्रिय क्यों नहीं हो पाया है?” जब तक रेखा इन प्रश्नों में उलझी रही, तब तक रीता में लॉगऑन (प्रवेश) कर चुकी थी भारत के एक अग्रणी ऑनलाइन खरीददारी मॉल में।

5.1 परिचय

पिछले दशक और उसके बाद व्यवसाय करने के तरीके में अनेक मूलभूत परिवर्तन हुए हैं। व्यवसाय करने के तरीके को व्यवसाय पद्धति कहा जाता है और उपसर्ग ‘उभरते’ इस तथ्य को रेखांकित करता है कि ये परिवर्तन अब यहाँ हो रहे हैं और ऐसी प्रवृत्तियाँ आगे भी बनी रहेंगी। यदि किसी को व्यवसाय को आकार देने वाली तीन सशक्त रुझानों की सूची बनाने को कहा जाए तो उसमें निम्न बातें शामिल होंगी–

(क) अंकीयकरण (डिजिटाइज़ेशन)- उद्धरण, ध्वनि, प्रतिकृतियों, वीडियो एवं अन्य विषय-वस्तु का 1 और 0 की शृंखला में रूपांतरण, जिनका इलेक्ट्रॉनिक प्रसारण हो सकता है;

(ख) बाह्यस्रोतीकरण (आउटसोर्सिंग); और

(ग) अंतर्राष्ट्रीयकरण और वैश्वीकरण (भूमंडलीकरण)।

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के बारे में आप अध्याय-11 में पढ़ेंगे।

इस अध्याय में हम आपको पहली दो घटनाओं, अर्थात् व्यवसाय का अंकीयकरण (इलेक्ट्रॉनिक्स का एक शब्द) जिसे इलेक्ट्रॉनिक्स व्यवसाय (ई-बिजनेस) भी कहा जाता है, और व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण (बी.पी.ओ) से परिचित कराएँगे। यह सब करने से पहले, इन दोनों व्यवसाय पद्धतियों के लिए उत्तरदायी तत्वों का संक्षिप्त विवेचन आवश्यक है।

व्यवसाय की ये नई पद्धतियाँ नया व्यवसाय नहीं हैं वरन् ये तो व्यवसाय करने के नये तरीके हैं, जिनके कई कारण हैं। आप जानते ही हैं कि एक गतिविधि के रूप में व्यवसाय का उद्देश्य वस्तुओं एवं सेवाओं के रूप में उपयोगिता एवं मूल्य का सृजन होता है, जिन्हें गृहस्थ एवं व्यावसायिक क्रेता अपनी आवश्यकता एवं इच्छापूर्ति के लिए खरीदते हैं। व्यवसाय प्रक्रियाओं को उन्नत करने के प्रयत्न में– चाहे वह क्रय और उत्पादन, विपणन, वित्त अथवा मानव संसाधन हो, व्यवसाय प्रबंधक और व्यवसाय चिंतक हमेशा कार्य करने के नए एवं बेहतर तरीकों को विकसित करने में लगे रहते हैं। व्यावसायिक फर्मों को

अच्छी गुणवत्ता, कम मूल्य, तीव्र सुपुर्दगी और अच्छी ग्राहक सेवा के लिए ग्राहकों की बढ़ती माँग और बढ़ते प्रतिस्पर्धा दबाव को सफलतापूर्वक झेलने के लिए अपनी उपयोगिता, सृजन एवं मूल्य सुपुर्दगी क्षमताओं को मज़बूत बनाना पड़ता है। इसके अलावा उभरती तकनीकों से लाभ प्राप्त करने की चाह से भी आशय यही है कि एक गतिविधि के रूप में व्यवसाय लगातार विकसित हो।

5.2 ई-व्यवसाय

यदि व्यवसाय शब्द को कई तरह की गतिविधियों, जिनमें उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य शामिल हों, के अर्थ में लिया जाए तो ई-व्यवसाय को ऐसे उद्योग, व्यापार और वाणिज्य के संचालन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें हम कंप्यूटर नेटवर्क (तंत्र) का प्रयोग करते हैं। एक विद्यार्थी या उपभोक्ता के रूप में आप जिस नेटवर्क से भली-भाँति परिचित होंगे, वह है इंटरनेट। जहाँ इंटरनेट एक सार्वजनिक व सुगम मार्ग है, वहीं फर्में नितांत निजी और अधिक सुरक्षित नेटवर्क का प्रयोग अपने आंतरिक कार्यों के अधिक प्रभावी एवं कुशल प्रबंधन के लिए करती हैं।

ई-व्यवसाय बनाम ई-कॉमर्स– हालाँकि, अनेक मौकों पर ई-व्यवसाय और ई-कॉमर्स शब्द का प्रयोग समानार्थी शब्दों की तरह किया जाता है पर इनकी अधिक सुस्पष्ट परिभाषाओं से दोनों में अंतर साफ हो जाएगा।

जिस प्रकार व्यापार, वाणिज्य के मुकाबले एक अधिक व्यापक शब्द है, उसी तरह ई-व्यवसाय भी एक अधिक विस्तृत शब्द है और इसमें इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से किए जाने वाले विभिन्न व्यावसायिक लेन-देन और कार्य एवं लेन-देनों का एक अधिक लोकप्रिय क्षेत्र जिसे ई-कॉमर्स कहा जाता है, भी शामिल है। ई-कॉमर्स एक फर्म के अपने ग्राहकों और पूर्तिकर्ताओं के साथ इंटरनेट पर पारस्परिक संपर्क को सम्मिलित करता है। ई-व्यवसाय न केवल ई-कॉमर्स वरन् व्यवसाय द्वारा इलेक्ट्रॉनिक माध्यम द्वारा संचालित किए गए अन्य कार्यों, जैसे– उत्पादन, स्टॉक प्रबंध, उत्पाद विकास, लेखांकन एवं वित्त और मानव संसाधन को भी सम्मिलित करता है। इस प्रकार ई-व्यवसाय स्पष्ट रूप से इंटरनेट पर क्रय एवं विक्रय अर्थात् ई-कॉमर्स से कहीं अधिक है।

5.2.1 ई-व्यवसाय का कार्यक्षेत्र

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, ई-व्यवसाय का कार्यक्षेत्र बहुत व्यापक है, अधिकतर सभी व्यावसायिक कार्य जैसे कि उत्पादन, वित्त, विपणन और कार्मिक प्रबंधन और प्रबंधकीय गतिविधियाँ, जैसे– नियोजन, संगठन और नियंत्रण को कंप्यूटर नेटवर्क पर कार्यांवित किया जा सकता है। ई-व्यवसाय के कार्यक्षेत्र के अवलोकन की एक अन्य विधि इलेक्ट्रॉनिक लेन-देनों में सम्मिलित व्यक्तियों एवं पक्षों के परिप्रेक्ष्य में इसे जाँचना है। इस परिप्रेक्ष्य में अवलोकन करने पर एक फर्म के इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के लेन-देनों और नेटवर्कों के विस्तार को निम्न तीन दिशाओं में परिकल्पित किया जा सकता है–

(क) फर्म से फर्म, अर्थात् एक फर्म का अन्य व्यवसायों से पारस्परिक संवाद संपर्क

(ख) फर्म से ग्राहक, अर्थात् एक फर्म का अपने ग्राहकों से पारस्परिक संवाद संपर्क और

(ग) अंतः-बी अथवा फर्म की आंतरिक प्रक्रियाएँ।

प्रदर्श 5.1 में ई-व्यवसाय में संमाहित पक्षों के नेटवर्क एवं पारस्परिक संपर्क संवाद का सारांश दर्शाया गया है।

ई-व्यवसाय के विभिन्न घटकों के बीच अंतर एवं अंतः लेन-देनों का संक्षिप्त विवेचन नीचे किया गया है–

(क) फर्म से फर्म कॉमर्स– यहाँ ई-कॉमर्स लेन-देनों में शामिल दोनों पक्ष व्यावसायिक फर्में हैं, इसलिए इसे फर्म से फर्म अर्थात् व्यवसाय से व्यवसाय नाम दिया गया है। उपयोगिता सृजन अथवा मूल्य सुपुर्दगी के लिए किसी व्यवसाय को अन्य अनेक व्यावसायिक फर्मों से पारस्परिक संवाद करना होता है, जोकि पूर्तिकर्ता अथवा विविध आगतों के विक्रेता हो सकते हैं अथवा उस

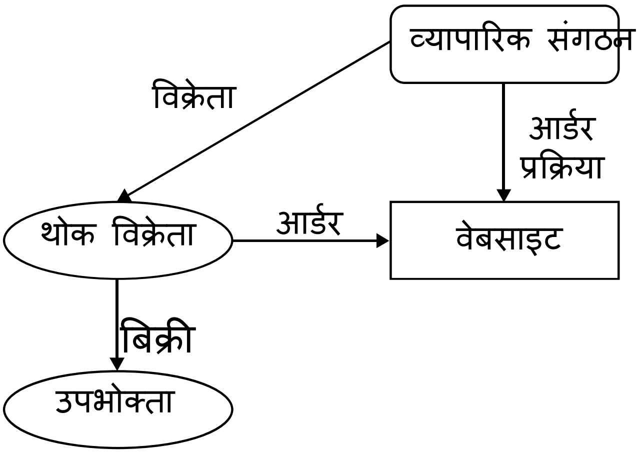

चित्र 5.1 व्यवसाय से व्यवसाय ई-वाणिज्य

माध्यम का हिस्सा हो सकते हैं जिसके द्वारा फर्म अनेक उत्पादों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाती है। उदाहरणस्वरूप, एक ऑटोमोबाइल उत्पादनकर्ता को ऐसी स्थिति में अधिक संख्या में कलपुर्जों के संग्रहण की आवश्यकता होगी, जब वह कहीं और ऑटोमोबाइल फैक्ट्री के आस-पास या फिर विदेश में निर्मित होते हों। एक पूर्तिकर्ता पर निर्भरता समाप्त करने के लिए ऑटोमोबाइल फैक्ट्री को अपने प्रत्येक कलपुर्जे के लिए एक से अधिक विक्रेता खोजने होंगे। कंप्यूटर नेटवर्क का प्रयोग क्रय आदेश (ऑर्डर) देने, उत्पादन के निरीक्षण और कलपुर्जों की सुपुर्दगी और भुगतान करने के लिए किया जाता है। इसी तरह एक फर्म अपनी वितरण प्रणाली को बेहतर बनाने और उसमें सुधार लाने के लिए अपने स्टॉक की आवाजाही पर उस समय भी वास्तविक नियंत्रण रख सकता है, जब ऐसा हो रहा हो। साथ ही वह विभिन्न स्थानों पर स्थित मध्यस्थों को भी नियंत्रित कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक मालगोदाम से वस्तुओं के प्रत्येक प्रेषण और अपने पास स्थित स्टॉक का निरीक्षण किया जा सकता है, तथा जब और जहाँ आवश्यक हो वस्तुओं की पुनःपूर्ति निश्चित की जा सकती है या फिर, विक्रेता के माध्यम से ग्राहक की वांछित आवश्कताओं को फैक्ट्री में पहुँचाकर ग्राहकों के हिसाब से उत्पादन के लिए उत्पादन प्रणाली में भेजा जा सकता है।

ई-कॉमर्स का प्रयोग सूचना, प्रलेखों के साथ ही मुद्रा हस्तांतरण की गति में वृद्धि के लिए भी किया जाता है।

ऐतिहासिक रूप से ई-कॉमर्स शब्द का

मूल आशय इलेक्ट्रॉनिक डाटा अंतर्विनिमय (ई.डी.आई.) तकनीक का प्रयोग कर व्यावसायिक प्रलेखों, जैसे क्रय आदेशों अथवा बीजकों को भेजकर एवं प्राप्तकर फर्म से फर्म लेन-देनों को सुगम बनाना है।

(ख) फर्म से ग्राहक कॉमर्स– जैसे कि नाम में निहित है, फर्म से ग्राहक (व्यवसाय से ग्राहक) लेन-देनों में एक छोर पर व्यावसायिक फर्म और दूसरे छोर पर इसके ग्राहक होते हैं। हालाँकि दिमाग में जो बात तुरंत आती है। वह है– ऑनलाइन खरीददारी, पर यह समझना चाहिए कि विक्रय, विपणन प्रक्रिया का परिणाम है और विपणन की शुरूआत उत्पाद को विक्रय के लिए प्रस्तुत करने से बहुत पहले हो जाती है और इस उत्पाद की बिक्री के बाद तक चलती है। इस तरह फर्म से ग्राहक कॉमर्स में विपणन गतिविधियों, जैसे– गतिविधियों को पहचानना, सवर्द्धन और कभी-कभार उत्पादों की ऑनलाइन सुपुर्दगी (उदाहरणार्थ संगीत एवं फिल्में) का विस्तृत क्षेत्र शामिल होता है। ई-कॉमर्स इन गतिविधियों को बहुत कम लागत परंतु उच्च गति से सुगम बनाता है। उदाहरण के लिए, ए.टी.एम. ने धन की निकासी को तेज़ बना

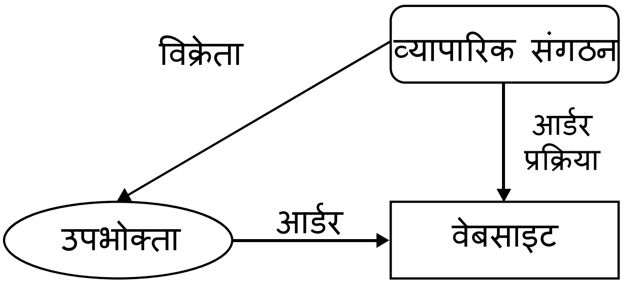

चित्र 5.2 व्यापार से उपभोक्ता ई-कॉमर्स

दिया है। आजकल ग्राहक बहुत समझदार हो रहे हैं और उन पर वांछित व्यक्तिगत ध्यान दिया जाना चाहिए। उन्हें न केवल ऐसी उत्पाद विशेषताएँ चाहिए, जोकि उनकी ज़रूरतों के अनुसार हों वरन् उन्हें सुपुर्दगी की सहूलियत और अपनी इच्छानुसार भुगतान की सुविधा भी चाहिए। ई-कॉमर्स के प्रादुर्भाव से यह सब किया जा सकता है।

साथ ही, ई-कॉमर्स का फर्म से ग्राहक रूप एक व्यवसाय के लिए हर समय अपने ग्राहकों के संपर्क में रहना संभव बनाता है। कंपनियाँ यह जानने के लिए कि कौन क्या खरीद रहा है और ग्राहक संतुष्टि का स्तर क्या है, ऑनलाइन सर्वेक्षण करा सकती हैं।

अब तक आपने यह धारणा बना ली होगी कि 'फर्म से ग्राहक', व्यवसाय से ग्राहक तक का एकतरफा आवागमन है। परंतु यह भी ध्यान रखें कि इसका परिणाम, 'ग्राहक से फर्म कॉमर्स' भी एक वास्तविकता है, जो ग्राहकों को इच्छानुसार खरीददारी की स्वतंत्रता उपलब्ध कराती है। ग्राहक कंपनियों द्वारा स्थापित कॉल सेंटरों का प्रयोग कर किसी भी समय बिना किसी अतिरिक्त लागत के निःशुल्क फोन कर अपनी शंकाओं का समाधान एवं शिकायतें दर्ज करा सकते हैं। इस प्रक्रिया की खासियत यह है कि इन कॉल सेंटरों अथवा हेल्पलाइनों की स्थापना स्वयं करने की आवश्यकता नहीं होती है, वरन् इनका बाह्यस्रोतीकरण किया जा सकता है। इस पहलू की चर्चा हम बाद में उस भाग में करेंगे जो व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण के विषय में है।

(ग) अंतः-बी कॉमर्स- यहां इलेक्ट्रॉनिक लेन-देनों में सम्मिलित पक्ष एक ही व्यावसायिक फर्म के भीतर ही होते हैं इसलिए इसे अंतः बी कॉमर्स नाम दिया गया है। जैसे कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि ई-कॉमर्स और ई-व्यवसाय में एक सूक्ष्म अंतर यह है कि ई-कॉमर्स में व्यावसायिक फर्मों के इंटरनेट पर उसके पूर्तिकर्ताओं और वितरकों/अन्य व्यावसायिक फर्मों के साथ (फर्म से फर्म) और ग्राहकों के साथ (फर्म से ग्राहक) पारस्परिक संप्रेषण सम्मिलित होते हैं, जबकि ई-व्यवसाय में एक फर्म के भीतर विभिन्न विभागों और व्यक्तियों के मध्य इंटरनेट के प्रयोग द्वारा पारस्परिक संपर्क एवं लेन-देनों का प्रबंधन भी शामिल होता है। वृहद् रूप से अंतः-बी कॉमर्स के प्रयोग के कारण ही यह संभव हुआ है कि फर्में लचीले उत्पादन की ओर उन्मुख हो सकी हैं। कंप्यूटर नेटवर्क के प्रयोग ने विपणन विभाग के लिए यह संभव बनाया है कि वह उत्पादन विभाग के सतत् संपर्क में रहे और प्रत्येक ग्राहक की आवश्यकतानुसार उत्पाद प्राप्त करे। इसी तरह कंप्यूटर आधारित अन्य विभागों के मध्य नजदीकी पारस्परिक संपर्क फर्म के लिए यह संभव बनाता है कि वह कुशल माल सूची और नकद प्रबंध, मशीनरी एवं संयंत्र के वृहद् इस्तेमाल, ग्राहक क्रयादेशों के कुशल संचालन और मानव संसाधन के कुशल प्रबंधन के लाभ उठाए।

ई-वाणिज्य के लाभ

1. व्यवसाय संगठन को लाभ–
   - बाज़ार स्थान का राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों तक विस्तार।
   - प्रचालन लागत में धीमी गिरावट।
   - आपूर्ति शृंखला प्रबंधन में खींच (चनसस) की सुविधा।
   - प्रतिस्पर्द्धियों पर प्रतिस्पर्द्धा लाभ।
   - उचित समय प्रबंधन तथा व्यवसाय प्रक्रिया को बल मिलना।
   - ब\ड़ी फर्मों के साथ-साथ छोटी फर्मों का सह-अस्तित्व।
2. ग्राहकों तथा समाज को लाभ–
   - लोचशीलता
   - प्रतिस्पर्द्धात्मक मूल्य/छूट/मूल्य त्यागना
   - अन्य विकल्प तथा पसंद
   - त्वरित एवं समयानुसार सुपुर्दगी (डिजिटाइज़्ड उत्पाद)
   - ग्राहकोनुसार उत्पाद
   - ई-नीलामी की सुविधा
   - रोज़गार की संभावनाएँ
   - दूर तक पहुँच

एटीएम मुद्रा निकासी को गति देता है

ई-कॉमर्स ने पूरी फर्म से ग्राहक प्रक्रिया को बहुत हद तक सुगम एवं गतिमान बनाया है। उदाहरण के लिए, पूर्व में बैंक से अपना धन निकालना एक थका देने वाली प्रक्रिया हुआ करती थी। भुगतान प्राप्त करने से पहले व्यक्ति को प्रक्रियागत औपचारिकताओं की एक पूरी शृंखला से गुज़रना होता था। एटीएम के आने के बाद, अब यह सब तेज़ी से इतिहास बन चुका है। अब सबसे पहली चीज़ जो होती है, वह ये है कि ग्राहक अपना धन निकाल सकता है और बाकी बची पार्श्व प्रक्रियाएँ बाद में पूरी होती हैं।

जिस प्रकार इंटरकॉम ऑफिस के अंदर मौखिक संप्रेषण को सुगम बनाता है, उसी प्रकार इंटरनेट, संगठन की विभिन्न इकाइयों के मध्य, पूरी जानकारी के आधार पर निर्णय के लिए, मल्टीमीडिया और यहाँ तक कि त्रि-आयामी आलेखीय प्रेषण को सुगम बनाता है। इससे बेहतर समन्वय, तीव्र निर्णय और द्रुत कार्यप्रवाह संभव होता है। एक फर्म के अपने कर्मचारियों से पारस्परिक संपर्क के उदाहरण को लीजिए, कभी-कभी इसे 'बी2ई कॉमर्स' भी कहा जाता है। कंपनियाँ ई-कॉमर्स द्वारा कर्मचारियों की भर्ती, साक्षात्कार और चयन, प्रशिक्षण, विकास और शिक्षा इत्यादि की ओर उन्मुख हो रही हैं। ग्राहकों से बेहतर पारस्परिक संप्रेषण के लिए कर्मचारी इलेक्ट्रॉनिक सूची-पत्रों और आदेश पत्रों का प्रयोग कर सकते हैं एवं माल सूची की सूचना प्राप्त कर सकते हैं। वे ई-डाक के द्वारा कार्यक्षेत्र रिपोर्ट भेज सकते हैं और प्रबंधन उन्हें वास्तविक समयाधार पर ग्रहण कर सकता है। वास्तव में, आभासी निजी नेटवर्क तकनीक का आशय होगा कि कर्मचारियों को कार्यालय नहीं आना होगा। इसके बजाय कार्यालय एक प्रकार से उनके पास जाएगा और वह जहाँ हैं, वहाँ से अपनी गति एवं समय सुविधा के अनुसार कार्य कर सकेंगे। बैठकें टेली/वीडियो कान्फ्रेंसिंग के द्वारा हो सकती हैं।

(घ) ग्राहक से ग्राहक कॉमर्स- यहाँ व्यवसाय की उत्पत्ति ग्राहकों से होती है और उसका अंतिम गंतव्य भी ग्राहक ही है, इसीलिए इसे ग्राहक से ग्राहक नाम दिया गया है। इस तरह का वाणिज्य उस प्रकार की वस्तुओं के लेन-देनों के लिए अधिक उचित है जिनके लिए कोई स्थायी बाजार तंत्र नहीं होता है। उदाहरणस्वरूप– किताबों अथवा कप\ड़ों की बिक्री नकद अथवा वस्तु विनिमय आधार पर की जा सकती है। इंटरनेट की वृहद् स्थान उपलब्धता एक व्यक्ति को वैश्विक स्तर पर भावी खरीददार ढूँ\ढ़ने की अनुमति प्रदान करता है। इसके अलावा, ई-कॉमर्स तकनीक ऐसे लेने-देन को बाजार प्रणाली सुरक्षा उपलब्ध कराती है जोकि अन्यथा लुप्त हो गई होती यदि क्रेताओं और विक्रेताओं को आमने-सामने के लेन-देनों में अनामतापूर्वक संपर्क स्थापित करना होता। इसका एक श्रेष्ठ अत्युत्तम उदाहरण ई-वे में मिलता है, जहाँ उपभोक्ता अपनी वस्तुएँ एवं सेवाएँ दूसरे उपभोक्ता को बेचते हैं। इस गतिविधि को अधिक सुरक्षित एवं मजबूत बनाने के लिए अनेक तकनीकों का उद्भव हुआ है ई-वे सभी

ई-कॉमर्स ने लोचदार उत्पादन और व्यापक स्तर पर उपभोक्तानुरूप उत्पादन संभव बनाया है

उपभोक्तानुरूप उत्पाद पारंपरिक रूप से दस्तकार को आदेश देकर बनवाए जाते थे। परिणामतः यह महँगे होते थे और सुपुर्दगी में भी अधिक समय लेते थे। औद्योगिक क्राँति से आशय यह है कि संस्थाएँ व्यापक स्तर पर उत्पादन कर सकती थीं और वृहद् पैमाने पर उत्पादन के लाभ के कारण वे एक ही तरह के उत्पाद को कम कीमत पर उत्पादित कर सकती थीं। वर्तमान में भी संस्थाएँ उपभोक्तानुरूप उत्पाद एवं सेवाएँ कम लागत पर प्रस्तुत कर सकती हैं; इसके लिए हमें ई-कॉमर्स को धन्यवाद देना चाहिए। नीचे इसके कुछ उदाहरण दिए गए हैं–

401(k) फोरम आधारित (अमेरिका)	उपभोक्तानुरूप शैक्षणिक विषयवस्तु एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार पर निवेश सलाह।
एक्यूमिन कॉर्पोरेशन (अमेरिका)	इंटरनेट के प्रयोग से ग्राहकों की आवश्यकतानुरूप विटामिन की गोलियाँ निर्मित कीं। ग्राहक जीवन शैली एवं स्वास्थ्य संबंधी सूचनाएँ प्रश्न सूची में भरना।
डेल (अमेरिका)	अपने कंप्यूटर का निर्माण स्वयं कीजिए।
ग्रीन माउंटेन एनर्जी	विद्युत पूर्तिकर्त्ता (परजेनरेटर नहीं) । ग्राहक अपने लिए विद्युत साधन चुन सकते रिसोर्से.ज (अमेरिका) हैं। उदाहरणस्वरूप- जल, सौर इत्यादि।
लिवाइस जीन्स	सिलीसिलाई जीन्स सेवा। वेबसाइट सेवा ग्राहकों की शिकायत के बाद स्थगित (अमेरिका) कर दी गई। अब सेवाएँ फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती हैं। यह 49,500 विभिन्न आकार, 30 तरह की शैलियाँ और तकरीबन 15 लाख विकल्प सिर्फ 55 डॉलर की लागत पर उपलब्ध करवाती है। आदेश इंटरनेट द्वारा प्रेषित किए जाते हैं और जीन्स का उत्पादन एवं सुपुर्दगी 2-3 हफ्ते में की जाती है।
एन.वी. नट्सबेडरिफ़ पूर्तिकर्त्ता वेस्टलैंड डाइऑक्साइड (न्यूजीलैंड) नियंत्रित रखने	वैस्टलैंड, नीदरलैंड़ कई ट्यूलिप उगाने वालों को प्राकृतिक गैस की है। ग्रीनहाउस में कंप्यूटर, ग्रीनहाउस स्वामियों को तापमान, कार्बन उत्सर्जन, आर्द्रता, रोशनी एवं अन्य कारकों को अधिलागत रूप में में सहायक होते हैं।
नेशनल बाइसिकल (जापान)	ऑर्डर लेने के 2/3 दिनों के भीतर आवश्यकतानुसार साइकिल निर्माण।
साइमन एंड शस्टर आदेश (अमेरिका)	अध्यापक, पाठ्यक्रम एवं छात्र की आवश्यकता के अनुरूप पुस्तकों का दे सकते हैं। जेरॉक्स ड़ॉक्यूटेक प्रिंटर्स आज 1,25,000 से अधिक उपभोक्तानुरूप पुस्तकों का सृजन करते हैं।
स्काईवे (अमेरिका)	संपूर्ण आदेश सुपुर्दगी प्रदान करने वाली एक वितरण कंपनी है। यातायात के विभिन्न स्रोतों एवं माध्यमों से एकत्रित माल को रास्ते में ही इकट्ठा कर एक आदेश के रूप में एक ही कागजी कार्यवाही के सेट के द्वारा स्टोर अथवा ग्राहक को सुपुर्द कर दिया जाता है।
स्मिथलाइन बेखम (अमेरिका)	ग्राहकों के लिए उनके आवश्यकतानुरूप धूम्रपान रोकने वाले प्रोग्राम बनाती है। कॉल सेंटर प्रश्नसूची के प्रयोग द्वारा वैयक्तिक संचार की एक शृंखला का सृजन।

स्रोतः Adapted from http://www.managingchange.com

विक्रेताओं एवं क्रेताओं को एक-दूसरे को आँकने की अनुमति देता है। इस प्रकार भावी खरीददार यह देख सकते हैं कि एक विशेष विक्रेता ने 2,000 से अधिक ग्राहकों को बिक्री की है और उन सभी ने विक्रेता को अत्युत्तम आँका है। एक अन्य उदाहरण में भावी खरीददार देख सकता है कि विक्रेता ने इससे पहले सिर्फ चार बार बिक्री की है और सभी चारों ने विक्रेता को 'दयनीय' आँका है। इस तरह की सूचनाएँ सहायक होती हैं। अन्य तकनीक 'भुगतान मध्यस्थ' है जिसका उद्‌भव ग्राहक से ग्राहक गतिविधियों के सहयोग के लिए हुआ है। पे-पल इस तरह का एक अच्छा उदाहरण है।

किसी अनजान, अविश्वसनीय विक्रेता से सामान सीधे खरीदने के बजाय, क्रेता धनराशि सीधे पे-पल के पास भेज सकता है वहाँ से पेल विक्रेता को सूचित कर देता है कि वह धनराशि तब तक अपने पास रखेगा जब तक कि वस्तुओं कलदान न हो जाए और क्रेता द्वारा स्वीकृत न कर ली जाएँ। पारस्परिक संपर्क वाले कॉमर्स का एक महत्त्वपूर्ण ग्राहक से ग्राहक क्षेत्र उपभोक्ता मंच और दबाव समूहों का गठन भी हो सकता है। आपने याहू समूहों के बारे में तो सुना ही होगा। जिस प्रकार एक वाहन स्वामी यातायात जाम में फँसने पर अन्य लोगों को रेडियो पर उस स्थान की यातायात स्थिति संबंधित संदेश देकर सावधान कर सकता है (आपने एफ.एम. रेडियो पर यातायात सूचनाएँ जरूर सुनी होंगी), उसी प्रकार एक भुक्तभोगी ग्राहक एक उत्पाद/सेवा विक्रेता से संबधित अनुभवों को अन्य लोगों के साथ बाँट सकता है और सिर्फ एक संदेश लिखकर और इसे पूरे समूह की जानकारी में लाकर अन्य लोगों को भी सावधान कर सकता है और यह नितांत संभव है कि समूह दबाव के चलते समस्या का समाधान भी निकल आए।

ई-व्यवसाय से संबंधित उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि ई-व्यवसाय प्रयोज्यताएँ विभिन्न एवं अनेक हैं।

ई-व्यवसाय बनाम पारंपरिक व्यवसाय

अब तक आप यह विचार बना चुके होंगे कि किस प्रकार ई-सामर्थ्य ने व्यवसाय करने के तरीकों में मूलभूत परिवर्तन कर दिया है। सारणी 5.1 पारंपरिक व्यवसाय और ई-व्यवसाय के लक्षणों की तुलना को दर्शाती है। सारणी 5.1 में सूचीबद्ध ई-व्यवसाय के लक्षणों का तुलनात्मक आकलन ई-व्यवसाय के विशिष्ट लाभों एवं सीमाओं को इंगित करता है जिनका विवेचन हम नीचे करेंगे।

5.3 ई-व्यवसाय के लाभ

(क) निर्माण में आसानी एवं निम्न निवेश आवश्यकताएँ- एक उद्‌योग की स्थापना के लिए प्रक्रियागत् आवश्यकताओं के विपरीत ई-व्यवसाय को प्रारंभ करना आसान है। इंटरनेट तकनीक का लाभ छोटे अथवा बड़े व्यवसायों को समान रूप से पहुँचता है। यहाँ तक कि इंटरनेट इस लोकप्रिय उक्ति के लिए भी उत्तरदायी है कि नेटवर्क से बंधे व्यक्ति एवं फर्में, नेटवर्थ (पूँजी) व्यक्तियों से ज्यादा कुशल होते हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि आपके पास निवेश (पूँजी) के लिए कुछ अधिक नहीं है

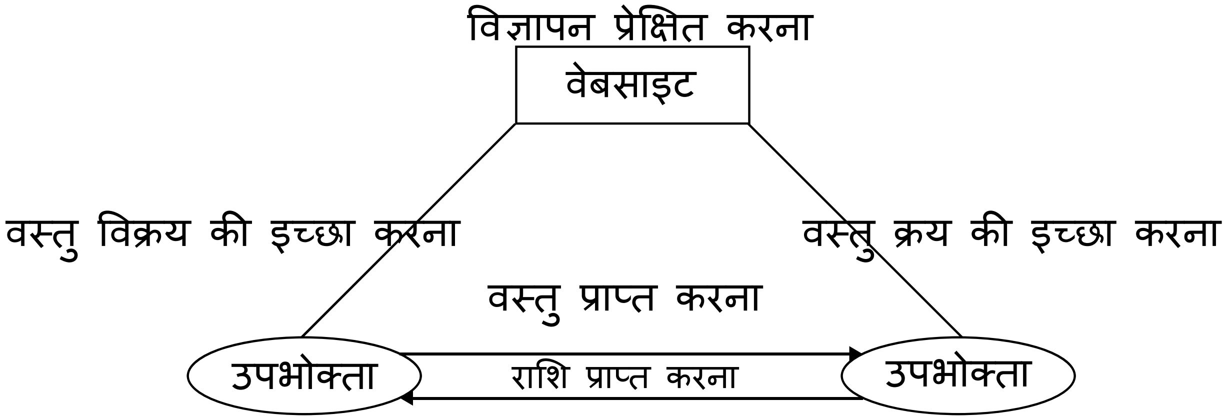

चित्र 5.3 उपभोक्ता से उपभोक्ता ई-कॉमर्स

कुछ ई-व्यवसाय अनुप्रयोग

ई-अधिप्राप्ति– इसमें व्यावसायिक फर्मों के मध्य इंटरनेट आधारित विक्रय लेन-देन संबद्ध होते हैं, जिसमें विपरीत नीलामी जोकि अकेले क्रेता व्यवसायी और अनेक विक्रेताओं के मध्य ऑनलाइन व्यापार को सुगम बनाती है और अंकीय बाजार स्थलों (डिजिटल मार्केट प्लेस), जोकि क्रेताओं एवं विक्रेताओं के मध्य ऑनलाइन व्यापार को सुगम बनाते हैं, भी सम्मिलित होते हैं।

ई-बोली/ई-नीलामी– बहुत-सी खरीददारी वेबसाइटों पर अपने आप मूल्य प्रस्तुत करने की सुविधा होती है ताकि आप वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए बोली लगा सकें (जैसे कि एयरलाइन टिकटें)। इसमें ई-निविदाएँ भी शामिल होती हैं, जिसमें कोई भी अपना निविदा मूल्य ऑनलाइन प्रस्तुत कर सकता है।

ई-संचार/ई-संवर्द्धन– इसमें उन ऑनलाइन सूची पत्रकों का प्रकाशन जोकि वस्तुओं की छवि प्रदर्शित करते हैं, बैनरों के द्वारा प्रचार, मत सर्वेक्षण और ग्राहक सर्वेक्षण इत्यादि शामिल होते हैं। सभाएँ एवं सम्मेलन भी वीडियो कान्फ्रेसिंग द्वारा किए जा सकते हैं।

ई-सुपुर्दगी– इसमें कंप्यूटर सॉफ्टवेयर, फोटो, वीडियो, पुस्तकें (ई-पुस्तकें) और पत्रिकाएँ (ई-पत्रिकाएँ) और अन्य मल्टीमीडिया सामग्री की कंप्यूटर प्रयोगकर्त्ता को इलेक्ट्रॉनिक सुपुर्दगी भी सम्मिलित होती है।

इसमें इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से कानूनी, लेखांकन, वित्त एवं अन्य सलाहकारी सेवाएँ भी सम्मिलित होती हैं। इंटरनेट फर्मों को, सूचना प्रौद्योगिकीजन्य सूचना सेवाओं को, जिनका विवेचन हम व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण में करेंगे, इनके मेजबान से इन्हें बाह्यस्रोतीकरण करवाने के अवसर भी उपलब्ध कराता है। अब आप हवाई जहाज और रेल टिकट भी अपने घर पर मुद्रित कर सकते हैं।

ई-व्यापार- इसमें प्रतिभूति व्यापार, अंशों एवं अन्य वित्तीय प्रपत्रों का ऑनलाइन क्रय एवं विक्रय सम्मिलित होता है। उदाहरण के लिए, शेअरखानडॉटकॉम भारत की एक विशालतम ऑनलाइन व्यापार फर्म है।

सारणी 5.1 पारंपरिक व्यवसाय एवं ई-व्यवसाय में अंतर

अंतर का आधार	पारंपरिक व्यवसाय	ई-व्यवसाय
निर्माण में आसानी	मुश्किल	सरल
भौतिक उपस्थिति	आवश्यक है	आवश्यक नहीं
अवस्थिति संबंधी आवश्यकताएँ	कच्चे माल के स्रोत अथवा उत्पाद के लिए बाजार की संभाव्यता	कुछ नहीं
प्रचालन लागत	अधिप्राप्ति और संग्रहण, उत्पाद, विपणन और वितरण सुविधाओं में निवेश से संबंधित स्थायी दायित्वों के कारण उच्च लागत	निम्न लागत क्योंकि भौतिक सुविधाओं की आवश्यकता ही नहीं होती
पूतिकर्ताओं एवं ग्राहकों से संपर्क की प्रकृति	परोक्ष मध्यस्थों के द्वारा	प्रत्यक्ष
आंतरिक संचार की प्रकृति	लंबी अवधि	तुरंत/ तत्काल
ग्राहकों/आंतरिक आवश्यकताओं को पूरा करने में लगने वाला प्रत्युतर समय	सोपान-उच्च स्तरीय प्रबंध से मध्य स्तरीय प्रबंध, निम्न स्तरीय प्रबंध और प्रचालक	बिना सोपान के सीधा उर्ध्वाधर समांतर और विकर्ण संचार को अनुमति देना
संगठनात्मक ढाँचे का आकार	आदेश की शृंखला अथवा सोपान के कारण- ऊर्ध्वाधर/लंबा	सीधे आदेश एवं संचार के कारण समस्तर/समतल
व्यावसायिक प्रक्रियाएँ एवं चक्र की लंबाई	अनुक्रमिक पूर्वता-क्रमानुसार संबंध, अर्थात् क्रय-उत्पादन/प्रचालन-विपणन-विक्रय इसीलिए व्यवसाय प्रक्रिया चक्र लंबा होता है	विभिन्न प्रक्रियाओं की सहकालिकता। व्यवसाय प्रक्रिया चक्र इसीलिए छोटा होता है।
अंतर वैयक्तिक स्पर्श के अवसर	बहुत अधिक	कम
उत्पादों के भौतिक पूर्व-प्रतिचयन के अवसर	बहुत अधिक	कम। हालाँकि अंकीय उत्पादों के लिए अत्यधिक अवसर/ आप संगीत, पुस्तकों, पत्रिकाओं सॉफ्टवेयर, वीडियो इत्यादि पूर्व-प्रतिचयन कर सकते हैं।

वैश्वीकरण में आसानी	कम	बहुत अधिक क्योंकि साइबर क्षेत्र सही में सीमा विहीन है।
सरकारी संरक्षण	कम हो रहा है	बहुत अधिक, क्योंकि सूचना तकनीक क्षेत्र सरकार की उच्च प्राथमिकताओं में से है
मानव पूँजी की प्रकृति	अर्ध-कुशल। यहाँ तक कि अकुशल मानवश्रम की आवश्यकता होती है	तकनीकी एवं पेशवर रूप से योग्य कर्मियों की आवश्यकता होती है
लेन-देन जोखिम	आमने-सामने संपर्क एवं लेन-देन होने के कारण कम जोखिम	अधिक दूरी एवं पक्षों की अनामता के कारण उच्च जोखिम

परंतु संपर्क सूत्र (नेटवर्क) है तो आप बहुत अच्छा व्यवसाय कर सकते हैं।

एक ऐसे रेस्तरां की कल्पना कीजिए जिसमें किसी भौतिक स्थान की आवश्यकता नहीं है। हाँ, आपकी एक ऑनलाइन व्यंजन सूची हो सकती है जोकि संसार भर के उन रेस्तराओं के सर्वोत्तम पकवान प्रस्तुत करती है जिनसे आप नेटवर्क द्वारा जु\ड़े हों। ग्राहक आपकी वेबसाइट में जाकर व्यंजन सूची निश्चित करके क्रयादेश देते हैं जोकि आपसे होते हुए उस रेस्तरां तक पहुँच जाता है जो उस ग्राहक के न.जदीक स्थित होता है; भोजन की सुपुर्दगी हो जाती है और भुगतान की प्राप्ति रेस्तरां कर्मचारी द्वारा कर ली जाती है और आपको ग्राहक प्रदानकर्त्ता के रूप में देय राशि किसी इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन प्रणाली के द्वारा आपके खाते में जमा कर दी जाती है।

(ख) सुविधापूर्ण– इंटरनेट 24 घंटे × सप्ताह के 7 दिन × वर्ष के 365 दिन व्यवसाय की सुविधा प्रस्तुत करता है जिसके कारण ही पिछले एक उदाहरण में आधी रात को भी रीता और रेखा खरीददारी कर सकीं थीं। इस तरह की लोच संगठन के कर्मचारियों को भी उपलब्ध होती है जिसके द्वारा वह जब चाहे और जहाँ चाहे अपने कार्य कर सकते हैं। हाँ, ई-व्यवसाय सही मायनों में इलेक्ट्रॉनिकी द्वारा समर्थित एवं संबंधित व्यवसाय है जो किसी भी वस्तु की किसी भी समय और कहीं भी सुलभता के लाभ प्रस्तावित करता है।

(ग) गति- जैसे कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, क्रय एवं विक्रय में बहुत-सी सूचनाओं का विनिमय शामिल होता है जोकि इंटरनेट द्वारा सिर्फ 'माउस' के क्लिक भर करने से हो जाती है। यह सुविधा सूचना उत्पादों, जैसे– सॉफ्टवेयर, फिल्मों, ई-पुस्तकों एवं पत्रिकाओं जिनकी ऑनलाइन सुपुर्दगी की जा सकती है, के संदर्भ में अधिक आकर्षक हो जाती है। चक्र समय, अर्थात् माँग की उत्पत्ति से इसकी पूर्ति तक के चक्र को पूरा होने में लगे समय में, व्यवसाय प्रक्रियाओं के अनुक्रमिक से समानांतर अथवा सहकालिक रूपांतरण होने पर अभूतपूर्व कमी हो जाती है। आप जानते हैं कि अंकीयकरण काल में मुद्रा को प्रकाश की गति युक्त ध\ड़कन के रूप में परिभाषित किया गया है। इसके लिए, ई-कॉमर्स की कोष हस्तांतरण

तकनीक का आभारी होना चाहिए।

(घ) वैश्विक पहुँच/प्रवेश- इंटरनेट सही अर्थों में सीमाविहीन है। एक तरफ यह विक्रेता को बाजार की वैश्विक पहुँच प्रदान करता है तो दूसरी तरफ यह क्रेता को संसार के किसी भी हिस्से से उत्पाद चयन करने की स्वतंत्रता वहन करता है। यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि इंटरनेट की अनुपस्थिति में वैश्वीकरण का कार्यक्षेत्र एवं गति काफी हद तक प्रतिबंधित हो जाएगी।

(ङ) कागजरहित समाज की ओर संचलन- इंटरनेट के प्रयोग ने काफी हद तक कागजी कार्यवाही और परिचर 'लालफीताशाही' पर निर्भरता को कम कर दिया है। आप जानते हैं कि मारुति उद्योग बहुत बड़ी मात्रा में अपने कच्चे माल और कलपुर्जों की पूर्ति का स्रोतीकरण बिना किसी कागजी कार्यवाही के करता है। यहाँ तक कि सरकारी विभाग एवं नियामक प्राधिकरण भी इस दिशा में तेजी से संचलन कर रहे हैं जिसके अंतर्गत वह विवरणियों एवं प्रतिवेदनों को इलेक्ट्रॉनिक रूप से फाइल करने की अनुमति प्रदान करते हैं। ई-कॉमर्स औजार उन प्रशासनिक सुधारों को भी प्रभावित कर रहे हैं जिनका उद्देश्य अनुमति, अनुमोदन और लाइसेंस प्रदान करने की प्रक्रिया को गति प्रदान करना है। इस संदर्भ में सूचना तकनीक अधिनियम, 2000 के प्रावधान उल्लेखनीय है।

5.4 ई-व्यवसाय की सीमाएँ

ई-व्यवसाय इतना भी लुभावना नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक पद्धति से व्यवसाय करने की कई सीमाएँ हैं। यह उचित होगा कि इन सीमाओं के प्रति भी सचेत रहा जाए।

(क) अल्प मानवीय स्पर्श- हालाँकि ई-व्यवसाय अत्याधुनिक हो सकता है परंतु इसमें अंतरव्यक्ति पारस्परिक संपर्क की गर्माहट का अभाव होता है, इस सीमा तक यह उन उत्पाद श्रेणियों जिनमें उच्च वैयक्तिक स्पर्श की आवश्यकता होती हैं, जैसे– वस्त्र, प्रसाधन इत्यादि के व्यवसाय के लिए अपेक्षाकृत कम उपयुक्त विधि है।

(ख) आदेश प्राप्ति/प्रदान और आदेश पूरा करने की गति के मध्य असमरूपता- सूचना माउस को क्लिक करने मात्र से ही प्रवाहित हो सकती है, परंतु वस्तुओं की भौतिक सुपुर्दगी में समय लगता ही है।

यह असमरूपता ग्राहक के सब्र पर भारी पड़ सकती है। कई बार तकनीकी कारणों से वेबसाइट खुलने में असामान्य रूप से अधिक समय ले सकती है। यह बात भी प्रयोगकर्त्ता को हतोत्साहित कर सकती है।

(ग) ई-व्यवसाय के पक्षों में तकनीकी क्षमता और सामर्थ्य की आवश्यकता- तीन पारंपरिक विधाओं (पठन, लेखन और अंकगणित) के अलावा ई-व्यवसाय में सभी पक्षों की कंप्यूटर के संसार से उच्च कोटि के परिचय की आवश्यकता होती है और यही आवश्यकता समाज में विभाजन, जिसे कि अंकीय-विभाजन कहा जाता है, के लिए उत्तरदायी होती है, जिसमें समाज का अंकीय तकनीक से परिचितता और अपरिचितता के आधार पर विभाजन हो जाता है।

(घ) पक्षों की अनामता और उन्हें ढूँढ़ पाने की अक्षमता के कारण जोखिम में वृद्धि- इंटरनेट लेन-देन साइबर व्यक्तियों के मध्य होते हैं, ऐसे में पक्षों की पहचान सुनिश्चित करना

मुश्किल हो जाता है। यहाँ तक कि कोई यह भी नहीं जान सकता कि पक्ष किस स्थान से प्रचालन कर रहे हैं। यह जोखिम भरा होता है, इसलिए इंटरनेट पर लेन-देन भी जोखिम भरा होता हैं। इसमें अप्रतिरूपण (किसी अन्य का आपके नाम पर लेन-देन करना) और गुप्त सूचनाओं के बाहर निकलने, जैसे– क्रेडिट कार्ड विवरण जैसे अतिरिक्त खतरे भी हो सकते हैं। इसके बाद वायरस और हैकिंग की समस्या भी हो सकती है जिनके बारे में आपने अवश्य सुना होगा? यदि नहीं तो इनका विवेचन हम ऑनलाइन व्यवसाय के सुरक्षा और बचाव सरोकारों का विवेचन करते समय करेंगे।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम-2000 कागज रहित समाज के लिए राह तैयार कर रहा है

नीचे सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम-2000 के कुछ प्रावधान दिए गए हैं, जोकि व्यवसाय जगत और सरकारी क्षेत्र में कागजरहित लेन-देनों को संभव बनाते हैं–

इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों को कानूनी मान्यता (खंड-4)ः जहाँ कोई कानून यह व्यवस्था देता है कि सूचना अथवा कोई भी अन्य सामग्री लिखित अथवा टाइप की हुई अथवा मुद्रित रूप में होनी चाहिए, तब ऐसा होते हुए भी उस कानून में समाविष्ट ऐसी कोई भी आवश्यकता संतुष्ट मानी जाएगी। यदि ऐसी सूचना अथवा विषय सामग्री इलेक्ट्रॉनिक रूप में प्रस्तुत की जाती है अथवा उपलब्ध कराई जाती है और बाद में संदर्भ हेतु उपयोग के लिए उपलब्ध रहती है।

अंकीय (डिजिटल) हस्ताक्षरों को कानूनी मान्यता (खंड-5)ः जहाँ कोई कानून यह व्यवस्था देता है कि सूचना अथवा किसी भी अन्य सामग्री की प्रमाणिकता हस्ताक्षर करने से सिद्ध होगी अथवा कोई प्रपत्र हस्ताक्षरित होना चाहिए अथवा उस पर किसी व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिए, इसलिए ऐसा होते हुए भी उस कानून में समाविष्ट ऐसी कोई भी आवश्यकता संतुष्ट मानी जाएगी यदि ऐसी सूचना अथवा विषय सामग्री अंकीय हस्ताक्षर द्वारा प्रमाणित हो तथा यह हस्ताक्षर उस तरीके से किए गए हो जिस प्रकार से केंद्र सरकार ने निर्धारित किया हो।

इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों और अंकीय हस्ताक्षरों का सरकार एवं दूसरी एजेंसियों द्वारा उपयोग (खंड 6.1)ः जहाँ कोई कानून, किसी फार्म, प्रार्थनापत्र अथवा किसी अन्य प्रपत्र को किसी कार्यालय, प्राधिकरण, किसी सरकारी स्वामित्व अथवा नियंत्रण वाली एजेंसी में विशेष प्रकार से जमा कराने में, एक विशेष प्रकार से लाइसेंस, परमिट, अनुशस्ति अथवा किसी भी नाम से अनुमोदन जारी करने अथवा स्वीकृति देने में, एक विशेष प्रकार से धन की प्राप्ति एवं भुगतान करने में, व्यवस्था देता है तो ऐसा होते हुए भी उस समय प्रचलित किसी अन्य कानून में समाविष्ट ऐसी आवश्यकताएँ संतुष्ट मानी जाएँगी, यदि वह जमा कराने, स्वीकृति जारी करने, प्राप्ति अथवा भुगतान, जैसा भी मामला हो, में उस इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से प्रभावी होगा जैसा कि सरकार द्वारा निर्धारित है।

इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों का प्रतिधारण (खंड 7.1)ः जहाँ कानून यह व्यवस्था देता है कि प्रपत्रों, अभिलेखों अथवा सूचनाओं को एक विशिष्ट अवधि तक संभालकर रखा जाए, तब वह आवश्यकता संतुष्ट मानी जाएगी यदि वह प्रपत्र, अभिलेख अथवा सूचना इलेक्ट्रॉनिक रूप में संभाल कर रखे गए हों।

स्रोतः सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000।

(ङ) जन प्रतिरोध- नई तकनीक के साथ समायोजन की प्रक्रिया एवं कार्य करने के नए तरीके तनाव एवं असुरक्षा की भावना पैदा करते हैं। इसके परिणामस्वरूप लोग संस्था के ई-व्यवसाय के प्रवेश की योजना का विरोध कर सकते हैं।

(च) नैतिक पतन- "तो, तुम नौकरी छोड़ने की योजना बना रही हो, अच्छा यह होगा कि तुम आज ही नौकरी छोड़ दो", मानव संसाधन प्रबंधक ने उसे उस ई-मेल की प्रति दिखाते हुए कहा जो उसने अपने मित्र को लिखी थी। सबीना अचंभित और सन्न रह गई कि किस प्रकार उसके बॉस को उसके ई-मेल खाते का पता चला? आजकल कंपनियाँ आपके द्वारा प्रयोग की गई कंप्यूटर फाइलों, आपके ई-मेल खातों, वेबसाइट जिन पर आप जाते हैं और ऐसी अन्य जानकारियों के लिए एक विशेष सॉफ्टवेयर (जैसे इलेक्ट्रॉनिक आई) का प्रयोग करते हैं। क्या यह नैतिक है?

सीमाओं के बावजूद भी ई-कॉमर्स एक साधन है

यह कहा जा सकता है कि ई-व्यवसाय की उपरोक्त विवेचित अधिकतर सीमाएँ अब उबरने की प्रक्रिया में हैं। निम्न स्पर्श की समस्या से उबरने के लिए वेबसाइट अब ज्यादा से ज्यादा जीवंत हो रही हैं। संचार तकनीक, इंटरनेट के द्वारा संचार की गति एवं गुणवत्ता में लगातार वृद्धि कर रही है। अंकीय विभाजन से उबरने के लिए लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। उदाहरणस्वरूप ऐसी व्यूह रचनाओं की ओर उन्मुख होना, जैसे कि भारत के गाँवों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी संस्थाओं, गैर सरकारी संस्थाओं और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के सम्मिलित प्रयासों से सामुदायिक टेली केंद्रों की स्थापना। देश के कोने-कोने में ई-कॉमर्स के प्रसार के लिए भारत ने ऐसी 150 परियोजनाएँ हाथ में ली हैं।

उपरोक्त विवेचन की दृष्टि से यह स्पष्ट है कि ई-व्यवसाय यहाँ बना रहेगा और व्यवसायों, शासन और अर्थव्यवस्थाओं को नया आकार प्रदान करेगा। इसलिए, यह आवश्यक है कि हम अपने आपको इस बात से परिचित बनाएँ कि ई-व्यवसाय किस प्रकार किया जाता है।

5.5 ऑनलाइन लेन-देन

प्रचालन के आधार पर, कोई भी ऑनलाइन लेन-देनों में तीन अवस्थाओं की कल्पना कर सकता है। पहली, क्रय-पूर्व/विक्रय अवस्था जिसमें प्रचार एवं सूचना जानकारी शामिल हैं; दूसरी, क्रय/विक्रय अवस्था जिसमें मूल्य मोलभाव, क्रय/विक्रय लेन-देन को अंतिम रूप देना और भुगतान इत्यादि शामिल होते हैं; और तीसरी, सुपुर्दगी अवस्था है। सूचनाओं का आदान-प्रदान पारंपरिक व्यवसाय पद्धति में भी होता है परंतु यह समय एवं लागत की गंभीर बाधाओं के साथ होता है। आमने-सामने संवाद के लिए, उदाहरणस्वरूप पारंपरिक व्यवसाय पद्धति में एक व्यक्ति को दूसरे पक्ष से बात करने के लिए यात्रा करनी पड़ेगी जिसके लिए यात्रा प्रयत्न, अधिक समय और लागत की जरूरत होती है। टेलीफोन द्वारा सूचनाओं का आदान-प्रदान भी कष्टकारी होता है।

सूचना के मौखिक आदान-प्रदान के लिए दोनों पक्षों की सहकालिक उपस्थिति आवश्यक होती है। सूचना का प्रसारण डाक द्वारा भी हो सकता है। परंतु यह भी काफी समय लेने वाली एवं मंहगी प्रक्रिया है। इंटरनेट ऐसे चौथे माध्यम के रूप में आता है जोकि उपरोक्त उल्लेखित लगभग सभी समस्याओं से मुक्त है। सूचना गहन उत्पादों एवं सेवाओं के संदर्भ में सुपुर्दगी ऑनलाइन भी हो सकती है जैसे कि सॉफ्टवेयर और संगीत इत्यादि। यहाँ, जिसे उल्लेखित किया गया है वह एक ग्राहक विचारबिंदु से ऑनलाइन व्यापार प्रक्रिया है। हम नीचे दिए गए अनुच्छेद में विक्रेता के दृष्टिकोण से ई-व्यवसाय के लिए संसाधन आवश्यकताओं का विवेचन करेंगे। तो क्या आप अपनी खरीददारी सूची के साथ तैयार हैं अथवा आप शॉपिंग मॉल में घूमते समय अपनी सहज प्रवृत्ति पर निर्भर रहेंगे? आइए, रीता और रेखा का अनुसरण करें जो इंडियाटाइम्सडॉट कॉम का अवलोकन कर रही हैं।

(क) पंजीकरण- ऑनलाइन खरीददारी से पूर्व व्यक्ति को एक पंजीकरण फार्म भरकर ऑनलाइन विक्रेता के पास पंजीकरण करवाना पड़ता है। पंजीकरण का अर्थ है कि आपका ऑनलाइन विक्रेता के पास एक खाता है। संकेत शब्द (पासवर्ड) आपके खाते के उपखंडों से संबंधित अन्य विभिन्न विवरणों में से एक है जिन्हें आपको भरना पड़ता है, और 'शॉपिंग कार्ट' आपके संकेत शब्द के सुरक्षक होते हैं। अन्यथा कोई भी आपके नाम का प्रयोग कर आपके नाम पर खरीददारी कर सकता है। यह स्थिति आपको संकट में डाल सकती है।

(ख) आदेश प्रेषित करना- 'शॉपिंग कार्ट' (खरीददारी गाड़ी/ट्रॉली) में आप किसी भी वस्तु को चुन सकते हैं और छोड़ भी सकते हैं। 'शॉपिंग कार्ट' उन सबका ऑनलाइन अभिलेख होता है जिनको आपने ऑनलाइन भंडार (स्टोर) पर ढूढ़ते समय चुना होगा। जिस प्रकार वास्तविक भंडार (स्टोर) में आप अपनी गाड़ी/ट्रॉली में वस्तुएँ रख सकते हैं और फिर उससे निकालकर ले जा सकते हैं। ठीक ऐसा ही आप ऑनलाइन खरीददारी करते समय कर सकते हैं। यह सुनिश्चित करने के बाद कि आप क्या खरीदना चाहते हैं, आप बाहर निकलकर अपने भुगतान विकल्पों को चुन सकते हैं।

(ग) भुगतान तंत्र– ऑनलाइन खरीददारी के माध्यम से किए गए क्रयों का भुगतान अनेक विधियों से किया जा सकता है–

- **सुपुर्दगी के समय नकद-** जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, ऑनलाइन आदेशित वस्तुओं के लिए नकद में भुगतान वस्तुओं की भौतिक सुपुर्दगी के समय किया जाता है।
- **चेक-** अन्य विकल्प के रूप में ऑनलाइन विक्रेता ग्राहक के पास से चेक उठाने का बंदोबस्त कर सकता है। वस्तु की सुपुर्दगी चेक की वसूली के बाद की जा सकती है।
-

- **नेट बैंकिंग हस्तांतरण-** आधुनिक बैंक अपने ग्राहकों को इंटरनेट पर कोषों के इलेक्ट्रॉनिक हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करते हैं जिसमें आई.एम.पी.एस. (IMPS), एन.ई.एफ.टी. (NEFT) और आर.टी.जी.एस. (RTGS) सम्मिलित हैं। इस स्थिति में क्रेता लेन-देन की एक निश्चित मूल्य राशि ऑनलाइन विक्रेता के खाते में हस्तांतरित कर सकता है, जोकि इसके बाद वस्तुओं की सुपुर्दगी का प्रबंध करता है।
- **क्रेडिट और डेबिट कार्ड-** 'प्लास्टिक मुद्रा' के रूप में विख्यात ये कार्ड ऑनलाइन लेन-देनों में सर्वाधिक प्रयुक्त माध्यम हैं। लगभग 95 प्रतिशत ऑनलाइन लेन-देन इनके द्वारा ही कार्यान्वित होते हैं। क्रेडिट कार्ड अपने धारक को उधार खरीद की सुविधा प्रदान करते हैं, कार्ड धारक पर बकाया राशि कार्ड जारीकर्त्ता बैंक अपने ऊपर ले लेता है और बाद में लेन-देन में प्रयुक्त इस राशि को विक्रेता के 'जमा' में हस्तांतरित कर देता है। क्रेता का खाता भी इस राशि से 'नाम' कर दिया जाता है जोकि अक्सर इसे किश्तों में एवं अपनी सुविधानुसार जमा कराने की स्वतंत्रता का आनंद उठाता है। डेबिट कार्ड धारक को उस सीमा तक खरीददारी करने की अनुमति प्रदान करता है, जिस राशि तक उसके खाते में धनराशि उपलब्ध होती है। जिस क्षण कोई लेन-देन किया जाता है, भुगतान के लिए बकाया राशि इलेक्ट्रॉनिक तरीके से उसके कार्ड से घट जाती है।

  क्रेडिट कार्ड को भुगतान के तरीके के रूप में स्वीकारने के लिए, विक्रेता को पहले उसके ग्राहकों के क्रेडिट कार्ड संबंधित सूचना प्राप्त करने के सुरक्षित साधनों की आवश्यकता होती है। क्रेडिट कार्ड द्वारा भुगतान का प्रसंस्करण या तो हस्तचल या फिर ऑनलाइन प्राधिकृत प्रणाली द्वारा किया जा सकता है, जैसे कि एस.एस.एल. प्रमाणपत्र।
- **अंकीय (डिजिटल) नकद-** यह इलेक्ट्रॉनिक मुद्रा का एक रूप है जिसका अस्तित्व केवल साइबर स्थान (स्पेस) में ही होता है। इस तरह की मुद्रा के कोई वास्तविक भौतिक गुण नहीं होते हैं, परंतु यह वास्तविक मुद्रा को इलेक्ट्रॉनिक प्रारूप में प्रस्तुत करने में सक्षम होती है। सबसे पहले आपको बैंक में इस राशि का भुगतान (चेक, ड्रॉफ्ट, इत्यादि द्वारा) करना होगा, जोकि उस अंकीय नकद के समतुल्य होगी, जिसे आप अपने पक्ष में जारी करवाना चाहते हों। इसके बाद कि ई-नकद में लेन-देन करने वाला बैंक आपको एक विशेष सॉफ्टवेयर भेजेगा (जिसे आप अपनी कंप्यूटर हार्ड डिस्क पर उतार सकते हैं) जोकि आपको, बैंक में स्थित अपने खाते से अंकीय नकद निकासी की अनुमति प्रदान करेगा। तब आप अंकीय

कोषों का प्रयोग वेबसाइट पर क्रय करने में कर सकते हैं। इस तरह की भुगतान प्रणाली द्वारा इंटरनेट पर क्रेडिट कार्ड संख्याओं के प्रयोग संबंधी सुरक्षा समस्याओं के दूर करने की आशा की जा सकती है।

5.6 ई-लेन-देनों की सुरक्षा एवं बचाव

ई-व्यवसाय जोखिम

ऑनलाइन लेन-देन, मौखिक विनिमय लेन-देनों से भिन्न, अनेक जोखिमों की ओर उन्मुख होते हैं। जोखिम से आशय किसी ऐसी अनहोनी की संभाव्यता से है जोकि एक लेन-देन में शामिल पक्षों के लिए वित्तीय प्रतिष्ठात्मक अथवा मानसिक हानि का परिणाम बने। ऑनलाइन लेन-देनों में इन जोखिमों की उच्च संभाव्यता के कारण ही ई-व्यवसाय में सुरक्षा एवं बचाव के मुद्दे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण बन गए हैं। इन मुद्दों का विवेचन निम्न तीन शीर्षकों के अंतर्गत किया जा सकता हैः- लेन-देन जोखिम, डाटा संग्रहण और प्रसारण जोखिम और बौद्धिक संपदा को खतरे व निजता जोखिम।

(क) लेन-देन जोखिम- ऑनलाइन लेन-देन निम्न प्रकार के जोखिमों के लिए सुमेद्य होते हैंः

- विक्रेता इस बात के लिए मना कर सकता है कि ग्राहक ने उसे कभी आदेश प्रेषित किया था और ग्राहक यह मना कर सकता है कि उसने कभी विक्रेता को आदेश प्रेषित किया था। इसे 'आदेश लेन/देन संबंधी चूक' के रूप में उल्लेखित किया जा सकता है।
- वांछित सुपुर्दगी न हो पाना, वस्तुओं की सुपुर्दगी गलत पते पर हो गई, अथवा आदेश से अलग/भिन्न वस्तुओं की सुपुर्दगी होना। इसे 'सुपुर्दगी की चूक' कहा जा सकता है।
- विक्रेता पूर्ति की गई वस्तुओं के लिए भुगतान प्राप्त नहीं कर पाया हो जबकि ग्राहक दावा करे कि उसने भुगतान कर दिया है। इसे 'भुगतान संबंधी चूक' कहा जा सकता है।

इस प्रकार क्रेता एवं विक्रेता के लिए आदेश लेन-देन में, सुपुर्दगी में, साथ ही भुगतान में चूक के कारण जोखिम उत्पन्न हो सकते हैं। इस तरह की स्थिति से, पंजीकरण के समय पहचान और स्थिति/पते की जाँच द्वारा और आदेश स्वीकृति एवं भुगतान वसूली के लिए एक प्राधिकार प्राप्त कर बचा जा सकता है। उदाहरणार्थ– यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्राहक ने पंजीकरण फार्म में अपना सही विवरण प्रविष्ट कर दिया है, विक्रेता इसे कुकी.ज से सत्यापित करवा सकता है। कुकी.ज टेलीफोन कॉल पहचानकर्ता के समान ही होते हैं जोकि टेलीविक्रेता को ग्राहक का नाम, पता और उसके पिछले क्रम भुगतान के विवरण जैसी जरूरी जानकारी उपलब्ध करवाता है। अनजान विक्रेताओं से ग्राहकों की सुरक्षा के लिए यह सलाह उचित है कि सुप्रतिष्ठित खरीददारी स्थानों (शॉपिंग साइट्स) से ही खरीददारी की जाए। 'ई-वे' जैसी वेबसाइट, विक्रेता की श्रेणी (रेटिंग) तक उपलब्ध करवाती हैं। ऐसी वेबसाइट ग्राहकों को सुपुर्दगी में चूक के प्रति सुरक्षा प्रदान

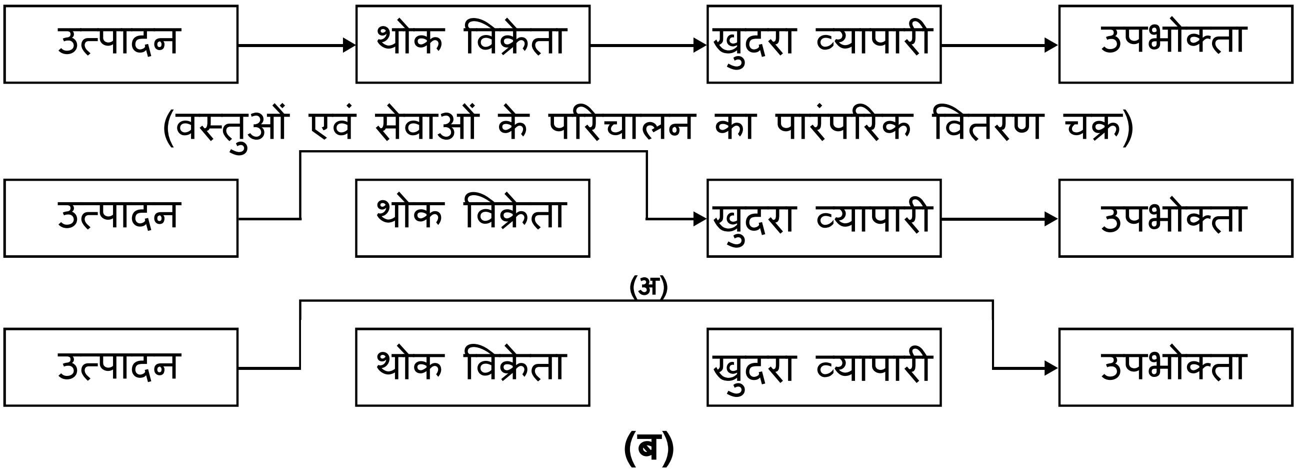

चित्र 5.4 ई-व्यापार के माध्यम से वस्तुओं एवं सेवाओं से घटता वितरण चक्र

कराती हैं और कुछ हद तक किए गए भुगतान की वापसी भी करवाती हैं।

जहाँ तक भुगतान का संबंध है, हम पहले ही देख चुके हैं कि ऑनलाइन खरीददारी करने के लिए लगभग 95 प्रतिशत लोग क्रेडिट कार्ड का प्रयोग करते हैं। आदेश स्वीकृति प्राप्त करते समय क्रेता को क्रेडिट कार्ड संख्या, कार्ड जारीकर्त्ता एवं कार्ड की वैधता अवधि जैसे विवरण ऑनलाइन उपलब्ध करवाने होते हैं। ऐसे विवरणों का प्रसंस्करण अलग से होता है और उधार सीमा की उपलब्धता इत्यादि से अपनी संतुष्टि करने के उपरांत ही विक्रेता वस्तुओं की सुपुर्दगी के लिए आगे बढ़ सकता है। विकल्प के रूप में ई-कॉमर्स तकनीक आज क्रेडिट कार्ड सूचना के ऑनलाइन प्रसंस्करण की अनुमति तक भी प्रदान करती है। क्रेडिट कार्ड विवरणों को दुरुपयोग से बचाने के लिए आजकल खरीददारी मॉल सांकेतिक शब्द तकनीक, जैसे- नेट स्केप के कर रहे हैं। एस.एस. एल. के बारे में अधिक जानकारी आप 'ई-कॉमर्स के इतिहास' से प्राप्त कर सकते हैं।'

आगे के खंडों में हम आपको ऑनलाइन लेन-देनों में डाटा प्रसारण जोखिमों से बचाव के लिए प्रयोग किए जाने वाला एक महत्त्वपूर्ण औजार-सांकेतिक शब्द अथवा कूट लेखन विधि (क्रिप्टोग्राफी) से परिचित कराएँगे।

(ख) डाटा संग्रहण एवं प्रसारण जोखिम- सूचना वास्तव में शक्ति है परंतु उस क्षण का विचार कीजिए, जब यह शक्ति गलत हाथों में चली जाती है। डाटा चाहे कंप्यूटर प्रणाली में संग्रहीत हो या फिर मार्ग में हो, अनेक जोखिमों से आरक्षित होते हैं। महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ कुछ स्वार्थी उद्देश्यों अथवा सिर्फ म.जाक के लिए चोरी अथवा संशोधित कर ली जाती हैं। आपने 'वायरस' और 'हैकिंग' के बारे में तो सुना ही होगा। क्या आप परिवर्ती शब्द 'वायरस' का पूर्ण रूप अर्थ जानते हैं- इसका अर्थ है महत्त्वपूर्ण सूचना की घेराबंदीअवरोधित करना। वास्तव में, वायरस एक प्रोग्राम (आदेश की एक शृंखला) है, जोकि अपनी पुनरावृत्ति कंप्यूटर प्रणलियों पर करता रहता है। कंप्यूटर वायरस का प्रभाव क्षेत्र स्क्रीन प्रदर्शन में

मामूली छेड़छाड़ (स्तर-1 वायरस) से लेकर, कार्य प्रणाली में बाधा (स्तर-2 वायरस) तक, लक्षित डाटा फाइलों को क्षति (स्तर-3 वायरस) तक, समूची प्रणाली को क्षति (स्तर-4 वायरस) तक हो सकता है। एंटी वायरस प्रोग्रामों की स्थापना एवं समय-समय पर उनके नवीनीकरण और फाइलों एवं डिस्को की एंटी वायरस द्वारा जाँच आपकी डाटा फाइलों, फोल्डरों और कंप्यूटर प्रणाली को वायरस के हमले से बचाती है। प्रसारण के दौरान डाटा अवरुद्ध हो सकते हैं। इसके लिए क्रिप्टोग्राफी (कूटलेखन विधि) का प्रयोग किया जा सकता है। क्रिप्टोग्राफी से आशय सूचना बचाव की उस कला से है, जिसमें उसे एक अपठनीय प्रारूप जिसे साइबर उद्धरण (साइबर टेक्स्ट) कहते हैं, में बदल दिया जाता है। केवल वही व्यक्ति जिसके पास गुप्त कुंजी (पासवर्ड) होती है, संदेश को स्पष्ट कर सामान्य उद्धरण (प्लेन टेक्स्ट) में बदल सकता है। यह किसी व्यक्ति के साथ कूट शब्दों (कोड वर्ड) के प्रयोग के समान ही है जिससे कि कोई आपके वार्तालाप को समझ न पाए।

(ग) बौद्धिक संपदा एवं निजता पर खतरे के जोखिम- इंटरनेट एक खुला स्थान है। सूचना जब एक बार इंटरनेट पर उपलब्ध हो जाती है तो वह निजी क्षेत्र के दायरे से बाहर निकल आती है और तब इसकी नकल होने से रोकना मुश्किल हो जाता है। ऑनलाइन लेन-देनों के दौरान प्रस्तुत डाटा अन्य लोगों को भी पहुँचाए जा सकते हैं जोकि आपके ई-डाक (ई-मेल) बॉक्स में बेकार प्रचार एवं संवर्द्धन साहित्य भरना शुरू कर सकते हैं। इस तरह प्राप्ति छोर पर, आपके पास बेकार रद्दी डाक प्राप्त करने के बाद प्राप्त करने के लिए बहुत कम बचता है।

5.7 सफल ई-व्यवसाय कार्यान्वयन के लिए आवश्यक संसाधन

किसी व्यवसाय की स्थापना के लिए धन, व्यक्ति और मशीनों (हार्डवेयर) की आवश्यकता होती है। ई-व्यवसाय के लिए, वेबसाइट के विकास, संचालन, रखरखाव और वर्द्धन के लिए अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता होती है। यहाँ 'साइट' से आशय स्थिति/स्थान से है तथा 'वेब' से आशय विश्वव्यापी वेब (वर्ल्ड वाइड वेब) से है। सरल शब्दों में कहें तो वर्ल्ड वाइड वेब पर फर्म की स्थिति ही 'वेबसाइट' कहलाती है। स्पष्ट रूप से वेबसाइट भौतिक स्थिति नहीं है, अपितु यह तो उस विषय-वस्तु का ऑनलाइन दृश्य स्वरूप है, जिसे फर्म दूसरों को उपलब्ध कराना चाहती है।

5.8 बाह्यस्रोतीकरण – संकल्पना

मौलिक रूप से बाह्यस्रोतीकरण एक अन्य प्रवृत्ति है जोकि महत्त्वपूर्ण रूप से व्यवसाय के पुनर्संरचित कर रही है। बाह्यस्रोतीकरण उस दीर्घावधि अनुबंधसंविदा प्रदान करने की प्रक्रिया को कहा जाता है जिसमें सामान्यतः व्यवसाय की द्वितीयक (गैर-मुख्य) और बाद में कुछ मुख्य गतिविधियों को आबद्ध अथवा तृतीय पक्ष विशेषज्ञों को उनके अनुभव, निपुणता, कार्यकुशलता और यहाँ तक कि निवेश से लाभान्वित होने के विचार से किया जाता है।

यह सरल परिभाषा, अवधारणा उन विशिष्ट

लक्षणों की ओर इंगित करती है कि यह एक उद्योग/व्यवसाय अथवा देश के लिए निजी नहीं है, बल्कि एक वैश्विक घटना है।

(क) बाह्यस्रोतीकरण में संविदा बाहर प्रदान करना सम्मिलित होता है–

शाब्दिक रूप से, बाह्यस्रोतीकरण का अर्थ है वह सब बाहर से लाना जोकि अब तक आप अपने आप कर रहे थे। उदाहरण के लिए अधिकतर कंपनियों ने अभी तक अपने स्वयं के सफाई कर्मचारी अपने परिसर में स्वच्छता और साफ-सफाई और संपूर्ण देखभाल के लिए रखे हुए थे। इस प्रकार साफ-सफाई और देखभाल का कार्य स्वयं किया जाता था। परंतु बाद में, अनेक कंपनियों ने इन गतिविधियों का बाह्यस्रोतीकरण प्रारंभ कर दिया अर्थात् उन्होने अपने संस्थान की इन गतिविधियों के लिए बाहरी एजेंसियों को अनुबंधित कर लिया।

(ख) सामान्यतः द्वितीयक (गैर मुख्य) व्यावसायिक गतिविधियों का ही बाह्यस्रोतीकरण हो रहा है–

साफ-सफाई और देखभाल कार्य अधिकतर संस्थाओं के लिए गैर-मुख्य (द्वितीयक) कार्य होते हैं। परंतु नगर-निगमों एवं साफ-सफाई सेवा प्रदाताओं के लिए यह गतिविधियाँ उनकी मुख्य व्यावसायिक गतिविधियाँ होती हैं। देखभाल (हाउसकीपिंग) एक होटल की मुख्य गतिविधि है। दूसरे शब्दों में कुछ गतिविधियाँ ऐसी होंगी जोकि कंपनी के मूल व्यावसायिक उद्देश्य के लिए मुख्य एवं महत्त्वपूर्ण होंगी, यह इस बात पर निर्भर करता है कि कंपनी किस व्यवसाय में है। अन्य गतिविधियाँ मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए द्वितीयक अथवा आनुषांगिक मानी जा सकती हैं। उदाहरण के लिए एक विद्यालय का उद्देश्य पाठ्यचारी और सहपाठ्यचारी गतिविधियों के माध्यम से बच्चे का विकास है। स्पष्ट रूप से यह गतिविधियाँ मुख्य गतिविधि मानी जाएगी। जलपान गृह/कैंटीन अथवा पुस्तकों की दुकान चलाना विद्यालय के लिए गैर-मुख्य गतिविधियाँ हैं।

जब संस्थाएँ बाह्यस्रोतीकरण के साथ प्रयोग का साहस करती हैं तो वह प्रारंभ में सिर्फ गैर-मुख्य गतिविधियों का बाह्यस्रोतीकरण करती हैं। परंतु बाद में, जब वह परस्पर निर्भरता का प्रबंध करने में सहज हो जाती है तब वे अपनी मुख्य गतिविधियों को भी बाहरी लोगों से निष्पादित करवाती हैं। उदाहरण के लिए विद्यालय अपने विद्यार्थियों को कंप्यूटर शिक्षा प्रदान करने के लिए किसी कंप्यूटर प्रशिक्षण संस्थान से अनुबंध कर सकता है।

(ग) प्रक्रियाओं का बाह्यस्रोतीकरण आबद्ध इकाई अथवा तृतीय पक्ष का हो सकता है-

एक बड़े बहुराष्ट्रीय निगम के बारे में विचार कीजिए जोकि विविध उत्पादों में व्यवहार करता है और उनका विपणन अनेकों देशों में करता है। इसकी सहायक कंपनियों, जो कि विभिन्न

देशों में संचालित हो रही हैं, में अनेक प्रक्रियाएँ जैसे कि भर्ती, चयन, प्रशिक्षण, अभिलेखन और वेतन पत्रक (मानव संसाधन), लेनदारी लेखों और देनदारी लेखों का प्रबंधन (लेखांकन एवं वित्त), ग्राहक सहायता/शिकायत निर्वाह/निवारण (विपणन), इत्यादि आम हैं। यदि इन प्रक्रियाओं का केंद्रीयकरण किया जा सकता है और उस व्यवसाय इकाई, जो कि इसी कार्य के लिए सृजित हुई हो, को भेजा जा सकता तो इसके परिणामस्वरूप संसाधनों के दोहराव से बचा सकता, कार्यकुशलता के दोहन और बड़े पैमाने पर एक ही गतिविधि के एक अथवा कुछ चयनित स्थानों पर निष्पादन से मितव्ययता हो पाती, जिससे परिणामतः लागत में महत्त्वपूर्ण कमी हो पाती है। स्पष्ट रूप से, इसीलिए कुछ गतिविधियों का आंतरिक निष्पादन यदि पर्याप्त रूप से विशाल हो तो फर्म के लिए यह लाभप्रद होगा कि उसका एक आबद्ध सेवा प्रदाता हो अर्थात् ऐसा सेवा प्रदाता जो इस प्रकार की सेवा सिर्फ एक फर्म को उपलब्ध करवाने के लिए ही स्थापित हुआ हो। उदाहरण के लिए जनरल इलेक्ट्रॉनिक्स (जी.ई.), भारत में स्थापित एक विशालतम आबद्ध व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण इकाई है, जो विशेष प्रकार की सेवाएँ अमेरिका स्थित इसकी अभिभावक कंपनी के साथ ही संसार के अन्य भागों में स्थित इसकी सहायक कंपनियों को प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त प्रक्रियाएँ उन सेवा प्रदाताओं को भी भेड़ी जा सकती है, जो स्वतंत्र रूप में बाजार में प्रचालन कर रहे हों और अन्य फर्मों को सेवाएँ प्रदान करते हैं। चित्र 5.5 वह विहंगम दृश्य प्रस्तुत करता है कि किस प्रकार फर्म अपनी गतिविधियों का आबद्ध और तृतीय पक्ष सेवा प्रदाताओं को बाह्यस्रोतीकरण कर सकती हैं। तृतीय पक्ष सेवा प्रदाता वह व्यक्ति/फर्में होती है, जिनकी कुछ प्रक्रियाओं जैसे कि मानव संसाधन इत्यादि में विशेषज्ञता होती है और वह अपनी सेवाएँ ग्राहकों के एक ब\ड़े वर्ग को, जो कि पूरे उद्योग में फैले होते हैं, उपलब्ध करवाती है। इस तरह के सेवा प्रदाता बाह्यस्रोतीकरण की शब्दावली में 'समस्तर' कहलाते हैं इसके अलावा वह केवल एक या दो उद्योगों में विशेषज्ञ हो सकते हैं और उनके लिए गैर-मुख्य से लेकर मुख्य तक अनेकों प्रक्रियाओं का निष्पादन करते हैं। यह 'उर्ध्वाधर' कहलाते हैं। जैसे-जैसे सेवा प्रदाता परिपक्व होते जाते हैं, वह एक ही साथ समस्तर एवं उर्ध्वाधर गति करते हैं। बाह्यस्रोतीकरण का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण है, दूसरों की विशेषज्ञता एवं अनुभव का लाभ उठाना।

विद्यालय, कंपनी एवं अस्पताल जैसी संस्थान अपनी जलपान गतिविधि का बाह्यस्रोतीकरण ऐसी खानपान और पोषण फर्मों को कर सकते हैं जिनके लिए यह गतिविधियाँ मुख्य अथवा उनके प्रचालन का हृदय होती हैं। बाह्यस्रोतीकरण का विचार इसलिए भी मूल्यवान है क्योंकि यह न केवल आपको उनकी विशेषज्ञता और अनुभव एवं कार्यकुशलता लाभ उठाने बल्कि यह आपको अपने निवेश को सीमित करने और अपनी मुख्य प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करने की अनुमति भी प्रदान करता है।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि बाह्यस्रोतीकरण तेजी से व्यवसाय की एक उभरती पद्धति बनाता जा रहा है। व्यावसायिक फर्मों ने अपनी उन एक अथवा दो प्रक्रियाओं का जो कि अन्य द्वारा कुशलतापूर्वक एवं प्रभावपूर्ण तरीके से निष्पादित

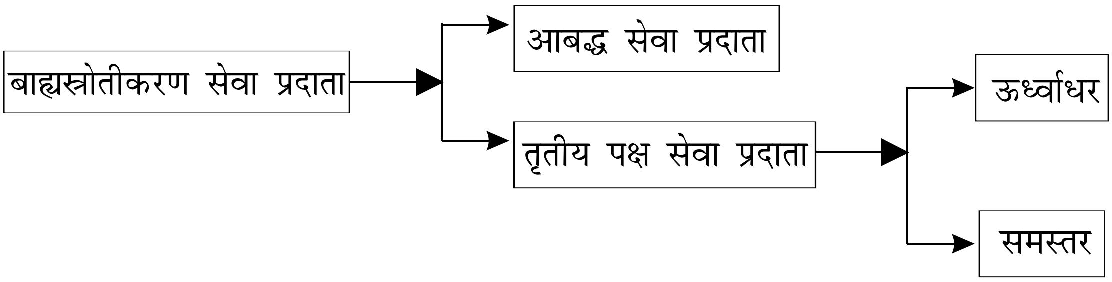

चित्र 5.5 बाह्यस्रोतीकरण सेवा प्रदाताओं के प्रकार

की जा सकती है, तेजी से बाह्यस्रोतीकरण प्रारंभ कर दिया है। बाह्यस्रोतीकरण की जो स्थिति उसे व्यवसाय की उभरती पद्धति के रूप में माने जाने योग्य बनाती है वह है, मूलभूत व्यवसाय नीति और दर्शन के रूप में इसकी ब\ढ़ती स्वीकार्यता जो कि इससे पहले की 'सभी कुछ स्वयं करने के' दर्शन के ठीक विपरीत है।

5.8.1 बाह्यस्रोतीकरण का कार्यक्षेत्र

बाह्यस्रोतीकरण में चार प्रमुख खंड सम्मिलित होते हैंः- संविदा उत्पादन, संविदा शोध, संविदा विक्रय और सूचना विज्ञान (देखें चित्र 5.5)। शब्द 'बाह्यस्रोतीकरण' सूचना प्रौद्योगिकी जन्य सेवाओं अथवा व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण के साथ अधिक लोकप्रिय रूप से संलग्न होता है। इससे भी अधिक लोकप्रिय शब्द 'कॉल सैंटर' है जो कि ग्राहक उन्मुख स्वर आधारित सेवा उपलब्ध करवाते हैं। व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्रोतीकरण उद्योग का लगभग 70 प्रतिशत राजस्व कॉल सैंटरों से आता है, 20 प्रतिशत उच्च-आयतन, निम्न-मूल्य डाटा कार्य से और बाकी 10 प्रतिशत उच्च-मूल्य सूचना कार्य से आता है। 'ग्राहक सेवा' अधिक परिमाण में 'कॉल सैंटर' गतिविधियों का, 24 घंटे × 7 दिन अंध बंध (ग्राहक के प्रश्न एवं शिकायतें) और बाह्य बंध (ग्राहक सर्वेक्षण, भुगतान अनुवर्ती और टेलीविपणन गतिविधियाँ) यातायात के साथ निर्वहन करती हैं। चित्र 5.5 विभिन्न प्रकार की बाह्यस्रोतीकरण गतिविधियों को रेखांकित करता है।

5.8.2 बाह्यस्रोतीकरण की आवश्यकता

जैसा कि कहा जाता है, आवश्यकता सभी अविष्कारों की जननी है। इसे बाह्यस्रोतीकरण के विचार से भी सत्य कहा जा सकता है। जैसे कि अध्याय के प्रारंभ में विवेचन किया जा चुका है कि कम लागत पर उच्च गुणवत्ता का वैश्विक प्रतिस्पर्धी दबाव, सदा माँग करने वाले ग्राहक और उदयीमान तकनीकें, व्यवसाय प्रक्रियाओं की ओर पुर्नदृष्टि अथवा पुर्नविचार के लिए अग्रसर करने वाले तीन प्रमुख कारक है। इन्हें बाह्यस्रोतीकरण की ओर उन्मुखता किसी दबाव के कारण नहीं अपितु पंसद चुनाव के कारण है। बाह्यस्रोतीकरण के कुछ प्रमुख कारणों (और लाभ भी) का विवेचन भी नीचे किया गया है।

(क) ध्यान केंद्रित करना- आप शैक्षिक और पाठ्येत्तर गतिविधियों में बहुत सी चीजें करने में अच्छे हो सकते हैं। फिर भी यदि आप अपने सीमित समय और धन को, उत्कृष्ट कुशलता और प्रभावपूर्णता के लिए, केवल कुछ ही चीजों में लगा सकते हैं तो आप अच्छे परिणाम प्राप्त कर सकेंगे। इसी प्रकार व्यावसायिक फर्में भी कुछ क्षेत्रों, जिनमें उनके पास विशिष्ट क्षमताएँ एवं सामर्थ्य उपलब्ध है, में ध्यान केंद्रित कर अन्य बची हुई गतिविधियों को अपने बाह्यस्रोतीकरण साझेदार को सौपने की महत्ता को महसूस कर रही हैं। आप जानते हैं कि उत्पादकता अथवा मूल्य सृजन के लिए एक व्यवसाय अनेकों प्रक्रियाओं में संलग्न रहता है, जैसे कि, क्रय एवं उत्पादन, विपणन और विक्रय, शोध एवं विकास, लेखांकन और वित्त, मानव संसाधन और प्रशासन इत्यादि। फर्मों को अपने आपको परिभाषित अथवा पुर्नपरिभाषित करने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, उन्हे यह जानने की आवश्यकता होती है कि क्या उन्हें उत्पादक अथवा विपणन संस्था कहा जाए। इस प्रकार व्यवसाय के कार्य क्षेत्र को सीमित करना, उन्हें अपना ध्यान, और संसाधनों की बेहतर कार्यकुशलता और प्रभावपूर्णता के लिए, केंद्रित करने में सहायक होता है।

(ख) उत्कृष्टता की खोज- आप श्रम विभाजन एवं विशिष्टीकरण के लाभों से परिचित हैं। बाह्यस्रोतीकरण दो प्रकार से फर्मों को उत्कृष्टता हासिल करने में सहायक होता है। एक, फर्म उन गतिविधियों में उत्कृष्टता हासिल कर सकती हैं जिनमें वह सीमित मात्रा में ध्यान केंद्रित करने के कारण अच्छा कर सकती हैं और दूसरा, वह अपनी बाकी बची हुई गतिविधियों की संविदा उन लोगों को प्रदान कर, जोकि उनके निष्पादन में सर्वश्रेष्ठ हैं, अपनी क्षमताओं में विस्तार द्वारा भी उत्कृष्टता हासिल कर सकती हैं।

उत्कृष्टता की खोज में न केवल यह जानना आवश्यक है कि आपको किस पर ध्यान केंद्रित करना है बल्कि यह भी कि आप दूसरों से अपने लिए क्या करवाना चाहते हैं।

(ग) लागत की कमी- वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता न केवल वैश्विक गुणवत्ता बल्कि वैश्विक प्रतिस्पर्धी कीमतों को भी आवश्यक बना देती है। प्रतिस्पर्द्धी दबाव के कारण जब कीमतें कम हो रही हों तो अस्तित्व और लाभ प्रदता बनाए रखने का एकमात्र तरीका लागत में कमी करना होता है। श्रम विभाजन और विशिष्टीकरण, गुणवत्ता में सुधार के अलावा लागत भी कम करते हैं। ऐसा बाह्यस्रोतीकरण साझेदारों को वृहद् पैमाने पर उत्पादन के लाभ के कारण होता है क्योंकि यह एक जैसी सेवा अन्य अनेक

संगठनों को प्रदान करते हैं। विभिन्न देशों में फैले उत्पादन के साधनों की कीमतों में अंतर भी लागत में कमी लाने वाला एक कारक है। उदाहरण के लिए भारत, कम लागत पर उपलब्ध आवश्यक मानव श्रम की उपलब्धता के कारण बड़े पैमाने पर शोध एवं विकास, उत्पादन, सॉफ्टवेयर और सूचना प्रौद्योगिकी जन्य सेवाओं के बाह्यस्रोतीकरण का पसंदीदा गतंव्य स्थल हैं।

(घ) गठजो\ड़ द्वारा विकास- जिस सीमा तक आप दूसरों की सेवाएँ ग्रहण करेंगे उस सीमा तक आपकी विनिवेश/निवेश की आवश्यकताएँ कम हो जाएँगी, क्योंकि अन्य लोगों ने आपके लिए उन गतिविधियों में निवेश किया होता है। यहाँ तक कि यदि आप अपने बाह्यस्रोतीकरण साझेदार के व्यवसाय में हिस्सेदारी चाहेंगे तब भी आप न केवल उसके द्वारा आपको उपलब्ध करवाई गई कम लागत एवं उत्कृष्ट गुणवत्ता सेवाओं का लाभ प्राप्त करेंगे अपितु उसके द्वारा किए गए संपूर्ण व्यवसाय से हुए लाभ में भी हिस्सेदारी से लाभान्वित होंगे। इस तरह आप तीव्र गति से विस्तार कर पाएंगे क्योंकि निवेश योग्य कोषों की एक धनराशि के परिणामस्वरूप वृहद संख्या में व्यवसाय सृजित होंगे। वित्तीय प्रतिफलों के अलावा बाह्यस्रोतीकरण अंतर संगठन जानकारी में हिस्सेदारी और सम्मिलित अधिगम को भी सुगम बनाता है। यह उन कारणों की भी व्याख्या करता है कि क्यों आज फर्में न केवल अपनी सामान्य गैर-मुख्य प्रक्रियाओं, बल्कि अपनी अन्य सामरिक एवं मुख्य प्रक्रियाओं जैसे कि शोध एवं विकास के बाह्यस्रोतीकरण से लाभ उठा रही हैं।

(ङ) आर्थिक विकास को प्रोत्साहन- बाह्यस्रोतीकरण, उसमें अधिक देश की भौगोलिक सीमाओं से बाहर (ऑफशोर) बाह्यस्रोतीकरण अथितेय/मेजबान देशों (अर्थात् वह देश जहाँ से बाह्यस्रोतीकरण किया गया) में उद्यमशीलता, रोजगार एवं निर्यात को प्रोत्साहन देता है। उदाहरण के लिए, भारत में अकेले सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में उद्यमशीलता रोजगार और निर्यात में ऐसी आश्चार्यजनक हुई है कि, जहाँ तक सॉफ्टवेयर विकास एवं सूचना प्रौद्योगिकी जन्य सेवाओं में वैश्विक बाह्यस्रोतीकरण का संबंध है, हम निर्विवाद रूप से अग्रणी है। वर्तमान में 50 बिलियन डॉलर के (1 बिलियन = 100 करोड़) सूचना तकनीक क्षेत्र के वैश्विक बाह्यस्रोतीकरण में हमारा हिस्सा 60 प्रतिशत है।

5.8.3 बाह्यस्रोतीकरण के सरोकार

उन सरोकारों की जानकारी लेना नितांत आवश्यक होगा जिनसे बाह्यस्रोतीकरण घिरा हुआ है।

(क) गोपनीयता- बाह्यस्रोतीकरण बहुत सारी महत्त्वपूर्ण सूचना एवं जानकारी की हिस्सेदारी पर निर्भर करता है। यह बाह्यस्रोतीकरण साझेदार गोपनीयता नहीं बरतता है और उदाहरणस्वरूप– वह इसे

प्रतिस्पर्धियों को पहुँचा देता है तो यह उस पक्ष के हितों को हानि पहुँचा सकता है जिसने अपनी प्रक्रियाओं का बाह्यस्रोतीकरण करवाया है यदि बाह्यस्रोतीकरण में संपूर्ण प्रक्रिया एवं उत्पाद शामिल हो तब यह जोखिम होता है कि कहीं बाह्यस्रोतीकरण साझेदार इस जानकारी से एक प्रतिस्पर्धी व्यवसाय न प्रारंभ कर लें।

(ख) **परिश्रम (स्वेट) खरीददारी-** व्यावसायिक फर्में जो बाह्यस्रोतीकरण करवाती हैं, अपनी लागतें कम करने का प्रयत्न करती हैं, वह मेजबान देशों की निम्न मानव संसाधन लागत का अधिकतम लाभ उठाने की कोशिश करती हैं। अधिकतर यह देखा गया

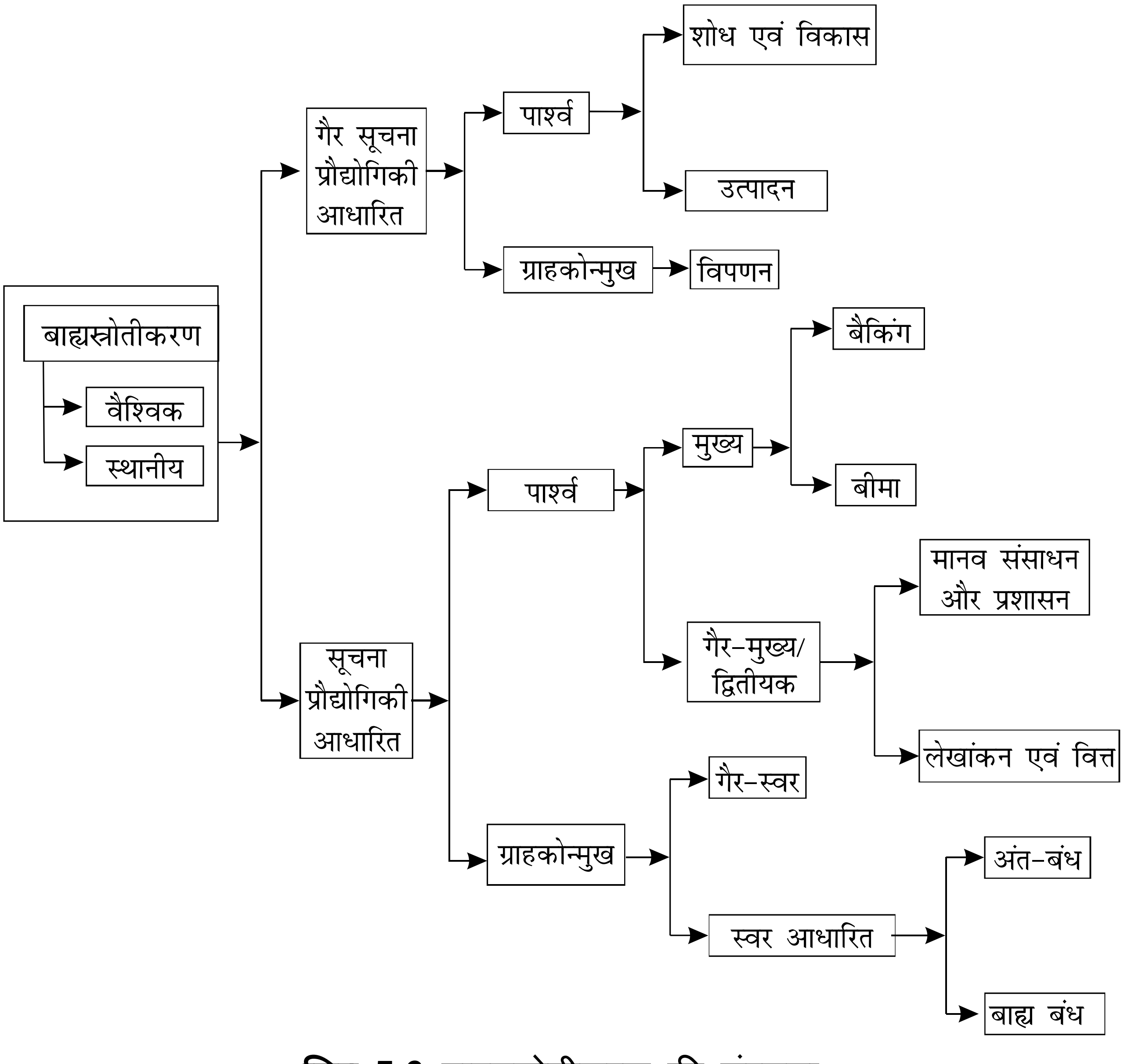

चित्र 5.6 बाह्यस्रोतीकरण की संरचना

है कि चाहे वह उत्पादन क्षेत्र हो अथवा सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र, जिस कार्य का भी बाह्यस्रोतीकरण किया जाता है, वह इस प्रकार का घटक अथवा कार्य होता है जो कि, एक बेलोच निर्धारित प्रक्रिया/पद्धति के अनुपालन के लिए आवश्यक कौशल से परे बाह्यस्रोतीकरण साझेदार के सामर्थ्य एवं क्षमताओं में बहुत अधिक वृद्धि नहीं करता है। इस तरह बाह्यस्रोतीकरण करवाने वाली फर्म, जिसे देखने का प्रयत्न करती है वह 'चिंतन कौशल' के विकास के बजाय कार्य कौशल होता है।

(ग) नैतिक सरोकार- ऐसी जूता कंपनी का विचार कीजिए जो अपनी लागत कम करने के लिए अपने उत्पादन का बाह्यस्रोतीकरण ऐसे विकासशील देश को करती है जहाँ बाल श्रमिकों औरतों से फैक्टरियों में कार्य करवाया जाता हो जबकि अपने देश में वह ऐसा, बाल श्रम पर रोक लगाने वाले सख्त कानून की वजह से नहीं कर सकती है। तो क्या ऐसे देशों में जहाँ बालश्रम गैर-कानूनी नहीं है या फिर वहाँ कानून कमजोर है, लागत कम करने का यह तरीका नैतिक है? इस प्रकार कार्य का बाह्यस्रोतीकरण उन देशों को करना है। जहाँ लिंग के आधार पर मजदूरी के आधार पर भेद-भाव किया जाता है। क्या नैतिक है?

(घ) ग्रहदेशों में विरोध- उत्पादन, विपणन, शोध एवं विकास और सूचना प्रौद्योगिकी आधारित सेवाओं की संविदाएँ बाहर देने पर आखिरकार जो भी बाहर जाता है वह होता है रोजगार एवं नौकरियाँ। इसके फलस्वरूप गृह देश (अर्थात् वह देश जहाँ से नौकरियाँ बाहर भेजी गई हैं) में विरोध पनप सकता है विशेषकर उस परिस्थिति में जब देश बेरोजगारी की समस्या से त्रस्त हो।

उपरोक्त उल्लेखित सरोकार हाँलाकि अधिक मायने नहीं रखते हैं, क्योंकि बाह्यस्रोतीकरण लगातार फल-फूल रहा है। जैसे कि भारत एक वैश्विक बाह्यस्रोतीकरण केंद्र के रूप में उभर आया है, यह उद्योग अनुमानतः एक तीव्र वृद्धि दर से बढ़ेगा, 1998 में 23,000 व्यक्ति और 10 मिलियन डॉलर प्रतिवर्ष से 2008 तक लगभग 1 मिलियन व्यक्ति और 20 बिलियन डॉलर से अधिक राजस्व।

मुख्य शब्दावली

ई-व्यवसाय	ई-कॉमर्स	समस्तर
सिक्योर सॉकेट्स लेअर	वायरस	कॉल सैंटर
ई-व्यापार	ऑन लाइन व्यापार	ब्राउज़र
ई-बोली	ई-अधिप्राप्ति	परिश्रम (स्वेट) खरीददारी
ऊर्ध्वाधर	ई-नकद	
आबद्ध व्यवसाय प्रक्रिया बाहयस्रोतीकरण इकाइयाँ		

सारांश

व्यवसाय का संसार बदल रहा है। ई-व्यवसाय और बाहयस्रोतीकरण इन परिवर्तनों के दो महत्त्वपूर्ण स्पष्ट सूचक हैं। यह परिवर्तन आंतरिक एवं बाहय दोनों शक्तियों के प्रभाव से जन्मे हैं। आंतरिक रूप से यह व्यावसायिक फर्म की सुधार और कार्यकुशलता की अपनी खोज है, जिसने ई-व्यवसाय और बाहयस्रोतीकरण को गति प्रदान की है। बाहय रूप से लगातार बढ़ता प्रतिस्पर्धी दबाव और हमेशा माँग करते ग्राहक इन परिवर्तनों के पीछे की शक्तियाँ हैं।

व्यवसाय करने की इलेक्ट्रॉनिक पद्धति अथवा ई-व्यवसाय जैसे कि इसे कहा जाता है ने फर्म को, अपने ग्राहक के लिए कोई भी चीज, कहीं भी और किसी भी समय उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक अवसर प्रदान किए हैं, इस प्रकार यह फर्म के निष्पादन पर समय और स्थान/अवस्थिति की बाधाओं का निराकरण करती है। अंकीय होने के साथ-साथ फर्में सभी कुछ अपने आप करने की मनोवृत्ति से पलायन कर रही हैं। वह तेजी से उत्पादन, शोध एवं विकास के साथ-साथ व्यावसायिक प्रक्रियाओं का संविदा बाहर प्रदान कर रही है चाहे वह सूचना प्रौद्योगिकी जन्य हों या नहीं। भारत वैश्विक बाहयस्रोतीकरण व्यवसाय में ऊँची उड़ान भर रहा है और उसने रोजगार सृजन, क्षमता निर्माण और निर्यात और सकल घरेलू उत्पाद में योगदान के रूप में महत्त्वपूर्ण लाभ प्राप्त किया है।

ई-व्यवसाय और बाहयस्रोतीकरण जैसी दो प्रवृत्तियाँ मिलकर व्यवसाय को चलाने के वर्तमान और भविष्यिक विधियों को पुर्नसरंचित कर रही है। ई-व्यवसाय और बाहयस्रोतीकरण दोनों लगातार विकास कर रहे हैं और इसीलिए इन्हे व्यवसाय की उभरती पद्धतियाँ कहा गया है।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

निम्न प्रश्नों के सर्वाधिक उचित उत्तर पर (✓) चिह्न लगाइएः

1. ई-कॉमर्स में शामिल नहीं होता हैः
   (क) एक व्यवसाय का उसके पूर्तिकर्त्ताओं से पारस्परिक संपर्क,
   (ख) एक व्यवसाय का उसके ग्राहकों से पारस्परिक संपर्क,
   (ग) व्यवसाय के विभिन्न विभागों के मध्य पारस्परिक संपर्क,
   (घ) (ग) और एक व्यवसाय का अपनी भौगोलिक रूप से फैली हुई इकाइयों के मध्य पारस्परिक संपर्क,
2. बाह्यस्रोतीकरण
   (क) सिर्फ सूचना प्रौद्योगिकी जन्य सेवाओं के संविदा बाहर प्रदान करने को प्रतिबंधित करता है।
   (ख) केवल गैर-मुख्य व्यावसायिक प्रक्रियाओं के संविदा बाहर प्रदान करने को प्रतिबंधित करता है।
   (ग) में उत्पादन और शोध एवं विकास के साथ ही सेवा प्रक्रियाओं-मुख्य और गैर-मुख्य दोनों के संविदा बाहर प्रदान करना शामिल है परंतु यह केवल घरेलू क्षेत्र तक सीमित है।
   (घ) (ग) और इसमें देश की भौगोलिक सीमाओं से बाहर बाह्यस्रोतीकरण भी सम्मिलित है।
3. ई-व्यवसाय का प्रारूपिक भुगतान तंत्र
   (क) सुपुर्दगी पर नकद, (ख) चैक,
   (ग) क्रेडिट और डेबिट कार्ड, (घ) ई-नकद
4. एक कॉल सैंटर निर्वहन करता हैः
   (क) केवल अंतबंध स्वर आधारित व्यवसाय,
   (ख) (क) और बाह्य-बंध स्वर आधारित व्यवसाय,
   (ग) दोनों अंत-बंध एवं बाह्य-बंध स्वर आधारित व्यवसाय,
   (घ) ग्राहकोन्मुख और पार्श्व, दोनों व्यवसाय
5. यह ई-व्यवसाय का अनुप्रयोग नहीं हैः
   (क) ऑनलाइन बोली, (ख) ऑनलाइन अधिप्राप्ति,
   (ग) ऑनलाइन व्यापार, (घ) संविदा शोध एवं विकास

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. ई-व्यवसाय और पारंपरिक व्यवसाय में कोई तीन अंतर बताइए।
2. बाह्यस्रोतीकरण किस प्रकार व्यवसाय की नई पद्धति का प्रतिनिधित्व करता है?
3. ई-व्यवसाय के किन्ही दो अनुप्रयोगों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. बाह्यस्रोतीकरण में शामिल नैतिक सरोकार कौन से हैं?
5. ई-व्यवसाय में डाटा संग्रहण एवं प्रसारण जोखिमों का वर्णन कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. ई-व्यवसाय और बाह्यस्रोतीकरण को व्यवसाय की उभरती पद्धतियाँ क्यों कहा जाता है? इन प्रवृत्तियों की बढ़ती महत्ता के लिए उत्तरदायी कारकों का विवेचन कीजिए।
2. ऑनलाइन व्यापार में सम्मिलित कदमों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. बाह्यस्रोतीकरण की आवश्यकता का मूल्यांकन कीजिए एवं इसकी सीमाओं का विवेचन कीजिए।
4. फर्म से ग्राहक कॉमर्स के प्रमुख पहलुओं का विवेचन कीजिए।
5. व्यवसाय करने की इलेक्ट्रॉनिक पद्धति की सीमाओं का विवेचन कीजिए। क्या यह सीमाएँ इसके कार्यक्षेत्रों को प्रतिबंधित करने के लिए काफी हैं? अपने उत्तर के लिए तर्क दीजिए।

11109CH06

अध्याय 6

व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व एवं व्यावसायिक नैतिकता

अधिगम उद्‌देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप–

- सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा को समझ सकेंगे;
- सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता पर विचार-विमर्श कर सकेंगे;
- विभिन्न वर्गों के प्रति उत्तरदायित्व की पहचान कर सकेंगे;
- व्यवसाय एवं पर्यावरण संरक्षण के मध्य संबंध का विश्लेषण कर सकेंगे;
- व्यावसायिक नैतिकता की अवधारणा को परिभाषित कर सकेंगे तथा व्यावसायिक नैतिकता के तत्त्वों को बता सकेंगे।

मणि एक युवा समाचार-पत्र संवाददाता है जो विगत छः माह से व्यावसायिक इकाइयों में व्याप्त कुरीतियों, जैसे-भ्रामक विज्ञापन, मिलावटी सामान की पूर्ति, श्रमिकों की दयनीय कार्य-स्थितियाँ, पर्यावरण प्रदूषण, सरकारी कर्मचारियों को घूस देना आदि के विषय में लिख रहा है। अब उसे विश्वास हो गया है कि व्यापारी धन कमाने के लिए कुछ भी कर सकते हैं। वह रमन झुनझुनवाला, जो एक अनुकरणीय ट्रक निर्माता कंपनी का चेयरमैन है, का साक्षात्कार लेता है। यह कंपनी अपने ग्राहकों, कर्मचारियों, विनियोजकों तथा अन्य सामाजिक समुदायों से सद्व्यवहार के लिए विख्यात कंपनी है। इस साक्षात्कार से मणि की समझ में आने लगता है कि एक व्यावसायिक इकाई समाज के प्रति उत्तरदायी भी हो सकती है, वह नैतिक रूप से सच्ची भी हो सकती है तथा एक उच्च कोटि का लाभ देने वाली भी हो सकती है। इसके उपरांत वह व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व तथा व्यावसायिक नैतिकता विषय के गहन अध्ययन में जुट जाता है।

6.1 परिचय

नैतिकता का सिद्धांत है कि व्यावसायिक इकाइयों को सामाजिक आकांक्षाओं का ध्यान रखते हुए व्यावसायिक क्रियाएँ करनी चाहिए तथा लाभ अर्जित करना चाहिए। समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के कुछ सामाजिक उत्तरदायित्व हैं। उसे सामाजिक मूल्यों का आदर करना चाहिए तथा व्यवहार कुशल होना चाहिए। प्रत्येक व्यावसायिक इकाई को लाभ अर्जित करने के लिए औद्योगिक तथा वाणिज्यिक क्रियाएँ करने का अधिकार समाज से प्राप्त है। लेकिन यह भी आवश्यक है कि वह ऐसी कोई भी कार्यवाही न करे जो समाज के दृष्टिकोण से अवांछनीय हो। कुछ ऐसी कार्यवाहियाँ हैं जो लाभ तो अधिक प्रदान करती हैं लेकिन समाज पर उनका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है; उदाहरणार्थ– माल उत्पादन एवं विक्रय में मिलावट, भ्रामक विज्ञापन, करों का भुगतान न करना, वातावरण को प्रदूषित करना तथा ग्राहकों का शोषण। कुछ अन्य ऐसे क्रियाकलाप हैं जो उद्यम की छवि को भी सुधारते हैं तथा लाभार्जन में वृद्धि भी करते हैं, जैसे– उच्च कोटि के माल की पूर्ति करना, स्वस्थ कार्यस्थल वातावरण बनाना, देय करों का समय पर भुगतान करना, कारखाने में प्रदूषण रोकने के लिए उपयुक्त उपकरण लगवाना तथा ग्राहकों की शिकायतों को सुनना तथा उन पर उचित कार्रवाई करना है। वास्तव में यह सत्य है कि सामाजिक उत्तरदायित्व तथा सच्चा नैतिकतापूर्ण व्यवहार ही किसी व्यावसायिक उद्यम को दीर्घकालीन सफलता प्रदान करता है।

6.2 सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व का अर्थ उन नीतियों का अनुसरण करना, उन निर्णयों को लेना अथवा उन कार्यों को करना है जो समाज के लक्ष्यों एवं मूल्यों की दृष्टि से वांछनीय हैं। वास्तविक अर्थ में सामाजिक दायित्वों के अंगीकरण से तात्पर्य समाज की आकांक्षाओं को समझना एवं मान्यता देना, इसकी सफलता के लिए योगदान देने का निश्चय करना तथा साथ ही अपने लाभ

कमाने के हित को भी ध्यान में रखना है। यह विचारधारा, सर्वसाधारण की उस विचारधारा से विपरीत है जिसमें यह माना जाता है कि व्यवसायों का एकमात्र उद्देश्य है पूंजीपति के लिए अधिक से अधिक लाभ कमाना तथा जनता-जनार्दन के हित में सोचना इससे असंबंधित है। यह कहा जा सकता है कि दायित्वपूर्ण व्यवसायों को, बल्कि कहें तो प्रत्येक जिम्मेदार नागरिक को अपने समाज के लिए प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष और सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने चाहिए।

यदि देखा जाए तो एक व्यवसाय के कानूनी उत्तरदायित्वों की अपेक्षा सामाजिक उत्तरदायित्व अधिक विस्तृत होते हैं। कानूनी उत्तरदायित्वों को तो केवल कानूनी बातों का पालन करके ही पूरा किया जा सकता है जबकि सामाजिक उत्तरदायित्व उससे कहीं परे होता है। यह स्पष्ट है कि सामाजिक उत्तरदायित्वों को केवल कानून का पालन करके पूरा नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक उत्तरदायित्व में समाज के हितार्थ वे तत्त्व निहित हैं जिन्हें व्यवसायी स्वेच्छा से करते हैं।

6.3 सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता

जब चर्चा सामाजिक उत्तरदायित्व की हो तो कौन सा कार्य उचित है? क्या व्यावसायिक संगठन का संचालन केवल स्वामियों के आशानुकूल अधिकतम लाभ कमाने के लिए किया जाए अथवा उन लोगों के हितार्थ किया जाए जो समाज में ग्राहक, कर्मचारी, आपूर्तिकर्त्ता, सरकार और समुदाय के रूप में रहते हैं?

दरअसल, सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रश्न ही नैतिकता का है क्योंकि इसमें व्यवसाय के उत्तरदायित्व के संबंध में उचित तथा अनुचित का सवाल उठता है। सामाजिक दायित्व में स्वैच्छिकता निहित है। व्यवसायी मान सकते हैं कि इन दायित्वों को निभाने के लिए कुछ करने या न करने के लिए वे स्वतंत्र हैं। वे इसके लिए भी स्वच्छंद हैं कि समाज के विभिन्न वर्गों की सेवा करने के लिए उन्हें किस सीमा तक जाना है। वास्तविकता यह है कि सभी व्यवसायी समाज के प्रति समान रूप से स्वयं का उत्तरदायित्व नहीं समझते हैं। बहुत लंबे समय से यह वाद-विवाद का विषय रहा है कि व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व होना चाहिए अथवा नहीं। कुछ लोग निश्चित रूप से यह मानते हैं कि एक फर्म केवल अपने स्वामी के प्रति उत्तरदायी है। दूसरी ओर कुछ लोग जो इससे भिन्न विचारधारा वाले हैं, मानते हैं कि व्यवसायों को समाज के उन वर्गों के प्रति भी उत्तरदायी होना चाहिए जो उनके निर्णयों एवं क्रियाकलापों से प्रभावित होते हैं। सामाजिक उत्तरदायित्वों की अवधारणा को समझने के लिए व्यावसायिक इकाइयों को इसके पक्ष एवं विपक्ष में दिए गए तर्कों को समझना होगा।

6.3.1 सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष में तर्क

(क) **अस्तित्व एवं विकास के लिए औचित्य-** व्यवसाय का अस्तित्व वस्तुओं एवं सेवाओं को मानव जाति की संतुष्टि के

लिए उपलब्ध कराने पर निर्भर करता है जबकि व्यावसायिक क्रियाओं द्वारा लाभ कमाना भी एक महत्वपूर्ण औचित्य है। यह मनुष्यों को प्रदान की हुई सेवाओं का परिणाम ही समझना चाहिए। वास्तव में, व्यवसाय की उन्नति एवं विकास तभी संभव है जब समाज को वस्तुएँ एवं सेवाएँ लगातार उपलब्ध होती रहें। अतः एक व्यावसायिक इकाई द्वारा सामाजिक उत्तरदायित्व की अभिधारणा ही उसके अस्तित्व एवं विकास के लिए औचित्य प्रदान करती है।

(ख) फर्म का दीर्घकालीन हित– एक फर्म दीर्घकाल तक अधिकतम लाभ तभी कमा सकती है जब उसका सर्वोच्च लक्ष्य समाज सेवा करना हो। यदि समाज के बहुत से लोग जिनमें कर्मचारी, उपभोक्ता, अंशधारी, सरकारी अधिकारीगण आदि सम्मिलित हैं, यदि इन्हें यह विश्वास हो जाता है कि अमुक व्यवसाय समाज के हित में ऐसा कुछ नहीं कर रहा जो उसे करना चाहिए, तो वे उस व्यवसाय से अपने सहयोग के हाथ को वापस खींच लेते हैं। सामाजिक उत्तरदायित्व की पूर्ति करना उस संस्था के अपने हित में है। यदि कोई फर्म सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता करती है तो जनता की धारणा भी उसके पक्ष में विकसित होती है।

(ग) सरकारी विनियम से बचाव– व्यवसायी के दृष्टिकोण से सरकारी विनियमों का पालन करना अवांछित है क्योंकि वे स्वतंत्रता को सीमित करते हैं। अतः यह माना जाता है

निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व

निगमित उत्तरदायित्व का अभिप्राय कंपनियों की भूमिका से है जो निरंतर विकास की कार्यसूची तथा आर्थिक प्रगति, सामाजिक प्रगति व पर्यावरण संरक्षण की संतुलित धारणा को अपरिहार्य बनाकर निभा सकती हैं।

निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की कोई सार्वभौमिक स्वीकृत परिभाषा नहीं है। वर्तमान में अस्तित्व में प्रत्येक परिभाषा व्यवसायों के समाज पर प्रभाव तथा उनसे समाज की अपेक्षाओं का आधार बताती है।

1. निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व को यूरोपीय संघ ने इस प्रकार परिभाषित किया है– "समाज पर उनके प्रभाव हेतु उपक्रमों के उत्तरदायित्व।"
2. 'निरंतर विकास हेतु विश्व व्यवसाय परिषद्' ने निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व को इस प्रकार परिभाषित किया है– "व्यवसाय द्वारा कर्मचारियों तथा उनके परिवारों व समाज के जीवन स्तर को सुधारने के साथ-साथ आर्थिक विकास हेतु निरंतर वचनबद्धता।"
3. संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन ने परिभाषित किया है– "निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व एक प्रबंध अवधारणा है जिसके द्वारा कंपनियाँ सामाजिक तथा पर्यावरणीय सरोकारों को व्यवसाय प्रचालनों से एकीकृत करती हैं तथा उनके हितधारियों से बातचीत करती हैं। निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व को ऐसे माध्यम के रूप में सामान्यतः समझा जाता है जिसके द्वारा कंपनी आर्थिक,

पर्यावरणीय तथा सामाजिक आवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित करती है तथा साथ ही अंशधारकों एवं हितधारकों की अपेक्षाओं का पता लगाती है। इस संदर्भ में, यह महत्वपूर्ण है कि निगमित सामाजिक उत्तदायित्व, जो कूटनीतिक व्यवसाय प्रबंधन अवधारणा हो सकती है, तथा दान, प्रायोजन एवं परोपकार के बीच अंतर स्पष्ट हों। यद्यपि बाद में बताई गई सभी क्रियाएँ गरीबी घटाने में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं, तथा कंपनी की कीर्ति को प्रत्यक्षतः बढ़ाती हैं और उसके ब्रांड को मज़बूत करती हैं; तथापि निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा स्पष्टतः इससे आगे है।"

भारत में निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा कंपनी अधिनियम, 2013 के वाक्यांश 135 द्वारा शासित होती है, जिसे संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया और 23 अगस्त, 2013 को भारत के राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त की गई।

अधिनियम में दिए गए निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रावधान उन कंपनियों पर लागू होते हैं, जिनका वार्षिक टर्नओवर 10,000 करोड़ रु. या अधिक है अथवा शुद्ध मूल्य 500 करोड़ रु. या अधिक है अथवा शुद्ध लाभ 5 करोड़ रु. या अधिक है।

1. नए नियमों, जो वित्तीय वर्ष 2014-15 से लागू हैं, के अनुसार कंपनियों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने मंडल सदस्यों की एक सी.एस.आर. समिति बनाएँ, जिसमें न्यूनतम एक स्वतंत्र निदेशक हो।
2. अधिनियम कंपनियों को प्रोत्साहित करता है कि वे पिछले तीन वर्षों के अपने औसत शुद्ध लाभ का 2% निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व पर व्यय करें।
3. निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व के अंतर्गत की जाने वाली सांकेतिक क्रियाएँ अधिनियम की अनुसूची VII में दी गई हैं।
4. केवल भारत में की जाने वाली निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व क्रियाएँ ही मान्य होंगी।
5. ऐसी क्रियाएँ जो केवल कर्मचारियों तथा उनके परिवारों के लिए की गई हों, निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व के अंतर्गत योग्य नहीं होगी।

कि व्यवसायी वर्ग स्वेच्छा से सामाजिक उत्तरदायित्व को ग्रहण करके सरकारी विनियम की समस्या से बच सकते हैं तथा नये कानून बनाने की आवश्यकता में कमी करने में सहायता कर सकते हैं।

(घ) समाज का रखरखाव– यहाँ यह तर्क दिया जा सकता है कि कानून हर परिस्थिति के लिए नहीं बनाए जा सकते। वे व्यक्ति जो यह सोचते हैं कि उन्हें वह सब कुछ व्यवसाय से नहीं मिल रहा जो वास्तव में मिलना चाहिए। वे दूसरी असामाजिक गतिविधियों का आश्रय ले सकते हैं जो निश्चित रूप से सरकारी कानून में नहीं आती। इससे व्यवसाय के हितों को ठेस लग सकती है। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि व्यावसायिक संगठन सामाजिक उत्तरदायित्वों की ओर जागरूक हों तथा उन्हें ग्रहण करें।

(च) व्यवसाय में संसाधनों की उपलब्धता– यह तर्क सार्थक है कि व्यावसायिक संस्थाओं के बहुमूल्य वित्तीय एवं मानवीय संसाधन होते हैं, जिनका उपयोग प्रभावशाली ढंग

से समस्याओं के समाधान में किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, व्यवसाय में पूँजी रूपी संसाधन एवं प्रतिभावान प्रबंधकों का निकाय होता है जो वर्षों के अनुभव के आधार पर सभी समस्याओं को आसानी से सुलझा सकते हैं। अतः समाज के पास यह एक अच्छा अवसर है कि वह खोज करें कि ये संसाधन किस प्रकार सहायक हो सकते हैं।

(छ) **समस्याओं का लाभकारी अवसरों में रूपांतरण–** पिछले तर्कों से संबंधित यह तर्क भी है कि व्यवसाय अपने गौरवपूर्ण इतिहास से जोखिम भरी परिस्थितियों को लाभकारी सौदों में बदलने से केवल समस्याओं को ही नहीं सुलझाते, बल्कि प्रभावपूर्ण ढंग से चुनौतियों को स्वीकार करते हैं।

(ज) **व्यापारिक गतिविधियों के लिए बेहतर वातावरण–** यदि व्यवसाय का संचालन ऐसे समाज में होना है, जहाँ जटिल एवं विविध प्रकार की समस्याएँ विद्यमान हैं, तब वहाँ सफलता की किरण काफी मद्धिम होती है। दूसरी ओर, श्रेष्ठ समाज ऐसा वातावरण तैयार करता है जो व्यावसायिक कार्यों के लिए अधिक उचित हो। जो इकाई लोगों के जीवन की गुणवत्ता के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील है, उसे अपना व्यवसाय चलाने के लिए परिणामस्वरूप अच्छा समाज मिलेगा।

(झ) **सामाजिक समस्याओं के लिए व्यवसाय उत्तरदायी–** नैतिक रूप से यह तर्क दिया जाता है कि व्यवसायों ने स्वयं कुछ सामाजिक समस्याओं को या तो पैदा किया है या उन्हें स्थायी बनाया है। उदाहरणस्वरूप, पर्यावरण, प्रदूषण, असुरक्षित कार्यस्थल, सरकारी संस्थानों में भ्रष्टाचार तथा विभेदात्मक रोज़गार प्रवृत्ति ऐसे ही उदाहरण हैं। अतः व्यवसाय का यह नैतिक कर्तव्य है कि वे समाज को नकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाले तत्वों का सामना करें, न कि उन्हें समाधान के लिए अन्य व्यक्तियों पर छोड़ दें।

6.3.2 सामाजिक उत्तरदायित्व के विपक्ष में मुख्य तर्क

(क) **अधिकतम लाभ उद्देश्य पर अतिक्रमण–** इस तर्क के अनुसार व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है। अतः सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करने की बात इस सिद्धांत के विपरीत है। वास्तव में, सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह व्यवसायी तभी कर सकते हैं, जब लाभ अधिकतम हो। यह सब तभी किया जा सकता है, जब लागत मूल्य कम हो तथा कार्यकुशलता बढ़ी हुई हो।

(ख) **उपभोक्ताओं पर भार–** यह भी तर्क दिया जाता है कि प्रदूषण नियंत्रण तथा वातावरण संरक्षण अत्यंत खर्चीले उपाय

हैं जिन्हें अपनाने में भारी आर्थिक बोझ उठाना पड़ता है। ऐसी दशा में व्यवसायी इस तरह के बोझ को मूल्यों में वृद्धि करके उपभोक्ताओं पर ही डालने का प्रयत्न करते हैं, बजाय इसके कि वे इसे स्वयं वहन करें। अतः सामाजिक उत्तरदायित्व के नाम पर उपभोक्ता से अधिक मूल्य वसूल करना सर्वथा अनुचित ही है।

(ग) सामाजिक दक्षता की कमी– सभी सामाजिक समस्याओं का निराकरण उसी प्रकार से नहीं किया जा सकता जिस प्रकार व्यावसायिक समस्याओं का किया जाता है। वास्तविकता यह है कि व्यवसायियों को सामाजिक समस्याओं को सुलझाने की न तो कोई समझ होती है और न ही उन्हें कोई प्रशिक्षण दिया जाता है। अतः यह तर्क दिया जाता है कि सामाजिक समस्याओं का निदान अन्य विशेषज्ञ एजेन्सियों द्वारा कराया जाना चाहिए।

(घ) विशाल जन-समर्थन का अभाव– प्रायः यह देखने में आया है कि सामान्य रूप से जनता सामाजिक कार्यक्रमों में उलझना पसन्द नहीं करती। इस तर्क के अनुसार, कोई भी व्यावसायिक इकाई जनता के विश्वास के अभाव एवं सहयोग के बिना सामाजिक समस्याओं को सुलझाने में सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकती।

6.3.3 सामाजिक उत्तरदायित्व की यथार्थवादिता

सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष एवं विपक्ष में दिए गए उपरोक्त तर्कों के आधार पर कोई भी व्यक्ति यह विचार कर सकता है कि वास्तव में व्यवसायियों को क्या करना चाहिए? क्या उन्हें अधिक से अधिक लाभ कमाने के विषय में ही अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए अथवा सामाजिक उत्तरदायित्वों के विषय में भी सोचना चाहिए। यदि यथार्थवादिता की ओर देखा जाये तो आज के परिवर्तनशील युग में व्यवसायी यह अहसास करने लगे हैं कि हमारा अस्तित्व तभी बना रह सकेगा, हम लाभकारी गतिविधियों के साथ-साथ सामाजिक बन्धनों का भी निर्वाह करते रहें। यदि देखा जाए तो इस अहसास का एक भाग वास्तविक प्रतीत नहीं होता क्योंकि यह केवल कहने भर की बात है। निजी उद्यमों को चालू रखने में यह धारणा आश्वस्त नहीं कर पाती है। यह भी कटु सत्य है कि निजी कंपनियाँ भी प्रजातांत्रिक समाज की चुनौतियों को स्वीकार करती हैं, जहाँ सभी लोगों को कुछ मानवीय अधिकार प्राप्त हैं तथा वे व्यवसाय से अच्छे व्यवहार की माँग कर सकते हैं सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा मूलतः नीतिशास्त्र संबंधी अवधारणा है। इसमें मानवीय कल्याण की बदलती धारणा सम्मिलित है तथा यह उन व्यावसायिक क्रियाओं के सामाजिक पहलुओं की चिंता पर जोर देती है जिसका सीधा संबंध सामाजिक जीवन की गुणवत्ता से है। यह अवधारणा व्यवसाय को इन सामाजिक

पहलुओं का ध्यान रखने एवं अपने सामाजिक प्रभावों की ओर ध्यान देने का मार्ग दिखलाती है। उत्तरदायित्व से अभिप्राय है कि सामाजिक संगठनों का उस समाज के प्रति एक प्रकार का कर्तव्य है, जिसमें रहकर वे कार्य करते हैं। उन्हें सामाजिक समस्याओं का समाधान करना है तथा आर्थिक वस्तु एवं सेवाओं के अतिरिक्त भी योगदान देना है। यहाँ पर उन ताकतों की ओर ध्यान देना आवश्यक होगा जिन्होंने व्यवसायियों को सामाजिक उत्तरदायित्व की ओर ध्यान देने के लिए बाध्य किया है। उनमें से कुछ अधिक महत्वपूर्ण निम्न हैंः

(क) **सार्वजनिक नियमन की आशंका–** प्रजातांत्रिक ढंग से चुनी हुई आधुनिक सरकारों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे समाज के सभी वर्गों की समान रूप से सुरक्षा करेंगी। जब व्यावसायिक संगठन सामाजिक उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से कार्य करते हैं तो जनता की सुरक्षा हेतु सार्वजनिक विनियमों को लागू किए जाने की कार्यवाही की जाती है। यही सार्वजनिक नियमन आशंका ही महत्वपूर्ण है जिसके कारण व्यावसायिक उद्यम सामाजिक उत्तरदायित्व को अपनाते हैं।

(ख) **श्रम आंदोलनों का दबाव–** विगत शताब्दी में श्रमिक अधिक शिक्षित एवं संगठित हुए हैं। अतः श्रम संगठन संपूर्ण विश्व में श्रमिकों के लिए अधिक फलदायी सिद्ध हो रहे हैं। इस धारणा ने उन उद्योगपतियों को 'रखो और निकालो' की धारणा से बदलकर उनके हितार्थ कार्य करने के लिए बाध्य किया है।

(ग) **उपभोक्ता जागरण का प्रभाव–** जन संपर्क साधनों तथा शिक्षा के विकास एवं बाजार में बढ़ती हुई प्रतियोगिता ने आज उपभोक्ता को अपने अधिकारों के प्रति अधिक जागरूक एवं अधिक सशक्त बना दिया है जिसके कारण 'क्रेता सावधान' के सिद्धांत को 'क्रेता बादशाह' में परिवर्तित कर दिया है। अतः व्यवसायियों ने ग्राहक उन्मुख नीतियों का पालन करना प्रारंभ कर दिया है।

(घ) **व्यावसायियों के लिए सामाजिक मानकों का विकास–** आज कोई भी व्यावसायिक इकाई अपने मनमाने ढंग या मनमाने मूल्य पर वस्तुओं का विक्रय नहीं कर सकती। नवीनतम सामाजिक मानकों के विकसित हो जाने से विधिसंगत नियमों का पालन करते हुए व्यवसायी सामाजिक आवश्यकता की वस्तुओं की पूर्ति करते हैं। कोई भी व्यवसाय समाज से पृथक नहीं हो सकता, केवल समाज ही व्यवसाय को स्थायी बनाता है तथा वही ही उसे उन्नतशील बनाता है। यह केवल सामाजिक मानकों के आधार पर ही व्यावसायिक क्रियाकलापों का निर्णय होता है।

(ङ) **व्यावसायिक शिक्षा का विकास–** व्यावसायिक शिक्षा के विकास ने समाज को सामाजिक उद्देश्यों के प्रति और अधिक जागरूक बना दिया है। आज शिक्षा के

प्रसार ने समाज के विभिन्न अंगों, जैसे– उपभोक्ता, विनियोजक कर्मचारी अथवा स्वामी, सभी को अधिक समझदार बना दिया है। पहले की अपेक्षा, जब शिक्षा का अभाव था, आज सभी वर्ग अपने हितों को अच्छी तरह पहचानते हैं।

(च) **सामाजिक हित तथा व्यावसायिक हितों में संबंध–** आज व्यावसायिक उपक्रमों ने यह सोचना आरंभ कर दिया है कि सामाजिक हित तथा व्यावसायिक हित एक-दूसरे के विरोधी न होकर एक-दूसरे के पूरक हैं। यह धारणा कि व्यवसाय का विकास केवल समाज का शोषण करने से ही संभव है, आज पुरानी हो चुकी है। इसका स्थान इस मत ने लिया है कि व्यवसाय दीर्घकाल तक तभी चल सकते हैं, जब वे समाज की सेवा भली-भाँति करें।

(छ) **पेशेवर एवं प्रबंधकीय वर्ग का विकास–** विश्वविद्यालयों तथा विशिष्ट प्रबंधन संस्थानों ने पेशेवर एवं प्रबंधकीय शिक्षा प्रदान कर एक विशिष्ट वर्ग को जन्म दिया है जिसका सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति पृथक मत है जो सर्वथा पूर्वकालीन मालिक/प्रबंधकों के वर्ग से भिन्न है। पेशेवर प्रबंधक व्यवसाय के सफलतापूर्वक संचालन के लिए केवल लाभ अर्जित करने की अपेक्षा समाज के विविध हितों में अधिक रुचि लेते हैं।

उपरोक्त एवं कुछ अन्य सामाजिक एवं आर्थिक बल आपस में मिलकर व्यवसाय को एक सामाजिक-आर्थिक क्रिया का रूप देते हैं। अब व्यवसाय मात्र धंधा नहीं रह गया है बल्कि एक ऐसा आर्थिक संस्थान है जो लघुकालीन एवं दीर्घकालीन आर्थिक हितों की आवश्यकताओं का मिलान करता है, उस समाज की जहाँ वह कार्यरत होता है। तत्वतः यह वो है जो व्यावसायिक सामान्य एवं विशिष्ट सामाजिक उत्तरदायित्वों का उत्थान करता है। इस बात में कोई मतभेद नहीं है कि व्यवसाय एक आर्थिक क्रिया है और वह उसे प्रमाणित भी करता है। यह भी सत्य है कि व्यवसाय समाज का एक अंग है तथा उस कर्त्तव्य को वह समाज की आवश्यकताओं को निरंतर पूरा करके निभाता है।

6.4 सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रकार

व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्वों को विस्तृत रूप से चार भागों में विभाजित किया जा सकता है, जो इस प्रकार से हैं–

(क) **आर्थिक उत्तरदायित्व–** मूल रूप से व्यावसायिक उपक्रम एक आर्थिक इकाई है तथा इसका सबसे पहला उत्तरदायित्व उपभोक्ता वस्तुओं एवं सेवाओं को समाज को उपलब्ध कर तथा लाभ पर विक्रय करके सुलभ कराना है, जिसकी समाज को आवश्यकता है। इस उत्तरदायित्व को निभाने में थोड़े विवेक की आवश्यकता होती है।

(ख) **कानूनी उत्तरदायित्व–** प्रत्येक व्यवसाय का यह उत्तरदायित्व है कि वह देश के कानून का पालन करे क्योंकि ये कानून

समाज के हित के लिए होते हैं। कानून का पालन करने वाला उद्यम सामाजिक उत्तरदायित्व का पालन करने वाला उद्यम होता है।

(ग) नैतिक उत्तरदायित्व– इसमें वह व्यवहार सम्मिलित है जिसकी समाज को व्यवसाय से अपेक्षा होती है लेकिन कानून से आबद्ध नहीं होता। उदाहरणार्थ, किसी भी उत्पाद का विज्ञापन करते समय मनुष्यों की धार्मिक भावनाओं का आदर करना। इस उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए स्वेच्छापूर्वक कार्य करने की भावना अपनानी होती है।

(घ) विवेकशील उत्तरदायित्व– यह पूर्णरूपेण स्वैच्छिक एवं बाध्यपूर्ण उत्तरदायित्व है जिसे व्यवसाय अपनाते हैं। उदाहरणार्थ, शिक्षण संस्थाओं के लिए दान देना अथवा बाढ़ या भूकंप पीड़ितों की सहायता करना। प्रबंधकों का यह कर्त्तव्य होता है कि पूँजीगत विनियोजन को सुरक्षित रखने के लिए सट्टेबाजी संबंधी सौदों से बचाकर स्वस्थ व्यावसायिक क्रियाओं में संलग्न रहें ताकि विनियोजन पर उचित लाभ मिलता रहे।

6.5 व्यवसाय का विभिन्न संबंधित वर्गों के प्रति उत्तरदायित्व

व्यवसाय के सामाजिक उद्देश्यों की पहचान कर लेने के उपरांत यह निश्चित करना अत्यंत आवश्यक है कि एक व्यवसाय किसके प्रति कितना उत्तरदायी है। निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि व्यवसाय स्वयं यह तय करे कि उन्हें किस क्षेत्र में कार्य करना है। उनमें से कुछ प्रकार निम्न हैंः

(क) व्यवसाय का अंशधारियों अथवा स्वामियों के प्रति उत्तरदायित्व– एक व्यवसाय का यह उत्तरदायित्व है कि वह स्वामियों अथवा अंशधारियों को उनके द्वारा विनियोजित पूँजी पर उचित प्रतिफल दे तथा इसका विश्वास दिलाए कि उनकी विनियोजित पूँजी व्यवसाय में सुरक्षित है। एक निगमित निकाय के रूप में एक कंपनी का यह भी कर्तव्य है कि वह अंशधारियों को कंपनी की कार्यशैली तथा भविष्य में विकास की योजना के विषय में नियमित एवं सही सूचना दे।

(ख) कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व– एक उद्यम के प्रबंधकों का यह भी उत्तरदायित्व है कि वे कर्मचारियों को अर्थपूर्ण कार्य के सुअवसर प्रदान करें। प्रबंधकों को कर्मचारियों का सहयोग प्राप्त करने के लिए सही ढंग की कार्य दशाओं का सृजन करना चाहिए। व्यवसाय को चाहिए कि वह कर्मचारियों को श्रम संगठन बनाने में प्रजातांत्रिक अधिकारों का उपयोग करने के लिए हाथ बढ़ाए। श्रमिकों को उचित वेतन तथा उचित व्यवहार का प्रबंधकों से भरोसा मिलना चाहिए।

(ग) उपभोक्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व– उपभोक्ताओं को उत्तम किस्म की वस्तु सेवाएँ उचित मूल्य पर, उचित समय

तथा उचित मात्रा में उपलब्ध कराने का व्यवसाय का महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। व्यवसाय को मिलावट करने के विरुद्ध सतर्कता बरतने, निम्न स्तर के माल की पूर्ति न होने देने, आवश्यक सेवाओं की पूर्ति में कमी न होने देने तथा ग्राहकों से शिष्टाचार का बर्ताव करने एवं धोखापूर्ण तथा अविश्वसनीय विज्ञापन पर रोक लगाने आदि कार्यों के संपादन का भी उत्तरदायित्व है। उपभोक्ताओं को उत्पाद से संबंधित सूचनाएँ पाने का अधिकार है तथा उन्हें कंपनी के क्रय आदि कार्यों से संबंधित सूचनाएँ भी अवश्य मिलनी चाहिए।

(घ) **सरकार तथा समाज के प्रति उत्तरदायित्व-** देश के कानूनों का पालन करना तथा करों का सरकार को समयानुसार ईमानदारी से भुगतान करने का भी व्यवसाय का उत्तरदायित्व है। उन्हें देश के एक अच्छे नागरिक की तरह व्यवहार करना चाहिए तथा सामाजिक रीति रिवाजों के पालन हेतु उचित कदम उठाने चाहिए। कारखानों की चिमनियों से निकलने वाला धुआँ तथा उनके गंदे पानी से वायु तथा पानी को प्रदूषित होने से बचाना चाहिए जिससे स्थानीय निवासियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

6.6 व्यवसाय तथा पर्यावरण संरक्षण

पर्यावरण संरक्षण एक विषम समस्या है जो व्यावसायिक प्रबंधकों तथा निर्णायकों को साहस के साथ सामना करने के लिए प्रेरित करती है। पर्यावरण की परिभाषा में मनुष्य के आस-पास के प्राकृतिक तथा मानव-निर्मित दोनों ही वातावरण को सम्मिलित किया जाता है। ये वातावरण प्राकृतिक संसाधनों में भी है और जो मानव-जीवन के लिए उपयोगी हैं। इन संसाधनों को प्राकृतिक संसाधन भी कहा जा सकता है जिसमें भूमि, जल, हवा, वनस्पति तथा कच्चा माल इत्यादि सम्मिलित हैं। मानव-निर्मित संसाधन, जैसे सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक-आर्थिक संस्थान तथा मनुष्य इत्यादि। पर्यावरण, जिसमें भूमि, जल, वायु, मनुष्य, पेड़-पौधे तथा पशु-पक्षी सभी को सम्मिलित किया जाता है, को पतन से बचाते हुए इनका संरक्षण करना आवश्यक होता है ताकि वातावरण के संतुलन को बनाये रखा जा सके। एक प्राकृतिक संसाधन जिसमें भूमि, जल तथा वायु, कच्चा माल आदि आते हैं तो दूसरा मनुष्यों के प्रयासों से रचित सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक एवं आर्थिक संस्थान तथा मनुष्य की गणना की जाती है। यह सर्वविदित है कि शुद्ध वातावरण का तीव्र गति से ह्रास हो रहा है जिसका कारण विशेषतः औद्योगिक गतिविधियों में वृद्धि है। सामान्यतः देश के महानगरों, जैसे– कानपुर, जयपुर, दिल्ली, पानीपत, कोलकाता तथा अन्य नगरों में यह आम दृश्य है। इन महानगरों के कारखानों से निकले उत्सर्जन मनुष्य जाति के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालते हैं। यद्यपि कुछ अवशेषों का उपयोग कच्चे माल तथा ऊर्जा के रूप में, अपरिहार्य है लेकिन उत्पादकों के लिए इसके प्रयोग से कुप्रभावों को कम करना एक

पर्यावरण समस्याएँ

संयुक्त राष्ट्र ने प्राकृतिक पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाली आठ समस्याओं की पहचान की है–

(क) ओजोन क्षय

(ख) भूमण्डलीय ऊष्मीकरण/ऊष्णता

(ग) अनवरत खतरनाक अवशेष

(घ) जल प्रदूषण

(ङ) ताजे जल की मात्रा एवं गुणवत्ता

(च) वनोन्मूलन

(छ) भूमि निम्नीकरण (क्षय)

(ज) जैविक परिवर्तनों का भय

बड़ी समस्या है। पर्यावरण संरक्षण हम सभी के लिए उपयोगी है।

प्रदूषण भौतिक, रासायनिक तथा जैविक लक्षणों, जैसे- हवा, भूमि तथा जल में बदलाव लाता है। प्रदूषण मानव जीवन के लिए हानिकारक तथा अन्य वर्गों के जीवन को नष्ट करने वाला है। यह जीवन स्तर को गिराता है तथा सांस्कृतिक विरासतों को भी हानि पहुँचाता है। पर्यावरण केवल सीमित प्रदूषण को ही समाप्त कर पाता है। अतः यह बढ़ता ही जाता है। वायु प्रदूषण मुख्यतः रासायनिक क्षय तथा कूड़े-कचरे को नदियों में प्रवाहित करने से होता है। दुर्गंधमय क्षय तथा भारी प्रदूषित सामग्री एकत्रित होने से भूमि क्षतिग्रस्त होती है। प्रदूषण के कारण वातावरणीय ह्रास होता है तथा मानव स्वास्थ्य एवं प्राकृतिक एवं बनावटी संसाधनों को हानि पहुँचती है। वातावरण की सुरक्षा का प्रत्यक्ष संबंध प्रदूषण नियंत्रण से है।

6.6.1 प्रदूषण के कारण

आज के युग में, चाहे वह सरकारी क्षेत्र हो या निजी, जिनमें उद्योग, सरकार, कृषि, खनन, ऊर्जा, यातायात, निर्णायक उद्योग तथा उपभोक्ता सम्मिलित हैं, सभी गंदगी फैलाते हैं तथा कूड़ा-करकट फैलाते हैं। इन प्रदूषित करने वाली वस्तुओं में उत्पादन के समय छाँटकर अलग निकाली गयी वस्तुएँ या उपभोक्ताओं द्वारा परित्यक्त वस्तुएँ होती हैं। इन्हीं वस्तुओं के द्वारा प्रदूषण उत्पन्न होता है। अन्य प्रदूषण के कारणों में उद्योग सर्वोपरि है। व्यावसायिक क्रियाओं में उत्पादन-वितरण, यातायात, गोदाम, वस्तुओं का उपभोग तथा सेवाएँ भी मुख्य स्थान रखती हैं। बहुत सी व्यावसायिक इकाइयाँ– (क) हवा; (ख) जल; (ग) भूमि; एवं (घ) ध्वनि प्रदूषण के लिए उत्तरदायी पाई गई हैं।

इस प्रकार के प्रदूषण के कारणों को नीचे समझाया गया है–

(क) **वायु प्रदूषण–** वायु प्रदूषण वह है जब बहुत से तत्व मिलकर वायु की गुणवत्ता को कम कर देते हैं। मोटर वाहनों द्वारा छोड़ा गया कार्बन मोनो ऑक्साइड वायु प्रदूषण फैलाता है। कारखानों से निकला हुआ धुआँ प्रदूषण फैलाता है।

(ख) **जल प्रदूषण–** पानी मुख्यतः रसायन एवं कचरा के ढ़लाव से प्रदूषित हो जाता है। वर्षों से व्यवसायों एवं शहरों का कचरा नदियों एवं झीलों में बिना परिणाम की परवाह किए फेंका जाता रहा है। जल प्रदूषण के कारण प्रति वर्ष हजारों पशुओं की मृत्यु हो जाती है और यह मानव जीवन के लिए गंभीर चेतावनी है।

(ग) **भूमि प्रदूषण–** इस प्रदूषण का कारण कचरे को भूमि के अंदर दबा देने से होता है। इसके कारण भूमि की गुणवत्ता तो नष्ट होती ही है, भूमि की उर्वरा शक्ति भी कम हो जाती है। भूमि की जो गुणवत्ता पहले ही नष्ट हो चुकी है, वह मानव जाति के लिए आज के समय में बहुत बड़ी चुनौती बन गई है।

(घ) **ध्वनि प्रदूषण–** फैक्ट्रियों तथा मोटर गाड़ियों से निकलती ध्वनि केवल खीझ का स्रोत ही नहीं है, बल्कि स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए चेतावनी है। ध्वनि प्रदूषण के कारण बहुत-सी बीमारियाँ हो सकती हैं, जैसे- कम सुनना, दिल की बीमारी लगना तथा मानसिक असंतुलन इत्यादि।

6.6.2 प्रदूषण नियंत्रण की आवश्यकता

मानव जाति तथा अन्य जीव-धारियों के लिए वायु, जल तथा हवा अत्यंत आवश्यक तत्व हैं या यह कहा जाए कि इनके बिना जीवन असंभव है तो यह कहना भी गलत नहीं होगा। इन जीवनदायी तत्वों को कितनी क्षति पहुँची है यह इस बात पर निर्भर करता है कि प्रदूषण किस प्रकार का है। प्रदूषण फैलाने वाले तत्वों को कितनी मात्रा में नष्ट कर दिया गया है तथा हमारे माध्यम प्रदूषण स्रोत से कितनी दूरी पर हैं। इस प्रकार की क्षति पर्यावरण गुणवत्ता में परिवर्तन कर देती है तथा जीवन को दुष्कर बना देती है। इस प्रकार से वायु मनुष्य के लिए सांस लेने में हानिकारक हो सकती है। पानी पीने के योग्य नहीं रहता तथा भूमि धरती माता न रहकर विषैले पदार्थ उगलने वाली बन जाती है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि प्रदूषण रोकने के लिए कुछ आवश्यक कदम उठाये जाएं ताकि मानव जीवन सुखी एवं संपन्न रह सके। प्रदूषण को नियत्रित करने के कुछ मुख्य कारण निम्नलिखित हैंः

(क) **स्वास्थ्य संबंधी आशंकाओं को कम करना–** कैंसर, हृदय एवं फेफड़ों से संबंधित बीमारियाँ हमारे समाज में मृत्यु के प्रमुख कारण हैं तथा ये बीमारियाँ वातावरण में दूषित तत्वों के कारण हैं। प्रदूषण नियंत्रण उपाय ऐसी बीमारियों की भंयकरता को ही नहीं रोकते, बल्कि मानव-जीवन को सुखी बनाने में भी सहायक होते हैं तथा स्वास्थ्य जीवन जीने का सुअवसर प्रदान करते हैं।

(ख) दायित्वों के जोखिम को कम करना– यह संभावना हो सकती है कि व्यावसायिक इकाइयों को विषाक्त गैस आदि से पीड़ित कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी बना दिया जाए जिन्होंने प्रदूषण फैलाया है। अतः यह आवश्यक है कि दायित्वों के जोखिमों को कम करने के लिए फैक्ट्री में तथा भवनों के अन्य भागों में प्रदूषण नियंत्रण उपकरण स्थापित किए जाएँ।

(ग) लागत में बचत– एक प्रभावी प्रदूषण नियंत्रण कार्यक्रम उत्पादन लागत को कम करने के लिए भी आवश्यक है। यह उस समय अधिक आवश्यक है, जब उत्पादन इकाई, उत्पादन क्रिया में अधिक कचरा छोड़ रही हो। ऐसी अवस्था में कचरे तथा मशीन की सफाई में अधिक धन व्यय करना पड़ेगा, जिसे सही प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों द्वारा बचाया जा सकता है।

(घ) सार्वजनिक छवि में सुधारः आज जनता वातावरण की गुणवत्ता के बारे में अधिक जागरूक है। कचरे के नियंत्रण संबंधी अच्छी नीतियों के विषय में जानकर जनता और अधिक प्रभावित होती है। जब एक व्यावसायिक संस्था वातावरण को अच्छा बनाने का उत्तरदायित्व स्वयं ग्रहण कर लेती है तो उस संस्था की सार्वजनिक प्रतिष्ठा एक सार्वजनिक कर्तव्यनिष्ठ उद्यम के रूप में उभरती है।

(ङ) अन्य सामाजिक हित/लाभ– प्रदूषण नियंत्रण के अन्य भी बहुत से हित/लाभ प्राप्त होते हैं, उदाहरणार्थ– स्पष्ट दृश्यता, स्वच्छ इमारतें, उच्च कोटि का जीवन स्तर तथा प्राकृतिक उत्पादों की शुद्ध रूप में उपलब्धता।

6.6.3 पर्यावरण संरक्षण में व्यवसाय की भूमिका

पर्यावरण का स्वरूप हम सभी के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसको नष्ट होने से बचाने का उत्तरदायित्व हम सभी का है। चाहे वह स्वयं सरकार हो, व्यावसायिक उद्यम हों, उपभोक्ता हों, कर्मचारी हों या समाज के अन्य सदस्य, सभी को इसे प्रदूषित होने से बचाने के लिए कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिए। खतरनाक प्रदूषण उत्पादों पर रोक लगाने के लिए सरकार अधिनियम बना सकती है। उपभोक्ता, कर्मचारी तथा समाज के सदस्य ऐसे उत्पादों के उपभोग को बंद कर सकते हैं जो पर्यावरण के लिए घातक हैं। पर्यावरण संबंधी समस्याओं को सुलझाने के लिए व्यावसायिक इकाइयों को स्वयं आगे आना चाहिए। व्यावसायिक इकाइयों की यह भी सामाजिक जिम्मेदारी है कि वे केवल प्रदूषण जनित बातों पर ही ध्यान केंद्रित न करें बल्कि पर्यावरण संसाधनों की सुरक्षा का भी उत्तरदायित्व अपने ऊपर लें। व्यावसायिक इकाइयाँ धन की सृजनकर्ता, रोजगारदाता तथा भौतिक एवं मानवीय संसाधनों को संभालने वाली संस्थाएँ हैं। वे यह भी समझती हैं कि प्रदूषण नियंत्रण से संबंधित समस्याओं को कैसे सुलझाया जा सकता

है जिसमें उत्पादन प्रक्रिया में परिवर्तन करके, संयंत्रों के रूप में बदलाव करके, घटिया किस्म के कच्चे माल के प्रयोग के स्थान पर उच्च कोटि के कच्चे माल का प्रयोग करके, प्रदूषण को नियंत्रित करने में सहायता प्रदान कर सकती हैं। प्रदूषण नियंत्रण के कुछ उपाय निम्नलिखित हैं-

(क) उच्च स्तरीय प्रबंधकों द्वारा पर्यावरण सुरक्षा तथा प्रदूषण नियंत्रण के लिए वचनबद्ध होकर कार्य करना।

(ख) इस बात का विश्वास दिलाना कि उद्यम की प्रत्येक इकाई पर्यावरण सुरक्षा तथा प्रदूषण नियंत्रण के लिए वचनबद्ध है।

(ग) अच्छे किस्म के कच्चे माल के क्रय के लिए नियम बनाना, उच्च कोटि की तकनीक अपनाना, कचरे के निष्पादन के लिए वैज्ञानिक तकनीक अपनाना ताकि प्रदूषण का नियंत्रण हो।

(घ) प्रदूषण नियंत्रण से संबंधित सरकार द्वारा बनाये गए नियमों का पालन करना।

(ङ) जोखिम भरे द्रव्य पदार्थों का उचित व्यवस्था हेतु सरकारी कार्यक्रमों में सहयोग करना। इनमें प्रदूषित नदियों की सफाई, वृक्षारोपण तथा वनों की कटाई को रोकना आदि हो सकते हैं।

(च) समय-समय पर प्रदूषण नियंत्रण कार्यक्रम की लागत एवं प्रतिफल का मूल्यांकन करना ताकि पर्यावरण सुरक्षा हेतु प्रगतिशील कार्यवाही की जा सके।

(छ) प्रदूषण नियंत्रण कार्यक्रम के सफल क्रियान्वयन हेतु आपूर्तिकर्ता, डीलर्स तथा क्रेताओं के तकनीकी ज्ञान तथा अनुभवों का लाभ प्राप्त करने हेतु समय पर कार्यशालाओं का आयोजन करना।

6.7 व्यावसायिक नैतिकता

सामाजिक दृष्टिकोण से व्यवसाय का मुख्य कार्य समाज को आवश्यक वस्तुएँ एवं सेवाएँ उपलब्ध कराना है। व्यक्तिगत दृष्टिकोण से व्यावसायिक इकाइयों का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना है। यह भी कहा जा सकता है कि व्यावसायिक इकाई के मुख्य उद्देश्य तथा सामाजिक उद्देश्यों में टकराव नहीं होना चाहिए। यद्यपि व्यावसायिक इकाइयों के संचालनकर्ताओं के निर्णय एवं क्रियाकलाप सदैव जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप होंगे, यह सदैव सही नहीं है। एक उद्यम आर्थिक कार्यों (जैसे- आय, लागत तथा लाभ) में बहुत उच्च कोटि का हो सकता है, लेकिन सामाजिक कार्य पालन में उतना अच्छा नहीं हो, जैसे- उत्पाद की पूर्ति उचित मात्रा में उचित मूल्य पर करना। इससे यह प्रश्न सामने खड़ा हो जाता है कि सामाजिक दृष्टिकोण से क्या उचित है तथा क्या अनुचित। इस प्रश्न का उत्तर इसलिए और भी आवश्यक है कि व्यावसायिक उद्यमों का जन्म समाज से होता है तथा वे समाज से ही प्रभावित होते हैं। अतः उन्हें अपने आप को स्थापित करने तथा

अपने बारे में व्याख्या करने के लिए सामाजिक मूल्यों को प्राथमिकता देनी चाहिए। व्यावसायिक नैतिकता व्यक्तिगत हितों तथा सामाजिक हितों में सामंजस्य स्थापित करने की एक विधि है।

6.7.1 व्यावसायिक नैतिकता की अवधारणा

नैतिकता शब्द का मूल ग्रीक शब्द 'एथिक्स' है जिसका अर्थ चरित्र मानक, आदर्श या नैतिकता से है, जो एक समाज में प्रचलित होते हैं। यदि हम एक कार्य, निर्णय या व्यवहार को नैतिक मानें जो समाज की मान्यताओं या सिद्धांतों के अनुरूप है तो यह नैतिक ही होगा। इससे इस बात को बल मिलेगा कि क्या यह अपने आप में पूर्ण सिद्धांत अपने आप में पूर्ण नैतिक मूल्य हैं। दूसरी ओर बहुतों का यह मानना है कि हमारे समाज में विगत कुछ वर्षों में व्यवहारिक मूल्यों में परिवर्तन आया है। यद्यपि कुछ परिपूर्ण मूल्यों पर हम सहमत हो सकते हैं। जो सिद्धांत व्यवसाय के लिए अधिक कठोर हुए हैं उनके उदाहरण हैं- लोगों से कैसे व्यवहार किया जाए, पर्यावरण संरक्षण कार्यस्थल पर सुरक्षा एवं कर्मचारियों के अधिकार आदि। इन सब में कुछ समय से परिवर्तन आया है, यह हम स्पष्ट देख सकते हैं।

व्यावसायिक नैतिकता का सीधा संबंध व्यावसायिक उद्देश्य, चलन तथा तकनीक से है, जो समाज के साथ-साथ चलन में रहते हैं। एक व्यावसायिक इकाई को चाहिए कि वह सही मूल्य वसूल करे, सही तोल कर दे, ग्राहकों से सद्भावनापूर्ण व्यवहार करे। नैतिकता में मानवीय कार्यों का यह निश्चित करने के लिए आलोचनात्मक विश्लेषण किया जाता है कि वे सत्य एवं न्याय जैसे दो महत्त्वपूर्ण मानदंडों के आधार पर सही हैं या गलत।

विश्व में यह धारणा प्रबल हो चुकी है कि समाज के विकास के लिए व्यावसायिक इकाइयों द्वारा नैतिक मूल्यों का पालन अति आवश्यक है। नैतिकतापूर्ण व्यवसाय एक अच्छा व्यवसाय होता है। यह जनता में विश्वास पैदा करता है तथा अपनी साख में वृद्धि भी करता है। लोगों में विश्वास जगाकर अधिक लाभ अर्जित करता है। नैतिकता का पालन हमारे जीवन स्तर को ऊपर उठाने में सहायक है तथा जो कार्य हम करते हैं, उसे सराहना भी मिलती है।

6.7.2 व्यावसायिक नैतिकता के तत्व

चूँकि नैतिकतापूर्ण व्यावसायिक व्यवहार व्यावसायिक उद्यमों तथा समाज दोनों के हित में है, इसलिए इससे इस भावना को प्रोत्साहन मिलता है कि उद्यम अपने दैनिक क्रियाकलापों में किस प्रकार इन्हें अपना सकते हैं। एक संचालित व्यावसायिक उद्यम के व्यावसायिक नैतिकता के मूल तत्व निम्नांकित हैं–

(क) **उच्च स्तरीय प्रबंध की प्रतिबद्धता–** उच्च स्तरीय प्रबंध की नैतिकता के व्यवहार के विषय में संगठन में समझाने की भूमिका बड़ी निर्णायक होती है। परिणामों को प्राप्त करने के लिए मुख्य कार्यकारी अधिकारी तथा अन्य उच्च स्तरीय प्रबंधकों को निश्चित रूप से तथा दृढ़तापूर्वक नैतिकता

के व्यवहार के लिए वचनबद्ध होना चाहिए। उन्हें संगठन के मूल्यों के विकास तथा अनुरक्षण के लिए सदैव अपना नेतृत्व अवरुद्ध गति से प्रदान करते रहना चाहिए।

(ख) **सामान्य कोड का प्रकाशन–** ये वे उद्यम हैं जिनके पास प्रभावी नैतिक कार्यक्रम हैं, वे सभी संगठनों के लिए नैतिक सिद्धांतों को लिखित प्रलेखों के रूप में परिभाषित करते हैं, जिन्हें 'कोड' कहा जाता है। कुछ नैतिक मूल्यों, जैसे– आधारभूत ईमानदारी एवं कानून पालन, उत्पादन सुरक्षा एवं गुणवत्ता, कार्यस्थल पर सुरक्षा, हितों का टकराव, नियोजन विधियाँ, बाजार की उचित विक्रय प्रणाली तथा वित्तीय प्रतिवेदन आदि के विषय में कानूनी प्रकाशन होने इत्यादि को सम्मिलित करते हैं।

(ग) **अनुपालन तंत्र की स्थापना–** यह निश्चित करने के लिए कि वास्तविक निर्णय तथा कार्यों का निरूपण फर्म के नैतिक स्तरों के अनुसार किया जाता है, उचित यंत्र निर्माण कला की स्थापना करनी चाहिए। इसके कुछ उदाहरण हैं, भर्ती तथा भाड़े पर श्रम लेने के लिए नैतिक मूल्यों की ओर ध्यान देना। प्रशिक्षण के समय नैतिकतापूर्ण व्यवहार करना तथा अनैतिक कार्यों के विषय में कर्मचारियों को सूचित करना।

(घ) **हर स्तर पर कर्मचारियों को सम्मिलित करना–** व्यवसाय को नैतिकता का वास्तविक रूप देने के लिए कर्मचारियों को हर स्तर पर सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि उनकी संबद्धता नैतिक कार्यक्रमों में भी हो सके। फर्म की नैतिक नीतियों के निर्धारण में कर्मचारियों के छोटे गुटों को सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा उनके रुझान का मूल्यांकन भी किया जाना चाहिए।

(ङ) **परिणामों का मापन–** यद्यपि यह बहुत ही कठिन कार्य है कि नैतिक कार्यक्रमों की माप की जाए लेकिन फिर भी फर्में कुछ मानक स्थापित करके ऐसा कर सकती हैं। भविष्य की कार्यवाही में विषय में उच्च-स्तरीय प्रबंधक तथा कर्मचारियों की टीम इस विषय में वाद-विवाद कर सकते हैं।

मुख्य शब्दावली

सामाजिक उत्तरदायित्व	कानूनी उत्तरदायित्व	ध्वनि प्रदूषण
वातावरण	प्रदूषण	नैतिकता
वातावरण संरक्षण	वायु प्रदूषण	व्यावसायिक नैतिकता
जल प्रदूषण	भूमि प्रदूषण	नैतिकता की आचार संहिता

सारांश

सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा– व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व का अर्थ उन नीतियों का अनुसरण करना, उन निर्णयों को लेना अथवा उन कार्यों को करना है जो समाज के लक्ष्यों एवं मूल्यों की दृष्टि से वांछनीय हैं।

सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता– व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व की आवश्यकता का आविर्भाव फर्म के हित तथा समाज के हित के कारण होता है।

सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष में तर्क– मुख्य तर्क हैं–

(क) अस्तित्व एवं विकास के लिए औचित्य,
(ख) दीर्घकालीन हित तथा फर्म की छवि,
(ग) सरकारी विनियम से बचाव,
(घ) समाज का रखरखाव,
(ङ) व्यवसाय के संसाधनों की उपलब्धता,
(च) समस्याओं का लाभकारी अवसरों में रूपांतरण,
(छ) व्यापारिक गतिविधियों के लिए बेहतर वातावरण, और
(ज) सामाजिक समस्याओं के लिए व्यवसाय उत्तरदायी।

सामाजिक उत्तरदायित्व के विपक्ष में तर्क– सामाजिक उत्तरदायित्व के विपक्ष में मुख्य तर्क हैं–

(क) अधिकतम लाभ उद्देश्य पर अतिक्रमण,
(ख) उपभोक्ताओं पर भार,
(ग) सामाजिक दक्षता की कमी, एवं
(घ) विशाल जन समर्थन का अभाव।

सामाजिक उत्तरदायित्व की यथार्थवादिता– सामाजिक उत्तरदायित्व की वास्तविकता यह है कि सामाजिक उत्तरदायित्व से संबंधित अलग-अलग तर्कों के होते हुए भी व्यावसायिक उद्यम कुछ बाह्य ताकतों के प्रभाव के कारण, सामाजिक उत्तरदायी होने के लिए बाध्य हैं। ये ताकतें हैं–

(क) सार्वजनिक नियमन की आशंका,
(ख) श्रम आंदोलन का दबाव,
(ग) उपभोक्ता जागरण का प्रभाव,
(घ) व्यवसायियों के लिए सामाजिक मानकों का विकास,
(ङ) व्यावसायिक शिक्षा का विकास,
(च) सामाजिक हित तथा व्यावसायिक हितों में संबंध, एवं
(छ) पेशेवर एवं प्रबंधकीय वर्ग का विकास।

व्यवसाय का विभिन्न संबंधित वर्गों के प्रति उत्तरदायित्व व्यावसायिक उद्यमों का निम्न के प्रति उत्तरदायित्व होता है–

(क) अंशधारी अथवा स्वामी
(ख) कर्मचारी
(ग) उपभोक्ता

(घ) सरकार तथा
(ङ) समाज

अंशधारियों को उनके द्वारा विनियोजित पूँजी पर उचित प्रतिफल, विनियोजित पूँजी की सुरक्षा; कर्मचारियों को अर्थपूर्ण कार्य के सुअवसर प्रदान करके उपभोक्ताओं को उत्तम किस्म की वस्तुएँ/सेवाएँ उचित मूल्य पर, उचित समय तथा उचित मात्रा में उपलब्ध कराना; सरकार को समयानुसार करों का भुगतान तथा वातावरण संरक्षण इत्यादि, व्यवसाय के कुछ सामाजिक उत्तदायित्व हैं।

व्यवसाय तथा पर्यावरण संरक्षण– पर्यावरण संरक्षण एक विषम समस्या है, जो व्यावसायिक प्रबंधकों तथा निर्णायकों को साहस के साथ सामना करने के लिए प्रेरित करती है। पर्यावरण की परिभाषा में मनुष्य के आस-पास के प्राकृतिक तथा मानव-निर्मित दोनों ही वातावरण को सम्मिलित किया जाता है। प्रदूषण– वातावरण में हानिकारक तत्वों का मिलना, विस्तृत रूप से, वास्तव में औद्यौगिक उत्पादन का ही परिणाम है। प्रदूषण मानव-जीवन के लिए हानिकारक तथा अन्य वर्गों के जीवन को भी नष्ट करने वाला है।

प्रदूषण के कारण– अन्य प्रदूषण के कारणों में उद्योग सर्वोपरि है; मात्रा एवं विषाक्तता के परिप्रेक्ष्य में उद्योग अपशिष्ट पदार्थों का एक मुख्य उत्सर्जक है। ऐसे बहुत-से व्यावसायिक उद्यम हैं, जो वायु, जल, भूमि तथा ध्वनि प्रदूषण के लिए जिम्मेवार हैं।

प्रदूषण-नियंत्रण की आवश्यकता– प्रदूषण को नियंत्रित करने के कुछ मुख्य कारण हैं–
(क) स्वास्थ्य संबंधी आशंकाओं को कम करना,
(ख) दायित्वों के जोखिम को कम करना,
(ग) लागत में बचत, तथा
(घ) अन्य सामाजिक हित/लाभ।

पर्यावरण संरक्षण में व्यवसाय की भूमिका– समाज का प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण के संरक्षण के लिए कुछ न कुछ कर सकता है। पर्यावरण संबंधी समस्याओं को सुलझाने के लिए व्यावसायिक इकाइयों को स्वयं पहल करनी चाहिए। कुछ कदम जो वे उठा सकते हैं, वे हैं– उच्च स्तरीय प्रबंध की प्रतिबद्धता, स्पष्ट नीतियाँ एवं कार्यक्रम, सरकारी नियमों का पालन करना, सरकारी कार्यक्रमों में भागीदारी, समय-समय पर पर्यावरण-नियंत्रण, कार्यक्रम का मूल्यांकन तथा संबंधित व्यक्तियों की समुचित शिक्षा तथा प्रशिक्षण।

व्यावसायिक नैतिकता की अवधारणा– नैतिकता का संबंध समाज द्वारा निर्धारित व्यवहार के मानकों के आधार पर यह निर्णय लेने से है कि कौन सा मानवीय व्यवहार उचित या अनुचित है।

व्यावसायिक नैतिकता के तत्व– कुछ मूल व्यावसायिक नैतिकता के तत्वों को अपनाकर कोई भी उद्यम, कार्यस्थल पर व्यावसायिक नैतिकता को प्रोत्साहित कर सकता है, जैसे–
(क) उच्च स्तरीय प्रबंध की प्रतिबद्धता,
(ख) कोड का प्रकाशन,
(ग) अनुपालन तंत्र की स्थापना,
(घ) हर स्तर पर कर्मचारियों को सम्मिलित करना, तथा
(ङ) परिणामों का मापन।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. सामाजिक उत्तरदायित्व है–
   (क) कानूनी उत्तरदायित्व जैसा। (ख) कानूनी उत्तरदायित्व से अधिक विस्तृत।
   (ग) कानूनी उत्तरदायित्व से छोटा। (घ) इनमें से कोई नहीं।
2. यदि एक व्यवसाय को समाज में कार्य करना है तो कौन सी समस्या भिन्न एवं जटिल है–
   (क) सफलता के कम अवसर। (ख) सफलता के महान अवसर।
   (ग) असफलता के कम अवसर। (घ) सफलता तथा असफलता में कोई संबंध नहीं।
3. व्यवसायियों में सुलझाने का चातुर्य होता है–
   (क) सभी सामाजिक समस्याओं को। (ख) कुछ सामाजिक समस्याओं को।
   (ग) किसी सामाजिक समस्या को नहीं। (घ) सभी आर्थिक समस्याओं को।
4. एक उद्यमं को एक अच्छे नागरिक की भाँति व्यवहार करना चाहिए, यह किसके प्रति उत्तरदायित्व का उदाहरण है
   (क) स्वामी (ख) कर्मचारी
   (ग) उपभोक्ता (घ) समाज।
5. वातावरण सुरक्षा किसके सर्वोत्तम प्रयत्नों द्वारा की जा सकती है?
   (क) व्यावसायियों द्वारा (ख) सरकार द्वारा
   (ग) वैज्ञानिकों द्वारा (घ) सभी व्यक्तियों द्वारा
6. ऑटोमोबाइल्स द्वारा कार्बन मोनोक्साइड का छोड़ना प्रत्यक्ष रूप में किसमें सहयोग करता है?
   (क) जल प्रदूषण। (ख) ध्वनि प्रदूषण।
   (ग) भूमि प्रदूषण। (घ) सभी।
7. निम्नांकित में से कौन प्रदूषण नियंत्रण की आवश्यकता का वर्णन कर सकता है?
   (क) लागत बचत। (ख) कम किया हुआ जोखिम दायित्व।
   (ग) स्वास्थ्य जोखिमों को कम करना। (घ) सभी।
8. निम्नलिखित में से कौन समाज का अधिकतम हित कर सकता है?
   (क) व्यावसायिक सफलता (ख) कानून एवं अधिनियम
   (ग) नैतिकता (घ) पेशेवर प्रबंध
9. नैतिकता महत्त्वपूर्ण है–
   (क) उच्च स्तरीय प्रबंध के लिए। (ख) मध्य स्तरीय प्रबंध के लिए।
   (ग) बिना प्रबंधकीय कर्मचारियों के लिए। (घ) सभी के लिए।
10. एक व्यावसायिक इकाई में निम्नलिखित में से कौन अकेले नैतिक कार्यक्रमों को प्रभावी बना सकता है?
   (क) कोड का प्रकाशन।
   (ख) कर्मचारियों का सहयोग।
   (ग) आज्ञापालन की स्थापना तथा यंत्र निर्माण।
   (घ) इनमें से कोई नहीं।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व से क्या तात्पर्य है? यह कानूनी उत्तरदायित्व से किस प्रकार भिन्न है?
2. वातावरण क्या है? वातावरण-प्रदूषण क्या है?
3. व्यावसायिक नैतिकता क्या है? व्यावसायिक नैतिकता के आधारभूत तत्वों को बताइए।
4. संक्षेप में समझाइए–
   (क) वायु प्रदूषण, (ख) जल प्रदूषण, तथा
   (ग) भूमि प्रदूषण।
5. व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व के मुख्य क्षेत्र क्या हैं?
6. कंपनी अधिनियम-2013 के अनुसार निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व को परिभाषित करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक उत्तरदायित्व के पक्ष तथा विपक्ष में तर्क दीजिए।
2. उन शक्तियों का वर्णन कीजिए जो व्यावसायिक उद्यमों की सामाजिक जिम्मेदारियों को बढ़ाने के लिए उत्तरदायी हैं।
3. "व्यवसाय निश्चित रूप से एक सामाजिक संस्था है, न कि केवल लाभ कमाने की क्रिया।" व्याख्या कीजिए।
4. व्यावसायिक इकाइयों को प्रदूषण नियंत्रण उपायों को अपनाने की क्यों आवश्यकता है?
5. वातावरण को प्रदूषित होने के खतरों से बचाने के लिए एक उद्यम क्या-क्या उपाय कर सकता है?
6. व्यावसायिक नैतिकता के विभिन्न तत्वों की व्याख्या कीजिए।
7. कंपनी अधिनियम-2013 के अनुसार निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व रूपरेखा की व्याख्या करें।

परियोजना कार्य/कार्यकलाप

1. कक्षा में उपयोग के लिए एक नैतिकता कोड विकसित कीजिए तथा लिखिए। आपके प्रलेख में विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा प्रधानाचार्य के लिए दिशा-निर्देश होने चाहिए।
2. समाचार पत्र, पत्रिकाएँ तथा अन्य व्यावसायिक सूचनाओं का प्रयोग करते हुए कोई ऐसी तीन कंपनियाँ बताइए जो सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करती हैं तथा किन्हीं तीन के नाम बताइए जो सामाजिक उत्तरदायी हैं।
3. अपनी पसंद की किसी कंपनी का चुनाव करें और उसके द्वारा लिए गए निगमित सामाजिक उत्तरदायित्व पर रिपोर्ट तैयार करें।

   [**संकेतः** स्वच्छ भारत अभियान, नवोदित कलाकारों को प्रोत्साहन, स्टार्ट-अप इंडिया, महिला एवं अन्य अल्पसंख्यक समूह।]

भाग-2

व्यावसायिक संगठन, वित्त एवं व्यापार

11109CH07

अध्याय 7

कंपनी निर्माण

अधिगम उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात् आपः

- कंपनी निर्माण में महत्वपूर्ण स्तरों का उल्लेख कर सकेंगे;
- कंपनी निर्माण के प्रत्येक स्तर के विभिन्न चरणों का वर्णन कर सकेंगे;
- कंपनी, रजिस्ट्रार के पास जमा कराए जाने वाले प्रलेखों का उल्लेख कर सकेंगे;
- समामेलन प्रमाण पत्र एवं व्यापार प्रारंभ प्रमाण पत्र की आवश्यकता को समझा सकेंगे।

अवतार जो एक कुशल बुद्धि का इंजिनियर है, ने अपने कारखाने में, जिसे वह एक एकल स्वामित्व के रूप चला रहा है, हाल ही में एक नये कारबोरेटर को विकसित किया है। इस नये कारबोरेटर से कार इंजन की पेट्रोल खपत 40 प्रतिशत कम हो सकती है। अब वह इसका बड़े पैमाने पर उत्पादन करने की सोच रहा है जिसके लिए उसे बड़ी मात्रा में धन की आवश्यकता है। अपने कारबोरेटर के निर्माण एवं विपणन का व्यवसाय करने के लिए उसे संगठन के विभिन्न स्वरूपों का मूल्यांकन करना होगा। उसने अपने एकल स्वामित्व को साझेदारी में परिवर्तन के विरूद्ध निर्णय लिया क्योंकि इसके लिए अधिक धन की आवश्यकता होगी तथा उत्पाद नया है इसमें जोखिम भी अधिक है। उसे सलाह दी गई कि वह एक कंपनी बनाए। वह कंपनी के निर्माण में आवश्यक औपचारिकताओं के संबंध में जानना चाहता है।

7.1 परिचय

आज के युग में व्यवसाय के लिए बड़ी मात्रा में धन की आवश्यकता होती है। प्रतियोगिता में वृद्धि हो रही है। परिणाम-स्वरूप ज़्यादातर व्यावसायिक विशेषतः मध्य पैमाने एवं बड़े पैमाने के संगठनों की स्थापना हेतू कंपनी संगठन को प्राथमिकता दे रही हैं।

व्यवसाय के विचार के जन्म से कंपनी के वैधनिक रूप से व्यवसाय प्रारंभ तक के विभिन्न चरण कंपनी निर्माण की विभिन्न स्थितियाँ कहलाती हैं। जो लोग यह कदम उठाते हैं, एवं इनसे जुड़े जोखिम उठातें हैं, कंपनी का प्रवर्तन करते हैं वे इसके प्रवर्तक कहलाते हैं।

इस पाठ में कंपनी के निर्माण की विभिन्न स्थितियों एवं प्रत्येक स्थिति के विभिन्न चरणों का विस्तृत वर्णन किया गया है जिससे कि इन पहलूओं के संबंध में सही रूप से जानकारी प्राप्त की जा सके।

7.2 कंपनी की संरचना

कंपरी की संरचना एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें काफी वैधानिक औपचरिकताएं एवं प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं। प्रक्रिया को भली-भांति समझने के लिए इन औपचारिकताओं को तीन अलग-अलग चरणों में बाँटा जा सकता है जो इस प्रकार हैंः (क) प्रवर्तन (ख) समामेलन (ग) पूँजी का अभिदान।

ध्यान रहे कि ये स्थितियाँ एक कंपनी के निर्माण की दृष्टी से उचित हैं। एक निजी कंपनी समामेलन प्रमाण पत्र की प्राप्ति के तुरंत पश्चात अपना व्यापार प्रारंभ कर सकती है, क्योंकि इस पर जन साधारण से धन जुटाने पर प्रतिबंध है। इसे प्रविवरिण पत्र जारी करने तथा न्यूनतम अभिदान की औपचारिक्ता की आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर एक सार्वजनिक कंपरी पूँजी को अभिदान की स्थिति से गुजरना होता है।

आइए, अब कंपनी निर्माण की इन परिस्थितियों का विस्तार से वर्णन करें।

7.2.1 कंपनी प्रवर्तन

कंपनी निर्माण में प्रवर्तन प्रथम स्थिति है। इसमें व्यवसाय के अवसरों की खोज एवं कंपनी स्थापना के लिए पहल करना सम्मिलित है जिससे कि व्यवसाय के प्राप्त सुअवसरों को व्यावहारिक स्वरूप

प्रदान किया जा सके। इस प्रकार से किसी के द्वारा सशक्त व्यवसाय के अवसर की खोज से इसका प्रारंभ होता है। यदि ऐसा कोई व्यक्ति अथवा व्यक्तियों का समूह अथवा एक कंपनी, कंपनी स्थापना की दिशा में कदम बढ़ाती है तो उन्हें कंपनी का प्रवर्तक कहा जाता है। कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 92 के अनुसार, एक प्रवर्तकः

(i) जिसका नाम प्रविवरण में लिखा रहता है अथवा धारा 92 के संदर्भ में वार्षिक रिटर्न में कंपनी द्वारा निर्धारित किया जाता है।

(ii) जो एक अंशधारक, निदेशक अथवा किसी अन्य रूप में, प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः, कंपनी के मामलों पर नियंत्रण रखते हैं।

(iii) जिसके सलाह, निर्देशों अथवा अनुदेशों के अनुरूप कंपनी का संचालक मंडल कार्य करने का अभ्यस्त हो जाता है। यद्यपि यह उपबन्ध किसी ऐसे व्यक्ति पर लागू नहीं होता जो केवल एक पेशेवर के रूप में कार्य कर रहा हो।

प्रवर्तक वह है जो दिए गए प्रायोजन के संदर्भ में एक कंपरी के निर्माण का कार्य करता है एवं इसे चालू करता है तथा उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक कदम उठाता है। इस प्रकार से प्रवर्तक व्यवसाय के अवसर कल्पना करने के अतिरिक्त इसकी संभावनाओं का विश्लेषण करते हैं तथा व्यक्ति, माल, मशीनरी, प्रबंधकीय योग्यताओं तथा वित्तीय संसाधनों को एक जुट करता है तथा संगठन तैयार करता हैं।

परिकल्पना की संभावना को भली-भाँति जाँच कर लेने के पश्चात् प्रर्वतक संसाधनों को एकत्रित करता है, आवश्यक अभिलेखों को तैयार करता है। नाम निश्चित करता है तथा कंपनी का पंजीयन कराने तथा प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए दूसरी अन्य क्रियाएँ करता है। इस प्रकार से कंपनी को अस्तित्व में लाने के लिए प्रवर्तक विभिन्न कार्य करता है जिन पर परिचर्चा नीचे की गई है।

एक प्रवर्तक के कार्य

प्रवर्तकों के महत्वपूर्ण कार्यों को इस प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है–

(i) व्यवसाय के अवसर की पहचान करना– एक प्रवर्तक का पहला कार्य व्यवसाय के अवसर की पहचान करना हैं। यह अवसर एक नई वस्तु अथवा सेवा के उत्पादन की हो सकती है या फिर किसी उत्पाद की किसी अन्य माध्यम के द्वारा उपलब्ध कराने को अथवा अन्य कोई अवसर जिसमें निवेश की संभावना हो। ऐसे अवसर की तकनीकी एवं प्राथमिक संभावना को देख कर फिर इसका विश्लेषण किया जाता हैं।

(ii) संभाव्यता का अध्ययन– संभाव्यता का अध्ययन इसलिए हो सकता ताकि पहचान कर लिए गए, सभी अवसरों को वास्तविक परियोजनाओं में परिवर्तित करना, सदा संभव अथवा लाभप्रद न हो। प्रवर्तक इसीलिए जिन व्यवसायों को प्रारंभ करना चाहते हैं। उनके सभी पहलुओं की जाँच पड़ताल के लिए विस्तृत संभाव्य अध्ययन करते हैं।

इसकी जाँच के लिए कि क्या विदित व्यावसायिक अवसर में लाभ उठाया जा सकता है। इंजिनियर्स, चार्टर्ड एकाउंटेंटस आदि विशेषज्ञों की सहायता से नीचे दिए गए संभाव्य अध्ययन किए जा सकते हैं, जो परियोजना की प्रकृति पर निर्भर करते हैं।

(क) तकनीकी संभाव्यता– कभी-कभी कोई विचार अच्छा होता है लेकिन उसका क्रियान्वयन तकनीकी रूप से संभव नहीं होता है ऐसा इसीलिए होता है क्योंकि आवश्यक कच्चामाल अथवा तकनीक सरलता से उपलब्ध नहीं होता हैं। उदाहरण के लिए हमारे पिछले उदाहरण में माना कि अवतार को कार्बोरेटर के उत्पादन के लिए एक विशेषज्ञ धातु की आवश्यकता है। माना इस धातु का उत्पादन देश में नही होता है एवं बुरे आर्थिक संबंधों के कारण इसका उस देश से आयात नहीं किया जा सकता जो इसका उत्पादन करता है। ऐसी स्थिति में जब तक धातु को उपलब्ध कराने के लिए वैकल्पिक व्यवस्था नहीं हो जाती है। परियोजना तकनीकी रूप से अव्यावहारिक होगी।

(ख) वित्तीय संभाव्यता– सभी व्यावसायिक कार्यो के लिए धन की आवश्यकता का अनुमान लगाना होता है। यदि परियोजना पर होने वाला व्यय इतना अधिक है कि इसे उपलब्ध साधनों से सरलता से नहीं जुटाया जा सकता तो परियोजना को त्यागना होगा। उदाहरण के लिए कोई यह सोच सकता है कि नगरों का विकास करना बहुत लाभप्रद होता है लेकिन पाया गया कि इसके लिए कई करोड़ो रूपयों की आवश्यकता होती है जिसकी प्रवर्तकों द्वारा एक कंपनी की स्थापना कर व्यवस्था नहीं की जा सकती। परियोजना की वित्तीय अंसभाव्यता के कारण इस विचार को त्यागना पड़ सकता है।

(ग) आर्थिक संभाव्यता– कभी-कभी ऐसा भी होता है कि परियोजना तकनीकी एवं वित्तीय रूप से व्यावहारिक है लेकिन इसकी लाभप्रदता की संभावना बहुत कम हैं ऐसी परिस्थिति में भी यह विचार त्यागना होगा। इन विषयों के अध्ययन के लिए प्रवर्तक साधारणतया विशेषज्ञों की सहायता लेते हैं। लेकिन ध्यान रहे कि क्योंकि ये विशेषज्ञ प्रवर्तकों को इन अध्ययनों में सहायता कर रहे हैं। मात्र इससे वह स्वयं प्रवर्तक नहीं बन जाते हैं।

केवल तभी जबकि इन जाँच पड़तालों के सकारात्मक परिणाम निकलते हैं, प्रवर्तक वास्तव में कंपनी बनाने का निर्णय ले सकते हैं।

(iii) नाम का अनुमोदन– कंपनी की स्थापना का निर्णय लेने के पश्चात प्रवर्तकों को इसके लिए एक नाम का चुनाव करना होगा एवं इसके अनुमोदन के लिए जिस राज्य में कंपनी का पंजीकृत कार्यालय होगा उस राज्य के कंपनी रजिस्ट्रार के पास एक आवेदन के पत्र जमा करना होगा।

प्रस्तावित नाम का अनुमोदन कर दिया जाएगा। यदि इस अनुपयुक्त नहीं माना गया है। ऐसा भी हो सकता है कि पहले से ही इसी नाम की अथवा इससे मिलते जुलते नाम ही एक कंपनी है या फिर पंसद का नाम गुमराह करने वाला है जैसे कि नाम से ही ऐसा लगता है कि कंपनी एक व्यवसाय विशेष में है, जबकि यह सत्य नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रस्ताविक नाम को स्वीकृति नहीं मिलेगी लेकिन किसी वैकल्पिक नाम को मंजूरी मिल जाएगी। इसीलिए कंपनी रजिस्ट्रार को दिए गए प्रार्थना पत्र (आई एन सी-1

फॉर्म का प्रारूप किताब के अंत में दिया गया है) में तीन नाम प्राथमिकता दर्शाते हुए दिए जाते हैं।

(iv) संस्थापन प्रलेख के हस्ताक्षरकर्ताओं को निश्चित करना– प्रर्वतक को उन सदस्यों के संबंध में निर्णय लेना होगा जो प्रसतावित कंपनी के उद्देश्य पत्र पर हस्ताक्षर करेंगे। सामान्यतः जो लोग उद्देश्य पत्र पर हस्ताक्षर करते हैं। वही कंपनी के प्रथम निर्देशक बनना एवं कंपनी के योग्यता अंश खरीदने के संबंध में लिखित स्वीकृति लेनी आवश्यक है।

(v) कुछ पेशेवर लोगों की नियुक्ति– प्रर्वतक उन आवश्यक प्रलेखों के बनाने में जिन्हें कंपनी रजिस्ट्रार के पास जमा कराना होता है। उनकी सहायता करने के लिए मर्केटाइल बैंकर्स, आडिटर्स आदि पेशेवर लोगों की नियुक्ति करते हैं। एक कंपनी के रजिस्ट्रार के पास एक विवरणी भी जमा करानी होगी जिसमें अंशधारियों के नाम और उनके पते तथा आंबटित अंशों की संख्या लिखी होगी। इसे आवंटन विरणी कहते हैं।

(vi) आवश्यक प्रलेखों को तैयार करना– प्रवर्तक अब कुछ वैधानिक प्रलेखों को तैयार के लिए कदम उठाएगा। जिन्हें कंपनी के पंजीयन के लिए कानूनन कंपनी रजिस्ट्रार के पास जमा करना आवश्यक है।

जमा किए जाने वाले आवश्यक प्रलेख

(क) संस्थापन प्रलेख– संस्था का संस्थापन प्रलेख कंपनी का प्रमुख प्रलेख होता है क्योंकि यह कंपनी के उद्देश्यों को परिभाषित करता है। कानूनन कोई भी कंपनी संस्था के संस्थापन प्रलेख से हट कर कोई कार्य नही कर सकती। कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 2(56) के अनुसार संस्थापन प्रलेख से अभिप्राय एक कंपनी के ऐसे संस्थापन प्रलेख से है जो इस अधिनियम अथवा किसी पूर्व कंपनी अधिनियम के अनुसरण में मूल रूप से बनाया गया हो अथवा समय-समय पर संशोधित किया गया हो। संस्थापन प्रलेख में विभिन्न धाराएँ होती हैं, जो नीचे दी गई हैः

(i) नाम खंड– इस धारा में कंपनी का नाम दिया होता है। जिससे कंपनी जानी जाएगी एवं जिसका अनुमोदन रजिस्ट्रार ने पहले ही कर दिया है।

(ii) पंजीकृत कार्यालय खंड– इस धारा में उस राज्य का नाम दिया जाता है जिसमें कंपनी का प्रस्तावित पंजीकृत कार्यालय इस अवस्था में कंपनी के पंजीकृत कार्यालय के निश्चित पते की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन कंपनी के समसमेलन के तीस दिन के भीतर इसे कंपनी रजिस्ट्रार को सूचित करना होता है।

(iii) उद्देश्य खंड– यह खंड संस्थापन प्रलेख की सबसे महत्वपूर्ण धारा है। इसमें उन उद्देश्यों से हटकर कोई कार्य नहीं कर सकती। उद्देश्यों से हटकर कोई कार्य नहीं कर सकती। उद्देश्य की धारा दो उपधाराओं में विभाजित है। जो इस प्रकार हैः

- **मुख्य उद्देश्यः** इस उपखंड में उन मुख्य उद्देश्यों को सूचीबद्ध किया जाता

है जिनको लेकर कंपनी का निर्माण किया गया है। ध्यान रहे कि कोई भी कार्य जो कंपनी के प्रमुख उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है अथवा संयोगिक है। न्याय-युक्त माना जायेगा भले ही उपखंड में स्पष्ट रूप से इसकी व्याख्या नहीं की गई है।

- **अन्य उद्देश्यः** जिन उद्देश्यों को प्रमुख उद्देश्यों में सम्मिलित नहीं किया गया है। उन्हें इस उप-खंड में रखा जाता है। वैसे यदि कंपनी चाहती है कि इस उपखंड में सम्मिलित व्यवसायों को करें तो उसे या तो विशेष प्रस्ताव पारित करना होगा अथवा साधारण प्रस्ताव पारित कर केंद्रीय सरकार से अनुमोदन कराना होगा।

(iv) दायित्व खंड– यह खंड सदस्यों की देयता को उन के स्वामित्व के अंशों पर अदत्तराशि तक सीमित करती है। उदाहरण के लिए माना एक अंश धारक ने 1000 शेयर 10 रु प्रति शेयर से क्रय किये हैं एवं 6 रु प्रति शेयर से उन पर भुगतान कर चुका है। ऐसे उसकी देनदारी 4 रु प्रतिअंश होगी। अर्थात् खराब से खराब स्थिति में भी उससे 4000 रु माँगें जाएंगे।

(v) पूँजी खंड– इस धारा में उस अधिकतम पूँजी का वर्णन किया जाता है जिसे अंशों के निर्गमन द्वारा जुटाने के लिए कंपनी अधिकृत होगी। प्रस्तावित कंपनी की अधिकृत पूँजी को एवं निर्धारित अंकित मूल्य को कितने अंशों में विभक्त किया गया है, का इस धारा में वर्णन किया जाता है। उदाहरण के लिए माना कंपनी की अधिकृत पूँजी 25 लाख रु है जो 10 रु के 25 लाख अंशों में बँटी हुई है। यह कंपनी इस धारा में वर्णित राशि से अधिक की पूँजी के अंश निर्गमित नहीं कर सकती है। संस्थापन प्रलेख पर हस्ताक्षरकर्ता कंपनी निर्माण के लिए इच्छा दर्शाते हैं एवं योग्यता अंशो, जो उनके नामों के सामने दर्शाये गए हैं, के क्रय के लिए भी अपनी सहमति दर्शाते हैं। एक कंपनी के संस्थापन प्रलेख अनुसूची-1 की सारणी ए,बी,सी,डी, और ई में विशिष्टकृत किए गए प्रारूप में होने चाहिए, जो ऐसी कंपनियों के अनुरूप हों।

संघ के सीमा नियमों पर सार्वजनिक कंपनी होने पर कम से कम सात एवं निजी कंपनी है तो दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं।

(ख) कंपनी के अंतर्नियम– कंपनी के अंतर्नियम में कंपनी के अतिरिक्त मामलों के प्रबंधन से संबंधित नियम दिए होते है। यह नियम कंपनी के संस्थापन प्रलेख के सहायक नियम होते हैं व संस्थापन प्रलेख में वर्णित किसी भी व्यवस्था के न तो विरोध में होंगे और न ही उनसे ऊपर होंगे।

एक कंपनी के पार्षद अंतर्नियम कंपनी अधिनियम 2013 की अनुसूची 1 की सारणी एफ,जी,एच,आई, तथा जे में दिए गए प्रारूप के अनुसार होने चाहिए जो संबंधित कंपनियों के अनुरूप हों। कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 2(5) के अनुसार एक कंपनी के पार्षद अंतर्नियम वह हैं जो इस अधिनियम अथवा किसी पूर्व कंपनी अधिनियम के अनुसरण में मूल रूप से बनाए गए हों अथवा समय-समय पर संशोधित किए गए हों।

पार्षद अंतर्नियम में सामान्यतः निम्नलिखित विषय-वस्तु होती है :

1. सारणी एफ का पूर्णतः अथवा अंशतः अपवर्जन
2. प्रारंभिक अनुबंधों का स्वीकरण
3. अंशों की संख्या व मूल्य
4. पूर्वाधिकारी अंशों का निर्गमन
5. अंशों का आवंटन
6. अंशों पर याचनाएँ
7. अंशों पर ग्रहणधिकार
8. अंशों का हस्तांतरण एवं प्रसारण
9. नामांकन
10. अंशों का हरण
11. पूँजी का प्रत्यावर्तन
12. पुनर्खरीद
13. अंश प्रमाण-पत्र
14. डिमेटीरियलाइज़ेशन
15. अंशों का स्टॉक में परिवर्तन/कंपनियों का समामेलन तथा प्रासंगिक मामले
16. मतदान अधिकार एवं प्रतिपत्री
17. सभाओं तथा समितियों से संबंधित नियम
18. निदेशक, उनकी नियुक्ति तथा अधिकारों का अंतरण
19. नामांकित निदेशक
20. ऋणपत्रों तथा स्टॉक का निर्गमन
21. अंकेक्षण समिति
22. प्रबंधकीय निदेशक, पूर्णकालिक निदेशक, प्रबंधक, सचिव
23. अतिरिक्त निदेशक
24. सील (मुद्रा, मोहर)
25. निदेशकों का पारिश्रमिक
26. सामान्य सभाएँ
27. निदेशकों की सभाएँ
28. उधार ग्रहण के अधिकार
29. लाभांश तथा संचय
30. लेखे तथा अंकेक्षण
31. समापन
32. क्षतिपूर्ति
33. संचयों का पूँजीकरण

पार्षद सीमा नियम के विभिन्न प्रारूप

1.	सारणी ए	अंशों द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद सीमा नियम
2.	सारणी बी	गारंटी द्वारा सीमित कंपनी तथा बिना अंश पूँजी वाली कंपनी का पार्षद सीमा नियम
3.	सारणी सी	अंश पूँजी वाली गारंटी द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद सीमा नियम
4.	सारणी डी	बिना अंश पूँजी वाली असीमित कंपनी का पार्षद सीमा नियम
5.	सारणी ई	अंश पूँजी वाली असीमित कंपनी का पार्षद सीमा नियम

पार्षद अंतर्नियम के विभिन्न प्रारूप

6.	सारणी एफ	अंशों द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद अन्तर्नियम
7.	सारणी जी	अंश पूँजी वाली गारंटी द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद अन्तर्नियम
8.	सारणी एच	बिना अंश पूँजी वाली गारंटी द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद अन्तर्नियम
9.	सारणी आई	अंश पूँजी वाली असीमित कंपनी का पार्षद अन्तर्नियम
10.	सारणी जे	बिना अंश पूँजी वाली असीमित कंपनी का पार्षद अन्तर्नियम

(ग) प्रस्तावित निर्देशकों की सहमति– कंपनी के संस्थापन प्रलेख एवं, अंर्तनियमों के अतिरिक्त प्रत्येक मनोनित निर्देशक द्वारा इसकी पुष्ठ कि वे निदेशक के पद कार्य करने एवं अंर्तनियमों में वर्णित योग्यता अंश में खरीदने एवं उनका भुगतान करने के लिए तैयार हैं, करते डुए लिखित में सहमति।

(घ) समझौता– कंपनी अधिनियम के अंतर्गत कंपनी के पंजीयन के लिए रजिस्ट्रार को दिए जाने वाला एक और प्रलेख है जो कंपनी द्वारा प्रस्तावित किसी भी व्यक्ति के साध्ज्ञ उसे प्रबंधक निदेशक अथवा पूर्णकालिक निदेशक या फिर प्रबंधक की नियुक्ति के लिए समझौता होता है।

(ङ) वैधानिक घोषणा– कंपनी के पंजीयन के लिए कानून उपर्युक्त प्रलेखों के अतिरिक्त रजिस्ट्रार के पास एक घोषणा, की पंजीयन से संबधित सभी वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर ली गई है, भी जमा करानी होती है। इस घोषणा पर कोई भी व्यक्ति जो वकील, चार्टेड एकाउंटेंट, लागत लेखाकार, प्रैक्टिस करने वाला कंपनी सचिव तथा अंतर्नियमों में नामित निदेशक, प्रबंधक अथवा कंपनी सचिव हो, हस्ताक्षर कर सकता है।

(च) फीस भुगतान की रसीद– कंपनी के पंजीयन के लिए उपर्युक्त वर्णित प्रलेखों के अतिरिक्त आवश्यक फीस भी जमा कराई जाती है। इस फीस की राशि कंपनी की अधिकृत पूँजी पर निर्भर करेगी।

प्रर्वतकों की स्थिति

प्रर्वतक कंपनी को पंजीकृत कराने एवं उसे व्यापार प्रारंभ की स्थिति तक लाने के लिए विभिन्न कार्यो को करता है लेकिन न तो वह कंपनी के एजेंट और न ही उसके ट्रस्टी, वह कंपनी के एजेन्ट तो इसीलिए नहीं हो सकते, क्योंकि कंपनी का समामेलन अभी होना है। इससे स्पष्ट है, कि प्रर्वतक उन सभी समामेलन से पूर्व के समझौतों के लिए उत्तरदायी होंगे, जिनको कंपनी समामेलन के पश्चात् मान्यता नहीं दी गई है। इसी प्रकार से वे प्रवर्तक कंपनी के ट्रस्टी नहीं होते। कंपनी के प्रवर्तकों की स्थिति एक न्यासी की होती है, जिसका उन्हें दुरूपयोग नहीं करना चाहिए। वे, यदि लाभ कमाते हैं तो उन्हें इस उजागर करना चाहिए एवं गुप्त रूप से लाभ नहीं कमाना चाहिए। यदि वे इसको स्पष्ट नहीं करते हैं तो कंपनी प्रसविदों को रद्द कर सकती हैं एवं प्रवर्तकों को भुगतान किए गउ क्रय मूल्य को वसूल कर सकते हैं। महत्वपूर्ण सूचना के छिपाने से यदि कोई हानि होती है तो कंपनी क्षति पूर्ति का दावा कर सकती है।

प्रवर्तक कंपनी के प्रर्वतन पर किए गए व्यय को प्राप्त करने का कानूनी रूप से दावा नहीं कर सकते। वैसे कंपनी चाहे तो समामेलन से पूर्व किए गए व्ययों का भुगतान कर सकती है। कंपनी प्रवर्तकों के माध्यम से क्रय की गई संपत्ति की क्रय राशि अथवा अंशों की बिक्री पर उनकी सेवाओं के बदले एक-मुश्त राशि अथवा कमीशन का भुगतान कर सकती है। कंपनी उन्हें अथवा ऋण पत्रों का आबंटन कर सकती है या फिर भविष्य में प्रतिभूतियों के क्रय की सुविधा दे सकती है।

7.2.2 समामेलन

उपर्युक्त औपचारिकताओं के पूरा कर लेने के पश्चात् प्रवर्तक कंपनी के समामेलन के लिए आवेदन पत्र तैयार करते हैं। पंजीकृत कार्यालय की सूचना राज्य के रजिस्ट्रार के पास समामेलन के 30 दिनों के भीतर भेजना कंपनी के लिये अनिवार्य है। आवेदन पत्र के साथ अन्य प्रलेख भी जमा किये जाते हैं जिनकी चर्चा हम पहले भी कर चुके हैं। संक्षेप में इनका वर्णन पुनः किया जा रहा है :

(क) कंपनी के संस्थागत प्रलेख– जिन पर आवश्यक मोहर लगी होती है एवं हस्ताक्षर किए होते हैं एवं गवाही की होती है। यदि यह सार्वजिक कंपनी है तो इस पर कम से कम सात सदस्यों के हस्ताक्षर होने चाहिए। यदि कंपनी निजी है तो दो सदस्यों के हस्ताक्षर ही पर्याप्त है। हस्ताक्षरकर्ताओं के लिए अपने घर का पता, रोज़गार एवं उनके द्वारा क्रय किए गए अंशों की जानकारी देना आवश्यक है।

(ख) कंपनी के अंतर्नियम– जिस पर संस्थापन प्रलेख के समान मोहर लगी होनी चाहिए एवं गवाही होनी चाहिए। जैसा पहले ही कहा जा चुका यदि चाहे तो कंपनी, कंपनी अधिनियम में दी गई तालिका 'एफ' जो अंतर्नियमों का एक आदर्श संग्रह है, को अपना सकती है। ऐसा करने पर अंतर्नियमों के स्थान पर कंपनी स्थानापन्न प्रविवरण

पत्र जमा कराएगी।

(ग) प्रस्तावित निदेशकों द्वारा निदेशक बनने के लिए लिखित सहमति एवं योग्यता शेयरों के क्रय का वचन।

(घ) प्रस्तावित प्रबंध निदेशक, प्रवंधक अथवा पूर्वकालिक निदेशक के साथ समझौता यदि कोई है तो रजिस्ट्रार द्वारा

(ङ) कंपनी के नाम के अनुमोदन के पत्र की प्रति प्रमाण स्वरूप।

(च) वैधानिक घोषणा कि पंजीकरण से संबंधित यह भली भाँति हस्ताक्षरित होनी चाहिए।

(छ) इन प्रलेखों के साथ पंजीकृत के सही पतों की सूचना भी दी जानी चाहिए। यदि समामेलन के समय यह सूचना नहीं दी गई है तो इस समामेलन प्रमाण पत्र मिलने के 30 दिन के अंदर जमा कराया जा सकता है।

(ज) पंजीयन के शुल्क के भुगतान के प्रमाण स्वरूप प्रलेख।

रजिस्ट्रार के पास आवश्यक प्रलेखों के साथ आवेदन जमा हो जाने के पश्चात् रजिस्ट्रार इस बात की संतुष्ट करेगा कि सभी प्रलेख सुव्यवस्थित हैं एवं पंजीयन से संबंधित सभी वैधनियम औपचारिकताएँ पूरी कर ली गई है। इन प्रलेखों में वर्णित तथ्यों की प्रमाणिकता की जाँच के लिए भली-भाँति जाँच पड़ताल करने का दायित्व रजिस्ट्रार का नहीं है।

जब रजिस्ट्रार पंजीयन की औपचारिकताओं के पूरा होने के संबंध में संतुष्ट हो जाता है तो वह कंपनी को समामेलन प्रमाण पत्र जारी कर देता है जिसका अर्थ है कि कंपनी अस्तित्व में आ गई है। कंपनी समामेलन प्रमाण पत्र को कंपनी के जन्म का प्रमाण पत्र भी कहा जाता है।

01 नवम्बर 2000 से कंपनी रजिस्ट्रार कंपनी को सी.आई.एन. (निगम पहचान नम्बर) का आवंटन करता है।

समामेलन प्रमाण पत्र का प्रभाव

कानूनी रूप से कंपनी का जन्म समामेलन प्रमाण पत्र छपी तिथि का होता है। उस तिथि को यह शाश्वत उत्तराधिकार के साथ पृथक वैधनिक अस्तित्व प्राप्त कर लेती हैं एवं वैधानिक प्रंसविदों को करने के लिए अधिकृत हो जारी है। समामेलन प्रमाण पत्र कंपनी समामेलन के नियम का निर्णायक प्रमाण है। कल्पना करें कि उस पक्ष के साथ क्या होगा जिससे कंपनी ने कोई प्रसंविदा किया है और उसे किसी भी प्रकार की कोई आशंका नहीं है। उसे बाद में पता लगता है कंपनी का समामेलन विधि सम्मत नहीं था इसीलिए अवेध था। इसीलिए वैधानिक स्थिति यह है कि कंपनी को समामेलन प्रमाण जारी हो जाने के पश्चात् कंपनी के पंजीयन में दोष रह जाने पर भी इसको वैधनिक व्यावसायिक अस्तित्व प्राप्त हो जाता है। इसीलिए कंपनी का समामेलन प्रमाण पत्र कंपनी के वैधानिक अस्तित्व का निर्णायक प्रमाण है। कुछ ऐसे दिलचस्प उदाहरण है जो कंपनी समामेलन प्रमाण पत्र निर्णायक होने के प्रभाव को दर्शाता है। यह इस प्रकार हैः

(क) पंजीयन के लिए 6 जनवरी को आवश्यक प्रलेख जमा कराए गए। समामेलन प्रमाण पत्र 8 जनवरी को जारी किया गया लेकिन प्रमाण पत्र पर तिथि 6 जनवरी लिखी थी। यह निर्णय दिया गया कि कंपनी का अस्तित्व था। इसीलिए 6 जनवरी को जि समझौतों पर हस्ताक्षर हुए थे, वे न्यायोचित थे।

(ख) एक व्यक्ति ने संस्थापना प्रलेख पर दूसरे व्यक्ति के जाली हस्ताक्षर कर लिए समामेलन फिर भी वैधानिक माना गया।

इस प्रकार औपचारिकताओं में कितनी भी कमी क्यों न हो, एक बार इसके जारी हो जाने पर यह कंपनी की स्थापना का पक्का प्रमाण है। यद्यपि कंपनी का पंजीयन अवैधाानिक उद्देश्यों को लेकर हुआ है फिर भी कंपनी के जन्म को नकारा नहीं जा सकता। कंपनी का समापन हो इसका एकमात्र हल है। कंपनी समामेलन प्रमाण पत्र बहुत कम होता है। इसे जारी करने से पहले रजिस्ट्रार को बहुंत ध्यान रखना होता है। समामेलन प्रमाण पत्र जारी हो जाने पर निजी सार्वजनिक कंपनियाँ तुरंत व्यापार प्रारंभ कर सकती हैं।

7.2.3 पूँजी अभिदान

सार्वजनिक कंपनी जनसाधारण से अंशों-एवं-ऋण पत्रों का निर्गमन कर आवश्यक धनराशि जुटा सकता है। इसके लिए इस प्रधिकरण पत्र जारी करना होगा, जो जन साधाारण को कंपनी की पूँजी के अभिदान के लिए आमंत्रण है, एवं अन्य औपचारिकताएँ पूरी करनी होंगी। जनता से धन एकत्रित करने के लिए निम्न कदम उठाने होंगेः

(क) भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (SEBI) का अनुमोदन– जो हमारे देश का नियमन प्राधिकरण है, ने सूचना को प्रकट करने एवं निवेशकों की सुरक्षा प्रदान करने के लिए कुछ दिशा निर्देश दिए हैं। जो सार्वजनिक कंपनी जनता से धन माँगती है। उसे सभी आवश्यक सूचना को भली-भाँति प्रकट कर देना चाहिए एवं संभावित निवेशकों से कोई सारयुक्त सूचना छुपानी नहीं चाहिए। निवेशकों के हितों की रक्षा के लिए यह आवश्यक है। इसीलिए जनता से धन जुटाने से पहले सभी की पुर्नानुमति आवश्यक है।

(ख) प्रविवरण पत्र जमा करना– कंपनी रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण पत्र अथवा स्थानापन्न प्रविवरण पत्र की प्रति जमा करानी होती है। प्रविवरण पत्र ऐसा कोई भी दस्तावेज है, जिसमें कोई भी सूचना, परिपत्र, विज्ञापन और अन्य दस्तावेज शामिल हैं जो जनता से जमा आमंत्रित करता है या एक निगमित संस्था की प्रतिभूतियाँ खरीदने के लिए जनता से प्रस्ताव आमंत्रित करता है। दूसरे शब्दों में यह जनसाधारण से कंपनी की प्रतिभूतियाँ खरीदने के लिए प्रस्ताव आमंत्रित करता है। इस दस्तावेज में दी गई सूचना के आधार पर निवेशक किसी कंपनी में निवेश के लिए आधार बनाते हैं। इसीलिए प्रविवरण पत्र में कोई

निदेशक पहचान संख्या (DIN)

प्रत्येक व्यक्ति, जो किसी कंपनी के निदेशक के रूप में नियुक्त होना चाहता है, उसे निदेशक पहचान संख्या के (DIN) आवंटन हेतु विहित फॉर्म पर आवश्यक शुल्क सहित केन्द्रीय सरकार को आवेदन करना होता है।

आवेदन प्राप्त होने के एक माह के भीतर केन्द्रीय सरकार द्वारा आवेदक को निदेशक पहचान संख्या (DIN) आवंटित कर देती है।

कोई भी व्यक्ति जिसे निदेशक पहचान संख्या आवंटित हो चुकी हो वह इसके लिए पुनः आवेदन नहीं कर सकता।

संस्थापन प्रलेख एवं अंतर्नियम में अंतर

आधार	संस्थापन प्रलेख	अंतर्नियम
उद्देश्य	सीमा नियम कंपनी स्थापना के उद्देश्यों को परिभाषित करते है।	अंतर्नियम कंपनी के आंतरिक प्रबंध के नियम होते है। यह इंगित करता है।
स्थिति	यह कंपनी का मुख्य प्रलेख है तथा कंपनी अधिनियम के अधीन है।	यह सहायक प्रलेख है तथा सीमा नियम एवं कंपनी अधिनियम के दोनों के अधीन है।
संबंध	सीमा नियम कंपनी के बाहरी दुनिया से संबंध निश्चित करता है।	अंतर्नियम कंपनी तथा उसके सदस्यों के बीच आंतरिक संबंधों को परिभाषित करता है।
बाध्यता	सीमा नियम के क्षेत्र के बाहर के कार्य अमान्य होते हैं एवं सभी सदस्यों के एक मत से भी अनुमोदित नहीं हो सकता।	अंतर्नियम के बाहर के कार्यो की अंशधारी अनुमोदित कर सकते हैं।
आवश्यकता	प्रत्येक कंपनी को सीमा नियम जमा कराना	अंतर्नियमों को जमा कराना अनिवार्य नहीं है। यह कंपनी अनिवार्य है। अधिनियम 2013 की सारणी एफ को अपना सकती है।

गलत सूचना नहीं होनी चाहिए एवं सभी महत्वपूर्ण सूचनाएँ पूरी तरह से दी जानी चाहिए।

(ग) **बैंकर, ब्रोकर एवं अभिगोपनकर्त्ता की नियुक्ति–** जनता से धन जुटाना अपने आप में एक भारी कार्य होता है। कंपनी के बैंक प्रार्थना राशि प्राप्त करते हैं। ब्रोकर्स फार्मो का वितरण करते हैं एवं जनता को शेयर खरीदने के लिए आवेदन करने के लिए प्रोत्साहित करते है। इस प्रकार यह कंपनी के अंशों को बेचने का प्रयत्न करते है। यदि कंपनी को जनता द्वारा निर्गम के प्रति यथोचित अनुक्रिया की आश्वस्ति नहीं है तो वह अंशों के अभिगोपनकर्त्ताओं की नियुक्ति कर सकती है। अभिगोपनकर्त्ता जनता द्वारा अंशों के अभिदान न करने पर स्वंय खरीदने का वचन देते हैं। वे इसके बदले कमीशन लेते हैं। अभिगोपनकर्त्ताओं की नियुक्ति आवश्यक नहीं है।

(घ) **न्यूनतम अभिदान–** कंपनियाँ अपर्याप्त साधनों से व्यापार प्रारंभ न करें, इसके लिए ऐसी व्यवस्था की गई है कि अंशों के आवंटन से पूर्व कंपनी के पास अंशों की एक न्यूनतम संख्या आवेदन आ जाने

चाहिए। कंपनी अधिनियम के अनुसार इस न्यूनतम अभिदान कहते हैं। सेबी के दिशानिर्देशों के अनुसार न्यूनतम अभिदान की सीमा निर्गम के आकार के 90 प्रतिशत है। यदि 90 प्रतिशत से कम की राशि के लिए शेयरों के लिए आवेदन प्राप्त होते हैं तो आंवटन नहीं किया जाएगा एवं प्राप्त आवेदन राशि को आवेदनकर्त्ताओं को लौटा दी जाएगी।

(ङ) शेयर बाजार में आवेदन– कंपनी की प्रतिभूतियों में व्यापार की अनुमति के लिए कम से कम एक 'शेयर बाजार' में आवेदन किया जायेगा। अभिदान सूची वे बंद होने की तिथि से इस सप्ताह पूरे होने तक यदि अनुमति नहीं मिलती है तो आबंटन अमान्य होगा तथा आठ दिन के अंदर आवेदकों से प्राप्त राशि उन्हें लौटा दी जाएगी।

(च)अंशों का आवंटन– यदि आवंटित शेयरों की संख्या आवेदन की संख्या से कम है या फिर आवेदक को कोई भी शेयर आवंटित नहीं किए हैं तो अतिरिक्त आवेदन राशि या तो आवेदकों को लौटा दी जायेगी या फिर उन पर देय आवंटन राशि में उसका समायोजन कर दिया जाएगा। सफल आवंटन प्राप्तकर्त्ताओं को आवंटन पत्र भेजा जाएगा। आवंटन के 30 दिन के अंदर निदेशक अथवा सचिव के हस्ताक्षरयुक्त 'आवंटन विवरणी' कंपनी रजिस्ट्रार के पास जमा कराई जाएगी। एक सार्वजनिक कंपनी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अपने अंश अथवा ऋण पत्रों को खरीद के लिए जनता को आमंत्रित करे। इसके स्थान पर यह एक निजी कंपनी की तरह मित्रों; सगे संबंधियों अथवा निजी स्रोतों से धन जुटा सकती है। ऐसी स्थिति में प्रविवरण पत्र जारी करने की आवश्यकता नहीं है। आवंटन से कम से कम तीन दिन पहले रजिस्ट्रार के पास स्थनापन्न प्रविवरण पत्र जमा कराया जाएगा।

एक व्यक्ति कंपनी

कंपनी अधिनियम, 2013 के लागू होने पर, एक व्यक्ति वाली कंपनी (ओ.पी.सी.) अवधारणा के अंतर्गत एक एकल व्यक्ति एक कंपनी बना सकता है।

कानूनी तंत्र में ओ.पी.सी. की शुरूआत एक ऐसा परिवर्तन है जो सूक्ष्म व्यवसायों तथा उद्‌यमशीलता के समामेलीकरण को प्रोत्साहन देता है। भारत में वर्ष 2005 में जे.जे. ईरानी विशेषज्ञ समिति ने ओ.पी.सी. के निर्माण की सलाह दी। उसने सुझाव दिया कि छूटों के माध्यम से एक सहज कानूनी व्यवस्था वाली ऐसी इकाई उपलब्ध कराई जाए ताकि छोटे उद्‌यमियों को जटिल कानूनी व्यवस्था हेतु विवश न होना पड़े।

एक सदस्य के रूप में केवल एक व्यक्ति की कंपनी 'एक व्यक्ति कंपनी' है। वह एक व्यक्ति कंपनी का अंशधारी होगा। एक निजी सीमित कंपनी के सभी लाभ इसे प्राप्त होंगे, जैसेः- पृथक वैधानिक इकाई, व्यवसाय के दायित्वों से निजी संपत्ति का सुरक्षित होना तथा शाश्वत उत्तराधिकार। कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 2(62) के अनुसार, 'एक व्यक्ति कंपनी का आशय ऐसी कंपनी से है जिसका सदस्य केवल एक व्यक्ति हो।'

कंपनी (समामेलन) नियम, 2014 का नियम 3–

एक व्यक्ति कंपनी–

1. केवल एक प्राकृतिक व्यक्ति जो भारतीय नागरिक है तथा 'भारत का निवासी' है–
   (क) एक व्यक्ति कंपनी के समामेलन हेतू योग्य है।
   (ख) एक व्यक्ति कंपनी के एकल सदस्य का नामांकित है।

स्पष्टीकरण- इस नियम के उद्देश्य से 'भारत का निवासी' वह व्यक्ति है जो ठीक पिछले कैलेंडर वर्ष में न्यूनतम 182 दिन भारत में रहा हो।

2. कोई भी व्यक्ति एक से अधिक 'एक व्यक्ति कंपनी' के समामेलन अथवा एक से अधिक ऐसी कंपनी में नामांकित बनने हेतु योग्य नहीं है।
3. जब कोई प्राकृतिक व्यक्ति इस नियम के अनुक्रम 'एक व्यक्ति कंपनी' में सदस्य होने के साथ-साथ किसी अन्य 'एक व्यक्ति कंपनी' में नामांकित होने के कारण उस कंपनी का सदस्य बन जाता है तो वह उप-नियम(2) में विशिष्टीकृत योग्यता कसौटी को 180 दिन में ही पूरा कर सकता है।
4. 'एक व्यक्ति कंपनी' में कोई अवयस्क सदस्य अथवा नामांकित नही' बन सकता अथवा लाभप्रद हित के अंश का धारण नहीं कर सकता।
5. ऐसी कंपनी अधिनियम की धारा 8 के अंतर्गत समामेलित नहीं की जा सकती अथवा कंपनी के रूप में परिवर्तित नहीं की जा सकती।
6. ऐसी कंपनी गैर-बैंकिंग वित्तीय निवेश क्रियाएँ, जिनमें निगमित निकायों की प्रतिभूतियों में निवेश सम्मिलित है, नहीं कर सकती।
7. 'एक व्यक्ति कंपनी' के समामेलन के दो वर्ष व्यतीत होने से पूर्व ऐसी कंपनी स्वैच्छिक रूप से कंपनी के किसी अन्य प्रकार में परिवर्तित नहीं हो सकती, सिवाय उन कंपनियों के जिनकी प्रदत्त अंश पूँजी की सीमा 50 लाख रुपये से आगे बढ़ाई गई है अथवा संबद्ध अवधि में इसकी औसत वार्षिक आवर्त दो करोड़ रुपये से अधिक है।

अनुसूची I
(देखें धारा 4 एवं 5)
सारणी ए
अंशों द्वारा सीमित कंपनी का पार्षद सीमा नियम

1. कंपनी का नाम ".. लिमिटेड/प्राइवेट लिमिटेड" है।

2. कंपनी का पंजीकृत कार्यालय ....राज्य में स्थित होगा।

3. (क) कंपनी के समामेलन से पूरे किए जाने वाले उद्देश्य हैंः-
   ....
   ....
   ....

   (ख) उपवाक्य 3 (क) में विशिष्टीकृत किए गए उद्देश्यों की सहायता हेतु आवश्यक विषय हैंः-
   ....
   ....
   ....

4. सदस्यों का दायित्व सीमित होगा तथा यह दायित्व उनके द्वारा धारित अंशों पर अदत्त राशि, यदि कोई है, तक सीमित होगा।

5. कंपनी की अंश पूँजी..................रुपये है जो............रुपये प्रत्येक वाले.............अंशों में बँटी है।

6. हम विभिन्न व्यक्ति, जिनके नाम तथा पते उल्लेखित हैं, इस पार्षद सीमा नियम के अनुसरण में एक कंपनी बनाने के इच्छुक हैं तथा कंपनी की अंश पूँजी में हम क्रमश : अपने नामों के सामने उल्लेखित अंशों को लेने पर सहमत हैंः-

अभिदाताओं के नाम, पते, विवरण तथा व्यवसाय	प्रत्येक अभिदाता द्वारा लिए गए अंशों की संख्या	अभिदाता के हस्ताक्षर	साक्षियों के हस्ताक्षर, नाम, पते, विवरण तथा व्यवसाय
.... के व्यापारी क, ख,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी ग, घ,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी ङ, च,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी छ, ज,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी झ, ञ,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी ट, ठ,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
.... के व्यापारी ड, ढ,	....		मेरे समक्ष हस्ताक्षरितः हस्ताक्षर......................
लिए गए कुल अंश–			

7. मैं, जिसका नाम तथा पता नीचे दिया गया है, इस पार्षद सीमा नियम के अनुसरण में एक कंपनी बनाने का इच्छुक हूँ तथा इस कंपनी की पूँजी के सभी अंश लेने को सहमत हूँ। (एक व्यक्ति कंपनी के मामले में लागू)।

अभिदाता का नाम व्यवसाय	अभिदाता के हस्ताक्षर	साक्षी का नाम, पता, विवरण तथा व्यवसाय

8. एकल सदस्य की मृत्यु की घटना में श्री/श्रीमती...............पुत्र/पुत्री श्री......................... ....निवासी .... आयु ....वर्ष नामांकित होंगे।

दिनांकः ....की .....तिथि

मुख्य शब्दावली

प्रवर्तन	संस्थापन प्रलेख	कंपनी के अंतर्नियम
समामेलन	पूँजी	व्यापार प्रारंभ

सारांश

निजी कंपनी के निर्माण के दो चरण हैं प्रवर्तन एवं समामेलन। सार्वजनिक कंपनी का पूँजी अभिदान की स्थिति से गुजरना होता है और तब परिचालन प्रारंभ करने के लिए व्यापार प्रारंभ प्रमाण पत्र प्राप्त होता है।

1. **प्रवर्तनः** इसका प्रारंभ एक लाभ योग्य संभावनाओं से पूर्ण व्यवसाय के विचार की कल्पना से होता है। क्या इस विचार को लाभप्रद बनाया जा सकता है। इसके लिए तकनीकी, वित्तीय एवं आर्थिक साध्यता अध्ययन किए जाते हैं। यदि जांच के पक्ष में परिणाम निकलते हैं तो प्रवर्तक कंपनी के निर्माण का निर्णय ले सकते हैं। जो व्यक्ति व्यवसाय की कल्पना करते है। कंपनी निर्माण का निर्णय लेते है इसके लिए आवश्यक कदम उठाते हैं एवं संबद्ध जोखिम उठाते हैं। उन्हें प्रवर्तक कहते हैं।

प्रवर्तन के चरण

1. रजिस्ट्रार से कंपनी के नाम की स्वीकृति ली जाती हैं।
2. संस्थापन प्रलेख हस्ताक्षरकर्ता निश्चित किए जाते हैं।
3. प्रवर्तकों की सहायता के लिए पेशेवर नियुक्त किए जाते हैं।
4. पंजीयन के लिए आवश्यक प्रलेख तैयार किए जाएंगे।

आवश्यक प्रलेख

(क) संस्थापन प्रलेख
(ख) अंतर्नियम
(ग) प्रस्तावित निदेशकों की स्वीकृति
(घ) प्रस्तावित प्रबंध अथवा पूर्णकालिक निदेशक से समझौता यदि कोई है तो
(ड़) वैधानिक घोषणा

2. **समामेलनः** आवश्यक प्रलेख एवं पंजीयन शुल्क के साथ प्रवर्तकों द्वारा कंपनी रजिस्ट्रार के पास आवेदन किया जाता है। जाँच के पश्चात रजिस्ट्रार समामेलन प्रमाण पत्र दे देता है। प्रलेखों में कोई बड़ी कमी होने पर ही पंजीयन से इंकार किया जा सकता है। समामेलन प्रमाण पत्र कंपनी के वैधानिक अस्तित्व का निश्चित प्रमाण होता है। समामेलन में बड़ी कमी होने पर भी कंपनी के वैधानिक अस्तित्व को नहीं नकारा जा सकता है।

3. **पूँजी अभिदानः** जनता से कोष जुटाने वाली कंपनी कोष जुटाने के लिए निम्न कदम उठाएगी।
   (क) सेबी की अनुमति
   (ख) कंपनी रजिस्ट्रार के पास प्रविवरण पत्र की प्रति जमा करना।
   (ग) ब्रोकर, बैंकर एवं अभिगोपनकर्ता आदि की नियुक्ति।
   (घ) न्यूनतम अभिदान की प्राप्ति को सुनिश्चित करना।
   (ड़) कंपनी की प्रतिभूतियों के सूचियन के लिए आवेदन।
   (च) अधिक प्रार्थना राशि को वापस करना, समायोजन करना।
   (छ) सफल प्रार्थियों को आवंटन पत्र जारी करना।
   (ज) कंपनी रजिस्ट्रार के पास आवंटन विवरणी जमा करना।

एक सार्वजनिक कंपनी जो मित्रों/सगे संबंधियों (जनता नहीं) से धन जुटा रही है। अंशों के आवंटन से कम से कम तीन दिन पूर्व ROC पास प्रविवरण पत्र का स्थानापन्न विवरण एवं आवंटन की समाप्ति पर आवंटन विवरणी जमा कराएगी।

प्रारंभिक प्रसंविदेः कंपनी समामेलन से पूर्व प्रवर्तकों द्वारा हस्ताक्षरित अन्य पक्षों से प्रसंविदे।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

1. एक निजी कंपनी के निर्माण के लिए कम से कम सदस्यों की संख्याः
   (क) 2 (ख) 3 (ग) 5 (घ) 7
2. एक सार्वजनिक कंपनी के निर्माण के लिए कम से कम सदस्यों की संख्याः
   (क) 5 (ख) 7 (ग) 12 (घ) 21
3. कंपनी के नाम के अनुमोदन के लिए आवेदन किया जाता है।
   (क) SEBI
   (ख)कंपनी रजिस्ट्रार को
   (ग) भारत सरकार को
   (घ) उस राज्य की सरकार को जिसमें कंपनी का पंजीयन कराया गया है।
4. कंपनी का प्रस्तावित नाम अवांछनीय माना जाएगा यदि
   (क) यह किसी वर्तमान कंपनी के नाम से मिलता हो
   (ख)यह किसी वर्तमान कंपनी के नाम से मिलता जुलता हो।
   (ग) यह भारत सरकार या सयुक्त राष्ट्र आदि का प्रतीक चिंह हो
   (घ) उपर्युक्त में कोई एक।
5. प्रविवरण पत्र को जारी करता हैः
   (क) एक निजी कंपनी
   (ख)जनता से निवेश चाहने वाली सार्वजनिक कंपनी
   (ग) एक सार्वजनिक उद्‌यम
   (घ) एक सार्वजनिक कंपनी
6. एक सार्वजनिक कंपनी के निर्माण के विभिन्न चरणों का क्रमः
   (क) प्रवर्तन, व्यापार प्रारंभ, समामेलन, पूँजी अभिदान
   (ख) समामेलन, पूँजी अभिदान, व्यापार प्रारंभ, प्रवर्तन
   (ग) प्रवर्तन, समामेलन, पूँजी अभिदान, व्यापार प्रारंभ
   (घ) पूँजी अभिदान, प्रवर्तन, समामेलन, व्यापार प्रारंभ
7. प्रारंभिक प्रसंविदों पर हस्ताक्षर किए जाते हैं।
   (क) समामेलन से पहले
   (ख) समामेलन के उपरांत परंतु पूँजी अभिदान से पूर्व
   (ग) समामेलन के उपरांत परंतु व्यापार प्रारंभ से पूर्व।
   (घ) व्यापार प्रारंभ के उपरांत

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. कंपनी के निर्माण की विभिन्न स्थितियों के नाम लिखें।
2. कंपनी समामेलन के लिए आवश्यक प्रलेखों को सूचीबद्‌ध करें।
3. प्रविवरण पत्र क्या है? क्या प्रत्येक कंपनी के लिए प्रविवरण पत्र जमा कराना आवश्यक है?

4. 'आबंटन विवरणी' शब्द को संक्षेप में समझाइए।
5. कंपनी निर्माण के किस स्तर पर उसे सेबी (SEBI) से संपर्क करना होता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. प्रवर्तन शब्द का क्या अर्थ है? प्रवर्तकों ने जिस कंपनी का प्रवर्तन किया है उसके संदर्भ में उनकी कानूनी स्थिति की चर्चा कीजिए।
2. कंपनी के प्रवर्तन के लिए, प्रवर्तक क्या कदम उठाते हैं उनको समझाइए।
3. कंपनी के सीमा नियम क्या हैं? इसकी धाराओं को संक्षेप में समझाइए।
4. सीमा नियम एवं अंतर्नियम में अंतर कीजिए।
5. क्या एक सार्वजनिक कंपनी के लिए अपने शेयरों का किसी स्कंध विनिमय/स्टॉक एक्सचेंज में सूचियन आवश्यक है? एक सार्वजनिक कंपनी जो सार्वजनिक निर्गमन करने जा रही है यदि प्रतिभूतियों में व्यापार की अनुमति के लिए स्टॉक एक्सचेंज में आवेदन नहीं कर पाती है अथवा उसे इसकी अनुमति नहीं मिलती है तो इसके क्या परिणाम होंगे।

सत्य/असत्य उत्तरीय प्रश्न

1. चाहे कंपनी निजी है अथवा सार्वजनिक प्रत्येक का समामेलन कराना अनिवार्य है।
2. स्थानापन्न प्रविवरण पत्र को सार्वजनिक निर्गमन करने वाली सार्वजनिक कंपनी जमा कर सकती है।
3. एक निजी कंपनी समामेलन के उपरांत व्यापार प्रारंभ कर सकती है।
4. एक कंपनी के प्रवर्तन में प्रवर्तकों की सहायता करने वाले विशेषज्ञों को भी प्रवर्तक कहते हैं।
5. एक निजी कंपनी समामेलन के उपरांत प्रारंभिक अनुबंधों का अनुमोदन कर सकती है।
6. यदि कंपनी का छद्म नाम से पंजीयन कराया जाता है तो इसका समामेलन अमान्य होगा।
7. कंपनी के अंतर्नियम इसका प्रमुख दस्तावेज होता है।
8. प्रत्येक कंपनी के लिए अंतर्नियम जमा कराना अनिवार्य है।
9. कंपनी के समामेलन से पूर्व अल्पकालिक अनुबंध पर प्रवर्तकों के हस्ताक्षर होते हैं।
10. यदि कंपनी को भारी हानि उठानी पड़ती है तथा इसकी परिसंपत्तियाँ इसकी देयताओं को चुकाने के लिए पर्याप्त नहीं है तो शेष को इसके सदस्यों की निजी संपत्ति से वसूला जा सकता है।

11109CH08

अध्याय 8

व्यावसायिक वित्त के स्रोत

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप :

- व्यावसायिक वित्त का अर्थ, प्रकृति एवं महत्व को बता सकेंगे;
- व्यावसायिक वित्त के विभिन्न स्रोतों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- वित्त के विभिन्न स्रोतों के गुण एवं सीमाओं का मूल्यांकन कर सकेंगे;
- वित्त के अंतर्राष्ट्रीय स्रोतों की पहचान कर सकेंगे;
- वित्त के उचित स्रोतों के चुनाव को प्रभावित करने वाले तत्वों की जाँच कर सकेंगे।

अनिल सिंह पिछले दो वर्षों से एक जल-पान गृह चला रहे हैं। थोड़े ही समय में खाने की अद्भुत गुणवत्ता ने जल-पान गृह को प्रसिद्ध कर दिया है। अपने इस व्यवसाय में सफलता से अभिप्रेरित अनिल विभिन्न स्थानों पर इसी प्रकार के जल-पान गृहों की शृंखला खोलने पर विचार कर रहे हैं लेकिन अपने व्यापार के विस्तार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उनके अपने निजी स्रोतों से उपलब्ध धन पर्याप्त नहीं है। उनके पिताजी ने उनसे कहा कि वह चाहें तो दूसरे जल-पान गृह के स्वामी के साथ साझेदारी कर सकते हैं, वह अधिक धन लगाएगा। लेकिन वह व्यवसाय के लाभ एवं नियंत्रण में हिस्सेदार होगा। अनिल बैंक से ऋण लेने की भी सोच रहे हैं। वह चिंतित भी हैं एवं भ्रमित भी क्योंकि वह यह नहीं जानते कि वह कैसे एवं कहाँ से अतिरिक्त धन लाएँ। वह इस समस्या पर अपने मित्र रमेश से विचार करते हैं। वह उन्हें दूसरे साधन, जैसे- अंश एवं ऋण-पत्र (डिबेंचर) के निर्गमन के संबंध में बताता है जो कंपनी संगठन को ही उपलब्ध है। वह अनिल को दूसरी चेतावनी भी देता है कि प्रत्येक पद्धति के अपने लाभ एवं सीमाएँ हैं तथा अंतिम निर्णय कोष के उद्देश्य एवं अवधि जैसे तत्वों पर निर्भर करेगा। अनिल इन पद्धतियों का अध्ययन करना चाहता है।

8.1 परिचय

यह अध्याय किसी व्यवसाय को प्रारंभ करने एवं चलाने के लिए विभिन्न स्रोतों से धन जुटाने के बारे में रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

इसमें विभिन्न स्रोतों के लाभ एवं सीमाओं पर भी चर्चा की गई है एवं उन तत्वों को भी बताया गया है जो व्यावसायिक वित्त के उचित स्रोत के चयन का निर्धारण करेंगे।

हर वह व्यक्ति जो कोई व्यवसाय प्रारंभ करना चाहता है, उसे धन जुटाने के विभिन्न स्रोतों के संबंध में जानना बहुत महत्त्वपूर्ण है। उचित स्रोत का चयन करने के लिए विभिन्न स्रोतों के सापेक्षिक गुणों को जानना भी महत्त्वपूर्ण है।

8.2 व्यावसायिक वित्त का अर्थ, प्रकृति एवं महत्त्व

व्यवसाय समाज की आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वस्तु एवं सेवाओं का उत्पादन एवं वितरण करता है। व्यवसाय संचालन के लिए धन की आवश्यकता होती है। वित्त को इसीलिए व्यवसाय का जीवन रक्षक कहा जाता है। व्यवसाय के विभिन्न कार्यों के लिए धन की आवश्यकता को व्यावसायिक वित्त कहते हैं।

कोई भी व्यवसाय बिना पर्याप्त धन के कार्य नहीं कर सकता। उद्यमी जो पूँजी प्रारंभ में लगाता है, वो व्यवसाय के वित्त की पूरी आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं होती। व्यवसायी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इसीलिए अन्य स्रोतों की तलाश करता है। वित्तीय आवश्यकताओं का सही आकलन एवं इसके विभिन्न स्रोतों की पहचान करना किसी व्यावसायिक संगठन को चलाने का महत्त्वपूर्ण पहलू है।

वित्त की आवश्यकता व्यवसायी द्वारा व्यवसाय प्रारंभ के निर्णय के समय ही पैदा हो जाती है। कुछ राशि की आवश्यकता तो तुरंत हो जाती है, जैसे- संयंत्र एवं मशीनरी, फर्नीचर एवं अन्य संपत्तियों को खरीदने हेतु। इसी प्रकार से कुछ कोष की आवश्यकता दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए होती है, जैसे-कच्चे माल की खरीद, कर्मचारियों का वेतन आदि। इसी प्रकार से जब व्यवसाय को

बढ़ाना होता है, तब धन की आवश्यकता होती है। व्यवसाय के लिए वित्त की आवश्यकताओं को निम्न श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है-

(क) **स्थायी पूँजी की आवश्यकता–** व्यवसाय प्रारंभ करने के लिए स्थायी संपत्तियों, जैसे-भूमि एवं भवन, संयंत्र एवं मशीनरी एवं फर्नीचर खरीदने के लिए धन की आवश्यकता होती है। इसे उद्यम की स्थायी पूँजी की आवश्यकता कहते हैं। स्थायी संपत्तियों के लिए आवश्यक पूँजी का व्यवसाय में निवेश लंबी अवधि तक रहता है। विभिन्न व्यावसायिक इकाइयों को स्थायी पूँजी की अलग-अलग राशियों की आवश्यकता होती है जो विभिन्न तत्वों पर निर्भर करती है, जैसे- व्यवसाय की प्रकृति आदि। उदाहरण के लिए, एक व्यापारिक इकाई को विनिर्माण इकाई की तुलना में कम स्थायी पूँजी की आवश्यकता होगी। इसी प्रकार से स्थायी पूँजी की आवश्यकता एक छोटे उद्यम की अपेक्षा एक बड़े उद्यम के लिए अधिक होती है।

(ख) **कार्यशील पूँजी की आवश्यकता–** किसी उद्यम की वित्तीय आवश्यकता स्थायी संपत्तियों के क्रय के साथ ही समाप्त नहीं हो जाती। व्यवसाय कितना भी बड़ा अथवा छोटा हो उसे दिन-प्रतिदिन के कार्यकलापों के लिए पूँजी की आवश्यकता होती है। इसे व्यवसाय की कार्यशील पूँजी की आवश्यकता कहते हैं। इसकी आवश्यकता माल का स्टॉक, प्राप्यबिल जैसी चालू संपत्तियों के लिए एवं वेतन, मजदूरी, टैक्स एवं किराया जैसे वर्तमान खर्चों के भुगतान के लिए होती है।

कार्यशील पूँजी की राशि अलग-अलग व्यावसायिक इकाइयों के लिए अलग-अलग होती है, जो कई तत्वों पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, उधार माल का विक्रय करने वाली अथवा कम बिक्री आवर्त वाली इकाई को माल अथवा सेवाओं की नकद बिक्री करने अथवा अधिक आवर्त वाली इकाई की तुलना में अधिक कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होगी।

स्थायी एवं कार्यशील पूँजी की आवश्यकता व्यवसाय के विकास एवं विस्तार के साथ ब\ढ़ जाती है। कभी-कभी उत्पादन अथवा कार्यों की लागत को कम करने के लिए उच्च तकनीक का प्रयोग करना होता है जिसके लिए अतिरिक्त पूँजी की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार से त्यौहारों के मौसम के लिए अधिक स्टॉक जमा करने अथवा चालू देनदारी का भुगतान करने या व्यवसाय के विस्तार अथवा इसे दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए भी अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है।

इसीलिए उन विभिन्न स्रोतों का जिनसे पूँजी जुटाई जा सकती है, मूल्यांकन आवश्यक है।

8.3 वित्त/धन के स्रोतों का वर्गीकरण

एकल स्वामित्व एवं साझेदारी इकाइयों के लिए धन व्यक्तिगत स्रोतों अथवा बैंक, मित्रों आदि से ऋण लेकर जुटाया जा सकता है। कंपनी संगठन

तालिका 8.1 कोष के स्रोतों का वर्गीकरण

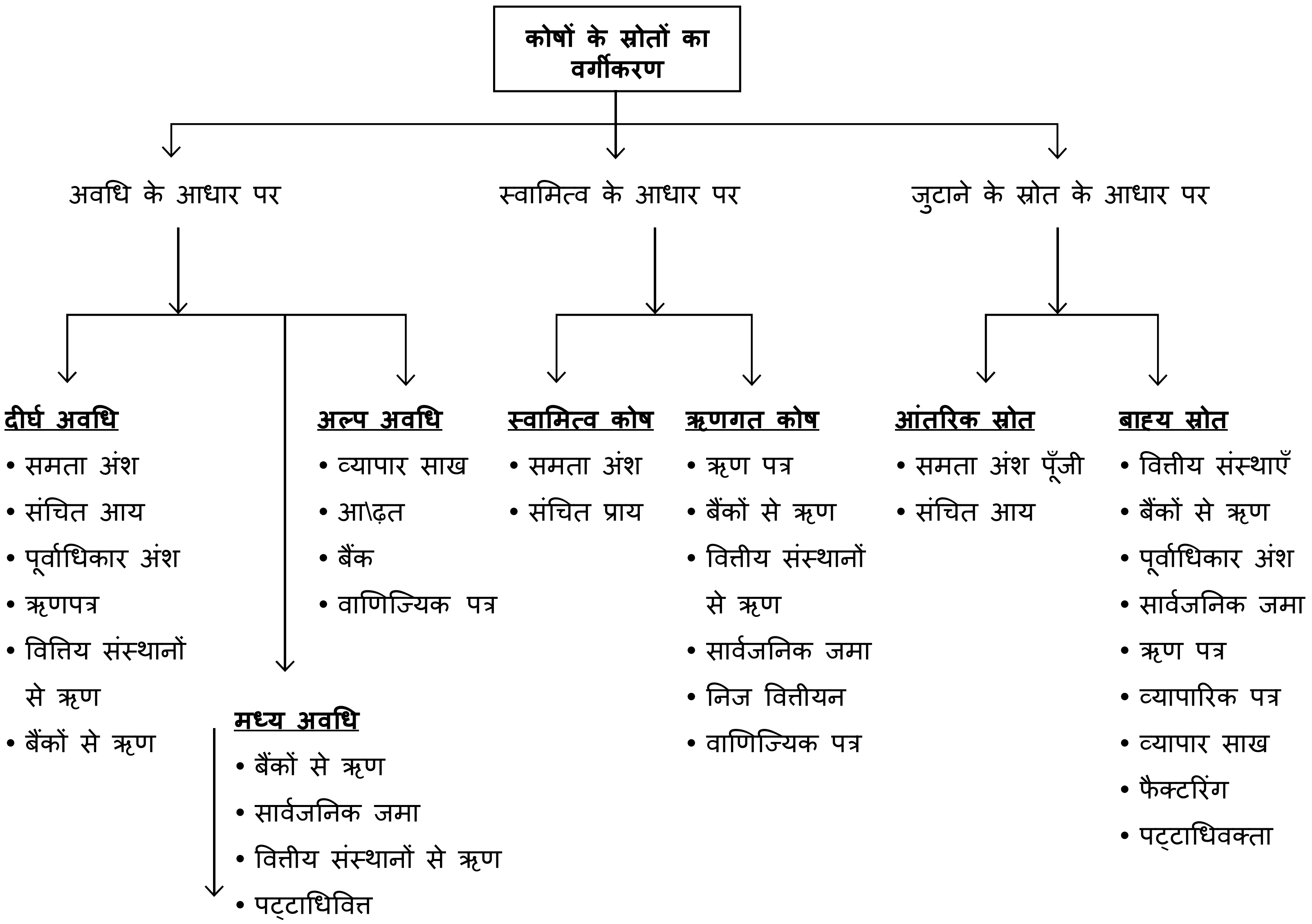

के लिए व्यावसायिक वित्त के विभिन्न स्रोतों को जिन विभिन्न श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, वे तालिका 8.1 में दी गई हैं।

जैसा कि तालिका से स्पष्ट है, पूँजी के स्रोतों को विभिन्न आधार पर श्रेणीबद्ध किया गया है। ये आधार हैं- अवधि, उत्पादन के स्रोत तथा स्वामित्व। इस वर्गीकरण एवं विभिन्न स्रोतों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है-

8.3.1 अवधि के आधार पर

अवधि के आधार पर पूँजी के विभिन्न स्रोतों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। ये हैं- दीर्घ अवधि स्रोत, मध्य अवधि स्रोत एवं अल्प अवधि स्रोत।

दीर्घ अवधि स्रोत व्यवसाय की पाँच वर्ष से अधिक की अवधि की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इनमें जो स्रोत सम्मिलित हैं, वे हैं- शेयर एवं डिबैंचर, लंबी अवधि के ऋण, एवं वित्तीय संस्थानों से ऋण। इस प्रकार का धन उपकरण व संयंत्र आदि स्थायी संपत्तियों का क्रय करने के लिए आवश्यक होता है। लेकिन यदि पूँजी एक वर्ष से अधिक परंतु पाँच वर्ष से कम के लिए चाहिए तो मध्य अवधि वित्त के स्रोत का उपयोग करेंगे। इन स्रोतों में सम्मिलित हैं- वाणिज्यिक बैंकों से ऋण, सार्वजनिक जमा, लीज वित्तीयन एवं वित्तीय संस्थानों से ऋण।

एक वर्ष से कम समय के लिए पूँजी को लघु अवधि वित्त कहते हैं। लघु अवधि पूँजी के स्रोतों के कुछ उदाहरण हैं- व्यापार साख, वाणिज्यिक बैंकों से ऋण एवं वाणिज्यिक प्रपत्र।

अल्प अवधि वित्त चालू संपत्ति, जैसे-प्राप्य बिल एवं स्टॉक के लिए सर्वाधिक सामान्य है। मौसमी व्यवसाय जिन्हें संभावित बिक्री के लिए स्टॉक जमा करना होता है, उन्हें दो मौसम के मध्य की अवधि के लिए लघु अवधि वित्त की आवश्यकता होती है।

थोक व्यापारी एवं विनिर्माता जिनकी अधिकांश संपत्ति रहतिया अथवा प्राप्यनीय के रूप में होती है, उनको अल्प अवधि के लिए बड़ी मात्रा में पूँजी की आवश्यकता होती है।

8.3.2 स्वामित्व के आधार पर

स्वामित्व के आधार पर वित्त स्रोतों को स्वामित्व कोष एवं ऋणगत कोष में वर्गीकृत किया जा सकता है। स्वामित्व कोष का अर्थ है- वह कोष जो उद्‌यम के स्वामियों ने दिया है। ये स्वामी एकल व्यापारी या साझेदार या कंपनी के अंशधारी हो सकते हैं। पूँजी के अतिरिक्त इसमें लाभ का वह भाग जो व्यवसाय में पुनः निवेशित है, भी सम्मिलित है। स्वामीगत पूँजी व्यवसाय में लंबी अवधि के लिए लगी होती है एवं व्यवसाय के जीवनकाल में इसको लौटाना नहीं पड़ता है। यह पूँजी स्वामी को प्रबंध में नियंत्रण के अधिकार की प्राप्ति का आधार होती है। समता अंशों का निर्गमन एवं संचित आय वे दो मुख्य स्रोत हैं जिनसे स्वामीगत कोष प्राप्त किये जा सकते हैं। दूसरी ओर ऋणगत कोष से अभिप्राय ऋण एवं उधार लेने के माध्यम से कोष एकत्रित करना है। ऋणगत स्रोतों में वाणिज्यिक बैंकों से ऋण, वित्तीय संस्थानों से ऋण, ऋणपत्रों का निर्गमन,

सार्वजनिक ऋण एवं व्यापारिक साख सम्मिलित हैं। इन स्रोतों से कोष एक निश्चित अवधि के लिए निर्धारित शर्तों पर प्राप्त किये जाते हैं तथा उन्हें एक निश्चित अवधि की समाप्ति पर लौटाया जाता है। इन कोषों पर एक निश्चित दर से ब्याज दिया जाता है। कभी-कभी तो इसका व्यवसाय पर बहुत अधिक भार हो जाता है क्योंकि कम आय होने अथवा हानि होने पर भी ब्याज का भुगतान करना होता है। सामान्यतः किसी स्थायी संपत्ति की जमानत पर ही ये कोष दिये जाते हैं।

8.3.3 आंतरिक एवं बाह्य सुविधाओं के आधार पर

कोषों के स्रोत के श्रेणीकरण का एक और आधार कोष जुटाने के आंतरिक स्रोत अथवा बाह्य स्रोत हो सकते हैं। आंतरिक स्रोत वे हैं जो संगठन में से ही जुटाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यवसाय प्राप्य बिलों की वसूली की रफ्तार बढ़ाने, अतिरिक्त स्टॉक को बेचने एवं अपने लाभों के पुनः विनियोग के द्वारा आंतरिक कोष पैदा करता है। कोषों के आंतरिक स्रोत व्यवसाय की सीमित आवश्यकताओं की ही पूर्ति कर सकते हैं।

कोष के बाह्य स्रोतों में संगठन से बाहर के स्रोत, जैसे-आपूर्तिकर्त्ता, ऋणदाता एवं निवेशकर्त्ता सम्मिलित हैं। जब भी बड़ी मात्रा में राशि एकत्रित करनी होती है तब आमतौर पर बाह्य स्रोतों का उपयोग किया जाता है। आंतरिक स्रोतों की अपेक्षा बाह्य स्रोतों से पूँजी जुटाना अधिक खर्चीला होता है। कई मामलों में तो व्यावसायिक इकाई को बाह्य स्रोतों से पूँजी जुटाने के लिए अपनी परिसंपत्तियों को गिरवी रखना पड़ता है। ऋण पत्रों का निर्गमन, वाणिज्यिक बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों से उधार लेना एवं सार्वजनिक जमा स्वीकार करना पूँजी के बाह्य स्रोतों के कुछ उदाहरण हैं।

8.4 वित्त के स्रोत

एक व्यावसायिक इकाई विभिन्न स्रोतों से पूँजी जुटा सकती है। प्रत्येक स्रोत की अपनी विशिष्टताएँ हैं जिन्हें सही रूप में समझना आवश्यक है कि जिससे कोष जुटाने के सर्वश्रेष्ठ स्रोत की पहचान की जा सके। सभी संगठनों के लिए कोई एक स्रोत सर्वश्रेष्ठ नहीं होता। किस स्रोत का उपयोग करना है, इसका चुनाव स्थिति, उद्देश्य, लागत एवं जोखिम के आधार पर होता है। उदाहरणार्थ-यदि व्यवसाय को स्थिर पूँजी की आवश्यकता की पूर्ति के लिए कोष जुटाना है तो दीर्घ अवधि पूँजी की आवश्यकता होगी, जिसे स्वामीगत पूँजी अथवा ऋणगत पूँजी के रूप में जुटाया जा सकता है। इसी प्रकार से यदि उद्देश्य व्यवसाय की दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है तो अल्प अवधि स्रोतों से इसे प्राप्त किया जा सकता है। विभिन्न स्रोतों का विवरण उनके लाभ एवं सीमाओं के साथ नीचे दिया गया है–

8.4.1 संचित आय

कंपनी साधारणतया अपनी पूरी आय को अंशधारियों में लाभांश के रूप में नहीं वितरित करती। शुद्ध आय के एक भाग को व्यवसाय में भविष्य में उपयोग के लिए संचित कर लेती है।

इसे संचित आय या स्वयं वित्तीयकरण अथवा लाभ का पुनः विनियोग कहते हैं। किसी भी संगठन में पुनः विनियोग के लिए उपलब्ध लाभ कई तत्त्वों पर निर्भर करता है, जैसे- शुद्ध लाभ, लाभांश नीति एवं संगठन की आय।

गुण

एक वित्त के स्रोत के रूप में संचित आय के गुण नीचे दिए गए हैं–

(क) संचित आय किसी भी संगठन की पूँजी का स्थायी स्रोत है।

(ख) इसको ब्याज, लाभांश अथवा अतिरिक्त लागत के रूप में कोई व्यय नहीं करना पड़ता।

(ग) चूँकि पूँजी आंतरिक स्रोतों से जुटाई गई है, अतः संचालन एवं स्वतंत्रता की लोचपूर्णता अधिक होती है। यह व्यवसाय की असंभावित हानि को आत्मसात् करने की क्षमता को बढ़ाता है।

(घ) इससे कंपनी के समता, अंशों के बाजार मूल्य में वृद्धि हो सकती है।

सीमाएँ

पूँजी के स्रोत के रूप में संचित आय की निम्न सीमाएँ हो सकती हैं-

(क) सीमा से अधिक लाभ का पुनः निवेश अंशधारकों में असंतोष का कारण बन सकता है क्योंकि अब उनको उपार्जित लाभ से कम लाभांश मिलता है।

(ख) व्यवसाय के लाभों की अस्थिरता के कारण यह पूँजी का अनिश्चित स्रोत है।

(ग) इस पूँजी के संयोग लागत को बहुत-सी फर्म मान्यता नहीं देतीं। इससे कोषों का अनुपयुक्त उपयोग हो सकता है।

8.4.2 व्यापारिक साख

व्यापारिक साख एक व्यापारी द्वारा दूसरे व्यापारी को वस्तु एवं सेवाओं के क्रय के लिए दी गई उधार सुविधा को कहते हैं। व्यापारिक साख बिना तुरंत भुगतान किए माल की आपूर्ति को संभव बनाती है। क्रयकर्त्ता के खातों में यह साख विभिन्न लेनदार या देय के नाम से दिखायी जाती है। व्यापारिक साख को व्यावसायिक संगठन एक अल्प अवधि वित्त के स्रोत के रूप में उपयोग करते हैं। यह उन ग्राहकों को दी जाती है जिनकी वित्तीय स्थिति सुदृढ़ एवं ख्याति होती है। साख की मात्रा एवं अवधि जिन कारकों पर निर्भर करती है, वे हैं- क्रेता फर्म की साख, विक्रेता की वित्तीय स्थिति, क्रय की मात्रा, भुगतान का पिछला शेष एवं बाजार में प्रतियोगिता की सीमा। व्यापार साख की शर्तें अलग-अलग उद्योगों एवं अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग होंगी। एक फर्म अलग-अलग ग्राहकों को अलग-अलग शर्तों पर उधार की सुविधा दे सकती है।

गुण

व्यापारिक साख के प्रमुख लाभ निम्न हैं–

(क) व्यापारिक साख कोषों का सुविधाजनक एवं सतत् स्रोत है।

(ख) यदि ग्राहक की साख की स्थिति का विक्रेता को ज्ञान हो तो व्यापारिक साख तुरंत मिल जाती है।

(ग) व्यापारिक साख संगठन की बिक्री को बढ़ाती है।

(घ) यदि कोई संगठन निकट भविष्य में बिक्री में संभावित वृद्धि की आपूर्ति के लिए भंडार स्तर में वृद्धि करना चाहता है तो वह इसके वित्तीयन के लिए व्यापारिक साख का प्रयोग कर सकता है।

(ङ) कोष की व्यवस्था से इसका संपत्तियों पर कोई प्रभार नहीं होता।

सीमाएँ

व्यापारिक साख की पूँजी के स्रोत के रूप में कुछ सीमाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं-

(क) व्यापारिक साख की आसान एवं लोचपूर्ण सुविधाओं का मिलना किसी भी फर्म को अति व्यापार के लिए प्रेरित कर सकता है जिससे फर्म का जोखिम बढ़ता है।

(ख) व्यापारिक साख के माध्यम से सीमित कोष ही जुटाए जा सकते हैं।

(ग) धन एकत्रित करने के अधिकांश स्रोतों की तुलना में यह खर्चीला स्रोत होता है।

8.4.3 आढ़त

आढ़त एक ऐसी वित्त संबंधित सेवा है जिसमें आढ़तिया विभिन्न सेवाएँ प्रदान करता है, जो इस प्रकार हैं-

(क) विपत्रों को भुनाना (भय अथवा बिना साख) एवं ग्राहकों की लेनदारी को वसूल करना– इसमें वस्तु एवं सेवाओं के कारण प्राप्य बिलों को एक निश्चित कटौती पर फैक्टर को बेच दिया जाता है। सभी साख नियंत्रण एवं क्रेता से उधार वसूली का पूरा उत्तदायित्व फैक्टर का होता है एवं फर्म को अप्राप्य ऋणों के कारण होने वाली हानि से सुरक्षा प्रदान करता है। फैक्टरिंग की दो विधियाँ होती हैं– आलंबन सहित फैक्टरिंग, आलंबन रहित फैक्टरिंग। आलंबन सहित फैक्टरिंग में ग्राहक को अप्राप्य ऋणों की जोखिम से सुरक्षा नहीं दी जाती है जबकि आलम्बन रहित फैक्टरिंग में फैक्टर साख के कारण पूरे जोखिम को वहन करता है, अर्थात् देनदारी यदि प्राप्य हो जाए तो ग्राहक को बीजक की पूरी राशि का भुगतान किया जाएगा।

(ख) संभावित ग्राहक आदि की साख के संबंध में सूचना देना– फैक्टर फर्मों के व्यापार संबंधित इतिहास की पूरी जानकारी रखता है। फैक्टरिंग की सेवाएँ लेने वालों के लिए यह मूल्यवान जानकारी होती है। इससे वह उन लोगों से व्यापार करने से बच जाएंगे जो भुगतान के संबंध में खरे नहीं हैं। फैक्टर वित्त विपणन आदि के क्षेत्र में भी उपयुक्त सलाह सेवाएँ प्रदान करते हैं। फैक्टर अपनी सेवाओं के बदले फीस लेते हैं। फैक्टरिंग की सेवाएँ भारतीय रिजर्व बैंक की पहल के फलस्वरूप भारतीय

वित्त के क्षेत्र में 90 के शुरूआती दशक में प्रारंभ हुई। फैक्टरिंग की सेवाएँ प्रदान करने वाले संगठनों में भारतीय स्टेट बैंक आढ़तिये तथा वाणिज्यिक सेवा लि., कैनबैंक फैक्टर्स लि., फॉरमोस्ट फैक्टर लि. एवं इनके अतिरिक्त कई गैर बैंकिंग वित्त कंपनियाँ तथा अन्य दूसरी एजेंसियाँ फैक्टरिंग सेवाएँ प्रदान करती हैं।

गुण

वित्तीय स्रोत के रूप में फैक्टरिंग के निम्न लाभ हैं-

(क) फैक्टरिंग के द्वारा कोष जुटाना बैंक जैसे वित्तीयन के अन्य माध्यमों से सस्ता होता है।

(ख) फैक्टरिंग के माध्यम से रोकड़ प्रवाह बढ़ने से ग्राहक अपनी देयताओं के देय होने पर तुरंत भुगतान कर सकता है।

(ग) फैक्टरिंग धन का लचीला स्रोत है एवं उधार विक्रय से रोकड़ प्रवाह के एक निश्चित स्वरूप को सुनिश्चित करता है। एक ऐसी लेनदारी जिसे शायद फर्म अन्यथा वसूल न कर पाए यह उसे सुरक्षित करता है।

(घ) यह फर्म की संपत्ति पर कोई भार नहीं पैदा करता।

(ङ) चूँकि फैक्टर साख नियंत्रण का पूरा दायित्व अपने कंधों पर ले लेता है, इसलिए ग्राहक व्यवसाय के दूसरे संचालन क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित कर सकता है।

सीमाएँ

वित्त के स्रोत के रूप में फैक्टरिंग की निम्न सीमाएँ हैं–

(क) जब बीजक छोटी राशि के हों एवं बड़ी संख्या में हों तो यह स्रोत खर्चीला हो जाता है।

(ख) फैक्टर फर्म अग्रिम वित्त सामान्यतः ब्याज की प्रचलित दर की तुलना में ऊँची दर से उपलब्ध कराती है।

(ग) फैक्टर ग्राहक के लिए तीसरा पक्ष होता है। संभव है कि वह इससे व्यवहार करने में सहजता अनुभव न करें।

8.4.4 लीज वित्तीयन

लीज एक अनुबंध होता है जिसमें एक पक्ष अर्थात् संपत्ति का स्वामी दूसरे पक्ष को आवधिक भुगतान के बदले में संपत्ति के प्रयोग का अधिकार देता है। दूसरे शब्दों में, यह संपत्ति को निश्चित अवधि के लिए किराए पर देना है। संपत्ति का स्वामी पट्टाकार कहलाता है जबकि संपत्ति का उपयोगकर्ता पट्टाधारी कहलाता है (देखें बॉक्स 1)। पट्टाधारी पट्टाकार को संपत्ति के उपयोग के बदले में निश्चित आवधिक राशि का भुगतान करता है जिसे पट्टा किराया कहते हैं। लीज की व्यवस्था के नियमन के लिए शर्तें लीज अथवा पट्टा अनुबंध में दी जाती हैं। लीज अथवा पट्टे की अवधि के अंत में संपत्ति पट्टाकार के पास वापस चली जाती है। वित्त फर्म के आधुनिकीकरण

एवं विविधीकरण के लिए महत्त्वपूर्ण साधन हैं। इस प्रकार का वित्तीयन ऐसी संपत्तियों के क्रय करने के लिए अधिक प्रचलित है जो तीव्रता से बदलते तकनीकी विकास के कारण शीघ्र अप्रचलित हो जाती हैं, जैसे- कंप्यूटर्स, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण आदि। पट्टे पर लेने का निर्णय लेने से पहले, संपत्ति को पट्टे पर क्रय करने अथवा उस संपत्ति को ही क्रय कर लेने के मध्य तुलना करना आवश्यक है।

गुण

लीज वित्तीयन के महत्वपूर्ण लाभ निम्न हैं–

(क) इसके कारण पट्टाधारक को कम निवेश कर संपत्ति प्राप्त हो जाती है।

(ख) सरल प्रलेखीकरण के माध्यम से संपत्तियों का वित्तीयन आसान हो जाता है।

(ग) पट्टाधारक द्वारा भुगतान किया गया लीज किराया कर योग्य लाभ की गणना करने के लिए घटाया जाता है।

(घ) इसके द्वारा वित्त लेने पर स्वामित्व अथवा व्यवसाय पर नियंत्रण कम नहीं होता है।

(ङ) लीज समझौते से व्यावसायिक इकाई की ऋण लेने की क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(च) पट्टाकार ही अप्रचलन के जोखिम को वहन करता है। इससे पट्टाधारक को संपत्ति के पुनर्स्थापन के लिए अधिक अवसर मिल जाता है।

सीमाएँ

लीज वित्तीयन की निम्न सीमाएँ हैं–

(क) लीज व्यवस्था संपत्ति के उपयोग पर कई प्रकार की रोक लगाती है। उदाहरणार्थ पट्टाधारक को संपत्ति में किसी प्रकार के परिवर्तन अथवा उसमें संशोधन की अनुमति नहीं देना।

(ख) पट्टे का नवीनीकरण न होने पर सामान्य व्यवसाय संचालन प्रभावित हो सकता है।

(ग) उपकरण यदि अनुपयोगी है एवं पट्टाधारी लीज अनुबंध को इसकी निर्धारित अवधि से पूर्व ही समाप्त करना चाहता है तो इसके लिए ऊँची राशि का भुगतान करना पड़ सकता है।

(घ) पट्टाधारक संपत्ति का कभी भी स्वामी नहीं बन सकता। उसे इसका अवशेष मूल्य भी नहीं मिलता।

8.4.5 सार्वजनिक जमा

जब संगठन सीधे जनता से धन जमा करते हैं तो इसे सार्वजनिक जमा कहते हैं। सार्वजनिक जमा पर साधारणतया बैंक जमा पर दिए जाने वाले ब्याज से ऊँचे दर से ब्याज दिया जाता है। जो भी व्यक्ति किसी संगठन में राशि जमा करना चाहता है तो उसे इसके लिए एक फॉर्म भरना होता है। संगठन इसके बदले में ऋण के प्रमाणस्वरूप जमा प्राप्ति की रसीद देता है। सार्वजनिक जमा व्यवसाय की मध्य एवं लघु अवधि दोनों वित्तीय आवश्यकताओं के लिए उपयोगी है। सार्वजनिक

जमा, जमाकर्त्ता एवं संगठन दोनों के लिए उपयुक्त रहता है जबकि जमाकर्त्ताओं को बैंक से अधिक दर से ब्याज मिलता है तो कंपनियों के लिए जमा की लागत बैंकों से ऋण लेने की लागत से कम होती है। कंपनियाँ साधारणतः तीन वर्ष के लिए सार्वजनिक जमा को आमंत्रित करती हैं। सार्वजनिक जमा की स्वीकृति का नियमन भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा होता है। सार्वजनिक जमा के निम्न लाभ हैं-

गुण

(क) जमा प्राप्ति की प्रक्रिया सरल है एवं किसी प्रकार की प्रतिबंधन शर्तें नहीं होतीं जैसी कि साधारणतः ऋण अनुबंधों में होती हैं।

(ख) सार्वजनिक जमा पर किया गया व्यय बैंक एवं वित्तीय संस्थाओं से ऋणों की लागत से कम होता है।

(ग) सार्वजनिक जमा आमतौर पर कंपनी की परिसंपत्तियों पर प्रभार नहीं है। परिसंपत्तियों को अन्य स्रोतों से ऋण जुटाने के लिए जमानत के तौर पर उपयोग में लाया जा सकता है।

(घ) जमाकर्त्ताओं के पास वोट देने का अधिकार नहीं होता है इसलिए कंपनी पर नियंत्रण प्रभावित नहीं होता है।

सीमाएँ

सार्वजनिक जमा की प्रमुख सीमाएँ निम्न है–

(क) नई कंपनियों के लिए सार्वजनिक जमा के द्वारा कोष जुटाना कठिन होता है।

(ख) यह वित्त प्रबंधन का विश्वास योग्य स्रोत नहीं है क्योंकि हो सकता है कि जब कंपनी को धन की आवश्यकता हो, तब जनता सहयोग ही न करे।

(ग) सार्वजनिक जमा को जुटाना कठिन होता है, विशेषतः तब जब जमा की राशि बड़ी मात्रा में हो।

8.4.6 वाणिज्यिक पत्र

अल्प अवधि वित्त के स्रोत के रूप में वाणिज्यिक पत्रों का प्रादुर्भाव 90 के दशक के प्रारंभ में हुआ। वाणिज्यिक पत्र किसी फर्म द्वारा अल्प अवधि के लिए कोष जुटाने के लिए एक गैर-जमानती प्रतिज्ञा-पत्र होता है। यह अवधि 90 दिन से 364 दिन तक की हो सकती है। इसे एक फर्म दूसरी फर्म को बीमा कंपनी को पेंशन कोष एवं बैंकों को जारी करती है क्योंकि यह पूर्ण असुरक्षित होता है। अच्छी साख वाली फर्में ही वाणिज्यिक पत्र को जारी कर सकती हैं। इसका नियमन भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यक्षेत्र में आता है। वाणिज्यिक पत्रों के लाभ एवं उनकी सीमाएँ नीचे दी गई हैं-

लाभ

(क) वाणिज्यिक पत्र को बिना किसी जमानत के बेचा जाता है तथा इस पर किसी प्रकार की प्रतिबंधित शर्तें नहीं होती।

(ख) चूँकि यह एक स्वतंत्र रूप से हस्तांतरणीय विलेख होता है इसलिए इसकी तरलता अधिक होती है।

(ग) अन्य स्रोतों की तुलना में इससे अधिक कोष जुटाए जा सकते हैं। वाणिज्यिक पत्र जारी करने वाली फर्म के लिए इसे जारी करने की लागत वाणिज्यिक बैंकों से ऋण लेने पर आने वाली लागत से कम होती है।

(घ) वाणिज्यिक पत्र से कोषों की प्राप्ति अबाध गति से प्राप्त होती है क्योंकि इसके भुगतान को जारीकर्त्ता फर्म की आवश्यकतानुसार ढाला जा सकता है। इसके अतिरिक्त परिपक्व हो रहे वाणिज्यिक पत्र का भुगतान नये वाणिज्यिक पत्र को बेचकर किया जा सकता है।

(ङ) कंपनियाँ अपने अतिरिक्त कोष को वाणिज्यिक पत्र में लगाकर अच्छा प्रतिफल प्राप्त कर सकती हैं।

सीमाएँ

(क) वाणिज्यिक पत्रों के माध्यम से केवल अच्छी वित्तीय स्थिति एवं उच्च कोटि वाली फर्में ही धन जुटा सकती हैं। नई एवं सामान्य कोटि की फर्में इस पद्धति से धन एकत्रित नहीं कर सकतीं।

(ख) वाणिज्यिक पत्र के माध्यम से जो राशि जुटाई जा सकती है, वह किसी भी एक समय पर आपूर्तिकर्ताओं के पास उपलब्ध अतिरिक्त रोकड़ तक सीमित होती है।

(ग) वाणिज्यिक पत्र वित्तीयन का एक अव्यक्तिगत साधन होता है। यदि फर्म वित्तीय कठिनाइयों के कारण वाणिज्यिक पत्र का शोधन नहीं कर पाती तो वाणिज्यिक पत्र की भुगतान तिथि को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता।

8.4.7 अंशों का निर्गमन

अंशों के निर्गमन से प्राप्त पूँजी, अंश पूँजी कहलाती है। एक कंपनी की पूँजी छोटे-छोटे यूनिटों में विभक्त होती है, जिन्हें अंश कहते हैं। उदाहरणार्थ एक कंपनी 10 रुपये वाले 1,00,000 अंशों का निर्गमन 10,00,000 रुपये की पूँजी के लिए कर सकती है। अंशों के धारक अंशधारी कहलाते हैं। प्रायः अंश दो प्रकार के होते हैं जो कंपनी द्वारा निर्गमित होते हैं– समता अंश तथा पूर्वाधिकार अंश। समता अंशों के निर्गमन से प्राप्त पूँजी, समता अंश पूँजी तथा पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन से प्राप्त पूँजी पूर्वाधिकारी अंश पूँजी कहलाती है।

(i) समता अंश

अंशों का निर्गमन किसी कंपनी द्वारा दीर्घ अवधि पूँजी जुटाने के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। समता अंश कंपनी की स्वामीगत पूँजी होती है इसलिए इन अंशों के माध्यम से जुटाई गई पूँजी को स्वामीगत पूँजी अथवा स्वामी के कोष भी कहते हैं। समता अंश पूँजी कंपनी के निर्माण के पूर्व अपेक्षित होती है। समता अंशधारकों को निश्चित लाभांश नहीं मिलता बल्कि उन्हें कंपनी की आय के आधार पर भुगतान किया जाता है। इन्हें अवशिष्ट स्वामी की संज्ञा दी गई है क्योंकि इन्हें कंपनी की आय एवं संपत्तियों के विरुद्ध अन्य सभी दावों का भुगतान करने के पश्चात् की बचत प्राप्त होती है। इन्हें स्वामित्व का पुरस्कार

मिलता है तो ये इसका जोखिम भी वहन करते हैं। हालाँकि उनका दायित्व कंपनी में उनके द्वारा लगाई पूँजी तक सीमित रहता है। इसके साथ ही अपने वोट देने के अधिकार के माध्यम से इन अंशधारकों को कंपनी के प्रबंध में भागीदारी का अधिकार प्राप्त होता है।

गुण

समता अंशों के माध्यम से कोष जुटाने के महत्त्वपूर्ण लाभ नीचे दिये गए हैं–

(क) समता अंश उन निवेशकों के लिए उपयुक्त हैं जो अधिक आय के लिए जोखिम उठाने के लिए तत्पर होते हैं।

(ख) समता अंशधारकों को लाभांश का भुगतान अनिवार्य नहीं है इसलिए इसका कंपनी पर कोई भार नहीं होता है।

(ग) समता पूँजी स्थायी होती है क्योंकि इसको केवल कंपनी के समापन पर ही लौटाया जाता है।

(घ) समता पूँजी कंपनी की साख बनाती है एवं संभावित ऋणदाताओं में विश्वास पैदा करती है।

(ङ) कंपनी की संपत्तियों पर किसी प्रकार के प्रभार के बिना भी समता अंशों के माध्यम से कोष जुटाए जा सकते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर उधार लेने के लिए कंपनी की संपत्तियों को गिरवी रखा जा सकता है।

(च) समता अंशों के मताधिकार के कारण कंपनी के प्रबंध पर प्रजातांत्रिक नियंत्रण रहता है।

सीमाएँ

समता अंशों के माध्यम से धन जुटाने की प्रमुख सीमाएँ निम्न हैंः-

(क) जो निवेशक नियमित आय चाहते हैं, वे समता अंशों को प्राथमिकता नहीं देते क्योंकि इन पर प्रतिफल में परिवर्तन होता रहता है।

(ख) समता अंशों पर लागत अन्य स्रोतों से कोष एकत्रित करने पर किये गए व्यय से अधिक होती है।

(ग) अतिरिक्त समता अंशों का निर्गमन वर्तमान अंशधारकों की मताधिकार शक्ति एवं आय को कम करती है।

(घ) समता अंशों के माध्यम से कोष एकत्रित करने में अधिक औपचारिकताओं को पूरा करने में प्रक्रियात्मक देरी होती है।

(ii) पूर्वाधिकार अंश

पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन द्वारा जुटाई गई पूँजी को पूर्वाधिकार अंश पूँजी कहते हैं। पूर्वाधिकार अंशधारियों की समता अंशधारियों की तुलना में दो ही क्षेत्रों में प्राथमिकता प्राप्त होती है।

(क) कंपनी के शुद्ध लाभ में से समता अंशधारकों के लिए लाभांश घोषित करने से पूर्व स्थिर दर से लाभांश प्राप्त करना।

(ख) समापन के समय कंपनी के लेनदारों के दावों का भुगतान करने के पश्चात् पूँजी की वापसी, दूसरे शब्दों में पूर्वाधिकार अंशधारकों को समता अंशधारकों की तुलना में लाभांश तथा पूँजी की वापसी के

लिए प्राथमिकता प्राप्त होती है। पूर्वाधिकार अंश ऋणपत्रों के अनुरूप होते हैं क्योंकि लाभांश का भुगतान निदेशकों के विवेक पर निर्भर करता है एवं टैक्स काटकर लाभ में से किया जाता है। इस कारण से यह समता अंशों से मिलते-जुलते हैं। इस प्रकार से पूर्वाधिकार अंशों में कुछ विशेषताएँ समता अंश एवं ऋणपत्र दोनों की होती हैं। पूर्वाधिकार अंशों को साधारणतः मताधिकार प्राप्त नहीं होते हैं। एक कंपनी विभिन्न प्रकार के पूर्वाधिकार अंश जारी कर सकती है (देखें बॉक्स 1)

गुण

पूर्वाधिकार अंशों के निम्न गुण हैं–

(क) पूर्वाधिकार अंशों पर स्थिर दर से प्रतिफल के कारण नियमित आय होती है तथा निवेश भी सुरक्षित रहता है।

(ख) पूर्वाधिकार अंश उन निवेशकों के लिए बहुत उपयुक्त रहते हैं जो स्थिर दर से प्रतिफल चाहते हैं तथा कम जोखिम उठाना चाहते हैं।

(ग) जैसा कि पूर्वाधिकार अंशधारियों को वोट देने का अधिकार नहीं होता है, अतः वे समता अंशधारियों के प्रबंध में नियंत्रण पर कोई प्रभाव नहीं डालते।

(घ) पूर्वाधिकार अंशधारियों का निश्चित लाभांश होने के कारण कंपनी अच्छे समय में कंपनी समता अंशधारकों को ऊँची दर से लाभांश दे सकती है।

(ङ) कंपनी के समापन पर पूर्वाधिकार अंशधारकों को समता अंशधारकों की तुलना में पूँजी की वापसी के लिए पूर्वाधिकार होता है।

बॉक्स 1
पूर्वाधिकार अंशों के प्रकार

1. **संचयी एवं असंचयीः** जिन पूर्वाधिकार अंशों पर लाभांश का किसी वर्ष में भुगतान नहीं किया जाता और अदत्त लाभांश भविष्य के वर्षों के लिए जुड़ता जाता है, उन्हें संचयी पूर्वाधिकार अंश कहते हैं। दूसरी ओर, असंचयी पूर्वाधिकार अंशों पर यदि किसी वर्ष लाभांश नहीं दिया जाता तो यह आगामी वर्षों के लिए जुड़ता नहीं है।

2. **भागीदारी एवं अभागीदारीः** जिन पूर्वाधिकार अंशों को समता अंशधारकों को एक निश्चित दर से लाभांश का भुगतान करने के पश्चात् कंपनी के अधिक लाभ में भागीदारी का अधिकार होता है, उन्हें भागीदारी पूर्वाधिकार अंश कहते हैं। अभागीदारी पूर्वाधिकार अंश वे होते हैं जिनको कंपनी के लाभों में इस प्रकार की भागीदारी का अधिकार नहीं होता।

3. **परिवर्तनीय एवं अपरिवर्तनीयः** जिन पूर्वाधिकार अंशों को एक निश्चित समय में समता अंशों में परिवर्तित किया जा सकता है, उन्हें परिवर्तनीय पूर्वाधिकार अंश कहते हैं। दूसरी ओर, गैर-परिवर्तनीय अंश समता अंशों में परिवर्तित नहीं किए जा सकते।

(च) पूर्वाधिकार अंश पूँजी का कंपनी की संपत्ति पर किसी प्रकार का प्रभार नहीं होता है।

सीमाएँ

व्यावसायिक वित्त स्रोत के रूप में पूर्वाधिकार अंशों की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं:

(क) पूर्वाधिकार अंश उन निवेशकों के लिए उपयुक्त नहीं हैं जो जोखिम उठाने के लिए तैयार नहीं हैं।

(ख) पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन के कारण कंपनी की संपत्तियों पर समता अंशधारकों का दावा कम हो जाता है।

(ग) पूर्वाधिकार अंशों पर लाभांश की दर ऋणपत्रों पर ब्याज की दर से अधिक होती है।

(घ) इन अंशों पर उसी स्थिति में लाभांश का भुगतान किया जाता है, जब कंपनी लाभ कमा रही हो। इसलिए निवेशकों को प्रतिफल सुनिश्चित नहीं है। अतः इन अंशों के प्रति निवेशकों का आकर्षण कम होता है।

(ङ) लाभांश को व्यय के रूप में लाभ में से नहीं घटाया जाता। इसलिए कोई कर की बचत कंपनी को नहीं होती है, जैसा कि ऋणों पर ब्याज में होता है।

8.4.8 ऋण-पत्र

ऋण-पत्र दीर्घ अवधि ऋणगत पूँजी एकत्रित करने का एक महत्वपूर्ण विलेख है। एक कंपनी ऋण-पत्र जारी कर कोष जुटा सकती है जिन पर स्थिर दर से ब्याज दिया जाता है। कंपनी द्वारा जारी ऋण-पत्र कंपनी द्वारा लिए गए एक निश्चित राशि के

बॉक्स 2
ऋण पत्रों के प्रकार

1. **सुरक्षित एवं असुरक्षित–** सुरक्षित ऋण-पत्र वे होते हैं जो कंपनी की परिसंपत्तियों को बंधक रखकर, उन पर ऋण भार डालते हैं। असुरक्षित ऋण-पत्रों को कंपनी की परिसंपत्तियों पर न तो कोई ऋण भार होता है और न ही वह प्रतिभूति होती है।
2. **पंजीकृत एवं वाहक–** पंजीकृत ऋण-पत्र वे होते हैं जिनका कंपनी के रजिस्ट्रार में लेखा-जोखा होता है। इन्हें केवल नियमित हस्तांतरण विलेख द्वारा ही हस्तांतरित किया जा सकता है। इसके विपरीत जिन ऋण-पत्रों का सुपुर्दगी मात्र से हस्तांतरण हो सकता हो, उन्हें वाहक ऋण-पत्र कहते हैं।
3. **परिवर्तनीय एवं गैर परिवर्तनीय–** परिवर्तनीय ऋण पत्र वह ऋण-पत्र होते हैं जिन्हें एक निर्धारित अवधि की समाप्ति पर समता अंशों में परिवर्तित किया जा सकता है। दूसरी ओर, अपरिवर्तनीय ऋण-पत्र वे होते हैं जिन्हें समता अंशों में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।
4. **प्रथम एवं द्वितीय–** जिन ऋण-पत्रों का भुगतान दूसरे ऋण-पत्रों से पहले होता है, उन्हें प्रथम ऋण-पत्र कहते हैं। द्वितीय ऋण-पत्र वे होते हैं जिनका भुगतान प्रथम ऋण-पत्रों के भुगतान के पश्चात् किया जाता है।

ऋण की स्वीकृति है जिसको भविष्य में भुगतान का यह वचन देती है। ऋण-पत्रधारी इसीलिए कंपनी के लेनदार होते हैं। ऋण-पत्रधारकों को एक निश्चित ब्याज की राशि एक निश्चित अंतराल, जैसे छः महीने अथवा एक वर्ष पर भुगतान किया जाता है। ऋण-पत्रों का सार्वजनिक निर्गमन के लिए CRISIL (भारतीय साख, स्तर निर्धारण एवं सूचना सेवाएँ लि.) जैसी साख निर्धारण एजेंसी द्वारा जारी (इश्यू) की साख का स्तरीयकरण किया जाना चाहिए। इसके लिए जिन पक्षों को ध्यान में रखा जाता है, वे हैं– कंपनी के विकास का लेखा-जोखा, इसकी लाभप्रदता, ऋण चुकाने की क्षमता, साख एवं ऋण देने में निहित जोखिम। कंपनी विभिन्न प्रकार के ऋण-पत्र निर्गमित कर सकती है। शून्य ब्याज ऋण-पत्र (ZID) जिन पर स्पष्टतया कोई ब्याज नहीं लगता हाल के वर्षों में काफी प्रचलित हुए हैं। ऋण-पत्र के अंकित मूल्य एवं इसके क्रय मूल्य का अंतर निवेशक की आय है।

गुण

ऋण-पत्रों के माध्यम से कोष एकत्रित करने के निम्न लाभ हैं–

(क) कम जोखिम एवं स्थिर आय के लिए निवेशकों की पहली पसंद हैं।

(ख) ऋण-पत्र स्थिर प्रभाव कोष होते हैं एवं यह कंपनी के लाभ में भागीदार नहीं होते।

(ग) ऋण-पत्रों का निर्गमन उस स्थिति में उपयुक्त रहता है, जब बिक्री एवं आय स्थिर होती है।

(घ) चूँकि ऋण-पत्रों के साथ मताधिकार नहीं होता है इसलिए इनके माध्यम से वित्तीयन के समता अंशधारकों का प्रबंध पर नियंत्रण कम नहीं होता है।

(ङ) पूर्वाधिकार अंशों अथवा समता पूँजी की तुलना में ऋण-पत्रों के माध्यम से वित्तीयन कम खर्चीला होता है क्योंकि ऋण-पत्रों पर जो ब्याज दिया जाता है, वह कर निर्धारण के लिए आय में से घटाया जाता है।

सीमाएँ

वित्त के स्रोत के रूप में ऋण पत्रों की कुछ सीमाएँ होती हैं। ये हैं–

(क) ऋण पत्र चूँकि स्थिर भार विलेख होते हैं इसलिए इनका कंपनी की आय पर स्थायी भार बना रहता है। जब कंपनी की आय घटती-बढ़ती हो तो जोखिम अधिक होता है।

(ख) यदि ऋण-पत्र शोध्य है तो वित्तीय कठिनाई की अवधि के समय भी कंपनी को निर्धारित तिथि तक उनके भुगतान के लिए प्रावधान करना होता है।

(ग) प्रत्येक कंपनी की निश्चित ऋण लेने की क्षमता होती है। ऋण-पत्रों के निर्गमन से कंपनी की ओर आगे ऋण लेने की क्षमता कम हो जाती है।

8.4.9 वाणिज्यिक बैंक

वित्तीय स्रोत के रूप में वाणिज्यिक बैंकों का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यह विभिन्न उद्देश्यों

एवं पृथक समय अवधि के लिए धन प्रदान करते हैं। बैंक हर प्रकार की फर्मों को तथा अनेकों ढंगों से ऋण देते हैं, जैसे-नकद, साख, अधिविकर्ष, आवधिक ऋण, विपत्रों का क्रय/भुनाना एवं साख पत्र जारी करना। बैंकों द्वारा जो ब्याज लिया जाता है, वह कई तत्त्वों पर निर्भर करता, है जैसे- फर्म की विशेषताएँ एवं अर्थव्यवस्था में ब्याज की दर का स्तर। ऋण को या तो इकट्ठा चुकाया जाता है या फिर किश्तों में। बैंक साख कोषों का स्थायी स्रोत नहीं है, यद्यपि बैंको ने दीर्घ अवधि के ऋण देने प्रारंभ कर दिए हैं तथापि बैंक ऋणों को मध्य अवधि एवं अल्प अवधि के लिए ही प्रयोग किया जाता है। वाणिज्यिक बैंकों द्वारा ऋण देना स्वीकार करने से पहले ऋण मांगने वाले को जमानत देनी होती है या फिर संपत्ति पर ऋण भार डालना होता है।

गुण

वाणिज्यिक बैंकों से कोष जुटाने के निम्न लाभ हैं-

(क) व्यवसाय में जब भी धन की आवश्यकता होती है, बैंक धन उपलब्ध कराकर समयानुकूल सहायता करते हैं।

(ख) बैंकों को उधार लेने वाले द्वारा दी जाने वाली जानकारी को गुप्त रखा जाता है। इसलिए व्यवसाय की गोपनीयता बनी रहती है।

(ग) बैंकों से ऋण लेने के लिए विवरण पत्र एवं अभिगोपन आदि का निर्गमन नहीं किया जाता। अतः यह एक सुगम प्रणाली है।

(घ) व्यवसाय के आवश्यकतानुसार ऋण की राशि को घटाया या ब\ढ़ाया जा सकता है। यदि वित्त व्यवस्था ठीक है तो ऋण को समय से पूर्व लौटाया भी जा सकता है। अतः यह एक वित्त प्रबंधन का लचीला स्रोत है।

सीमाएँ

वाणिज्यिक बैंकों की वित्त के स्रोत के रूप में प्रमुख सीमाएँ निम्न हैं-

(क) सामान्यतः कोष छोटी अवधि के लिए ही उपलब्ध होते हैं। इनकी अवधि को बढ़ाना या फिर इनका नवीनीकरण अनिश्चित एवं कठिन होता है।

(ख)बैंक कंपनी के कार्य-कलापों एवं वित्तीय ढाँचे आदि की विस्तार से जाँच-पड़ताल करते हैं तथा परिसंपत्तियों की जमानत एवं व्यक्तिगत जमानत की भी माँग करते हैं। इससे धन प्राप्त करने की प्रक्रिया कुछ जटिल हो जाती है।

(ग) कुछ मामलों में बैंक ऋण की स्वीकृति प्रदान करने के लिए कठिन शर्तें लगा देते हैं, जैसे- बंधक रखे गए माल की बिक्री पर रोक लगाना। इससे व्यवसाय के सामान्य संचालन में कठिनाई आती है।

8.4.10 वित्तीय संस्थान

सरकार ने देश भर में व्यावसायिक संगठनों को वित्त उपलब्ध कराने के लिए कई वित्तीय संस्थानों की स्थापना की है (देखें बॉक्स 5)। इनको केंद्रीय

बॉक्स 3
विशिष्ट वित्तीय संस्थान

1. भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (IFCI)– इसकी स्थापना औद्योगिक वित्त निगम - 1948 के अंतर्गत जुलाई 1948 में एक संवैधानिक निगम के रूप में हुई थी। इसके उद्देश्यों में संतुलित क्षेत्रीय विकास में सहायता प्रदान करना एवं अर्थव्यवस्था के प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों में नये उद्यमियों के प्रवेश को प्रोत्साहन देना सम्मिलित है।

2. राज्य वित्त निगम (SFC)– राज्य वित्त निगम, प्राधिनियम - 1951 ने राज्य सरकारों को अपने-अपने क्षेत्रों में उन औद्योगिक इकाइयों को मध्य एवं अल्प अवधि के लिए वित्त उपलब्ध कराने के अधिकार दिए जो भा.औ.वि.नि. के क्षेत्र से बाहर थे। इसका कार्यक्षेत्र भा.औ.वि.नि. के कार्यक्षेत्र से अधिक व्यापक है क्योंकि इसके कार्यक्षेत्र में न केवल सार्वजनिक कंपनियाँ, बल्कि निजी कंपनियाँ, साझेदारी फर्में एवं एकल स्वामित्व इकाइयाँ भी आती हैं।

3. भारतीय औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम (ICICI)– इसकी स्थापना 1955 में कंपनी अधिनियम के अंतर्गत एक कंपनी के रूप में हुई थी। ICICI केवल निजी क्षेत्र में औद्योगिक उद्यमों के निर्माण, विस्तार एवं आधुनिकीकरण में सहायता करती है। इस निगम ने देश के अंदर विदेशी पूँजी के भाग लेने को भी प्रोत्साहित किया है।

4. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (IDBI)– इसकी स्थापना भारतीय औद्योगिक विकाश बैंक - 1964 के अंतर्गत 1964 में की गई थी। इसका उद्देश्य अन्य वित्तीय संस्थानों की गतिविधियों में समन्वय स्थापित करना था, जिनमें वाणिज्यिक बैंक भी सम्मिलित हैं। यह बैंक तीन प्रकार के कार्य करता है। अन्य वित्तीय संस्थानों को सहायता देना, औद्योगिक इकाइयों को सीधे सहायता प्रदान करना एवं वित्तीय तकनीकी सेवाओं का प्रवर्तन एवं समन्वय स्थापित करना।

5. राज्य औद्योगिक विकास निगम (SIDC)– बहुत-सी राज्य सरकारों ने अपने-अपने राज्यों में औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के लिए राज्य औद्योगिक विकास निगमों की स्थापना की है। रा.औ.वि.नि. (SIDC's) के उद्देश्य अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग हैं।

6. भारतीय यूनिट ट्रस्ट (UTI)– इसकी स्थापना भारत सरकार द्वारा युनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया अधिनियम - 1963 के अंतर्गत 1964 में की गई थी। यू.टी.आई. (UTI) का मूल उद्देश्य जनता की बचत को गति प्रदान करना एवं उनको उत्पादक उपक्रमों में दिशा प्रदान करना है। इसके लिए यह औद्योगिक इकाइयों को सीधे सहायता देता है, उनके शेयर एवं डिबेंचरों में निवेश करता है एवं अन्य वित्तीय संस्थानों के साथ भागीदारी करता है।

7. भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक लि.– प्रारंभ में इसकी स्थापना जर्जर इकाइयों के पुनर्वास के लिए प्राथमिक एजेंसी के रूप में की गई थी एवं इसे भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक भी कहते थे। 1985 में इसका पुनर्गठन कर इसका नाम भारतीय औद्योगिक पुनर्गठन बैंक कर दिया तथा 1997 में इसका नाम फिर से बदलकर भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक कर दिया गया। बैंक बीमार इकाइयों को उनकी शेयर पूँजी के पुनर्गठन, प्रबंध प्रणाली में सुधार एवं आसान शर्तों पर वित्त की व्यवस्था में सहायता प्रदान करता है।

8. भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC)– इसकी स्थापना 1956 में ,एल.आई.सी. अधिनियम -1956 के अंतर्गत 1956 में तत्कालीन 245 बीमा कंपनियों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् की गई थी। यह बीमा प्रीमियम के रूप में जनता की बचत को गतिमान बनाती है तथा सीधे ऋण, शेयर एवं डिबेंचरों के अभिगोपन एवं उनके क्रय के द्वारा सार्वजनिक एवं निजी दोनों प्रकार की औद्योगिक इकाइयों को उपलब्ध कराती है।

सरकार एवं राज्य सरकारों दोनों ने स्थापित किया है। ये स्वामीगत पूँजी एवं ऋणगत पूँजी दोनों लंबी अवधि एवं मध्य अवधि के लिए उपलब्ध कराते हैं तथा वाणिज्यिक बैंक आदि परंपरागत वित्तीय एजेंसियों के पूरक होते हैं। चूँकि इन संस्थानों का उद्देश्य देश में औद्योगिक विकास का संवर्द्धन है इसीलिए इन्हें विकास बैंक कहा जाता है। वित्तीय सहायता के अतिरिक्त ये संस्थान बाजार का सर्वेक्षण तथा उद्यम संचालकों को तकनीकी एवं प्रबंधकीय सेवाएँ भी प्रदान करते हैं।

गुण

वित्तीय संस्थानों के माध्यम से धन जुटाने के निम्न लाभ हैं-

(क) वित्तीय संस्थान दीर्घ अवधि वित्त उपलब्ध कराते हैं जिन्हें वाणिज्यिक बैंक नहीं देते हैं। वित्तीयन का यह स्रोत उस समय उपयुक्त रहता है, जब व्यवसाय के विस्तार, पुनर्गठन एवं आधुनिकीकरण के लिए बड़ी धन राशि की लंबी अवधि के लिए आवश्यकता होती है।

(ख) कोष उपलब्ध कराने के साथ ये संस्थान फर्मों को वित्तीय, प्रबंध संबंधी एवं तकनीकी सलाह भी देते हैं।

(ग) वित्तीय संस्थानों से ऋण लेने से कंपनी की पूँजी बाजार में साख बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप, कंपनी अन्य स्रोतों से भी सरलता से कोष जुटा सकती है।

(घ) ऋण का भुगतान सरल किश्तों में किया जा सकता है इसलिए व्यवसाय पर भार स्वरूप नहीं लगता।

(ङ) मंदी के समय भी कोष उपलब्ध कराए जाते हैं जबकि वित्त के दूसरे स्रोत उपलब्ध नहीं होते।

सीमाएँ

वित्तीय संस्थानों से वित्त प्राप्त करने की निम्न सीमाएँ हैं—

(क) वित्तीय संस्थानों से ऋण देने के लिए कड़े मानदंड होते हैं। अनेक औपचारिकताओं के कारण प्रक्रिया बहुत समय लेती है तथा खर्चीली होती है।

(ख) वित्तीय संस्थानों के द्वारा ऋण लेने वाली कंपनी पर कुछ प्रतिबंध लगाती हैं, जैसे- लाभांश के भुगतान पर रोक।

(ग) वत्तीय संस्थान अपनी ऋण लेने वाली कंपनी के निदेशक मंडल में अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर सकते हैं जिससे कंपनी के अधिकारों पर अंकुश लग जाता है।

8.5 अंतर्राष्ट्रीय वित्तीयन

उपरोक्त स्रोतों के अतिरिक्त संगठनों के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कोष जुटाने के विभिन्न ढंग हैं। अर्थव्यवस्था में खुलेपन एवं व्यावसायिक संगठनों के कार्य प्रचलन के वैश्वीकरण के कारण भारतीय कंपनियाँ विश्व पूँजी बाज़ार से कोष जुटा सकती हैं। विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय स्रोत जिनसे कोष पैदा किए जा सकते हैं, निम्न हैं—

(क) **वाणिज्यिक बैंक–** पूरे विश्व में वाणिज्यिक बैंक वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए विदेशी मुद्रा ऋण देते हैं। यह गैर-व्यापारिक अंतर्राष्ट्रीय कार्यों के लिए वित्त के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। बैंक द्वारा दिए जाने वाले विभिन्न प्रकार के ऋण एवं सेवाएँ अलग-अलग देशों में अलग-अलग हैं। उदाहरणार्थ स्टैंडर्ड चार्टर्ड, भारतीय उद्योग के लिए विदेशी मुद्रा ऋण के प्रमुख स्रोत के रूप मे उभरा है।

(ख) **अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी एवं विकास बैंक–** अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं व्यवसाय के वित्तीयन के लिए पिछले वर्षों में अनेकों अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी एवं विकास बैंक सामने आए हैं। यह विश्व के आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा देने के लिए दीर्घ अवधि एवं मध्य अवधि ऋण एवं अनुदान देते हैं। इनकी स्थापना विभिन्न आयोजनों को धन देने के लिए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर दुनिया के विकसित देशों की सरकारों ने की थी। इनमें से कुछ प्रसिद्ध संस्थाएँ हैं, अंतर्राष्ट्रीय वित्त निगम (IFC), ऐग्ज़िम बैंक (Exim Bank) एवं एशियन विकास बैंक।

(ग) **अंतर्राष्ट्रीय पूँजी बाजार–** आधुनिक संगठन जिनमें बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ भी सम्मिलित हैं, रुपयों एवं विदेशी करेंसी में काफी बड़ी मात्रा में ऋण पर निर्भर करते हैं। इसके लिए जिन प्रमुख वित्तीय विलेखों का प्रयोग किया जा रहा है, वे इस प्रकार हैं–

(i) अंतर्राष्ट्रीय जमा रसीद (GDR) – कंपनी के स्थानीय करेंसी शेयर जमा बैंक को सौंप दिए जाते हैं। जमा बैंक इन शेयरों के बदले में जमा रसीद जारी कर देते हैं। इन जमा रसीदों को अमेरिकी डॉलरों में

बॉक्स 4
अंतर-निगम निवेश (आई.सी.डी.)

अंतर-निगम निवेश एक प्रकार की असुरक्षित लघु अवधि जमा राशि है, जिन्हें एक कंपनी किसी दूसरी कंपनी में निवेश करती है। अंतर-निगम निवेश बाज़ार बृहत निगमों के लिए लघु अवधि नकद प्रबंधन का कार्य करता है। रिजर्व बैंक ऑफ़ इंडिया की रूपरेखा के अनुसार आई.सी.डी. में न्यूनतम 7 दिनों की अवधि के लिए निवेश किया जा सकता है और निवेश की अवधि एक वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है।
अंतर-निगम निवेश तीन प्रकार के होते हैं-

1. तीन माह के निवेश
2. छह माह के निवेश
3. माँग (Call) निवेश

अंतर-निगम निवेश पर ब्याज दर स्थायी एवं अस्थायी हो सकती है। इन निवेश पत्रों पर दी गई ब्याज दर सामान्यतः बैंक ब्याज दर से अधिक होती है। इस प्रकार निवेश को आमतौर पर उधार लेने वाली कंपनी स्वयं की लघु अवधि निधि में आने वाली कमी को पूरा करने के लिए करती है।

अंकित करने पर यह अंतर्राष्ट्रीय जमा रसीद कहलाती है। जी.डी.आर. विनिमय साध्य विलेख होते हैं तथा अन्य प्रतिभूतियों के समान स्वतंत्र रूप से इनमें व्यापार किया जा सकता है। भारत के संदर्भ में जी.डी. आर. किसी भारतीय कंपनी द्वारा विदेशी करेंसी में कोष एकत्रित करने के लिए विदेशों में जारी विलेख है, जिनका किसी विदेशी स्टॉक एक्सचेंज में सूचीयन कराया गया है एवं उसमें इसका क्रय-विक्रय होता है। जी.डी.आर. धारक इसे कभी भी उतने शेयरों में परिवर्तित कर सकता है, जितने का यह प्रतिनिधित्व करती है। उक्त धारकों को वोट देने का अधिकार नहीं होता है। वे केवल लाभांश एवं पूँजी में वृद्धि के ही अधिकारी होते हैं। कई भारतीय कंपनियों, जैसे–इंफोसिस रिलायंस, विप्रो एवं ICICI ने GDR जारी कर धन एकत्रित किया है।

(ii) अमेरिकन जमा रसीद (ADR's)– अमेरिका में किसी कंपनी द्वारा जारी जमा रसीद को अमेरिकी जमा रसीद कहते हैं। ए.डी.आर. अमेरिका के बाजारों में निर्मित प्रतिभूतियों के समान खरीदे-बेचे जाते हैं। यह जी.डी.आर. के समान ही होते हैं। अंतर केवल इतना है कि ये केवल अमेरिका के नागरिकों को ही जारी किए जा सकते हैं तथा अमेरिका के स्टॉक-एक्सचेंज में ही इनका सूचीयन एवं क्रय-विक्रय किया जा सकता है।

(iii) भारतीय न्यासी रसीद (IDR)– भारतीय न्यासी रसीद भारतीय करेंसी में पारित किया गया एक वित्तीय प्रपत्र है। इस प्रपत्र के माध्यम से विदेशी कंपनियों को भारतीय शेयर बाजार में निवेश हेतु प्रोत्साहित किया जाता है। भारतीय न्यासी रसीद (IDR) वैश्विक न्यासी रसीद का ही समान रूप है। विदेशी कंपनियाँ आई.डी. आर. के निर्गमन पर अपने अंशों को भारतीय न्यास में जमा करती हैं, जोकि इन प्रतिभूतियों के लिए सेबी (SEBI) के संरक्षक का कार्य करता है। इसके बदले में भारतीय न्यास भारतीय निवेशकों को विदेशी कंपनी के अंशों के विरुद्ध न्यासी रसीदें जारी की जाती हैं जिन पर वही लाभ (जैसे कि बोनस, लाभांश आदि) अर्जित होते हैं जो उन अंशों पर लागू होंगे। सेबी (SEBI) रूपरेखा के अनुसार भारतीय नागरिकों को आई.डी.आर. घरेलू अंशों के समान ही जारी किये जा सकते हैं। इन दोनों के निर्गमन पर किसी भी प्रकार का अंतर नहीं है। विदेशी कंपनी अंश निर्गमन के लिए भारत में सार्वजनिक प्रस्ताव देती है और भारतीय निवेशक उसी प्रक्रिया में बोली देते हैं जिस प्रकार वे घरेलू अंशों की स्थिति में बोली देते हैं भारतीय शेयर बाजार में वर्ष 2010 में सर्वप्रथम आई.डी.आर. निर्गमित करने वाली कंपनी “स्टैंडर्ड चार्टर्ड पी.एल.सी.” है।

(iv) विदेशी करेंसी परिवर्तनीय बाँड (FCCB's)– यह समता अंशों से जुड़ी ऋण प्रतिभूति होती है जिन्हें एक निश्चित अवधि की समाप्ति पर समता अथवा जमा रसीदों में परिवर्तित किया जाता है। इस प्रकार से एक एफ.सी.सी.बी. धारक के पास पूर्व निर्धारित मूल्य पर समता अंशों में परिवर्तन करने या फिर बाँडों को रख लेने के विकल्प होते हैं। एफ.सी.सी.बी. को किसी विदेशी मुद्रा में जारी किया जाता है। इन पर स्थिर दर से ब्याज मिलता है जो किसी भी अन्य इसी प्रकार के गैर परिवर्तनीय ऋण विलेख पर मिलने वाली दर से कम होता है। एफ.सी. सी.बी. का विदेशी स्टॉक एक्सचेंज में ही सूचीयन एवं क्रय विक्रय होता है। एफ.सी. सी.बी. भारत में जारी होने वाले परिवर्तनीय ऋण-पत्रों के समान ही होते हैं।

8.6 कोषों के स्रोत के चयन को प्रभावित करने वाले तत्त्व

व्यवसाय की वित्तीय आवश्यकताएँ विभिन्न प्रकार की होती हैं– दीर्घकालीन, अल्पकालीन, स्थायी एवं परिवर्तनीय। इसीलिए फर्में कोष एकत्रित करने के लिए विभिन्न स्रोतों का प्रयोग करती हैं। छोटी अवधि के ऋणों को उपयुक्त पूँजी में कमी के कारण कम लागत का लाभ मिलता है। दीर्घ अवधि ऋण भी कई कारणों से आवश्यक माने गए हैं। इसी प्रकार से निगमित क्षेत्रों में कोष एकत्रित करने की किसी भी योजना में समता पूँजी की भूमिका रहती है।

कोषों का कोई भी स्रोत ऐसा नहीं है जिसकी सीमाएँ न हों इसलिए उचित यही रहेगा कि किसी एक स्रोत पर निर्भर न रहकर विभिन्न स्रोतों के मिश्रण को अपनाना चाहिए। इस मिश्रण के चयन को भी कई कारक प्रभावित करते हैं। इससे व्यवसाय के लिए यह निर्णय लेना जटिल हो जाता है। वित्त के स्रोतों के चयन को प्रभावित करने वाले तत्त्वों पर संक्षेप में चर्चा नीचे की गई है–

(क)लागत– दो प्रकार की लागत होती है। कोष एकत्रित करने की लागत एवं उन्हें प्रयोग करने की लागत। संगठन को कोष जुटाने के लिए किस स्रोत का उपयोग करना है इसका निर्णय लेने के लिए दोनों प्रकार की लागतों को ध्यान में रखना चाहिए।

(ख)वित्तीय शक्ति एवं प्रचालन में स्थायित्व– कोष के स्रोत के चयन में व्यवसाय की वित्तीय शक्ति एक प्रमुख निर्धारक तत्त्व है। व्यवसाय की वित्तीय स्थिति ठोस होनी चाहिए जिससे कि वह ऋण की मूलराशि एवं उस पर ब्याज का भुगतान कर सके। जब संगठन की आय स्थिर न हो तो स्थिर व्यय भार कोष, जैसे–पूर्वाधिकार अंश एवं डिबेंचर का सोच-समझकर चुनाव करना चाहिए क्योंकि ये संगठन पर वित्तीय भार को ब\ढ़ाते हैं।

(ग) संगठन के प्रकार एवं वैधानिक स्थिति– व्यवसाय संगठन का प्रकार एवं उसकी स्थिति धन जुटाने के निर्णय को प्रभावित

करती है। उदाहरणार्थ एक साझेदारी फर्म समता अंशों के निर्गमन द्वारा धन नहीं जुटा सकती क्योंकि इन्हें केवल संयुक्त पूँजी कंपनी ही निर्गमित कर सकती है।

(घ) **उद्देश्य एवं समय अवधि–** जिस अवधि के लिए धन की आवश्यकता है, उसके अनुसार ही व्यावसायिक इकाई की योजना बनानी चाहिए। उदाहरणार्थ अल्प अवधि की आवश्यकता को व्यापारिक साख, वाणिज्यिक प्रपत्र आदि के माध्यम से कम ब्याज दर पर कोष उधार लेकर पूरा किया जा सकता है। दीर्घ अवधि वित्त के लिए शेयरों एवं डिबेंचरों का निर्गमन अधिक उपयुक्त रहेगा। इसी प्रकार से जिस उद्देश्य से जिस उद्देश्य के लिए कोषों की आवश्यकता है, उन्हें ध्यान में रखना चाहिए जिससे कि स्रोत का उपयोग से मिलान किया जा सके। उदाहरणार्थ दीर्घ अवधि की विस्तार योजना के लिए बैंक अधिविकर्ष के माध्यम से वित्त नहीं जुटाना चाहिए क्योंकि इसका भुगतान अल्प अवधि में ही करना होगा।

(ङ) **जोखिम–** वित्त के प्रत्येक स्रोत का उसके जोखिम के आधार पर मूल्यांकन करना चाहिए। उदाहरणार्थ समता अंश पूँजी में सबसे कम जोखिम है क्योंकि अंश पूँजी का भुगतान कंपनी के समापन पर ही करना होता है तथा यदि कंपनी को किसी वर्ष लाभ नहीं होता है तो लाभांश का भुगतान करने की विवशता नहीं होती है। दूसरी ओर, ऋण में मूल एवं ब्याज दोनों के भुगतान का समय निर्धारित होता है तथा चाहे फर्म को लाभ हो अथवा हानि, ब्याज का भुगतान तो करना ही होगा।

(च) **नियंत्रण–** कोष का एक विशेष स्रोत, फर्म के प्रबंध पर स्वामियों के नियंत्रण एवं शक्ति को प्रभावित कर सकता है। समता अंशों के निर्गमन से नियंत्रण में कमी आती है क्योंकि समता अंशधारकों को वोट देने का अधिकार होता है। उदाहरणार्थ वित्तीय संस्थान ऋण समझौते के अंतर्गत परिसंपत्तियों पर नियंत्रण कर सकते हैं अथवा उनके प्रयोग पर अंकुश लगा सकते हैं। इसलिए व्यावसायिक इकाइयों को स्रोत का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह व्यवसाय पर नियंत्रण में दूसरों के साथ किस सीमा तक भागीदारी चाहते हैं।

(छ) **साख पर प्रभाव–** व्यवसाय यदि कुछ स्रोतों पर आश्रित रहता है तो बाजार में उसकी साख पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ सुरक्षित ऋण-पत्र कंपनी के असुरक्षित लेनदारों के हितों को प्रभावित कर सकते हैं जिससे कंपनी को आगे उधार माल देने के निर्णय पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

(ज) **लोचपूर्णता एवं सुगमता–** एक और पहलू जो वित्त के स्रोत के चयन को प्रभावित करता है, वह है– धन प्राप्त करने में

लोचपूर्णता एवं सुगमता। उदाहरणार्थ यदि दूसरे विकल्प सरलता से मिल रहे हैं तो व्यावसायिक संगठन बैंक एवं वित्तीय संस्थानों से ऋण नहीं लेना चाहेंगे क्योकि इनमें अंकुश के प्रावधान, विस्तृत जाँच एवं कई प्रकार के प्रलेखों की आवश्यकता होती है।

(झ) कर लाभ– कुछ स्रोतों का मूल्यांकन उन पर कर लाभ मिलने के आधार भी किया जा सकता है। उदाहरणार्थ पूर्वाधिकार अंशों पर लाभांश को कर निर्धारण के लिए घटाया नहीं जाता जबकि डिबेंचर एवं ऋण पर दिए गए ब्याज को घटाया जाता है इसीलिए करों में लाभ के लिए इन्हें पसंद किया जाता है।

मुख्य शब्दावली

वित्त	स्वामीगत पूँजी	ऋणगत पूँजी
स्थायी पूँजी	कार्यशील पूँजी	दीर्घ अवधि स्रोत
अल्प अवधि स्रोत	प्रतिबंधित शर्तें	स्थिर भार कोष
परिसंपत्तियों पर प्रभार	वोट देने का अधिकार	फैक्टरिंग
प्राप्य खाते	विपत्रों को भुनाना	ए.डी.आर.,जी.डी.आर.,एफ.सी. सी.बी. आई.सी.डी.,आई.डी.आर.

सारांश

व्यावसायिक वित्त का अर्थ एवं महत्त्व– व्यवसाय की स्थापना एवं उसके प्रचालन के लिए आवश्यक वित्त को व्यावसायिक वित्त कहते हैं। कोई भी व्यवसाय का बिना पर्याप्त धन राशि के अपनी क्रियाओं को नहीं कर सकता। धन की आवश्यकता स्थायी संपत्तियों का क्रय करने (स्थायी पूँजी की आवश्यकता), दिन-प्रतिदिन के कार्यो के लिए (कार्यशील पूँजी की आवश्यकता) एवं व्यवसाय के विकास एवं विस्तार की योजनाओं के लिए होती हैं।

कोष के स्रोतों का वर्गीकरण– व्यवसाय के लिए उपलब्ध कोषों के विभिन्न स्रोतों को तीन मुख्य आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है। वे हैंः (क) अवधि (दीर्घ, मध्य एवं अल्प), (ख) स्वामित्व (स्वामीगत कोष एवं ऋणगत कोष), एवं (ग) निर्माण स्रोत (आंतरिक स्रोत एवं बाह्य स्रोत)।

दीर्घ, मध्य एवं अल्प अवधि स्रोत– जो स्रोत 5 वर्ष से अधिक अवधि के लिए कोष प्रदान करते हैं, उन्हें दीर्घ अवधि स्रोत कहते हैं। जिन स्रोतों से एक वर्ष से अधिक लेकिन 5 साल से कम अवधि की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, उन्हें मध्य अवधि स्रोत कहते हैं तथा जिन स्रोतों से एक वर्ष

से कम के लिए धन जुटाया जा सकता है, उन्हें अल्प अवधि स्रोत कहते हैं।

स्वामीगत कोष एवं ऋणगत कोष– उद्यम के स्वामी जिन कोषों की व्याख्या करते हैं, उन्हें स्वामीगत कोष कहते हैं जबकि दूसरे व्यक्तियों अथवा संस्थानों से ऋणों के माध्यम से जो कोष जुटाए जाते हैं, उन्हें ऋणगत पूँजी कहते हैं।

आंतरिक एवं बाह्य स्रोत– आंतरिक स्रोत वह होते हैं जिनका निर्माण व्यवसाय के भीतर ही होता है, जैसे– लाभों के पुनर्विनियोग के द्वारा। पूँजी के बाह्य स्रोत, वे स्रोत होते हैं जो व्यवसाय के बाहर होते है, जैसे– आपूर्तिकर्त्ता, ऋणदाता एवं निवेशकों के द्वारा दिया गया वित्त।

व्यवसाय के वित्त के स्रोत– व्यवसाय के विभिन्न कोषों के स्रोत इस प्रकार हैं : संचित आय, व्यापार साख, फैक्टरिंग, लीज वित्तीयन, सार्वजनिक जमा, वाणिज्यिक बैंक एवं वित्तीय संस्थानों से ऋण एवं वित्त के अंतर्राष्ट्रीय स्रोत।

संचित आय– कंपनी की आय का वह भाग जो लाभांश के रूप में नहीं बाँटी जाती है, संचित आय कहलाती है। संचित आय के लिए उपलब्ध राशि कंपनी की लाभांश नीति पर निर्भर करती है। इसका उपयोग सामान्यतः कंपनी के विकास एवं विस्तार के लिए किया जाता है।

व्यापार साख– एक व्यापारी द्वारा दूसरे व्यापारी को माल एवं सेवाओं का उधार विक्रय किया जाता है, इसे व्यापार साख कहते हैं। व्यापार साख के कारण वस्तुएँ उधार खरीदी जा सकती हैं। व्यापार साख की शर्तें भिन्न-भिन्न उद्योंगों में भिन्न-भिन्न होती हैं तथा इन्हें बीजक में स्पष्ट कर दिया जाता है। छोटी एवं नई व्यावसायिक इकाइयाँ व्यापार साख पर अधिक निर्भर करती हैं क्योंकि इनके लिए दूसरे स्रोतों से कोष जुटाना थोड़ा कठिन होता है।

फैक्टरिंग– पिछले कुछ वर्षों में फैक्टरिंग अल्प अवधि वित्त के लोकप्रिय स्रोत के रूप में उभरकर आया है। यह एक ऐसी वित्तीय सेवा है जिसमें फैक्टर साख नियंत्रण एवं क्रेता से ऋण वसूली के लिए उत्तरदायी होता है एवं जो फर्म को अप्राप्य ऋण से होने वाली हानि से सुरक्षा प्रदान करता है। फैक्टरिंग की दो पद्धतियाँ होती है।

लीज वित्तीयन– लीज एक ऐसा अनुबंध होता है जिसमें संपत्ति का स्वामी (पट्टाकार) दूसरे पक्ष (पट्टाधारक) को संपत्ति के प्रयोग का अधिकार देता है। पट्टाकार निर्धारित अवधि के लिए संपत्ति को किराए पर देता है जिसके बदले वह आवधिक भुगतान लेता है जिसे लीज किराया कहते हैं।

सार्वजनिक जमा– एक कंपनी जनता को अपनी बचत को कंपनी में धन एकत्रित करने के लिए प्रेरित कर सकती है। सार्वजनिक जमा व्यवसाय की दीर्घ अवधि एवं अल्प अवधि दोनों वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करती है। जमा पर ब्याज की दर साधारणतः बैंक एवं अन्य वित्तीय संस्थानों द्वारा लिए जाने वाले ब्याज से अधिक होती है।

वाणिज्यिक प्रपत्र– यह अल्प अवधि के लिए कोष एकत्रित करने के लिए किसी फर्म द्वारा निर्गमित असुरक्षित प्रतिज्ञा पत्र होते हैं। वाणिज्यिक पत्रों की भुगतान अवधि 90 से 364 दिनों के लिए होती है। चूँकि ये असुरक्षित होते हैं इसलिए जिन फर्मों की साख की दर अच्छी होती है, वही इन्हें जारी कर सकती हैं तथा इनका नियमन भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यक्षेत्र में आता है।

समता अंशों का निर्गमन– समता अंश कंपनी की स्वामीगत पूँजी का प्रतिनिधित्व करते हैं। समता अंशों के धारकों की आय में परिवर्तन होता रहता है। इसलिए इन्हें कंपनी का जोखिम उठाने वाला कहते हैं। यह अंशधारक समृद्धि के समय अधिक आय प्राप्त करते हैं तथा अपने मताधिकार का प्रयोग कर कंपनी के प्रबंध में भागीदार बनते हैं।

पूर्वाधिकार अंशों का निर्गमन– इन अंशों के धारकों को लाभांश के भुगतान एवं पूँजी की वापसी के संबंध में पूर्वाधिकार प्राप्त होता है, जो निवेशकर्त्ता बिना अधिक जोखिम उठाए नियमित आय चाहते हैं, उनकी यह पहली पसंद होती है। एक कंपनी विभिन्न प्रकार के पूर्वाधिकार अंशों का निर्गमन कर सकती है।

ऋणपत्रों का निर्गमन– ऋण-पत्र कंपनी की ऋण पूँजी होती है तथा इनके धारक कंपनी के लेनदार होते हैं। यह स्थायी भार कोष होते हैं तथा इन पर स्थिर दर से ब्याज मिलता है। ऋण-पत्रों का निर्गमन उसी स्थिति में अधिक उपयुक्त रहता है, जब कंपनी की बिक्री एवं आय अपेक्षाकृत स्थिर होती हैं।

वाणिज्यिक बैंक– बैंक सभी आकार की फर्मों को अल्प अवधि एवं मध्य अवधि ऋण देते हैं। ऋण का भुगतान इकट्ठा या फिर किश्तों में किया जाता है। बैंक की ब्याज की दर ऋण मांगने वाली फर्म की विशेषताओं तथा अर्थ व्यवस्था में प्रचलित ब्याज की दर जैसे तत्वों पर निर्भर करती है।

वित्तीय संस्थाएँ– व्यावसायिक कंपनियों को औद्योगिक वित्त की व्यवस्था के लिए केंद्रीय एवं राज्य सरकारें दोनों ने पूरे देश में कई वित्तीय संस्थानों की स्थापना की है। इन्हें विकास बैंक भी कहते हैं। वित्त का यह स्रोत उस समय अधिक उपयुक्त रहता है, जब व्यावसायिक इकाई के विस्तार, पुनर्गठन एवं आधुनिकीकरण के लिए बड़ी मात्रा में कोष की आवश्यकता होती है।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीयन- अर्थव्यवस्था के उदारीकरण एवं भूमंडलीकरण के साथ भारतीय कंपनियों ने अंतर्राष्ट्रीय बाजार से कोष जुटाने प्रारंभ कर दिए हैं। कोष जुटाने के अंतर्राष्ट्रीय स्रोत हैं वाणिज्यिक बैंकों से विदेशी मुद्रा में ऋण, अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी एवं विकास बैंकों द्वारा वित्तीय सहायता, अंतर्राष्ट्रीय पूँजी बाजार में वित्तीय प्रपत्र (GDR's/ADR'/FCCB's) का निर्गमन।

चयन को प्रभावित करने वाले तत्व– किसी व्यवसाय को अपने मुख्य उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्रोतों का प्रभावी मूल्यांकन करना चाहिए। वित्त के स्रोतों का चयन जिन तत्वों पर निर्भर करता है वे हैं– लागत, वित्तीय शक्ति, जोखिम का परिदृश्य, करों में लाभ एवं कोष प्राप्ति में लोचपूर्णता। उचित कोष के स्रोत के चयन के संबंध में निर्णय लेते समय तत्वों का विश्लेषण करना चाहिए।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

दिए गए विकल्पों में से सही (✓) पर निशान लगाएं।

1. समता अंशधारी कहलाते हैं-
   (क) कंपनी के स्वामी (ख) कंपनी के साझेदार
   (ग) कंपनी के अधिकारी (घ) कंपनी के अभिभावक
2. 'शोधनीय' शेध्य शब्द का प्रयोग होता है-
   (क) पूर्वाधिकार अंशों के लिए (ख) वाणिज्यिक पत्रों के लिए
   (ग) समता अंशों के लिए (घ) सार्वजनिक जमा के लिए
3. चालू संपत्तियों के क्रय के लिए कोष की आवश्यकता एक उदाहरण है-
   (क) स्थायी पूँजी की आवश्यकता (ख) लाभ का पुनर्विनियोग
   (ग) चालू पूँजी की आवश्यकता (घ) पट्टा वित्त
4. ADR जारी किए जाते हैं-
   (क) कनाडा में (ख) चीन में
   (ग) भारत में (घ) अमेरिका में
5. सार्वजनिक जमा वे जमा हैं जिनको सीधे उठाया जाता है-
   (क) जनता से (ख) निदेशकों से
   (ग) अंकेक्षकों से (घ) स्वामियों से
6. पट्टा करार में पट्टाधारी को निम्न अधिकार प्राप्त हैं-
   (क) पट्टाकार द्वारा अर्जित लाभ
   (ख) संगठन के प्रबंधन में भाग लेने
   (ग) परिसंपत्ति का विशिष्ट अवधि का अधिकार के लिए उपयोग
   (घ) संपत्तियों का विक्रय
7. डिबेंचर/ऋण-पत्र दर्शाते हैं-
   (क) कंपनी की स्थिर पूँजी (ख) कंपनी की स्थायी पूँजी
   (ग) कंपनी की चल पूँजी (घ) कंपनी की ऋण पूँजी
8. फैक्टरिंग व्यवस्था में फैक्टर-
   (क) वस्तु एवं सेवाओं का उत्पादन एवं वितरण करता है।
   (ख) ग्राहक की ओर से भुगतान करता है।
   (ग) ग्राहक की देनदारी अथवा प्राप्य खातों की वसूली करता है।
   (घ) वस्तुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान को हस्तांतरित करता है।
9. वाणिज्यिक प्रपत्रों की भुगतान अवधि साधारणत-
   (क) 20 से 40 दिन (ख) 60 से 90 दिन
   (ग) 120 से 365 दिन (घ) 90 से 364 दिन होती है।

10. पूँजी के आंतरिक स्रोत वे जो निम्न से सृजित किए जाते हैं-
    (क) बाहर के लोगों, जैसे-आपूर्तिकर्ताओं (ख) वाणिज्यिक बैंकों से ऋण
    (ग) अंशों का निर्गमन (घ) व्यवसाय के भीतर

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. व्यवसाय वित्त किसे कहते हैं? व्यवसाय को कोषों की आवश्यकता क्यों होती है? समझाइये।
2. दीर्घ अवधि एवं अल्प अवधि वित्त जुटाने के स्रोतों की सूची बनाइए।
3. कोष जुटाने के आंतरिक एवं बाह्य स्रोतों में क्या अंतर है? समझाइये।
4. पूर्वाधिकार अंशधारकों को कौन-कौन से पूर्वाधिकार प्राप्त हैं?
5. किन्हीं तीन विशिष्ट वित्तीय संस्थानों के नाम दीजिए एवं उनके उद्देश्य भी बताइए।
6. GDR एवं ADR में क्या अंतर है? समझाइये।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. व्यापारिक साख एवं बैंक साख को व्यावसायिक इकाइयों के अल्प अवधि वित्त के स्रोत के रूप में समझाइए।
2. आधुनिकीकरण एवं विस्तार के लिए वित्तीयन हेतु एक बड़ी औद्योगिक इकाई किन स्रोतों से पूँजी जुटा सकती है, उन पर चर्चा कीजिए।
3. डिबेंचरों के निर्गमनों के समता अंशों के निर्गमन से हटकर क्या लाभ हैं?
4. सार्वजनिक जमा एवं संचित आय के व्यावसायिक वित्त की प्रणालियों के रूप में गुण एवं दोषों को बताइए।
5. अंतर्राष्ट्रीय वित्तीयन में उपयुक्त होने वाले वित्तीय उपकरणों पर चर्चा कीजिए।
6. वाणिज्यिक प्रपत्र किसे कहते हैं? इसके लाभ एवं सीमाएँ क्या हैं?

परियोजना कार्य/क्रियाकलाप

1. उन कंपनियों के बारे में सूचना एकत्रित कीजिए जिन्होंने हाल ही के वर्षों में डिबेंचर निर्गमित किए हैं। इन्हें और अधिक जनप्रिय बनाने के लिए सुझाव दीजिए।
2. संस्थागत वित्त कुछ विगत के वर्षों में महत्त्वपूर्ण हो गया है। एक स्क्रैप बुक में भारतीय कंपनियों को वित्तीय सहायता प्रदान करने वाले वित्तीय संस्थानों के संबंध में विस्तृत जानकारी को संकलित करें।
3. इस अध्याय में वर्णित विभिन्न स्रोतों के आधार पर एक जलपान-गृह स्वामी की वित्तीय समस्याओं को हल करने के उपयुक्त विकल्प बताइए।
4. सभी वित्तीय स्रोतों का एक तुलनात्मक चार्ट बनाइए।

11109CH09

अध्याय 9

लघु व्यवसाय एवं उद्यमिता

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप–

- लघु व्यवसाय के अर्थ तथा उसकी प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।
- भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।
- उद्यमिता एवं प्रबंधन में अंतर तथा उद्यमिता के लक्षणों का विवेचन कर सकेंगे।
- उद्यमिता विकास की प्रक्रिया को अनुसरित करके उसे स्पष्ट कर सकेंगे।
- प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार का वर्णन कर सकेंगे।

मणिपुर के 'रोमी बैग्स' की कहानी

खुम्बोंगमयूम धनचन्द सिंह के जीवन में कुछ अधिक नहीं था। वह एक निर्धन दर्जी का बेटा था। उसने देखा कि उसके पिता अत्यल्प आय अर्जित करने हेतु दिन-रात कार्यरत रहते हैं। उसने देखा कि धनी व्यक्ति तो और अधिक धनवान हो रहे हैं किन्तु निर्धन व्यक्ति निर्धन ही रह जाते हैं। वह लड़का जीवन में कुछ और करना चाहता था। वह निरंतर कपड़े सिलते रहना और अपने गुजारे हेतु केवल पर्याप्त आय अर्जित करके जीवन यापन के बारे में नहीं सोच सकता था। इम्फाल एक छोटा शहर है। कड़ी मेहनत करने वाले पुरुष तथा महिलाएँ अपने बच्चों को दूर के बड़े शहरों में भेजते हैं ताकि उन्हें प्रगति के अवसर मिल सकें। खुम्बोंगमयूम के पिता उसे भेजने अथवा उसकी शिक्षा का ख़र्च नहीं जुटा सके थे। उसे उन्होंने केवल वही सिखाया, जो वे स्वयं जानते थे – सिलाई। वह लड़का वस्त्र, सिलाई तथा विभिन्न परिधानों को देखते हुए बड़ा हुआ था। वहाँ केवल एक सिलाई मशीन थी, जिसे वह तब प्रयोग करता था, जब उसके पिता उसका इस्तेमाल नहीं कर रहे होते थे। उसने इसे सीखा। परन्तु उसका मन इसमें नहीं लगता था।

कभी-कभी कोई घटना आपके जीवन में परिवर्तन ला सकती है। ऐसा ही खुम्बोंगमयूम के साथ हुआ; जब उसने अपने पिता के बचे-खचे कपड़ों के टुकड़ों से एक बटुआ सिल दिया। खुम्बोंगमयूम ने वह बटुआ अपने मित्र को भेंट कर दिया जो उसकी अनूठी अभिकल्पना पर आश्चर्यचकित हो गया। उस मित्र ने वह दिलचस्प बटुआ बारी-बारी से अन्य मित्रों को दिखाया। उन्होंने खुम्बोंगमयूम से पूछा कि क्या वह उनके लिए ऐसे बटुए बना सकता है। इससे वह यह जानने को उत्सुक हो गया कि क्या उसकी अभिकल्पनाओं हेतु कोई बाजार हो सकता था और उसने जान लिया कि वह अप्रत्याशित रूप से अपने व्यवसाय उपक्रम की ओर चल पड़ा है। उसने एक व्यवसाय योजना बनायी तथा 1996 में 'रोमी बैग्स' नाम से बटुए बनाने वाली कंपनी प्रारम्भ की। खुम्बोंगमयूम ऐसा व्यक्ति नहीं था जो अपनी मस्ती के लिए कुछ भी करे। उसने अपने उत्पाद की मांग पर विचार किया तथा उसकी लागत, खर्च एवं अपेक्षित आय परिकलित कीं। उसने निंदकों एवं आलोचकों को नजरअंदाज किया। चूँकि वह पहली बार उद्यमी बना था, इसलिए उसे जो भी सामग्री मिली, उसकी गुणवत्ता पर विश्वास किया। यह उसकी सबसे बड़ी भूल थी। निर्माण के लिए सामग्री की सस्ती किस्म उपभोक्ताओं द्वारा खारिज कर दी गई। माल वापस आने लगा तथा काराखाने में ढेर लगा रहने लगा। खुम्बोंगमयूम ने इस प्रकार अपना पहला सबक सीdा। वर्ष 2007 में उसने सूक्ष्म एवं मध्यम उपक्रमों हेतु 'थैला निर्माण' में राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किया। यद्यपि उसके लिए यह केवल एक शुरूआत थी। खुम्बोंगमयूम धनचन्द्र सिंह ने नितान्त धैर्य, लगन तथा परिश्रम से अपना जीवन परिवर्तित कर लिया। आपको आगे बढ़ने से रोकने वाली किसी भी बाधा को नहीं आने देना चाहिए। वह विश्वास करता है कि सफलता हेतु कोई सरल मार्ग नहीं है।

9.1 प्रस्तावना

छोटे पैमाने के उद्योग, विकास प्रकिया में उल्लेखनीय योगदान देते हैं तथा उद्यमी आधार का विस्तार और स्थानीय कच्चे माल एवं स्वदेशी कौशल के प्रयोग द्वारा उत्पादन, रोजगार तथा औद्योगिकीकरण में महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करते हैं। छोटे पैमाने के उद्योग, काफी बड़ी श्रम शक्ति तथा अद्भुत निर्यात संभावना के साथ देश के औद्योगिक परिदृश्य में अपना वर्चस्व रहते हैं।

भारत में 'ग्रामीण एवं लघु उद्योग क्षेत्र' में 'परंपरागत' तथा 'आधुनिक' लघु उद्योग, दोनों सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र के आठ उपसमूह हैं। ये हैं – हथकरघा, हस्तशिल्प, नारियल की जटा, रेशम उत्पादन, खादी एवं ग्रामोद्योग एवं छोटे पैमाने के उद्योग के अंतर्गत आते हैं जबकि अन्य परंपरागत उद्योगों के अंतर्गत आते हैं। ग्रामीण एवं लघु उद्योग मिलकर भारत में रोजगार के सर्वाधिक अवसर उपलब्ध कराते हैं।

9.2 लघु व्यवसाय के प्रकार

यह जानना महत्वपूर्ण है कि लघु उद्योगों तथा लघु व्यवसाय प्रतिष्ठानों के संदर्भ में आकार को हमारे देश में किस प्रकार परिभाषित किया गया है। व्यवसाय इकाइयों के आकार को मापने हेतु कई मापदंड प्रयुक्त किये जा सकते हैं। इनमें व्यवसाय में नियुक्त व्यक्ति, व्यवसाय में विनियोजित पूँजी, उत्पादन की मात्रा अथवा व्यवसाय के उत्पादन का मूल्य तथा व्यवसाय क्रियाओं हेतु प्रयुक्त की गई ऊर्जा सम्मिलित है। यद्यपि, ऐसा कोई मापदण्ड नहीं है जिसकी सीमाएँ न हों। आवश्यकताओं के आधार पर पैमाने बदल सकते हैं।

लघु उद्योगों को विवेचित करने हेतु भारत सरकार द्वारा प्रयुक्त की गई परिभाषा संयंत्र एवं मशीनरी पर आधारित है। यह पैमाना भारत, जहाँ पूँजी कम तथा श्रम की प्रचुरता है, के सामाजिक-आर्थिक वातावरण को ध्यान में रहता है।

बड़े सेवा क्षेत्र के आविर्भाव ने सरकार को विवश किया कि वह अन्य उद्यमों, जिनमें छोटे पैमाने के उद्योगों तथा संबंधित सेवा इकाइयों को एक ही छत्र के अंतर्गत लाया जाए। छोटे पैमाने के उपक्रम अपने विस्तार होने के साथ-साथ मध्यम पैमाने के उपक्रमों में बदल गए तथा तेजी से वैश्वीकृत होती दुनिया की प्रतिस्पर्द्धा में टिके रहने हेतु उन्हें उच्च स्तर की प्रौद्योगिकी की आवश्यकता थी। इसलिए ऐसे सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उपक्रमों के कामों पर ध्यान देना एवं उन्हें एक एकल कानूनी संरचना उपलब्ध कराना आवश्यक था। सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उपक्रम विकास अधिनियम, 2006, परिभाषा, साख, विपणन तथा प्रौद्योगिकी के स्तरोन्नयन पर ध्यान देता है। मध्यम पैमाने के उपक्रम विकास अधिनियम, 2006, अक्टूबर 2006 से प्रभावी हुआ। तद्नुसार उपक्रमों को दो मुख्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है – निर्माण तथा सेवाएँ।

9.2.1 निर्माण

उद्योग (विकास तथा विनियमन) अधिनियम, 1951 की प्रथम अनुसूची में विशिष्टीकृत किसी उद्योग से संबंधित वस्तुओं के निर्माण अथवा उत्पादन में संलग्न उपक्रमों के मामले में, उपक्रमों के तीन प्रकार होते हैं–

(क) **सूक्ष्म उपक्रम–** जिनमें संयंत्र एवं मशीनरी में 25 लाऽ रुपये से अधिक का विनियोग न हो।

(ख) **लघु उपक्रम–** जिनमें संयंत्र एवं मशीनरी में विनियोग 25 लाऽ रुपये से अधिक हो परंतु 5 करोड़ रुपये से अधिक न हो।

(ग) मध्यम उपक्रम–जिनमें संयंत्र एवं मशीनरी में निवेश 5 करोड़ रुपये से अधिक हो परंतु 10 करोड़ रुपये से अधिक न हो।

9.2.2 सेवाएँ

सेवाएँ उपलब्ध कराने में संलग्न उपक्रम तीन प्रकार के होते हैं–

(क) सूक्ष्म उपक्रम– जिनमें उपकरणों में 10 लाऽ रुपये से अधिक का विनियोग न हो।

(ख) लघु उपक्रम– जिनमें उपकरणों में विनियोग 10 लाख रुपये से अधिक हो परंतु 2 करोड़ रुपये से अधिक न हो।

(ग) मध्यम उपक्रम– जिनमें उपकरणों में विनियोग 2 करोड़ रुपये से अधिक हो परंतु 5 करोड़ से अधिक न हो।

9.2.3 ग्रामीण उद्योग

ग्रामीण उद्योग को इस प्रकार परिभाषित किया गया है– विद्युत ऊर्जा प्रयोग करने वाला अथवा न करने वाला, ग्रामीण क्षेत्र में स्थित कोई उद्योग जो किसी वस्तु का उत्पादन करता है, कोई सेवा उपलब्ध कराता है तथा जिसमें केन्द्रीय सरकार द्वारा समय-समय पर विनिर्दिष्ट प्रति व्यक्ति अथवा प्रति कर्मचारी स्थायी पूँजी में निवेश हो।

9.2.4 कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योगों को ग्रामीण उद्योग अथवा परंपरागत उद्योग भी कहा जाता है। छोटे पैमाने के अन्य उद्योगों की तरह इन्हें पूँजी निवेश कसौटी द्वारा परिभाषित नहीं किया गया है। यद्यपि निम्नलिखित विशेषताओं द्वारा कुटीर उद्योगों को समझा जा सकता है–

(क) ये व्यक्तियों द्वारा अपने निजी संसाधनों से संगठित किए जाते हैं।

(ख) सामान्यतः परिवार के सदस्यों के श्रम तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध प्रतिभा का प्रयोग होता है।

(ग) सरल उपकरण प्रयुक्त होते हैं।

(घ) पूँजी निवेश कम होता है।

(ङ) ये सामान्यतः अपने ही परिसरों में सरल उत्पादों का उत्पादन करते हैं।

(च) ये स्वदेशी प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके वस्तुओं का उत्पादन करते हैं।

9.3 भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका

देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में अपने योगदान के कारण छोटे पैमाने के उद्योग भारत में अपना विशिष्ट स्थान रहते हैं। निम्नलिखित बिन्दु उनके योगदान को उजागर करते हैं–

(क) हमारे देश के संतुलित क्षेत्रीय विकास में लघु उद्योगों का योगदान उल्लेखिनीय है। भारत में लघु उद्योग देश की औद्योगिक इकाइयों का 95% हैं।

(ख) लघु उद्योग कृषि के बाद मानव संसाधनों के दूसरे सबसे बड़े नियोक्ता हैं। बड़े उद्योगों की तुलना में ये पूँजी की प्रत्येक इकाई के प्रति रोजगार के अधिक अवसर पैदा करते

हैं। इसलिए इन्हें अधिक श्रम तथा कम पूँजी नियोग वाला माना जाता है। भारत जैसे प्रचुर श्रम वाले देश के लिए ये एक वरदान हैं।

(ग) हमारे देश में लघु उद्योग कई प्रकार के उत्पादों की आपूर्ति करते हैं जिनमें कई उपभोक्ता वस्तुएँ, सिले-सिलाए वस्त्र, हौजरी का सामान, स्टेशनरी का सामान, साबुन व डिटर्जेंट, घरेलू बर्तन, चमड़ा, प्लास्टिक व रबर का सामान, संसाधित खाद्य वस्तुएँ व सब्जियाँ इत्यादि सम्मिलित हैं। निर्मित की गई जटिल वस्तुओं में बिजली तथा इलेक्ट्रानिक सामान, जैसे- टेलीविजन, कैलकुलेटर, इलेक्ट्रो चिकित्सीय उपकरण, इलेक्ट्रानिक शिक्षण सहायक सामग्री, जैसे-ओवरहेड प्रोजेक्टकर, वातानुकूलन उपकरण,औषधियाँ, कृषि औजार व उपकरण तथा कई अन्य इंजीनियरिंग उत्पाद सम्मिलित हैं। हथकरघा, हस्तशिल्प तथा परंपरागत ग्रामोद्योग के निर्यात मूल्य को देखते हुए ये विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

(घ) लघु उद्योग, जो सरल प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके सरल उत्पादों का उत्पादन करते हैं तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों (सामग्री तथा श्रम दोनों) पर निर्भर होते हैं, देश में कहीं भी स्थापित किये जा सकते हैं। चूँकि ये बिना किसी स्थानीय बाधा के दूर-दूर तक फैले होते हैं, इसलिए औद्योगिकीकरण के लाभ प्रत्येक क्षेत्र द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं। अतः देश के औद्योगिक विकास में ये महत्वपूर्ण योगदान निभाते हैं।

(ङ) उद्यमिता के विकास में लघु उद्योग प्रचुर अवसर उपलब्ध कराते हैं। लोगों के अविकसित कौशलों व प्रतिभा को व्यवसाय विचार की ओर विनिर्दिष्ट किया जा सकता है तथा इन्हें एक लघु व्यवसाय प्रारंभ करने हेतु अत्यल्प पूँजी निवेश तथा लगभग शून्य औपचारिकताओं के साथ वास्तविकता में परिवर्तित किया जा सकता है।

(च) उत्पादन की कम लागत का लाभ भी लघु उद्योगों को मिलता है। स्थानीय उपलब्ध संसाधन कम खर्चीले होते हैं। कम उपरिव्ययों के कारण लघु उद्योगों की स्थापना एवं परिचालन लागत भी कम होती है। वास्तव में लघु उद्योगों को उत्पादन की कम लागतों का लाभ मिलता है, जिससे उनकी प्रतिस्पर्द्धात्मक क्षमता में वृद्धि होती है।

(छ) संगठनों का आकार छोटा होने के कारण, कई लोगों से सलाह किए बिना ही त्वरित व समय पर निर्णय लिए जा सकते हैं, परंतु बड़े आकार के संगठनों में ऐसा नहीं होता। सही समय पर नये व्यवसाय अवसरों को जीता जा सकता है।

9.4 ग्रामीण भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका

परंपरागत रूप से, विकासशील देशों में ग्रामीण परिवार केवल कृषि में व्यस्त रहते थे। इसका ज्वलंत प्रमाण यह है कि ग्रामीण परिवारों की

आय विभिन्न प्रकार के कई स्रोतों से आती है तथा ग्रामीण परिवार खेती-बाड़ी व कृषि मजदूरी की परंपरागत ग्रामीण गतिविधियों के साथ-साथ वाणिज्य, निर्माण तथा सेवाओं में सवेतन रोज़गार व स्वरोज़गार जैसी कई प्रकार की गैर-कृषि गतिविधियों में भागीदार बन सकते हैं तथा बनते भी हैं। कृषि-आधारित उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहन एवं बढ़ावा देने हेतु भारत सरकार द्वारा प्रारंभ की गई नीति को इससे काफी सहायता मिल सकती है।

ग्रामीण एवं छोटे पैमाने के उद्योगों को महत्व देना भारत की औद्योगिक नीति का सदैव, विशेष रूप से द्वितीय पंचवर्षीय योजना के पश्चात् अनिवार्य अंग रहा है। कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में, विशेषतः परंपरागत दस्तकारों तथा समाज के कमजोर वर्गों हेतु, रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ग्रामीण एवं लघु उद्योगों का विकास, ग्रामीण जनसंख्या के रोजगार की खोज में शहरी क्षेत्रों में प्रवासन को भी रोक सकता है।

उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादक तथा अधिशेष श्रम के अवशोषी होने के कारण ग्रामीण एवं लघु उद्योग काफी महत्वपूर्ण हैं। इनसे गरीबी तथा बेरोजगारी की समस्या दूर करने में भी सहायता मिलती है। ये उद्योग कई अन्य सामाजिक-आर्थिक पहलुओं में भी योगदान देते हैं, जैसे– आय की असमानता को कम करना, उद्योगों का अलग-अलग क्षेत्रों में विकास तथा अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों से संयोजन।

वास्तव में, 'त्वरित औद्योगिक संवृद्धि' एवं 'ग्रामीण व पिछड़े क्षेत्रों में अतिरिक्त उत्पादक रोजगार संभावनाएँ पैदा करना' जैसे समरूप उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु छोटे पैमाने के उद्योगों को बढ़ावा देना तथा ग्रामीण औद्योगिकीकरण को भारत सरकार द्वारा एक शक्तिशाली माध्यम माना गया है।

यद्यपि, आकार से संबंधित कई समस्याओं के कारण लघु उद्योगों की संभावनाएँ पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं हुई हैं। अब हम कुछ ऐसी समस्याओं को जानेंगे जिनका लघु व्यवसाय, चाहे ग्रामीण क्षेत्रों में हों अथवा शहरी, अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों में सामना करते हैं।

9.5 लघु व्यवसाय की समस्याएँ

बड़े पैमाने के उद्योगों की तुलना में छोटे पैमाने के उद्योग विशेष प्रतिकूल परिस्थितियों में हैं। इनमें से कुछ हैं– प्रचालनों का पैमाना, वित्त की उपलब्धता, आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग करने का सामर्थ्य एवं कच्चे माल की उपलब्धता। इससे कई समस्याओं को बढ़ावा मिलता है।

इनमें से अधिकांश समस्याएँ इनके व्यवसाय के छोटे आकार के कारण होती हैं, जो इन्हें वे फायदा उठाने से रोकती हैं, जो बड़े व्यवसाय संगठनों के हिस्से में आते हैं। यद्यपि, लघु व्यवसायों की सभी श्रेणियों के सामने आने वाली समस्याएँ समान नहीं होतीं। दृष्टांत रूप में, छोटी गौण इकाइयों के मामले में, मुख्य समस्याओं में विलंबित भुगतान, मूल इकाइयों से आदेश प्राप्ति की अनिश्चितता एवं उत्पादन प्रक्रिया में बार-बार परिवर्तन होना सम्मिलित है। छोटे पैमाने

की परंपरागत इकाइयों की समस्याओं में, कम विकसित आधारभूत संरचना संबंधी सुविधाओं वाले दूरवर्ती स्थान पर अवस्थिति, प्रबंधकीय प्रतिभा का अभाव, घटिया किस्म, परंपरागत प्रौद्योगिकी तथा वित्त की अपर्याप्त उपलब्धता सम्मिलित है।

छोटे पैमाने की निर्यातक इकाइयों में, विदेशी बाजारों की पर्याप्त जानकारी का अभाव, बाज़ार सूचना का अभाव, विनिमय दरों में उतार-चढ़ाव, गुणवत्ता मानक तथा पूर्व-नौभार वित्त सम्मिलित हैं। लघु व्यवसाय सामान्यतः निम्नलिखित समस्याओं का सामना करते हैं–

(क) वित्त– अपने प्रचालनों को पूर्ण करने हेतु 'पर्याप्त वित्त की अनुपलब्धता' छोटे पैमाने के उद्योगों के सामने आने वाली गंभीर समस्याओं में से एक है।

सामान्यतः एक लघु व्यवसाय का प्रारंभ एक छोटे पूँजी आधार के साथ होता है। लघु क्षेत्र की कई इकाइयों में पूँजी बाजारों से पूँजी प्राप्त करने हेतु साख-पात्रता का अभाव होता है। परिणामस्वरूप, ये स्थानीय वित्तीय स्रोतों पर बहुत अधिक निर्भर होते हैं तथा बार-बार साहूकारों द्वारा किये गये शोषण का शिकार बनते हैं। इन इकाइयों को बार-बार पर्याप्त कार्यशील पूँजी का अभाव सहना पड़ता है, चाहे उन्हें प्राप्त होने वाले भुगतानों में विलंब के कारण हो अथवा बिना बिके माल में पूँजी के अवरुद्ध होने के कारण हो। बैंक भी पर्याप्त समपार्श्विक प्रतिभूति अथवा गारंटी तथा अतिरिक्त राशि, जो इनमें से कई उपलब्ध कराने की स्थिति में नहीं होते, के बिना धन उधार नहीं देते।

(ख) कच्चा माल– कच्चे माल को प्राप्त करना लघु व्यवसाय की एक अन्य मुख्य समस्या है। यदि आवश्यक मात्रा में कच्चा माल उपलब्ध हो तो उन्हें गुणवत्ता के साथ समझौता करना पड़ता है अथवा अच्छी किस्म का माल प्राप्त करने हेतु अधिक मूल्य चुकाना पड़ता है। इनके द्वारा क्रय किये जाने वाले माल की मात्रा कम होने के कारण इनकी सौदेबाजी करने की क्षमता अपेक्षाकृत कम होती है। ये अधिक मात्रा में क्रय करने का जोखिम भी नहीं उठा पाते क्योंकि इनके पास माल के भंडारण की सुविधा नहीं होती। अर्थव्यवस्था में धातुओं, रसायनों तथा निष्कार्षिक कच्चे माल के अभाव के कारण छोटे पैमाने का क्षेत्र सर्वाधिक प्रभावित होता है। इसका तात्पर्य यह भी है कि अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता बर्बाद होती है तथा अन्य इकाइयों की भी हानि होती है।

(ग) प्रबन्धकीय कौशल– लघु व्यवसाय सामान्यतः एकल व्यक्ति द्वारा प्रारंभ तथा प्रचालित किया जाता है, जिसमें व्यवसाय चलाने हेतु आवश्यक समस्त प्रबन्धकीय कौशल नहीं होते। कई लघु व्यवसाय उद्यमियों के पास अच्छा तकनीकी ज्ञान होता है लेकिन उत्पादन के विपणन में वे कम सफल रहते हैं। इसके अतिरिक्त समस्त कार्यालय गतिविधियों हेतु इनके पास पर्याप्त समय भी नहीं होता। इसके

साथ-साथ ये इस स्थिति में भी नहीं होते कि ये पेशेवर प्रबंधकों की सेवाएँ लेने का खर्च उठा सकें।

(घ) श्रम– लघु व्यवसाय फर्में कर्मचारियों को अधिक वेतन देने का खर्च वहन नहीं कर सकतीं, जिससे कर्मचारियों की कड़ी मेहनत तथा अधिक उत्पादन करने की इच्छाशक्ति प्रभावित होती है। इसलिए प्रति कर्मचारी उत्पादकता अपेक्षाकृत कम तथा कर्मचारी आवर्त सामान्यतः अधिक रहती है। लघु व्यवसाय संगठनों में कम पारिश्रमिक दिये जाने के कारण प्रतिभाशाली लोगों को आकर्षित करना एक मुख्य समस्या है। कम पारिश्रमिक हेतु अकुशल श्रमिक पदभार ग्रहण करते हैं परंतु उन्हें प्रशिक्षण देने की प्रक्रिया अधिक समय लेने वाली प्रक्रिया है। और, बड़े संगठनों के विपरीत, इनमें श्रम-विभाजन को व्यवहार में नहीं लाया जा सकता, जिसके परिणामस्वरूप विशेषज्ञता एवं तन्मयता का अभाव रहता है।

(ङ) विपणन– विपणन सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रियाओं में से एक है क्योंकि इससे आगम उत्पन्न होता है। प्रभावी विपणन हेतु ग्राहकों की आवश्यकताओं तथा अपेक्षाओं की पूर्ण समझ का होना आवश्यक है। अधिकांश मामलों में विपणन, लघु संगठनों की एक कमजोर कड़ी है। इसलिए ये संगठन मध्यस्थों पर अत्यधिक निर्भर रहते हैं, जो कई बार कम मूल्य तथा विलंबित भुगतान द्वारा इनका शोषण करते हैं। इसके अतिरिक्त लघु व्यवसाय फर्मों द्वारा प्रत्यक्ष विपणन करना संभव नहीं हो पाता क्योंकि इनके पास आवश्यक आधारभूत सुविधाओं का अभाव होता है।

(च) गुणवत्ता– कई लघु व्यवसाय संगठन गुणवत्ता के वांछित मानकों का पालन नहीं करते। इसके बजाय ये लागत घटाने पर ध्यान केन्द्रित करते हैं तथा मूल्यों को कम रहते हैं। गुणवत्ता शोध में निवेश हेतु तथा उद्योग के मानकों को बनाये रहने हेतु इनके पास न तो पर्याप्त साधन हैं और न ही प्रौद्योगिकी के उन्नयन हेतु दक्षता है। वास्तव में, वैश्विक बाजारों में प्रतिस्पर्द्धा करते समय गुणवत्ता को बनाये रहना इनका निर्बलतम बिन्दु है।

(छ) क्षमता उपयोग– विपणन कौशल के अभाव अथवा माँग की कमी के कारण कई लघु व्यवसाय फर्मों को पूर्ण सामर्थ्य शक्ति से कम पर प्रचालन करना पड़ता है जिससे उनकी प्रचालन लागतें बढ़ जाती हैं। धीरे-धीरे यह व्यवसाय को रुग्णता तथा समापन की ओर ले जाता है।

(ज) प्रौद्योगिकी– लघु उद्योगों के मामले में अप्रचलित तकनीक के प्रयोग को प्रायः एक गंभीर कमी कहा जाता है। परिणामस्वरूप, निम्न उत्पादकता तथा अतिव्ययी उत्पादन होता है।

(झ) रुग्णता– लघु उद्योगों में रुग्णता की व्याकपकता, नीति निर्माताओं तथा

उद्यमियों, दोनों के लिए एक चिंता का विषय बन चुकी है। रुग्णता के कारण आंतरिक एवं बाह्य दोनों हैं। आंतरिक समस्याओं में कुशल एवं प्रशिक्षित श्रमिकों का अभाव और प्रबंधकीय व विपणन कौशल सम्मिलित है। कुछ बाह्य समस्याओं में विलंबित भुगतान, कार्यशील पूँजी का अभाव, अपर्याप्त ऋण तथा उनके उत्पादों की माँग का अभाव सम्मिलित है।

(ञ) वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा– उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त लघु व्यवसाय, पूरी दुनिया के कई देशों द्वारा अपनायी जाने वाली उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीतियों के वर्तमान संदर्भ में, निर्भय नहीं हैं। स्मरण रहे कि भारत ने भी 1991 में उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण का मार्ग अपनाया था। आइए, उन क्षेत्रों पर एक नजर डालें, जहाँ वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा के आक्रमण को लघु व्यवसाय चेतावनी के रूप में महसूस करता है–

(अ) प्रतिस्पर्द्धा केवल मध्यम एवं बड़े उद्योगों से नहीं है, बल्कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों से भी है जो अपने आकार तथा व्यवसाय की मात्रा की दृष्टि से अति-विशाल हैं। छोटे पैमाने की इकाइयों के व्यापार प्रारंभ करते ही गला काट प्रतियोगिता प्रारंभ हो जाती है।

(ब) बड़े उद्योगों तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के गुणवत्ता मानकों, तकनीकी कौशलों,वित्तीय साऽ क्षमता, प्रबंधकीय एवं विपणन क्षमताओं के सामने टिक पाना कठिन होता है।

(स) ISO 9000 जैसे गुणवत्ता प्रमाणन की सख्त अपेक्षाओं के कारण विकसित देशों के बाजारों तक इनकी सीमित पहुँच है।

9.6 लघु व्यवसाय इकाइयों को सरकारी सहायता

रोजगार निर्माण, देश के संतुलित क्षेत्रीय विकास तथा निर्यात की वृद्धि में लघु व्यवसाय के योगदान को दृष्टिगत रहते हुए भारत सरकार की नीतियों ने लघु व्यवसाय क्षेत्र, विशेषतः ग्रामीण उद्योगों एवं पिछड़े क्षेत्रों में कुटीर व ग्रामीण उद्योगों की स्थापना वृद्धि तथा विकास पर बल दिया है। आधारभूत संरचना, वित्त, प्रौद्योगिकी, प्रशिक्षण, कच्चा माल तथा विपणन के संबंध में सहायता उपलब्ध कराकर केन्द्र तथा राज्य, दोनों स्तर पर सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार के अवसरों को बढ़ावा देने में सक्रिय रूप से भाग लिया है। ग्रामीण उद्योगों के विकास हेतु सरकारी सहायता की विभिन्न नीतियाँ तथा योजनाएँ स्थानीय संसाधनों, कच्चे माल तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध मानवशक्ति के उपयोग पर बल देती हैं। ये सब विभिन्न अभिकरणों, विभागों, निगमों इत्यादि, जो सब उद्योग विभाग की सीमा के अंतर्गत आते हैं, के माध्यम से क्रिया में अनुदित की जाती हैं। ये सब मुख्यतः लघु एवं ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा देने से संबंधित हैं।

लघु एवं ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा देने हेतु लागू किए गए कुछ प्रोत्साहन व कार्यक्रम निम्नलिखित हैं–

1. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड)

एकीकृत ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने हेतु 1982 में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण बैंक स्थापित किया गया था। कृषि के साथ-साथ ये लघु उद्योगों, कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों तथा दस्तकारों (साख का प्रयोग करने वाले तथा न करने वाले) की सहायता करता है। ये सलाह एवं परामर्श सेवाएँ उपलब्ध कराता है तथा ग्रामीण उद्यमियों हेतु शिक्षण एवं विकास कार्यक्रम आयोजित करता है।

2. ग्रामीण लघु व्यवसाय विकास केन्द्र (आर.एस.बी.डी.सी.)

ग्रामीण लघु व्यवसाय विकास केन्द्र नाबार्ड द्वारा प्रायोजित है। यह सामाजिक तथा आर्थिक अलाभप्रद व्यक्तियों एवं समूहों की भलाई हेतु कार्य करता है। अपने कार्यक्रमों के माध्यम से ये विभिन्न व्यापारों, जिनमें खाद्य प्रसंस्करण, सौम्य खिलौने बनाना, सिले-सिलाये वस्त्र बनाना, मोमबत्ती बनाना, अगरबत्ती बनाना, दोपहिया मरम्मत व सर्विसिंग, केंचुआ खाद तथा गैर परंपरागत भवन-निर्माण सामग्री निर्माण सम्मिलित हैं, में बड़ी संख्या में ग्रामीण बेरोजगारों व महिलाओं को शामिल करते हैं।

3. राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (एन.एस.आई.सी.)

देश में लघु व्यवसाय इकाइयों की संवृद्धि को बढ़ावा, सहायता तथा प्रोत्साहन की दृष्टि से 1995 में राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम स्थापित किया गया। यह निम्न कार्यों के वाणिज्यिक पहलू पर ध्यान केन्द्रित करता है–

(क) आसान किराया-क्रय शर्तों पर स्वदेशी एवं आयातित मशीनों की आपूर्ति।

(ख) स्वदेशी तथा आयातित कच्चे माल की प्राप्ति, आपूर्ति तथा वितरण।

(ग) लघु व्यवसाय इकाइयों के उत्पादों का निर्यात तथा निर्यात योग्यता का विकास।

(घ) सलाहकारी एवं परामर्शदात्री सेवाएँ।

- प्रौद्योगिकी व्यवसाय ऊष्मायित्र के रूप में सेवा प्रदान करना।
- प्रौद्योगिकी उन्नयन के बारे में जागरूकता पैदा करना।
- सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी पार्कों तथा प्रौद्योगिकी अंतरण केन्द्रों का विकास करना।

4. ग्रामीण एवं महिला उद्यमिता विकास (आर.डब्ल्यू.ई.डी.)

ग्रामीण एवं महिला उद्यमिता विकास कार्यक्रम का उद्देश्य है कि सहायक व्यवसाय वातावरण को बढ़ावा दिया जाये तथा संस्थागत व मानवीय सामर्थ्यों का निर्माण किया जाए जिससे ग्रामीण लोगों तथा महिलाओं की उद्यमिता पहलों को प्रोत्साहन एवं सहायता मिले। ग्रामीण एवं महिला

उद्यमिता विकास निम्नलिखित सेवाएँ उपलब्ध कराता है–

(क) ऐसे व्यवसाय वातावरण का निर्माण करना, जो ग्रामीण एवं महिला उद्यमियों की पहलों को प्रोत्साहित करे।

(ख) उद्यमी उत्साह व उत्पादकता बढ़ाने हेतु आवश्यक मानवीय एवं संस्थागत क्षमताओं को बढ़ावा देना।

(ग) महिला उद्यमियों को प्रशिक्षण पुस्तिका उपलब्ध कराना तथा उन्हें प्रशिक्षण देना।

(घ) कोई अन्य परामर्शदात्री सेवाएँ उपलब्ध कराना।

5. परंपरागत उद्योगों के पुनरुद्धार हेतु निधि की योजना (स्फूर्ति)

परंपरागत उद्योगों को और उपयोगी तथा प्रतिस्पर्द्धी बनाने हेतु तथा उनके संपोषणीय विकास को सुगम बनाने हेतु, केन्द्र सरकार ने वर्ष 2005 में यह योजना प्रारंभ की। इस योजना के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं–

(क) देश के विभिन्न भागों में परंपरागत उद्योगों के समूह विकसित किये जायें।

(ख) इन्हें प्रतिस्पर्द्धी, लाभप्रद तथा संपोषणीय बनाने हेतु अभिनव व परंपरागत कौशल निर्माण करना, प्रौद्योगिकी में सुधार करना तथा सार्वजनिक-निजी भागीदारी विकसित करना, बाजार सूचना विकसित करना इत्यादि।

(ग) परंपरागत उद्योगों में संपोषणीय रोजगार अवसरों का निर्माण करना।

6. जिला उद्योग केन्द्र (डी.आई.सी.)

जिला स्तर पर एकीकृत प्रशासनिक संरचना उपलब्ध कराने की दृष्टि से 1 मई 1978 को जिला उद्योग केन्द्र प्रारंभ किये गये, जो जिला स्तर पर औद्योगिकीकरण की समस्याओं को एक सम्मिलित रूप में देखते हैं। उपयुक्त योजनाओं की पहचान, व्यवहार्यता रिपोर्ट तैयार करना, साऽ हेतु व्यवस्था करना, मशीनें व उपकरण, कच्चे माल का प्रावधान तथा अन्य विस्तार सेवाएँ, इन केन्द्रों द्वारा की जाने वाली मुख्य क्रियाएँ हैं।

7. उद्यमिता विकास

किसी व्यक्ति द्वारा अपना व्यवसाय प्रारंभ करने की प्रक्रिया उद्यमिता कहलाती है, क्योंकि यह किसी अन्य आर्थिक क्रिया, रोजगार अथवा किसी पेशे को अपनाने से भिन्न है। जो व्यक्ति अपना व्यवसाय स्थापित करता है, वह उद्यमी कहलाता है। इस प्रक्रिया के परिणाम, अर्थात् व्यवसाय इकाई को एक उपक्रम कहते हैं। ध्यान देने की रोचक बात यह है कि उद्यमी को स्वरोजगार उपलब्ध कराने के साथ-साथ उद्यमिता अन्य दोनों आर्थिक क्रियाओं, रोजगार व पेशा, को भी काफ़ी हद तक सृजन तथा विस्तार के अवसर उपलब्ध कराती है। और, इस तरह से उद्यमिता एक देश के संपूर्ण आर्थिक विकास हेतु महत्वपूर्ण बन जाती है। जब आप इस विकल्प को चुनते हैं तो आप नौकरी खोजने वाले की बजाय नौकरी उपलब्ध कराने वाले बन जाते हैं। एक उद्यमी के रूप में जन्म लेने की तुलना में उद्यमी बनने की महत्वाकांक्षा के साथ उद्यमिता को अपनाना निश्चित रूप से बेहतर है। ग्राहकों को मूल्य की

सुपुर्दगी, निवेशकों हेतु प्रत्यय तथा जोखिमों एवं व्यवसाय से जुड़ी अनिश्चितताओं के अनुरूप स्वयं के लिए लाभ की दृष्टि से किसी आवश्यकता को पहचानने, संसाधनों को गतिशील करने तथा उत्पादन करने की एक सुव्यवस्थित, उद्देश्यपूर्ण एवं रचनात्मक क्रिया के रूप में हम उद्यमिता को परिभाषित करना चाहेंगे। उद्यमशीलता सहज रूप से प्रकट नहीं होती। काफी हद तक यह व्यक्ति तथा वातावरण के बीच बातचीत की गतिशील प्रक्रिया का परिणाम है। अंततोगत्वा जीविका के रूप में उद्यमशीलता का चुनाव व्यक्ति को करना होता है, अभी तक वह इसे अनिवार्य रूप से एक वांछनीय तथा व्यवहार-साध्य विकल्प के रूप में देखता है। इस संबंध में यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि वांछनीय तथा व्यवहार-साध्य के बारे में वातावरण एवं व्यक्ति के दृष्टिकोण दोनों कारकों को ध्यान में राख जाए।

9.7.1 उद्यमिता की विशेषताएँ

प्रत्येक देश, चाहे विकसित हो अथवा विकासशील, को उद्यमियों की आवश्यकता होती है। एक विकासशील देश को विकास की प्रक्रिया की शुरूआत करने के लिए उद्यमियों की आवश्यकता होती है जबकि एक विकसित देश को इसे बनाये रहने के लिए उद्यमिता की आवश्यकता होती है। वर्तमान भारतीय संदर्भ में, जहाँ एक ओर सार्वजनिक क्षेत्र तथा बड़े पैमाने के क्षेत्र में रोजगार के अवसर कम हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर वैश्वीकरण से बहुत सारे अवसर अपने उपयोग हेतु प्रतीक्षारत हैं; उद्यमिता भारत को एक बहुत बड़ी आर्थिक शक्ति बनने की ऊँचाइयों की ओर ले जा सकती है। अतः आर्थिक विकास की प्रक्रिया के संबंध में तथा व्यवसाय उपक्रम के संबंध में उद्यमियों द्वारा किये जाने वाले कार्यों से ही उद्यमिता की आवश्यकता उत्पन्न होती है।

उद्यमिता की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(क) **सुव्यवस्थित क्रिया–**उद्यमिता कोई रहस्यपूर्ण उपहार अथवा मोहक तथा संयोग से होने वाली कोई घटना नहीं है। यह एक सुव्यवस्थित, क्रमशः एवं उद्देश्यपूर्ण क्रिया है। इसका निश्चित स्वभाव, कौशल व अन्य ज्ञान तथा योग्यता आवश्यकताएँ होती हैं जिन्हें औपचारिक शैक्षिक व व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ-साथ प्रेक्षण तथा कार्यानुभव द्वारा अभिग्रहित, सीखा तथा विकसित किया जा सकता है। उद्यमिता की प्रक्रिया की यह समझ इस मिथक को दूर करने में महत्वपूर्ण है कि उद्यमी जन्म लेते हैं, बनाये नहीं जाते।

(ख) **वैध एवं उद्देश्यपूर्ण क्रिया–**उद्यमिता का उद्देश्य है – वैध व्यवसाय करना। इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि कोई व्यक्ति अवैध कार्यों को वैध ठहराने का प्रयास कर सकता है, केवल इस आधार पर कि उद्यमिता में जोखिम आवश्यक है, अतः अवैध व्यवसाय किये जायें। उद्यमिता का उद्देश्य है निजी लाभ हेतु मूल्यों का सृजन तथा सामाजिक फायदा।

(ग) **नवप्रवर्तन–**फर्म के दृष्टिकोण से नवप्रवर्तन, लागत घटाता है अथवा आगम बढ़ाता है। यदि यह दोनों कार्य करता है, तो यह सोने पे सुहागा है। यहाँ तक कि यदि यह कुछ भी करे, तो भी यह सुखद है क्योंकि नवप्रवर्तन अवश्य ही एक आदत बन जाती है। उद्‌यमिता इस अर्थ में रचनात्मक है, क्योंकि यह मूल्य-निर्माण में संलग्न है। उत्पादन के विभिन्न साधनों के संयोजन द्‌वारा, उद्‌यमी उन वस्तुओं तथा सेवाओं को उत्पादित करते हैं, जो समाज की इच्छाओं तथा आकांक्षाओं को पूरा करती हैं। प्रत्येक उद्‌यमशील कार्य का परिणाम आय तथा सम्पत्ति का उत्पादन होता है। उद्‌यमिता इस अर्थ में भी रचनात्मक है कि यह नवप्रवर्तन (नए उत्पादों का प्रारंभ, नए बाजारों तथा आगतों की आपूर्ति के नए स्रोतों की खोज, प्रौद्‌योगिकी की दृष्टि से महत्वपूर्ण खोज) के साथ-साथ कार्यों को बेहतर, मितव्ययी, तीव्र तथा वर्तमान संदर्भ में वातावरण को कम नुकसान पहुँचाने वाले तरीकों से करने हेतु नये-नये संगठनात्मक प्रारूप प्रारंभ करती है।

(घ) **उत्पादन के संसाधनों का संगठन–** उत्पादन का तात्पर्य है, उत्पादन के विभिन्न साधनों (भूमि, श्रम, पूँजी तथा प्रौद्‌योगिकी) का संयुक्त रूप से प्रयोग करके रूप, स्थान, समय तथा व्यक्तिगत उपयोगिता की रचना करना। व्यवसाय अवसर को देखते हुए एक उद्‌यमी इन संसाधनों को एक लाभकारी उपक्रम अथवा फर्म का रूप देता है। यह उल्लेखनीय है कि उद्‌यमी के पास इनमें से किसी भी संसाधन का होना आवश्यक नहीं है; उसके पास केवल एक योजना होनी चाहिए जिसे वह संसाधन-प्रदाताओं के बीच प्रचारित कर सके। भली प्रकार विकसित वित्तीय तंत्र वाली अर्थव्यवस्था में उसे वित्त-प्रदाता संस्थानों को केवल अपनी बात समझानी है तथा व्यवस्थित की गई पूँजी से उपकरण, सामग्री, उपयोगिताएँ (जैसे- जल तथा विद्‌युत) एवं प्रौद्‌योगिकी की आपूर्ति हेतु अनुबन्ध करने हैं। उत्पादन के संसाधनों के संगठन में सबसे महत्वपूर्ण है कि संसाधनों की उपलब्धता तथा अवस्थिति के साथ-साथ उन्हें संयोजित करने की अनुकूलतम विधि की भी जानकारी हो। उपक्रम के सर्वोत्तम हित में इन संसाधनों को प्राप्त करने हेतु एक उद्‌यमी में मोल-भाव करने की कुशलता होनी आवश्यक है।

(ङ) **जोखिम उठाना–**यह एक सामान्य मान्यता है कि उद्‌यमी काफी जोखिम उठाते हैं। हाँ, जो व्यक्ति उद्‌यमशीलता को एक जीवन वृत्ति के रूप में अपनाते हैं, नौकरी अथवा पेशे को व्यवहार में लाने की तुलना में एक बड़ा जोखिम उठाते हैं क्योंकि इसमें कोई निश्चित भुगतान प्राप्त नहीं होता। उदाहरणार्थ, जब कोई व्यक्ति अपना व्यवसाय प्रारंभ करने हेतु अपनी नौकरी छोड़ता है तो वह यह परिकलित करने का प्रयास करता है कि वह आय का वही स्तर प्राप्त करने में समर्थ होगा अथवा नहीं। एक प्रेक्षक को, एक सुदृढ़ एवं आशाजनक जीवनवृत्ति को छोड़ने का जोखिम,

एक 'उच्च' जोखिम प्रतीत होता है, परंतु किसी व्यक्ति द्वारा किया गया ऐसा कार्य, एक परिकलित जोखिम है। वे अपनी क्षमताओं के बारे में आश्वस्त हैं कि वे अपने 50 प्रतिशत संयोगों को 100 प्रतिशत सफलता में परिवर्तित कर पायेंगे। ये उच्चतर जोखिम वाली परिस्थितियों को टालते हैं; क्योंकि अन्य व्यक्तियों की भाँति इन्हें असफलताएँ नापसंद हैं; ये कम जोखिम वाली स्थितियों को भी नापसंद करते हैं क्योंकि व्यवसाय एक मजाक बनकर समाप्त हो जाता है। जोखिम, वित्तीय हित से बढ़कर एक निजी हित का मामला बन जाता है, जहाँ अपेक्षा से कम निष्पादन का होना, अप्रसन्नता एवं व्यथा का कारण बनता है।

9.8 स्टार्ट अप इंडिया योजना

स्टार्ट अप इंडिया भारत सरकार की ऐसी सर्वोत्कृष्ट पहल है जो देश में नवप्रवर्तन तथा स्टार्ट अप को प्रोत्साहन देने हेतु एक मजबूत पारिस्थितिकी तंत्र को तराशने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई है। यह अभियान स्थायी आर्थिक संवृद्धि का मार्ग प्रशस्त करेगा तथा बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उत्पन्न करेगा। भारत सरकार का उद्देश्य नवप्रवर्तन तथा अभिकल्प के माध्यम से संवृद्धि करने हेतु स्टार्ट अप को बल देना है। इस योजना के कुछ विशिष्ट उद्देश्य हैं–

(i) उद्यमिता संस्कृति को बढ़ावा देना तथा समाज में उद्यमिता मूल्यों को अंतर्निविष्ट करना एवं उद्यमशीलता के प्रति लोगों की मानसिकता को प्रभावित करना।

(ii) एक उद्यमी बनने हेतु आकर्षण तथा उद्यमशीलता की प्रकिया, विशेष रूप से युवाओं में, के बारे में जागरूकता उत्पन्न करना।

(iii) लाभप्रद, अधिमानी तथा व्यवहार्य जीविका के रूप में उद्यमशीलता का ध्यान करने हेतु शिक्षित युवाओं, वैज्ञानिकों तथा शिल्प विज्ञानियों को अभिप्रेरित करके अति सक्रिय स्टार्ट अप को प्रोत्साहित करना।

(iv) स्टार्ट अप से पूर्व, प्रारंभिक स्तर तथा स्टार्ट अप के पश्चात् सहित उद्यमशीलता विकास के प्रारंभिक चरण को बल देना तथा उपक्रमों की संवृद्धि करना।

क्या हो यदि, आपका विचार केवल एक विचार भर न हो।
क्या हो यदि, आपका विचार कार्यान्वित हो जाए।
क्या हो यदि, यह वास्तव में जन्म ले ले।
क्या हो यदि, आपको इस पर विश्वास करने तथा इसे प्रोत्साहित करने वाला कोई मिल जाए।
क्या हो यदि, आप उस पर चलने हेतु मार्ग तय कर लें।
क्या हो यदि, यह बढ़े और खिले।
क्या हो यदि, दुनिया आपके विचार को स्वेच्छा से स्वीकारे।
क्या हो यदि, आपका विचार भविष्य की पीढ़ियों हेतु दुनिया को सुरक्षित, प्रसन्न तथा समृद्ध बनाने के लिए विकसित हो।
(www.startupindia.gov.in से अंगीकृत)

(v) कम प्रतिनिधित्व वाले लक्षित समूहों, जैसे- महिलाओं, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े समाजों, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करके उद्यमों संबंधी आपूर्ति का विस्तृत आधार देना और कम प्रतिनिधित्व वाले क्षेत्रों को सम्मिलित करने हेतु सूची स्तंभ के सबसे निचले स्तर पर जनसंख्या की आवश्यकताओं को समझने हेतु स्थायी विकास करना।

वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय की दिनांक 17 फरवरी, 2017 को जारी अधिसूचना के अनुसार स्टार्ट अप का अभिप्राय है-

(i) भारत में सम्मिलित अथवा पंजीकृत एक इकाई।

(ii) पाँच वर्ष से अधिक पुरानी न हो।

(iii) पिछले किसी भी वर्ष में वार्षिक आवर्त ₹25 करोड़ से अधिक न हो।

(iv) नवप्रवर्तन की दिशा में कार्य करना, तकनीक से प्रेरित उत्पादों/सेवाओं/प्रक्रियाओं का विकास अथवा वाणिज्यीकरण करना अथवा प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार तथा स्वत्वाधिकार।

9.8.1 स्टार्ट अप इंडिया की शुरुआत–कार्य बिन्दु

(i) सरलीकरण एवं हस्तस्थ- स्टार्ट अप को अनुकूल तथा लोचशील बनाने के अनुपालन में सरलीकरण घोषित किए गए।

(ii) स्टार्ट अप इंडिया केन्द्र- इसका उद्देश्य है कि समस्त स्टार्ट अप पारिस्थितिकी हेतु एकल संपर्क केन्द्र बनाना तथा ज्ञान विनिमय व निधिकरण तक पहुँच को सक्षम बनाना।

(iii) कानूनी सहायता तथा स्वत्वाधिकार जाँच को तेज करना- स्वत्वाधिकारों, व्यापार चिह्नों तथा अभिनव व संबद्ध स्टार्ट अप के अभिकल्पों की सुरक्षा को सुलभ कराने हेतु प्राज्ञ सम्पत्ति सुरक्षा स्टार्ट अप की योजना पर विचार किया गया।

(iv) सरल बहिर्गमन- व्यवसाय के असफल होने तथा प्रचालनों के समापन की दशा में पूँजी एवं संसाधनों का अधिक उत्पादक कार्यों में पुनरावंटन करने हेतु कार्यविधियाँ अंगीकृत की गईं। इससे जटिल तथा लंबी बहिर्गमन प्रक्रिया के डर के बिना ही नए तथा अभिनव विचारों के प्रयोगों को बढ़ावा मिलेगा।

(v) ऊष्मायित्र लगाने हेतु निजी क्षेत्र को साथ में लेना- सरकार द्वारा प्रायोजित/निधिकृत ऊष्मायित्रों का पेशेवर प्रबंधन सुनिश्चित करने हेतु सरकार पूरे देश में पी.पी.पी. के माध्यम से ऊष्मायित्रों की स्थापना पर विचार कर रही है।

(vi) कर छूट- स्टार्ट अप इकाइयों के लाभ तीन वर्षों की अवधि तक आय कर से मुक्त हैं।

9.8.2 निधि स्टार्ट अप के तरीके

स्टार्ट अप पूँजी एवं बैंक ऋण उपलब्ध कराने की सरकारी योजनाओं के अतिरिक्त निम्नलिखित तरीकों से भी स्टार्ट अप हेतु निधिकरण प्राप्त किया जा सकता है–

(i) स्व संसाधनों का प्रयोग– इसे सामान्यतया स्व वित्तीयन के रूप में जाना जाता है। इसे प्रथम निधिकरण विकल्प भी मानते हैं क्योंकि अपनी निजी बचतों एवं संसाधनों को फैलाकर, आप अपने व्यवसाय से सहबद्ध हो जाते हैं तथा बाद में निवेशक इसे आपका गुण समझते हैं। यद्यपि, केवल प्रारंभिक आवश्यकता छोटी होने की दशा में यह निधिकरण का एक अच्छा विकल्प है।

(ii) जनता निधिकरण– जनता निधिकरण का अभिप्राय लोगों के एक समूह द्वारा एक समान लक्ष्य हेतु संसाधनों का एकत्रीकरण करना है। जनता निधिकरण, भारत में कोई नई प्रणाली नहीं है। संगठनों द्वारा निधिकरण हेतु आम लोगों के पास जाने के कई उदाहरण हैं। यद्यपि, भारत में जनता-निधिकरण को बढ़ावा देने वाले मंचों को हाल ही में स्थापित किया गया है। ये मंच स्टार्ट अप अथवा लघु व्यवसायों की निधिकरण आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

(iii) दिव्य निवेशक– दिव्य निवेशक वे व्यक्ति हैं जिनके पास अतिरिक्त धन है तथा वे आने वाले स्टार्ट अप में निवेश करने में दिलचस्पी रहते हैं। वे पूँजी के साथ-साथ अनुभवी परामर्श भी उपलब्ध कराते हैं।

(iv) उपक्रम पूँजी– यह पेशेवर प्रबंधित निधियाँ हैं जो अत्यधिक संभावनाओं वाली कंपनियों में निवेश की जाती हैं। उपक्रम पूँजीपति व्यवसाय संगठनों को दक्षता तथा अनुभवी परामर्श उपलब्ध कराते हैं, तथा निरंतरता व मापक्रमणीयता के दृष्टिकोण से व्यवसाय संगठन के विकास की परीक्षण जाँच करते हुए उसका मूल्यांकन करते हैं।

(v) व्यवसाय ऊष्मायित्र तथा उत्प्रेरक– प्रारंभिक चरण के व्यवसाय को निधिकरण विकल्प के रूप में ऊष्मायित्र तथा उत्प्रेरक कार्यक्रम माना जा सकता है। ये कार्यक्रम प्रत्येक वर्ष सैकड़ों स्टार्ट अप व्यवसायों की सहायता करते हैं। ये दोनों सामान्य तथा विनियमपूर्वक प्रयुक्त होते हैं, यद्यपि ऊष्मायित्र एक अभिभावक की तरह है जो व्यवसाय का पालन-पोषण करता है, जबकि उत्प्रेरक व्यवसाय को चलाने में सहायता करते हैं। ऊष्मायित्र तथा उत्प्र्रेरक स्टार्ट अप को अनुभवी परामर्शदाताओं, निवेशकों तथा साथी स्टार्ट अप से जोड़ते हैं।

(vi) सूक्ष्म वित्त तथा गैर बैंकिंग वित्तीय निगम– सूक्ष्म वित्त मूलतः उन्हें वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराता है जिनकी पहुँच परंपरागत बैंकिंग सेवाओं तक नहीं थी अथवा वे बैंक ऋण हेतु योग्य नहीं थे। इसी प्रकार, गैर बैंकिंग वित्तीय निगम, एक बैंक की कानूनी आवश्यकताओं को पूरा किए बिना ही बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं।

9.9 प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार

पिछले दो दशकों के दौरान सम्पत्ति अधिकार वहाँ तक बढ़े हैं जहाँ ये वैश्विक अर्थव्यवस्था के विकास में मुख्य भूमिका निभाते हैं। प्राज्ञ सम्पत्ति सभी जगह हैं, उदाहरणार्थ, आप जो संगीत सुनते हैं, प्रौद्योगिकी जिससे आपका फोन कार्य करता है, आपकी मनपसंद कार का अभिकल्प, आपके जूतों पर लगा चिह्न इत्यादि।

यह उन सभी वस्तुओं में विद्यमान है, जिन्हें आप देख सकते हैं- मानव रचनात्मक एवं कौशल के सभी उत्पाद, जैसे-आविष्कार, पुस्तकें, चित्रकारी, गीत, प्रतीक-चिन्ह, नाम, चित्र अथवा व्यवसाय में प्रयुक्त अभिकल्प इत्यादि। रचनाओं के सभी अविष्कार एक 'कल्पना' से प्रारम्भ होते हैं। एक बार जब कोई कल्पना वास्तविक उत्पाद बन जाती है, अर्थात् प्राज्ञ सम्पत्ति, तो कोई व्यक्ति उसकी सुरक्षा हेतु भारत सरकार के संबंधित प्राधिकरण को आवेदन जमा कर सकता है। ऐसे उत्पादों पर प्रदत्त कानूनी अधिकारों को 'प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार' कहते हैं। अतः प्राज्ञ सम्पत्ति का तात्पर्य मानवीय विचारों के उत्पादों से है, इसलिए सम्पत्तियों के अन्य प्रकारों की भाँति इनके स्वामी प्राज्ञ सम्पत्तियों को अन्य लोगों को किराये पर दे सकते हैं अथवा बेच सकते हैं।

विशेष रूप से, प्राज्ञ सम्पत्ति का तात्पर्य मानवीय विचारों से जन्मी रचनाओं से है, जैसे- आविष्कार, साहित्यिक तथा कलात्मक कार्य, प्रतीक, नाम तथा व्यवसाय में प्रयुक्त चित्र एवं अभिकल्प। प्राज्ञ सम्पत्ति को दो मुख्यतः श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है- औद्योगिक सम्पत्ति, जिसमें आविष्कार (एकस्व), व्यापार चिह्न, औद्योगिक अभिकल्प एवं भौगोलिक संकेत सम्मिलित हैं जबकि दूसरे हैं स्वत्वाधिकार, जिसमें साहित्यिक व कलात्मक कार्य, जैसे- उपन्यास, कविताएँ, नाटक, फिल्में, संगीतमय कार्य, अभिरेखन, चित्रकारी, फोटोग्राफी, मूर्तिकला व वास्तुशिल्पीय अभिकल्प सम्मिलित होते हैं।

प्राज्ञ सम्पत्ति तथा सम्पत्ति के अन्य स्वरूपों में सुस्पष्ट अंतर है। प्राज्ञ सम्पत्ति अमूर्त है, अर्थात् इसे इसके अपने भौतिक मापदंडों द्वारा परिभाषित अथवा निर्धारित नहीं किया जा सकता। प्राज्ञ सम्पंत्ति के क्षेत्र तथा परिभाषा में प्रारंभ से ही

> इतिहास में, आपने ऐतिहासिक 'हल्दी-घाटी के युद्ध' के बारे में अवश्य पढ़ा होगा, जो सन् 1567 ई. में मेवाड़ (राजस्थान) के उस समय के राजपूत शासक राणा प्रताप सिंह तथा मुगल सम्राट अकबर के बीच लड़ा गया था। उसी प्रकार हल्दी-घाटी का एक युद्ध वर्ष 1997 में उग्रतापूर्वक लड़ा गया था। मुद्दा था 'यू.एस. पेटेंट आफिस' द्वारा हल्दी को घाव उपचारात्मक गुणों हेतु 1995 में मिसीसिपी विश्वविद्यालय के चिकित्सा केन्द्र को एकस्व प्रदान करना; यह बताया गया कि यह एक नयी डोज है, जबकि हम चिरकाल से घावों के उपचार हेतु हल्दी का प्रयोग करते आ रहे हैं। भारत सरकार ने जोरदार ढंग से इस एकस्व का विरोध किया तथा अंततोगत्वा भारत ने यह लड़ाई जीती और यह एकस्व रद्द किया गया।

नये स्वरूपों के समावेशन के साथ-साथ निरंतर विकास हो रहा है। अभी हाल ही में प्राज्ञ सम्पत्ति के अंतर्गत भौगोलिक संकेत, पौधों की प्रजातियों की सुरक्षा, अर्ध-चालकों व समाकलित परिपथों की सुरक्षा एवं अप्रकटित सूचना को लाया गया है। भारत में निम्नलिखित प्रकार के प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों को मान्यता दी गयी है– स्वत्वाधिकार, व्यापार चिह्न, भौगोलिक संकेत, एकस्व अभिकल्प, पौध-विविधता, अर्धचालक समाकलित परिपथ अभिन्यास अभिकल्प। इसके अतिरिक्त परंपरागत ज्ञान भी प्राज्ञ संपत्तियों में आता है।

आपने किसी बीमारी को ठीक करने हेतु कोई घरेलू उपचार अवश्य किया होगा जिसका ज्ञान आपको अपने दादा-दादी अथवा नाना- नानी से मिला होगा। ये घरेलू उपचार परंपरागत दवाएँ हैं जो पिछली कई शताब्दियों से भारत में प्रचलित हैं। इन्हें 'परंपरागत ज्ञान' के रूप में भी जानते हैं। भारतीय परंपरागत औषधीय प्रणाली के कुछ उदाहरण हैं– आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध तथा योग। परंपरागत ज्ञान का तात्पर्य संपूर्ण विश्व में स्थानीय समुदायों के बीच प्रचलित ज्ञान, प्रणालियों, नवप्रवर्तनों एवं व्यवहारों से है। ये ज्ञान कई वर्षों में विकसित तथा संचित हुआ है और प्रयुक्त किया जाता रहा है व कई पीढ़ियों के हाथों से गुजरा है। भारत सरकार द्वारा एक 'परंपरागत ज्ञान डिजिटल पुस्तकालय' विकसित किया गया है, जो अनिवार्य रूप से परंपरागत ज्ञान का एक डिजिटल ज्ञान कोष है जो हमारी प्राचीन सभ्यता में विशेषतः औषधीय पौधों तथा भारतीय औषधि प्रणाली में प्रयुक्त निरूपणों के बारे में, विद्यमान है। प्रचुर ज्ञान की यह संस्था हमारे परंपरागत ज्ञान के अनाधिकृत एकस्वीकरण को रोकने में सहायता करती है।

एक अन्य प्रकार की प्राज्ञ सम्पत्ति है– व्यापारिक भेद। आपने लोकप्रिय पेय कोका कोला के बारे में अवश्य सुना होगा। परंतु क्या आप जानते हैं कि इस पेय का नुस्खा, संपूर्ण विश्व में केवल तीन लोग जानते हैं। इस गुप्त सूचना को एक 'व्यापारिक भेद' कहते हैं। व्यापारिक भेद मूलतः एक गोपनीय सूचना है जो तीव्र प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ावा देती है। भारत में व्यापारिक भेद 'भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872' के अंतर्गत संरक्षित किये गये हैं।

9.9.1 उद्यमियों हेतु प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार क्यों महत्वपूर्ण हैं?

यह नये पथ-खंडन आविष्कारों, जैसे– कैंसर उपचार औषधि की रचना को प्रोत्साहन देता है। यह आविष्कारों, लेखकों, रचयिताओं इत्यादि को उनके कार्य हेतु प्रोत्साहित करता है। यह किसी व्यक्ति द्वारा किये गये कार्य को केवल उसकी अनुमति से जनता को वितरित एवं संप्रेषित करने की अनुमति देता है। इसलिए यह आय की हानि को रोकने में सहायता करता है। यह लेखकों, रचयिताओं, विकासकों तथा स्वामियों को उनके कार्य हेतु पहचान उपलब्ध कराने में सहायता करता है।

विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) की स्थापना के साथ व्यापार संबंधी प्राज्ञ सम्पत्ति प्रणाली समझौते (टी.आर.आई.पी.एस.) के अंतर्गत

प्राज्ञ सम्पत्ति सुरक्षा का महत्व तथा भूमिका सुस्पष्ट हो गयी है। डब्ल्यू.टी.ओ.की स्थापना तथा व्यापार संबंधी पहलुओं पर समझौते (टी. आर.आई.पी.एस.) पर भारत द्वारा हस्ताक्षरकर्ता बनने पर अंतर्राष्ट्रीय आबंधों को पूरा करने हेतु प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों की सुरक्षा के लिए कई अधिनियम पारित किये गये। इनमें सम्मिलित हैं– व्यापार चिह्न अधिनियम 1999; वस्तुओं का भौगोलिक संकेतन (पंजीकरण एवं संरक्षण) अधिनियम 1999; अभिकल्प अधिनियम 2000; पौध-प्रजातियों की सुरक्षा तथा कृषक अधिकार अधिनियम 2001; एकस्व अधिनियम 2005 तथा प्रतिलिप्याधिकार (संशोधन) अधिनियम 2012।

9.9.2 प्राज्ञ सम्पत्तियों के प्रकार

एक राष्ट्र की आर्थिक संवृद्धि में रचनात्मकता तथा योगदान को प्रोत्साहित करने हेतु प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार नितांत आवश्यक हैं। ऐसे अधिकार रचयिताओं तथा आविष्कारकों को उनकी रचनाओं व आविष्कारों पर नियंत्रण प्रदान करते हैं। ये अधिकार कलाकारों, उद्यमियों तथा आविष्कारकों को नई प्रौद्योगिकी एवं रचनात्मक कार्यों में और आगे अनुसंधान, विकास व विक्रय करने हेतु वचनबद्ध करने में प्रेरकों का कार्य करते हैं। बदलती हुयी वैश्विक अर्थव्यवस्था मानव विकास में निरंतर प्रगति हेतु अभूतपूर्व चुनौतियों तथा अवसरों का निर्माण कर रही है। प्राज्ञ सम्पत्तियों के विक्रय हेतु विश्व भर में व्यावसायिक अवसर उपलब्ध हैं। भौगोलिक सीमाएँ कोई बाधा खड़ी नहीं करतीं – लगभग सब कुछ उपभोक्ताओं की तुरंत पहुँच में है। ऐसे रोमांचक समय में, यह समीक्षात्मक है कि हम प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों के महत्व तथा हमारे दैनिक जीवन पर इसके प्रभावों के बारे में जागरूक हों। प्राज्ञ सम्पत्तियों में तीन भिन्न पहलू आते हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(क) **कानून–** प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार रचयिताओं/प्राज्ञ सम्पत्ति स्वामियों को प्रदत्त वे कानूनी अधिकार हैं जो संरक्षित विषय सामग्री को दूसरों के द्वारा प्रयोग करने पर रोक लगाते हैं। यह ज्ञान का कानूनी रक्षक है।

(ख) **प्रौद्योगिकी–** प्राज्ञ सम्पत्ति की पूर्वापेक्षा है कि रचना मौलिक होनी चाहिए। रचयिता द्वारा 'कुछ नया' अस्तित्व में लाया जाना होता है। प्रौद्योगिकी के संदर्भ में प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों के अंतर्गत सूचना प्रौद्योगिकी आटोमोबाइल्स, फार्मास्यूटिकल्स तथा बायोटेक्नोलॉजी के विभिन्न पहलू आते हैं।

(ग) **व्यवसाय एवं अर्थशास्त्र-** प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों के मूल तत्व उद्योग के विकास तथा व्यवसायों की सफलता में सहायता करते हैं। प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार व्यवसायों के स्वामियों को अधिकार प्रदान करते हैं।

आइए, अब प्रत्येक प्राज्ञ सम्पत्ति को समझें।

प्रतिलिप्याधिकार

प्रतिलिप्याधिकार 'प्रतिलिपि न बनाने' का अधिकार है। रचयिता अथवा लेखक द्वारा कोई मूल विचार अभिव्यक्त करने पर यह प्रस्तुत किया जाता है। यह अधिकार, साहित्यिक,

प्रतिलिप्याधिकार के अंतर्गत क्या संरक्षित किया जाता है?	
साहित्यिक कार्य	पुस्तिकाएँ, विवरण पुस्तिकाएँ, उपन्यास, पुस्तकें, कविताएँ, गीत, कम्प्यूटर प्रोग्राम
कलात्मक कार्य	चित्ररेखण, चित्रकारी, शिल्पकला, वास्तु-शिल्पीय रेखण, प्रौद्योगिकीय रेखण, मानचित्र, चिह्न
नाटकीय कार्य	नृत्य अथवा मूक अभिनय, चलचित्र नाटक, संगीतमय कार्य, ध्वन्यालेखन, चलचित्रण

कलात्मक, संगीतमय, ध्वन्यालेखन तथा फिल्मों के चलचित्रण के रचयिताओं को प्रदत्त किया जाता है। प्रतिलिप्याधिकार रचयिता का एक विशेषाधिकार है जो विषय-सूची, जिसमें विषय सामग्री की प्रतियों का पुनरुत्पादन तथा वितरण सम्मिलित है, के अनाधिकृत प्रयोग को प्रतिषेध करता है। प्रतिलिप्याधिकार की अनूठी विशेषता यह है कि जैसे ही कार्य अस्तित्व में आता है, कार्य का सरंक्षण स्वतः ही उदित हो जाता है। विषय-सूची का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है परंतु उल्लंघन होने की दशा में विशेषाधिकार का प्रयोग करने हेतु आवश्यक है।

व्यापार चिह्न

व्यापार चिह्न कोई शब्द, नाम अथवा प्रतीक (अथवा उनका संयोजन) है जिससे हम किसी व्यक्ति, कंपनी संगठन इत्यादि द्वारा बनाये गए माल को पहचानते हैं। व्यापार चिह्नों से हम एक कंपनी के माल तथा दूसरे कंपनी के माल में अंतर्भेद भी करते हैं। केवल एक छाप अथवा चिह्न में, व्यापार चिह्न आपको एक कंपनी की प्रतिष्ठा, ख्याति, उत्पादों तथा सेवाओं के बारे में कई बातों की जानकारी दे सकते हैं। व्यापार चिह्न, बाजार में प्रतिस्पर्द्धियों के उसी प्रकार के उत्पादों से अंतर करने में सहायता करते हैं। प्रतिस्पर्द्धी बाजार में अपने उत्पाद को बेचने हेतु समान व्यापार चिह्न का प्रयोग नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसा करना भ्रामक समानता की अवधारणा के अंतर्गत आता है जिसे ध्वन्यात्मक, संरचनात्मक अथवा दृश्यात्मक समानता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। व्यापार चिह्नों को निम्नलिखित में वर्गीकृत किया जा सकता है–

(i) परंपरागत व्यापार चिह्न– शब्द., रंग-संयोजन, नाम-पत्र, चिह्न, पैकेजिंग, माल की आकृति, इत्यादि।

(ii) गैर-परंपरागत व्यापार चिह्न– इस श्रेणी में वे व्यापार चिह्न सम्मिलित किए गए हैं जो पहले श्रेणी में सम्मिलित नहीं हैं परंतु समय व्यतीत होने के साथ-साथ अपनी पहचान बना रहे हैं, जैसे– ध्वनि चिह्न, गत्यात्मक चिह्न, इत्यादि।

इसके अलावा दुनिया के कई भागों में महक तथा स्वाद भी व्यापार-चिह्नों के रूप में सुविचारित किए जाते हैं, परंतु भारत में इन्हें व्यापार चिह्नों के रूप में मान्यता नहीं दी जाती। व्यापार चिह्न अधिनियम, 1999 के अंतर्गत व्यापार चिह्न का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है, परंतु व्यापार चिह्न

का पंजीकरण चिह्न पर विशेषाधिकार स्थापित करने में सहायता करता है। चिह्न का पंजीकरण कराने हेतु आप http://www.ipindia.nic.in पर जा सकते हैं जो इंडियन ट्रेडमार्क रजिस्ट्री की वेबसाइट है।

भौगोलिक संकेत

भौगोलिक संकेत मुख्यतः एक संकेत है जो कृषिक, प्राकृतिक अथवा निर्मित उत्पादों (हस्तशिल्प, औद्‌योगिक माल तथा खाद्‌य पदार्थ) की एक निश्चित भू-भाग से उत्पत्ति की पहचान करता है, जहाँ एक निश्चित गुणवत्ता, प्रतिष्ठा अथवा अन्य विशेषताएँ अनिवार्य रूप से उसके भौगोलिक मूल के कारण हैं। भौगोलिक संकेत हमारी सामूहिक तथा बौद्‌धिक धरोहर का भाग हैं जिन्हें संरक्षित करने तथा बढ़ावा देने की आवश्यकता है। भौगोलिक संकेतों के रूप में संरक्षित एवं पंजीकृत किये गये माल को कृषिक उत्पादों, प्राकृतिक, हस्तशिल्प, निर्मित माल तथा खाद्‌य पदार्थों में श्रेणीकृत किया गया है। भौगोलिक संकेतों के कुछ उदाहरण हैं– नागा मिर्चा, मिज़ोचिली, शैफी लैन्फी, मोइरंग फी व चेखसंग शॉल, बस्तर ढोकरा, वर्ली चित्रकारियाँ, दार्जिलिंग चाय, कांगड़ा चित्रकारी, नागपुरी संतरा, बनारस ज़री एवं साड़ियाँ और कश्मीरी पश्मीना। पिछले कुछ दशकों में भौगोलिक संकेतों का महत्व काफी बढ़ गया है।

भौगोलिक संकेत एक भौगोलिक क्षेत्र की सामूहिक ख्याति का प्रतिनिधित्व करते हैं जो कई शताब्दियों में अपने आप बनी है। आज उपभोक्ता, उत्पादों के भौगोलिक मूल पर अधिकाधिक ध्यान दे रहे हैं तथा वे क्रय किये जाने वाले उत्पादों में विद्‌यमान विशिष्ट विशेषताओं पर काफी ध्यान देते हैं। कुछ मामलों में, 'मूल स्थान' तथा 'भौगोलिक संकेतों' में अंतर होता है जो उपभोक्ताओं को सुझाव देता है कि उत्पाद में एक विशेष गुणवत्ता अथवा विशेषता होगी, जिसे उन्हें महत्व देना चाहिए।

एकस्व

एकस्व, प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों का एक प्रकार है जो ऐसी वैज्ञानिक खोजों (उत्पाद तथा/अथवा प्रक्रिया) को संरक्षित करता है जो पहले से ही ज्ञात उत्पादों के बारे में तकनीकी प्रगति को दर्शाती हैं। एकस्व सरकार द्‌वारा प्रदान किया गया एक विशेषाधिकार है जो अन्य सभी का 'अपवर्जन करने का विशेष अधिकार' उपलब्ध कराता है और उन्हें इस ऽोज को निर्मित करने, प्रयुक्त करने, विक्रय हेतु प्रस्तुत करने, विक्रय करने अथवा आयात करने से प्रतिषेध करता है।

किसी आविष्कार का एकस्वीकरण कराने हेतु यह आवश्यक है कि वह नया हो, किसी भी ऐसे व्यक्ति को पता न हो जो प्रौद्‌योगिकी के संबंधित क्षेत्र में कुशल हो तथा औद्‌योगिक अनुप्रयोग में सक्षम हो।

(i) यह अनिवार्य रूप से नया हो, अर्थात् यह दुनिया में कहीं भी वर्तमान ज्ञान में पहले से ही विद्‌यमान नहीं होना चाहिए, अर्थात् एकस्व आवेदन जमा करने से पूर्व किसी भी रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में नहीं होना चाहिए (विलक्षणता)।

किसका एकस्वीकरण नहीं किया जा सकता?

पेटेंट अधिनियम, 1970 की धारा 3 तथा 4 के अंतर्गत एकस्वीकरण न की जा सकने वाली कुछ खोजें हैं- वैज्ञानिक सिद्धांत, सुव्यवस्थित प्राकृतिक नियमों के विपरीत, संक्षिप्त सिद्धांत का निरूपण, छोटे-मोटे आविष्कार, नैतिकता हेतु हानिकारक अथवा जनस्वास्थ्य हेतु हानिकारक, कृषि अथवा उद्यानी की विधि, उपचार की विधि, मिलावट, परंपरागत ज्ञान, वृद्धि संबंधी खोजें (प्रभावोत्पादकता में वृद्धि को छोड़कर) तथा परमाणु ऊर्जा से संबंधित खोजें।

(ii) किसी भी ऐसे व्यक्ति को पता न हो जो प्रौद्योगिकी के संबंधित क्षेत्र में कुशल हो, अर्थात् मानक रूप में ऐसा व्यक्ति, जो अध्ययन के उस क्षेत्र में समुचित रूप से कुशल हो (आविष्कारी कदम)।

(iii) अंत में यह अनिवार्य रूप से औद्योगिक अनुप्रयोग में समर्थ हो, अर्थात् उद्योग में प्रयुक्त अथवा निर्मित किए जाने में सक्षम हो।

एक आविष्कार पर अधिकार प्राप्त करने हेतु एकस्व का आवेदन किया जा सकता है परंतु खोज पर नहीं। न्यूटन ने सेब को गिरते देखकर गुरुत्वाकर्षण की खोज की, जिसे एक खोज माना गया। जबकि दूरभाष के जनक एलेक्जेंडर ग्राहम बेल ने दूरभाष का आविष्कार किया। इस प्रकार जब किसी नयी वस्तु की रचना करने अथवा किसी विलक्षण वस्तु को अस्तित्व में लाने हेतु हम अपने सामर्थ्य का उपयोग करते हैं तो यह एक आविष्कार कहलाता है, जबकि पहले से विद्यमान किसी वस्तु/बात की विद्यमानता को उजागर करने की प्रक्रिया को खोज कहा जाता है।

एकस्व का उद्देश्य वैज्ञानिक क्षेत्र में नवप्रवर्तन को प्रोत्साहित करना है। एकस्व, आविष्कार को 20 वर्ष की अवधि हेतु विशेषाधिकार प्रदान करता है, जिसके दौरान किसी को भी, जो एकस्वीकृत की गई विषय सामग्री का प्रयोग करना चाहता है, उस आविष्कार का वाणिज्यिक उपयोग करने हेतु निश्चित लागत का भुगतान करके एकस्वाधिकारी से अनुमति लेनी आवश्यक होती है। एक शुल्क के प्रतिफलस्वरूप एकस्वाधिकारी के विशेषाधिकारों को प्रयोग करने की प्रक्रिया को अनुक्षप्तिकरण कहते हैं। एकस्व, अस्थायी एकाधिकार उत्पन्न करते हैं। एकस्व की अवधि समाप्त होने पर वह आविष्कार सार्वजनिक क्षेत्र में आ जाता है, अर्थात् लोग उसका प्रयोग करने हेतु स्वतंत्र होते हैं। यह एकस्वाधिकारी को प्रतिस्पर्द्धा विरोधी गतिविधियों, जैसे-एकाधिकार की स्थिति उत्पन्न करना इत्यादि, में संलिप्त होने से रोकता है ।

अभिकल्प

अभिकल्प में आकृति, नमूना तथा पंक्तियों की व्यवस्था अथवा रंग संयोजन, जो किसी वस्तु पर अनुप्रयुक्त होता है, सम्मिलित है। यह कलात्मक प्रकटन अथवा ध्यान आकर्षित करने वाली विशेषताओं को दिया गया संरक्षण है। एक अभिकल्प के संरक्षण की अवधि 10 वर्ष होती है,

जिसके समाप्त होने के पश्चात् और आगे 5 वर्षों हेतु नवीकृत की जा सकती है, जिसके दौरान एक पंजीकृत अभिकल्पों का प्रयोग, उसके स्वामी से अनुज्ञप्ति प्राप्त करके ही किया जा सकता है और वैधता अवधि समाप्त होने के पश्चात् वह अभिकल्प सार्वजनिक क्षेत्र में आ जाता है।

पौध-प्रजाति

पौध-प्रजाति अनिवार्य रूप से, पौधों का उनकी वानस्पतिक विशेषताओं के आधार पर श्रेणियों में समूहीकरण करना है। यह प्रजाति का एक प्रकार है जो कृषकों द्वारा उगाया तथा विकसित किया जाता है। यह पौधों के आनुवांशिक संसाधनों को संरक्षित करने, सुधारने तथा उपलब्ध कराने में सहायता करता है। उदाहरणार्थ, आलू का संकरित रूप। यह संरक्षण अनुसंधान एवं विकास में निवेश को बढ़ावा देता है, भारतीय कृषकों को काश्तकार, संरक्षक व प्रजनक के रूप में मान्यता देने के साथ-साथ उच्च गुणवत्ता के बीज तथा कृषि उपकरण सुलभ कराता है। यह बीज उद्योग की वृद्धि में सहायता करता है।

अर्द्धचालक एकीकृत परिपथ अभिन्यास अभिकल्प

क्या आपने कभी कम्प्यूटर चिप देखी है? क्या आप एकीकृत परिपथ, जिसे 'IC' भी कहते हैं, से परिचित हैं? अर्द्धचालक, प्रत्येक कम्प्यूटर का एक अनिवार्य अंग है। कोई भी उत्पाद जिसमें ट्रांजिस्टर तथा अन्य विद्युत परिपथ तंत्र के तत्व प्रयुक्त किये गये हैं और वह अर्द्धचालक सामग्री पर, विद्युत-रोधी सामग्री के रूप में अथवा अर्द्धचालक सामग्री के भीतर बना हो। इलेक्ट्रानिक विद्युत परिपथ तंत्र प्रकार्य को निष्पादित करने हेतु ही इसका अभिकल्प ऐसा है।

प्राज्ञ सम्पत्ति तथा व्यवसाय

हम प्राज्ञ सम्पत्ति के महत्व तथा इसे संरक्षित करने के तरीके के रूप में प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों की चर्चा पहले ही कर चुके हैं। आइए, अब देखते हैं कि यह व्यवसाय की कैसे सहायता करता है। एक पुरानी कहावत 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है' का स्मरण कीजिए। यदि हम पाषाण युग से पहिये के विकास को देखें तो पाएँगे कि गोल पहिये की खोज की गयी क्योंकि कार्यकुशलता बढ़ाने हेतु इसकी आवश्यकता महसूस की गई थी। इस पहिये ने विभिन्न प्रौद्योगिकी उन्नयनों को देखा और आज हम सिएट, जे.के. टायर्स, ब्रिजस्टोकन इत्यादि जैसे- विशाल व सफल व्यवसायों के बारे में जानते हैं।

व्यवसाय को आगे बढ़ाने में यह समीक्षात्मक है कि क्या कोई व्यवसाय, बाजार में अपने आपको स्थापित कर रहा है, अथवा वह पहले से ही अपनी प्राज्ञ सम्पत्ति को सुदृढ़, संरक्षित एवं सुव्यवस्थित कर रहा है। किसी भी व्यवसाय को निरंतर नवप्रवर्तन तथा आगे के बारे में सोचना होता है, अन्यथा वह ऐसे ही निष्क्रिय तथा क्षीण हो जायेगा। दूसरों की प्राज्ञ सम्पत्तियों का सम्मान, न केवल नैतिक आधार पर बल्कि कानूनी आधार पर भी करना अनिवार्य है। अंततः दूसरों की प्राज्ञ सम्पत्ति के सम्मान से ही अपनी प्राज्ञ सम्पत्ति का मान होता है।

स्टार्ट अप एक उद्यमीय उपक्रम है, जो लक्षित समूहों हेतु नये उत्पादों, प्रक्रियाओं तथा सेवाओं का विकास, सुधार व नवप्रवर्तन करके लाभ उठाता है। आज स्टार्ट अप कई विघटनकारी प्रौद्योगिकियों, जिन्होंने हमारे सोचने तथा जीने के तरीके बदल दिये हैं, हेतु उत्तरदायी हैं। 20,000 से अधिक स्टार्ट अप के साथ भारत को विश्व का तीसरा बड़ा स्टार्ट अप वातावरण वाला देश कहा जाता है।

स्टार्ट अप इंडिया पहल, भारतीयों में उद्यमीय दौर पर पकड़ बनाने, तथा नौकरी ढूंढ़ने वालों की बजाय नौकरी उपलब्ध कराने वालों का राष्ट्र बनाने हेतु प्रयासरत है। प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकारों द्वारा संरक्षण छत्र के विस्तार द्वारा नये उपक्रमों की सहायता करने, उनकी योजनाओं को पूँजी प्रदान करने तथा बाजार में प्रतिस्पर्द्धा स्थापित करने में प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार समीक्षात्मक हो सकते हैं।

मुख्य शब्दावली

छोटे पैमाने के उद्योग	कुटीर उद्योग	अति-सूक्ष्म उद्योग
सूक्ष्म व्यवसाय उपक्रम	खादी उद्योग	उद्यमशीलता

सारांश

भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका– छोटे पैमाने के उद्योग देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये उद्योग कुल औद्योगिक इकाइयों के 95 प्रतिशत हैं और सकल औद्योगिक मूल्य में 40 प्रतिशत तक तथा कुल निर्यात में 45 प्रतिशत योगदान करते हैं। छोटे पैमाने के उद्योग, कृषि के बाद, मानव संसाधनों के दूसरे सबसे बड़े नियोक्ता हैं तथा अर्थव्यवस्था हेतु उत्पादों के कई प्रकारों का उत्पादन करते हैं। स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री तथा स्वदेशी प्रौद्योगिकी का उपयोग करके ये इकाइयाँ देश के संतुलित क्षेत्रीय विकास में योगदान करती हैं। ये उद्यमिता हेतु विशाल कार्यक्षेत्र उपलब्ध कराते हैं; उत्पादन की कम लागत का लाभ उठाते हैं; त्वरित निर्णय व त्वरित अनुकूलनशीलता और ग्राहक के अनुसार उत्पादन करने हेतु सर्वाधिक उपयुक्त हैं।

ग्रामीण भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका– लघु व्यवसाय इकाइयाँ, गैर-कृषि क्रियाओं की विशाल शृंखला में आय के कई स्रोत उपलब्ध कराती हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में, विशेषतः परंपरागत दस्तकारों एवं समाज के कमजोर वर्गों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराती हैं।

लघु उघोगों को सरकारी सहायता– सहायता उपलब्ध कराने वाले कुछ मुख्य संस्थान हैं– राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, ग्रामीण लघु व्यवसाय विकास केन्द्र, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक, असंगठित क्षेत्र के उपक्रमों हेतु राष्ट्रीय निगम, ग्रामीण एवं महिला उद्यमिता विकास, लघु एवं मध्यम उपक्रमों हेतु विश्व संघ, परंपरागत उद्योगों की पुनरुत्पत्ति हेतु निधि योजना तथा जिला औद्योगिक केन्द्र।

उद्यमीः 'उद्यमी', 'उद्यमिता' तथा 'उद्यम' को हिन्दी भाषा के वाक्य निर्माण के साथ समानता रखकर समझा जा सकता है। उद्यमी एक व्यक्ति (कर्ता) है, उद्यमिता एक प्रक्रिया (क्रिया) है तथा उद्यम, व्यक्ति की रचना अथवा प्रक्रिया का निर्गत (कर्म) है।

अभ्यास

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. व्यवसाय के आकार को मापने हेतु विभिन्न मापदंड क्या हैं?
2. छोटे पैमाने के उद्योगों हेतु भारत सरकार द्वारा कौन-सी परिभाषा प्रयुक्त की जाती है?
3. एक गौण इकाई तथा एक अति-सूक्ष्म इकाई के बीच आप कैसे अंतर्भेद करेंगे?
4. कुटीर उद्योगों की विशेषताएँ बताइए।
5. 'उद्यमी', 'उद्यमिता' तथा 'उद्यम' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
6. उद्यमिता को एक रचनात्मक क्रिया क्यों माना जाता है?
7. "उद्यमी औसत दर्जे का जोखिम उठाते हैं।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।
8. अपनी प्रिय पुस्तक/फिल्म, गीत का नाम लिखिए। पता लगाइए कि उसका मूल रचयिता कौन है तथा प्रत्येक रचना हेतु प्रतिलिप्याधिकार का स्वामी कौन है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. छोटे पैमाने के उद्योग भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास में किस प्रकार योगदान करते हैं?
2. ग्रामीण भारत में लघु व्यवसाय की भूमिका की व्याख्या कीजिए।
3. छोटे पैमाने के उद्योगों के सामने आने वाली समस्याओं की चर्चा कीजिए।
4. छोटे पैमाने के क्षेत्र में वित्त एवं विपणन की समस्या को हल करने हेतु सरकार द्वारा क्या उपाय किये गये हैं?
5. पिछड़े एवं पहाड़ी क्षेत्रों में उद्योगों हेतु सरकार द्वारा कौन-कौन से प्रेरक उपलब्ध कराये गये हैं?
6. एक नये व्यवसाय को प्रारंभ करने से संबद्ध चरणों की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।
7. उद्यमिता एवं आर्थिक विकास के बीच संबंध की प्रकृति की जाँच कीजिए।
8. स्पष्ट कीजिए कि एक व्यक्ति द्वारा उद्यमिता को जीवनवृत्ति के रूप में चुनने के निर्णय को अभिप्रेरणा तथा सामर्थ्य कैसे प्रभावित करते हैं।
9. भारत सरकार की स्टार्ट अप योजना की विशेषताओं की चर्चा कीजिए।
10. प्राज्ञ सम्पत्ति अधिकार की व्याख्या करें। इसके विभिन्न तत्वों को विस्तार से बताएँ।

11109CH10

अध्याय 10

आंतरिक व्यापार

अधिगम उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप–

- आंतरिक व्यापार का अर्थ एवं इसके प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- थोक विक्रेता की विनिर्माताओं एवं फुटकर विक्रेताओं के प्रति सेवाओं को बता सकेंगे;
- फुटकर व्यापारियों की सेवाओं की व्याख्या कर सकेंगे;
- फुटकर व्यापारियों के प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- छोटे पैमाने एवं बड़े पैमाने के फुटकर विक्रेताओं के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे तथा
- आंतरिक व्यापार को बढ़ावा देने में वाणिज्यिक एवं उद्योग संघों की भूमिका का उल्लेख कर सकेंगे।

क्या आपने कभी सोचा है कि यदि बाजार न होते तो विभिन्न उत्पादकों के उत्पाद हम तक किस प्रकार पहुँच पाते? हम सभी सामान्य प्रोविजन स्टोर (पंसारी की दुकान) से तो परिचित हैं ही जो हमेशा हमारी दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ बेचता है। परंतु क्या यह काफी है? जब हमें विशिष्ट प्रकृति की चीजें खरीदने की आवश्यकता होती है, तब हम किसी बड़े बाजार अथवा दुकान की ओर रुख करते हैं जहाँ वस्तुओं की विविधता उपलब्ध होती है। हमारा प्रेक्षण हमें यह बताता है कि विभिन्न चीजों अथवा विशिष्ट वस्तुओं को बेचने वाली अलग तरह की दुकानें होती हैं और यह हमारी जरूरत पर निर्भर करता है कि हम एक निश्चित दुकान अथवा बाजार से खरीददारी करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में हम ध्यान दे सकते हैं कि लोग अपना सामान गलियों में बेचते हैं, यह सामान सब्जी से लेकर कपड़े तक हो सकता है। यह उस दृश्य के बिल्कुल विपरीत है जो हम शहरी क्षेत्र में देखते हैं। हमारे देश में सभी प्रकार के बाजार सद्भावनापूर्ण रूप से विद्यमान हैं। आयातित वस्तुओं एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों (निगमों) के प्रादुर्भाव से हमारे यहाँ इन उत्पादों को बेचने वाली दुकानें भी हैं। बड़े कस्बों एवं शहरों में, अनेक ऐसी फुटकर दुकानें हैं जो सिर्फ एक विशिष्ट ब्रांड के उत्पाद ही बेचती हैं। इन सबका एक दूसरा पहलू यह है कि कैसे ये उत्पाद, उत्पादकों से दुकानों तक पहुँचते हैं? इस कार्य को करने वाले कुछ बिचौलिए तो अवश्य होंगे। क्या वास्तव में वे उपयोगी हैं अथवा उनके कारण कीमतों में वृद्धि होती है?

10.1 परिचय

व्यापार से अभिप्राय लाभार्जन के उद्देश्य से वस्तु एवं सेवाओं के क्रय एवं विक्रय से है। मनुष्य सभ्यता के प्रारंभिक दिनों से किसी न किसी प्रकार के व्यापार में संलग्न रहा है। आधुनिक समय में व्यापार का महत्व और बढ़ गया है क्योंकि प्रतिदिन नये से नये उत्पाद विकसित किये जा रहे हैं तथा उन्हें पूरी दुनिया में लोगों को उनके उपभोग/उपयोग के लिए उपलब्ध कराया जा रहा है। कोई भी व्यक्ति अथवा देश अपनी आवश्यकता की वस्तु एवं सेवाओं के पर्याप्त मात्रा में उत्पादन में आत्मनिर्भरता का दावा नहीं कर सकता। अतः प्रत्येक व्यक्ति उस वस्तु का उत्पादन करता है जिसका उत्पादन वह सर्वोत्तम ढंग से कर सकता है तथा अतिरिक्त उत्पादन को वह दूसरों से विनिमय कर लेता है।

क्रेताओं एवं विक्रेताओं की भौगोलिक स्थिति के आधार पर व्यापार को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है- (क) आंतरिक व्यापार, तथा (ख) बाह्य व्यापार। एक देश की सीमाओं के अंदर किया हुआ व्यापार आंतरिक व्यापार कहलाता है। दूसरी ओर, दो या अधिक देशों के बीच किया हुआ व्यापार बाह्य व्यापार कहलाता है। इस अध्याय में आंतरिक व्यापार के अर्थ एवं प्रकृति का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है एवं इसके विभिन्न प्रकारों तथा वाणिज्यिक संघ की इसके प्रवर्तन में भूमिका को समझाया गया है।

10.2 आंतरिक व्यापार

जब वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय एक ही देश की सीमाओं के अंदर किया जाता है तो इसे आंतरिक व्यापार कहते हैं। चाहे वस्तुओं का क्रय एक क्षेत्र में पास ही की दुकान से हो अथवा केंद्रीय बाजार से या फिर विभागीय भंडार, मॉल से या फेरी लगाकर माल का विक्रय करने वाले विक्रेता से अथवा किसी प्रदर्शनी आदि से। ये

सभी आंतरिक व्यापार के उदाहरण हैं क्योंकि इनमें माल का क्रय देश के भीतर व्यक्ति अथवा संस्थान से किया जाता है। इस प्रकार के व्यापार में कोई सीमा शुल्क अथवा आयात कर नहीं लगाया जाता क्योंकि वस्तुएँ घरेलू उत्पादन का भाग हैं तथा घरेलू उपयोग के लिए होती हैं। साधारणतया भुगतान देश की सरकारी मुद्रा में अथवा अन्य किसी मान्य मुद्रा में किया जाता है।

आंतरिक व्यापार को दो भागों में बाँटा जा सकता है- (क) थोक व्यापार, एवं (ख) फुटकर व्यापार। साधारणतया जब उत्पाद ऐसे हों कि उनका वितरण दूरदराज क्षेत्रों में फैले बड़ी संख्या में क्रेताओं को करना होता है तो उत्पादकों के लिए उपभोक्ता अथवा उपयोगकर्ताओं तक सीधे पहुँचना बहुत कठिन हो जाता है। उदाहरणार्थ यदि वनस्पति तेल अथवा साबुन अथवा नमक का देश के एक भाग में उत्पादन करने वाला उत्पादनकर्ता यदि इन्हें पूरे देश में फैले लाखों उपभोक्ताओं तक पहुँचाना चाहता है तो उसके लिए थोक व्यापारी एवं फुटकर व्यापारियों की सहायता महत्त्वपूर्ण हो जाती है। पुनः विक्रय अथवा पुनः उत्पादन के लिए बड़ी मात्रा में वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय थोक व्यापार कहलाता है।

दूसरी ओर जब क्रय-विक्रय कम मात्रा में हो, जो साधारणतया उपभोक्ताओं को किया गया हो तो इसे फुटकर व्यापार कहते हैं। जो व्यापारी थोक व्यापार करते हैं, उन्हें थोक व्यापारी तथा जो फुटकर व्यापार करते हैं, उन्हें फुटकर व्यापारी कहते हैं। फुटकर विक्रेता एवं थोक विक्रेता दोनों ही महत्त्वपूर्ण विपणन मध्यस्थ होते हैं जो उत्पादक एवं उपयोगकर्ता अर्थात् अंतिम उपभोगकर्ता के बीच वस्तु एवं सेवाओं के विनिमय का महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। आंतरिक व्यापार का लक्ष्य देश के अंदर वस्तुओं का समान मात्रा में शीघ्र एवं कम लागत पर वितरण है।

10.3 थोक व्यापार

जैसे कि पिछले अनुभाग में चर्चा की जा चुकी है, विक्रय अथवा पुनः थोक व्यापार से अभिप्राय पुनः उत्पादन के उपयोग के लिए वस्तु एवं सेवाओं के बड़ी मात्रा में क्रय-विक्रय से है।

थोक विक्रय उन व्यक्तियों अथवा संस्थानों की क्रियाएँ हैं जो फुटकर विक्रेताओं एवं अन्य व्यापारियों अथवा औद्योगिक संस्थागत एवं वाणिज्यिक उपयोगकर्ताओं को विक्रय करते हैं। लेकिन यह अंतिम उपभोक्ताओं को अधिक विक्रय नहीं करते। थोक विक्रेता विनिर्माता एवं फुटकर विक्रेताओं के बीच की महत्त्वपूर्ण कड़ी होते हैं। ये न केवल उत्पादकों के लिए बड़ी संख्या में बिखरे हुए उपभोक्ताओं तक पहुंच (फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से) संभव बनाते हैं बल्कि वस्तुओं एवं सेवाओं की वितरण प्रक्रिया के कई अन्य कार्य भी करते हैं। ये साधारणतया माल के स्वामी होते हैं तथा वस्तुओं को अपने नाम से खरीदते-बेचते हैं एवं व्यवसाय की जोखिम को वहन करते हैं। ये बड़ी मात्रा में क्रय कर फुटकर विक्रेताओं एवं उत्पादन के लिए उपयोगकर्ताओं को छोटी मात्रा में बेचते हैं। यह उत्पादों का श्रेणी करना, उनकी दो छोटे-छोटे भागों में पैकिंग करना, उनका संग्रहण, परिवहन, प्रवर्तन, बाजार के संबंध में सूचना एकत्रित करना, बिखरे हुए फुटकर विक्रेताओं से छोटी मात्रा में आदेश लेना तथा उन्हें वस्तुओं

की सुपूर्दगी देना जैसे अन्य कार्य करते हैं। यह फुटकर विक्रेताओं को बड़ी मात्रा में संग्रहण के दायित्व से मुक्ति दिलाते हैं तथा उन्हें उधार की सुविधा भी प्रदान करते हैं। थोक विक्रेताओं के अधिकांश कार्य इस प्रकार के हैं कि थोक विक्रेताओं को समाप्त नहीं किया जा सकता। यदि थोक विक्रेता नहीं होंगे तो इनके कार्यों को या तो विनिर्माता करेंगें या फिर फुटकर विक्रेता।

थोक विक्रेताओं की सेवाएँ

थोक विक्रेता विनिर्माताओं एवं फुटकर विक्रेताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण में भारी सहायता करते हैं। यह वस्तुएँ उस स्थान पर और उस समय पर जब उनकी आवश्यकता है उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार से यह समय उपयोगिता एवं स्थान उपयोगिता दोनों सृजन करते हैं। थोक विक्रेताओं की विभिन्न वर्गों के लिए सेवा नीचे दी गयी हैः

10.3.1 विनिर्माताओं के प्रति सेवाएँ

वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादकों के प्रति थोक विक्रेताओं की प्रमुख सेवाएँ हैं–

(क) **बड़े पैमाने पर उत्पादन में सहायक–** थोक विक्रेता बड़ी संख्या में फुटकर विक्रेताओं से थोड़ी मात्रा में आदेश लेते हैं। इन्हें इकट्ठा कर विनिर्माताओं को हस्तांतरित कर देते हैं तथा बड़ी मात्रा में क्रय करते हैं। इससे उत्पादक बड़े पैमाने पर उत्पादन करते हैं तथा उन्हें बड़े पैमाने के लाभ प्राप्त होते हैं।

(ख) **जोखिम उठाना–** थोक विक्रेता वस्तुओं का क्रय-विक्रय अपने नाम से करते हैं, बड़ी मात्रा में माल का क्रय कर उन्हें अपने भंडार गृहों में रखते हैं। इस प्रक्रिया में वह मूल्य कम होने का जोखिम, चोरी, छीजन, खराब हो जाना आदि का जोखिम उठाते हैं। इस सीमा तक विनिर्माताओं को इन जोखिमों से छुटकारा दिलाते हैं।

(ग) **वित्तीय सहायता–** वे निर्माताओं से माल का नकद क्रय करते हैं इस प्रकार से वे उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं। विनिर्माताओं को स्टॉक में अपनी पूँजी फंसाने की आवश्यकता नहीं होती है। कभी-कभी तो वे बड़ी मात्रा के लिए आदेश देते हैं तथा उन्हें कुछ राशि अग्रिम भी दे देते हैं।

(घ) **विशेषज्ञ सलाह–** थोक विक्रेता फुटकर विक्रेताओं से सीधे संपर्क में रहते हैं इसलिए वह निर्माताओं को विभिन्न पहलुओं के संबंध में सलाह देते हैं। यह पक्ष है ग्राहकों की रूचि एवं पसंद, बाजार की स्थिति, प्रतियोगियों की गतिविधियों एवं उपभोक्ता की आवश्यकता के अनुसार वस्तुएँ। यह इन सबके संबंधों में एवं अन्य संबंधित मामलों के संबंध में बाजार की जानकारी के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।

(ङ) विपणन में सहायक– थोक विक्रेता बड़ी संख्या में फुटकर विक्रेताओं को माल का वितरण करते हैं जो आगे उन्हें बड़ी संख्या में बड़े भौगोलिक क्षेत्र में फैले उपभोक्ताओं को बेचते हैं। इस प्रकार से उत्पादकों को अनेकों विपणन कार्यों से मुक्ति मिल जाती है तथा वह पूरा ध्यान उत्पादन में लगा सकते हैं।

(च) निरंतरता में सहायक– जैसे ही माल का उत्पादन होता है, उसे थोक विक्रेता खरीद लेते हैं। इस प्रकार से उत्पादन क्रिया पूरे वर्ष चलती रहती है।

(छ) संग्रहण– थोक विक्रेता कारखानों में माल का उत्पादन होते ही उसे खरीद लेते हैं तथा उन्हें अपने गोदामों/भंडारगृहों में संग्रहीत कर लेते हैं। इससे निर्माताओं को तैयार माल को स्टोर करने की सुविधाएँ जुटाने की आवश्यकता नहीं होती।

10.3. फुटकर विक्रेताओं के प्रति सेवाएँ

थोक विक्रेताओं द्वारा फुटकर विक्रेताओं को प्रदान की जानेवाली सेवाएँ निम्नलिखित हैंः-

(क) वस्तुओं को उपलब्ध कराना– फुटकर विक्रेताओं को विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का पर्याप्त मात्रा में स्टॉक रखना पड़ता है जिससे कि वह अपने ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ प्रदान कर सकें। थोक विक्रेता फुटकर विक्रेताओं को विभिन्न उत्पादकों की वस्तुओं को तुरंत उपलब्ध कराते हैं। इससे फुटकर विक्रेताओं को अनेकों उत्पादकों से वस्तुओं को एकत्रित करने एवं बड़ी मात्रा में उनके संग्रहीत करने की आवश्यकता नहीं होती।

(ख) विपणन में सहायक– थोक विक्रेता विपणन के विभिन्न कार्यों को करते हैं तथा फुटकर विक्रेताओं को सहायता प्रदान करते हैं। वह विज्ञापन कराते हैं तथा विक्रय संवर्द्धन के कार्यों को करते हैं जिससे कि ग्राहक माल के क्रय के लिए तैयार हों। इससे नये उत्पादों की माँग में भी वृद्धि होती है तथा फुटकर विक्रेताओं को लाभ होता है।

(ग) साख प्रदान करना– थोक विक्रेता अपने नियमित ग्राहकों को साख की सुविधा देते हैं। इससे फुटकर विक्रेताओं को अपने व्यवसाय के लिए कम कार्यशील पूंजी की आवश्यकता होती है।

(घ) विशिष्ट ज्ञान– थोक विक्रेता एक ही प्रकार की वस्तुओं के विशेषज्ञ होते हैं तथा बाजार की नब्ज को पहचानते हैं। अपने विशिष्ट ज्ञान का लाभ वह फुटकर विक्रेताओं को पहुँचाते हैं। वह फुटकर विक्रेताओं को नए उत्पादों, उनकी उपयोगिता, गुणवत्ता, मूल्य आदि के संबंध में सूचनाएँ प्रदान करते हैं। वह दुकान की बाह्य सजावट, अलमारियों की व्यवस्था एवं कुछ उत्पादों के प्रदर्शन के संबंध में सलाह भी देते हैं।

(ङ) जोखिम में भागीदारी– थोक विक्रेता बड़ी मात्रा में क्रय करते हैं एवं फुटकर विक्रेताओं

को थोड़ी मात्रा में माल का विक्रय करते हैं। फुटकर क्रेता माल को थोड़ी मात्रा में क्रय कर व्यवसाय चला लेते हैं। इससे उनको संग्रह का जोखिम, छीजन, प्रचलन से बाहर होने, मूल्यों में गिरावट, मांग में उतार-चढ़ाव जैसे जोखिम नहीं उठाने पड़ते अन्यथा थोक विक्रेताओं के न होने पर उन्हें बड़ी मात्रा में माल का क्रय करना पड़ता तथा यह सभी जोखिमें उठानी पड़ती।

10.4 फुटकर व्यापार

फुटकर विक्रेता वह व्यावसायिक इकाई होती है जो वस्तुओं एवं सेवाओं को सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को बेचते हैं। यह थोक विक्रेताओं से बड़ी मात्रा में माल का क्रय कर उन्हें अंतिम उपभोक्ताओं को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बेचते हैं। ये वस्तुओं के वितरण शृंखला की अंतिम कड़ी होते हैं, जहाँ से व्यापारी के हाथ से लेकर वस्तुओं को अंतिम उपभोक्ताओं अथवा उपयोगकर्ताओं को हस्तांतरित कर देते हैं। फुटकर व्यापार इस प्रकार से व्यवसाय की वह कड़ी है जो अंतिम उपभोक्ताओं को उनके व्यक्तिगत उपयोग एवं गैर व्यावसायिक उपयोगों या विक्रय का कार्य करती है।

माल को बेचने की कई विधि हो सकती हैं, जैसे– व्यक्तिगत रूप से टेलीफोन पर या फिर बिक्री मशीनों के माध्यम से। उत्पादों को अलग-अलग स्थानों पर बेचा जा सकता है, जैसे– स्टोर में, ग्राहक के घर जाकर या फिर अन्य किसी स्थान पर। कुछ सार्वजनिक स्थान भी हैं, जैसे– रोडवेज की बसों में बॉल प्वाइंट पेन या फिर जादुई दवा या फिर चुटकुलों की पुस्तक की बिक्री, घर-घर जाकर प्रसाधन का सामान, कपड़े धोने का पाउडर आदि बेचना या फिर किसी छोटे किसान द्वारा सड़क किनारे सब्जी की बिक्री, लेकिन यह सब अंतिम उपभोक्ता को बेची जाती हैं इसलिए यह भी फुटकर व्यापार में सम्मिलित हैं। अतः हम कह सकते हैं कि वस्तुओं का विक्रय कैसे किया जाता है या फिर कहाँ किया जाता है यह कोई अर्थ नहीं रखता। यदि बिक्री सीधी उपभोक्ता को की गई है तो यह फुटकर विक्रय कहलाएगा। एक फुटकर विक्रेता वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण के कई कार्य करता है। वह थोक विक्रेताओं एवं अन्य लोगों से विभिन्न वस्तुएँ खरीदता है, वस्तुओं का उचित रीति से भंडारण करता है, थोड़ी-थोड़ी मात्रा में माल बेचता है, व्यवसाय की जोखिमों को उठाता है, वस्तुओं का श्रेणीकरण करता है, बाजार से सूचनाएँ एकत्रित करता है, क्रेताओं को उधार की सुविधा देता है, प्रदर्शन तथा विभिन्न योजनाओं में भाग लेकर या अन्य तरीका अपनाकर वस्तुओं की बिक्री को बढ़ाता है।

फुटकर व्यापारियों की सेवाएँ

फुटकर व्यापार वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण में उत्पादक एवं अंतिम उपभोक्ताओं के बीच की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इस प्रक्रिया में वह उपभोक्ताओं, थोक विक्रेताओं एवं विनिर्माताओं को उपयोगी सेवाएँ प्रदान करता है। फुटकर व्यापारियों की कुछ महत्त्वपूर्ण सेवाओं का नीचे वर्णन किया गया हैः

10.4.1 उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं की सेवाएँ

फुटकर व्यापारी उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं को जो मूल्यवान सेवाएँ प्रदान करते हैं, वे निम्न हैंः

(क) **वस्तुओं के वितरण में सहायक–** एक फुटकर व्यापारी की उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं को सबसे महत्त्वपूर्ण सेवा उनके उत्पादों के वितरण में सहायता करना है। वह अंतिम उपभोक्ताओं को जो बड़े भोगौलिक क्षेत्र में फैले हुए होते हैं, इन उत्पादों को उपलब्ध कराते हैं।

(ख) **व्यक्तिगत विक्रय–** अधिकांश उपभोक्ता वस्तुओं की बिक्री की प्रक्रिया में कुछ न कुछ व्यक्तिगत प्रयत्न भी सम्मिलित होते हैं। व्यक्तिगत रूप से विक्रय का प्रयत्न कर वह उत्पादक को इस कार्य से मुक्ति दिलाते हैं तथा बिक्री को कार्यान्वित करने में सहायक होते हैं।

(ग) **बड़े पैमाने पर परिचालन में सहायक–** फुटकर व्यापारियों की सेवाओं के परिणामस्वरूप उत्पादक एवं थोक विक्रेता उपभोक्ताओं को छोटी मात्रा में माल को बेचने की सिरदर्दी से मुक्ति दिलाते हैं। इसके कारण वह बड़े पैमाने पर अपना कार्य कर सकते हैं तथा अन्य क्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

(घ) **बाजार संबंधित सूचनाएँ एकत्रित करना–** फुटकर विक्रेताओं का उपभोक्ताओं से सीधा एवं निरंतर संपर्क बना रहता है। वह ग्राहकों की रूचि, पसंद एवं रुझान के संबंध में बाजार की जानकारी एकत्रित करते रहते हैं। यह सूचना किसी भी संगठन को विपणन संबंधी निर्णय लेने में बहुत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

(ङ) **प्रवर्तन में सहायक–** अपने उत्पादों की बिक्री को बढ़ाने के लिए उत्पादक एवं वितरक समय-समय पर विभिन्न प्रवर्तन कार्य करते हैं। उदाहरणार्थ वह विज्ञापन

व्यापारिक मदें

व्यापार में प्रयोग होने वाली मुख्य मदें निम्न हैं–

(क) **सुपुर्दगी पर नगदी** : इसका अभिप्राय व्यवहार के उस प्रकार से है जिसके अन्तर्गत माल का भुगतान सुपुर्दगी के समय किया जाता है।

(ख) **जहाज पर मूल्य** : इसका अभिप्राय क्रेता व विक्रेता के मध्य होने वाले उस अनुबंध से है जिसमें माल के वाहन तक सुपुर्दगी देने के सारे व्यय विक्रेता द्वारा वहन किये जाते हैं।

(ग) **लागत बीमा व भाड़ा** : इसका अभिप्राय व्यापारिक व्यवहारों में प्रयोग होने वाली उस मद से है जिसके अन्तर्गत वस्तुओं के मूल्य में केवल लागत ही नहीं बल्कि बीमा व भाड़ा व्यय भी शामिल होते हैं।

(घ) **ई. व ओ.ई.** : इसका अभिप्राय उस मद से है जिसका प्रयोग प्रपत्रों में यह कहने के लिए किया जाता है कि जो गलती हुई है और जो चीजें छूट गई हैं, उन्हें भी ध्यान में रखा जायेगा।

करते हैं, कूपन, मुफ्त उपहार, बिक्री प्रतियोगिता जैसे लघु अवधि प्रलोभन देते हैं। फुटकर विक्रेता विभिन्न प्रकार से इन विधियों में भाग लेते हैं और इस प्रकार से उत्पादों की बिक्री बढ़ाने में सहायता प्रदान करते हैं।

10.4.2 उपभोक्ताओं को सेवाएँ

उपभोक्ताओं की दृष्टि से फुटकर व्यापारियों की कुछ सेवाएँ निम्नलिखित हैं :

(क) उत्पादों की नियमित उपलब्धता– फुटकर व्यापारी की उपभोक्ता को सबसे बड़ी सेवा विभिन्न उत्पादकों के उत्पादों को नियमित रूप से उपलब्ध कराना है। इससे एक तो उपभोक्ता को अपनी रूचि की वस्तु के चयन का अवसर मिलता है, दूसरे वह जब चाहे वस्तु का क्रय कर सकते हैं।

(ख) नये उत्पादों के संबंध में सूचना– फुटकर विक्रेता प्रभावी रूप से वस्तुओं का प्रदर्शन करते हैं एवं बेचने में व्यक्तिगत रूप से प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार से वह ग्राहकों को नये उत्पादों के आगमन एवं उनकी विशिष्टताओं के संबंध में सूचना प्रदान करते हैं। यह वस्तुओं के क्रय का निर्णय लेने की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण तत्व होता है।

(ग) क्रय में सुविधा– फुटकर विक्रेता बड़ी मात्रा में माल का क्रय करते हैं तथा उन्हें ग्राहकों को उनकी आवश्यकतानुसार छोटी मात्रा में बेचते हैं। वह अधिकांश आवासीय क्षेत्रों के समीप होते हैं एवं देर तक दुकान खोले रखते हैं। इससे ग्राहकों के लिए अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदना सुविधाजनक होता है।

(घ) चयन के पर्याप्त अवसर– फुटकर विक्रेता विभिन्न उत्पादकों के विभिन्न उत्पादों का संग्रह करके रखते हैं। इस प्रकार उपभोक्ताओं को चयन के पर्याप्त अवसर मिल जाते हैं।

(ङ) बिक्री के बाद की सेवाएँ– फुटकर विक्रेता घर पर सुपुर्दगी, अतिरिक्त पुर्जों की आपूर्ति एवं ग्राहकों की ओर ध्यान देना आदि विक्रय के पश्चात् की सेवाएँ प्रदान करते हैं। ग्राहक दोबारा माल खरीदने के लिए आए इसमें इस कारक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

(च) उधार की सुविधा– फुटकर विक्रेता अपने नियमित ग्राहकों को उधार की सुविधा भी देते हैं। इससे उपभोक्ता अधिक खरीदारी करते हैं तथा उनका जीवन स्तर ऊँचा उठता है।

10.5 माल एवं सेवा कर (जी.एस.टी.)

"एक देश एक कर" के मूलमंत्र का अनुसरण करते हुए भारत सरकार ने जुलाई 01, 2017 को माल एवं सेवा कर (जी.एस.टी.) लागू किया ताकि निर्माताओं, उत्पादकों, निवेशकों और उपभोक्ताओं के हितों के लिए वस्तुओं और सेवाओं का मुक्त

परिचलन हो सके। जी.एस.टी. को कराधान तंत्र में क्रांति के रूप में देखा जा रहा है। कराधान केवल एक राजस्व के स्रोत अथवा विकास के स्रोत के अतिरिक्त शासकीय गतिविधियों को करदाताओं के लिए उत्तरदायी होने में प्रमुख भूमिका भी निभाता है। कुशल रूप से प्रयुक्त कराधान यह स्थापित करता है कि सार्वजनिक कोषों का प्रयोग कुशलतापूर्वक सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति और सतत् विकास के लिए किया जा रहा है।

वस्तु एवं सेवा कर एक गंतव्य आधारित एकल कर है जो निर्माणकर्ताओं से लेकर उपभोक्ताओं तक वस्तुओं और सेवाओं की पूर्ति पर लागू होता है। जी.एस.टी. के लागू होने से केन्द्र एवं राज्यों द्वारा पारित बहु-अप्रत्यक्ष कर निरस्त कर दिए गए हैं जिसके परिणामस्वरूप संपूर्ण देश एक संयुक्त बाजार में परिवर्तित हो सका है। जी.एस.टी. के लागू होने से व्यापार करने की सुगमता को बढ़ावा मिलेगा जिससे अर्थव्यवस्था के संगठित क्षेत्र बृहत हो सकेंगे और राजस्व में वद्धि होगी। जी.एस.टी. से 17 अप्रत्यक्ष करों (8 केंद्रीय+7 राज्य स्तर पर), 23 उपकरों का प्रतिस्थापन किया गया है। जी.एस.टी. में केंद्रीय जी.एस.टी. और राज्य जी.एस.टी. (CGST+SGST) का समावेश है। जी.एस.टी. को मूल्य संकलन प्रत्येक स्तर पर प्रभार के रूप में लिया जाएगा और कर जमा प्रक्रिया के माध्यम से मूल्य पंक्ति की प्रत्येक पूर्ति स्तर पर निवेश उगाही को विक्रेता द्वारा पृथक रूप से रखा जाएगा।

पूर्ति पंक्ति में अंतिम विक्रेता द्वारा अंकित जी.एस.टी. का भार उपभोक्ता पर लागू होगा। इस कर-प्रक्रिया के कारण ही जी.एस.टी. को गंतव्य आधारित उपभोग कर कहा गया है। मूल्य पंक्ति के प्रत्येक स्तर पर निवेश जमा के प्रावधान के कर दर से कर स्थिति के प्रपाती प्रभाव पर रोक लगी है जिसके परिणामस्वरूप वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में गिरावट आएगी और यह उपभोक्ताओं के लिए हितकर साबित होगा।

जी.एस.टी. की विशेषताएँ

1- जी.एस.टी. जम्मू-कश्मीर सहित भारत के सभी राज्यों में लागू है।
2- जी.एस.टी. वस्तुओं एवं सेवाओं की पूर्ति पर लागू है, न कि वस्तुओं के निर्माण, बिक्री अथवा सेवाओं पर प्रयुक्त प्रावधानों पर।
3- उद्गम आधारित कराधान सिद्धांत की अपेक्षा जी.एस.टी. गंतव्य आधारित खपत का सिद्धांत है।
4- वस्तुओं एवं सेवाओं का आयात अंतर्राज्य आपूर्ति माना जाएगा तथा प्रति लोक प्रभार के आधार पर IGST के अंतर्गत होगा।
5- जी.एस.टी. परिषद् के अधीन CGST, SGST और IGST दरों की उगाही की गणना केंद्र और राज्यों के मध्य आपसी सहमति पर की गई है।
6- सभी प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं पर जी.एस.टी. चार कर दरों पर लगाया गया है। ये दरें 5%, 12%, 18% और 28% हैं।
7- विशेष आर्थिक क्षेत्रों में निर्यात एवं आपूर्ति को 0% कर-दर पर रखा गया है।
8- करदाता के लिए कर भुगतान हेतु विभिन्न विधियों का प्रावधान किया गया है। ये विधियाँ हैं– डेबिट व क्रेडिट कार्ड का प्रयोग, इंटरनेट बैंकिंग, NEFT और RTGS.

जी.एस.टी. से संबंधित तथ्य

1- जी.एस.टी. में बहु-करों का समावेश है जिसके कारण पूरे देश में केवल एक कर लागू है और सभी प्रकार की वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में समरूपता लाई गई है। यह भी सही है कि कुछ किस्म की वस्तुएँ एवं सेवाएँ सस्ती हुई हैं और अन्य किस्म की वस्तुएँ एवं सेवाएँ महँगी हुई हैं।

2- जी.एस.टी. लागू होने से सुख-साधन की वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमतें बढ़ी हैं, वहीं जन खपत की वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमतों में गिरावट आई है।

3- जी.एस.टी स्रोत पर कराधान नहीं है। यह गंतव्य कर अर्थात् उपभोग कर है। मान लीजिए, एक वस्तु तमिलनाडु में निर्मित होती है और दिल्ली के व्यक्ति को बेची जाती है तो कर का प्रभार दिल्ली के उपभोक्ता पर आएगा और केंद्र व राज्य के मध्य कर का भुगतान होगा।

4- भारतीय जी.एस.टी. में चालान के मिलान की प्रक्रिया है। क्रय किए गए माल एवं उपभोग की गई सेवाओं पर निवेश कर जमा उसी स्थिति में ही उपलब्ध होगा, जब विक्रेता कर युक्त वस्तुएँ एवं सेवाएँ ग्राहकों को बेचेगा। वस्तु एवं सेवा कर नेटवर्क एक प्रकार की स्व-नियंत्रित प्रक्रिया है जिससे न केवल कर की चोरी अथवा छल-कपट को खत्म किया जा सकता है, अपितु इसके माध्यम से औपचारिक अर्थव्यवस्था में अधिक से अधिक व्यावसायिक क्रियाओं की संभावनाएँ भी हैं।

5- विरोधी लाभकारी मापदंड, जी.एस.टी. की प्रमुख विशेषता है। यह मापदंड व्यापारियों पर अधिक लाभ पर वस्तुओं एवं सेवाओं को बेचने पर रोक लगाता है। चूँकि निवेश कर जमा जी.एस.टी. सहित कीमतों को कम करने की ओर अग्रसर है, विरोधी लाभकारी प्राधिकार को इस उद्देश्य के लिए स्थापित किया गया है कि जी.एस.टी. से उत्पन्न लाभों का प्रभाव सीधे उपभोक्ताओं तक पहुँच सके। इस संस्था से उन व्यापारियों की गतिविधियों पर भी रोक लग सकेगी जो जी.एस.टी. के नाम पर वस्तु एवं सेवाएँ बढ़ी दरों पर बेच रहे हैं।

जी.एस.टी. परिषद् का संघटन

- अध्यक्ष – केन्द्रीय वित्त मंत्री
- उपाध्यक्ष–राज्य सरकार के मंत्रियों से चयनित
- सदस्य – राज्य मंत्री (वित्त) और प्रत्येक राज्य के वित्त/कराधान मंत्री
- कोरम – कुल सदस्यों का 50% : उपस्थिति पर गणपूर्ति होगी।
- राज्यों को 2/3 और केन्द्र को 1/3 महत्व दिया जाएगा।
- 75% बहुमत से निर्णय लिए जाएँगे।
- परिषद् जी.एस.टी. से संबंधित सभी नियमों, दरों आदि की सिफारिशें कर सकता है।

जी.एस.टी. के लाभ : नागरिकों का सशक्तिकरण

- संपूर्ण कर-भार में कमी।
- कोई गुप्त कर नहीं।
- वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए देशीय एकरूप बाजार।
- उच्च प्रयोज्य आय।
- ग्राहकों के लिए बृहत् चुनाव।
- आर्थिक क्रियाओं में वृद्धि।
- रोजगार अवसरों में वृद्धि।

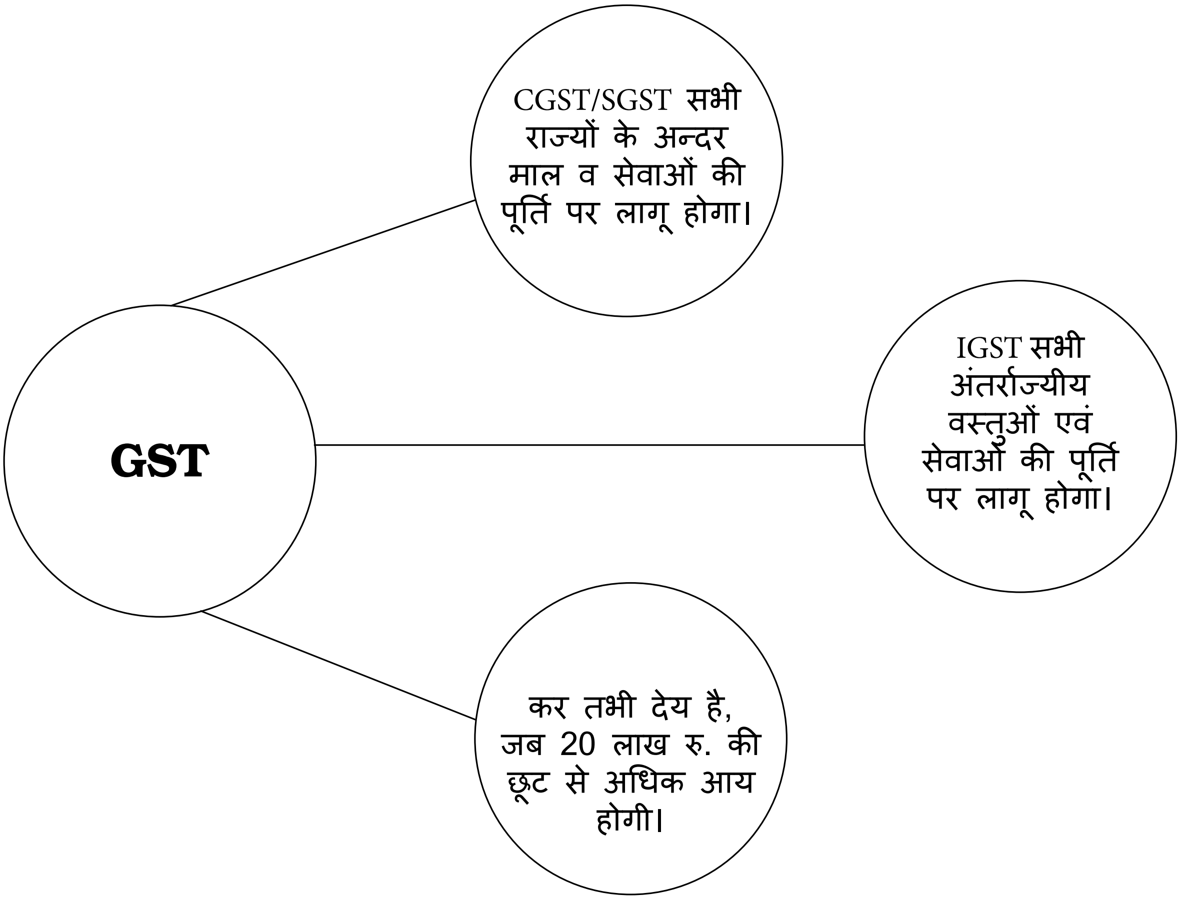

10.6 फुटकर व्यापार के प्रकार

भारत में कई प्रकार के फुटकर विक्रेता होते हैं। इनको भली-भाँति समझने के लिए कुछ वर्गों में विभक्त करना उपयुक्त रहेगा। विशेषज्ञों ने फुटकर व्यापारियों को विभिन्न प्रकारों में बाँटने के लिए विभिन्न वर्गीकरणों का सहारा लिया है। उदाहरणार्थ व्यावसायिक आकार के आधार पर यह बड़े, मध्यम एवं छोटे फुटकर व्यापारी हो सकते हैं। स्वामित्व के अनुसार, इनको एकांकी व्यापारी, साझेदारी फर्म, सहकारी स्टोर एवं कंपनी में बाँटा जा सकता है। इसी प्रकार से बिक्री की पद्धतियों के आधार पर ये विशिष्ट दुकानें सुपर बाजार एवं विभागीय भंडारों में वर्गीकृत की जा सकती हैं। वर्गीकरण का एक और आधार है कि क्या उनके लिए व्यापार का कोई निश्चित स्थान है? इस आधार पर फुटकर विक्रेता दो प्रकार के हो सकते हैं-

(क) भ्रमणशील फुटकर विक्रेता, एवं
(ख) स्थायी दुकानदार

इन दोनों प्रकारों के फुटकर विक्रेताओं का आगे के अनुभागों में वर्णन किया गया है–

10.6.1 भ्रमणशील फुटकर विक्रेता

ये वे फुटकर व्यापारी होते हैं जो किसी स्थायी जगह से अपना व्यापार नहीं करते। यह अपने सामान के साथ ग्राहकों की तलाश में गली-गली एवं एक स्थान से दूसरे स्थानों पर घूमते रहते हैं।

विशेषताएँ

(क) ये छोटे व्यापारी होते हैं जो सीमित साधनों से कार्य करते हैं।

(ख) ये सामान्यतः प्रतिदिन के उपयोग में आने वाली उपभोक्ता वस्तुओं, जैसे- प्रसाधन सामग्री, फल, सब्ज़ियाँ आदि का व्यापार करते हैं।

(ग) ऐसे व्यापारी ग्राहकों को उनके घर पर वस्तुएँ उपलब्ध कराने की सुविधा पर अधिक ध्यान देते हैं।

(घ) इनका कोई व्यापारिक नियत स्थान नहीं होता है इसलिए ये माल का स्टॉक घर में या फिर किसी अन्य स्थान पर रखते हैं।

भारत में साधारणतः भ्रमणशील फुटकर विक्रेता निम्न होते हैं–

(क) फेरी वाले– फेरी वाले किसी भी बाज़ार में सबसे पुराने फुटकर विक्रेता होते हैं जिनकी आज के समय में उतनी ही उपयोगिता है, जितनी आज से हजारों वर्ष पूर्व थी। ये छोटे उत्पादक अथवा मामूली व्यापारी होते हैं जो वस्तुओं को साईकल, हाथ-ठेली, साईकल रिक्शा या अपने सिर पर रखकर तथा जगह-जगह घूमकर ग्राहक के दरवाज़े पर जाकर वस्तु का विक्रय करते हैं। यह साधरणतया गैर मानकीय एवं कम मूल्य की वस्तुएँ, जैसे–खिलौने, फल-सब्ज़ियाँ, सिले-सिलाए कपड़े, गलीचे, खाने की वस्तुएँ एवं आइसक्रीम आदि बेचते हैं। यह आवासीय क्षेत्रों में, गलियों में, प्रदर्शनियों एवं मॉल्स के बाहर तथा अर्धअवकाश में विद्यालयों के बाहर भी देखे जा सकते हैं।

इस प्रकार के फुटकर व्यापार का मुख्य लाभ उपभोक्ताओं के लिए सुविधाजनक होना है। लेकिन इनसे लेन-देन करते समय चौकन्ना रहने की आवश्यकता है क्योंकि इनकी वस्तुओं की गुणवत्ता एवं मूल्य विश्वास के योग्य नहीं होता है।

(ख) सावधिक बाजार व्यापारी– ये वे छोटे फुटकर व्यापारी होते हैं जो विभिन्न स्थानों पर निश्चित दिन अथवा तिथि को दुकान लगाते हैं, जैसे– प्रति शनिवार या फिर एक शनिवार छोड़कर दूसरे शनिवार को। यह एक ही प्रकार का माल बेचते हैं, जैसे– सिले-सिलाए कपड़े या फिर तैयार वस्त्र, खिलौने, क्रॉकरी का सामान या फिर जनरल मर्चेंट का व्यापार करते हैं। यह मुख्यतः कम आय वाले ग्राहकों के लिए माल रखते हैं तथा कम मूल्य की प्रतिदिन उपयोग में आने वाली वस्तुओं को बेचते हैं।

(ग) पटरी विक्रेता– ये ऐसे छोटे विक्रेता होते हैं जो ऐसे स्थानों पर पाए जाते हैं जहाँ लोगों का भारी आवागमन रहता है, जैसे– रेलवे स्टेशन, बस स्टैंड। यह साधारण रूप में उपयोग में आने वाली वस्तुओं को बेचते हैं जैसे कि स्टेशनरी का सामान, खाने-पीने

की चीजें, तैयार वस्त्र, समाचार पत्र एवं मैगजीन। यह सावधिक बाजार विक्रेताओं से इस रूप में भिन्न होते हैं कि वे अपने बिक्री के स्थान को आसानी से नहीं बदलते हैं।

(घ) सस्ते दर की दुकान– ये वो छोटे फुटकर विक्रेता होते हैं जिनकी किसी व्यावसायिक क्षेत्र में स्वतंत्र अस्थायी दुकान होती है। ये अपने व्यापार को एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में वहाँ की संभावनाओं को देखते हुए बदलते रहते हैं लेकिन ये फेरी वाले या बाजार विक्रेताओं के समान शीघ्रता से नहीं बदलते। ये उपभोक्ता वस्तुओं में व्यापार करते हैं एवं वस्तुओं को उस स्थान पर उपलब्ध कराते हैं जहाँ उसकी उपभोक्ता को आवश्यकता है।

10.6.2 स्थायी दुकानदार

बाजार का यह सबसे सामान्य फुटकर व्यापार है, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, ये वो फुटकर विक्रेता हैं। जिनके विक्रय के लिए स्थायी रूप से संस्थान हैं। ये अपने ग्राहकों के लिए जगह-जगह नहीं घूमते। इन व्यापारियों की कुछ और विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

(i) भ्रमणशील व्यापारियों की तुलना में इनके पास अधिक संसाधन होते हैं तथा ये अपेक्षाकृत बड़े पैमाने पर कार्य करते हैं। स्थायी दुकानदार आकार के आधार पर अनेकों प्रकार के होते हैं। ये बहुत छोटे आकार से लेकर बहुत बड़े आकार के भी होते हैं।

(ii) ये विभिन्न वस्तुओं का व्यापार करते हैं जो उपभोग योग्य टिकाऊ भी हो सकती हैं एवं गैर टिकाऊ भी।

(iii) ग्राहकों में इनकी अधिक साख होती है। ये ग्राहकों की वस्तुओं को घर पहुँचाना, गारंटी प्रदान करना, मरम्मत, उधार बिक्री, अतिरिक्त पुर्जे उपलब्ध कराना जैसी अनेकों सेवाएँ प्रदान करते हैं।

परिचालन आकार के आधार पर स्थायी दुकानदार मुख्यतः दो प्रकार के हो सकते हैंः

(i) छोटे दुकानदार, एवं

(ii) बड़े फुटकर विक्रेता।

इन दो वर्गों के फुटकर विक्रेताओं के विभिन्न प्रकार का विस्तृत वर्णन नीचे किया गया है–

छोटे स्थायी फुटकर विक्रेता

(क) जनरल स्टोर– ये सामान्यत स्थानीय बाजार एवं आवासीय क्षेत्रों में स्थित होते हैं। जैसा कि इनके नाम से ही स्पष्ट है, ये आस-पास के क्षेत्रों में रहने वाले उपभोक्ताओं की प्रतिदिन आवश्यकता वाली वस्तुओं की बिक्री करते हैं। ये स्टोर देर तक सुविधाजनक समय पर खुले रहते हैं तथा अपने नियमित ग्राहकों को उधार की सुविधा भी देते हैं। इन स्टोर्स का सबसे बड़ा लाभ इनसे ग्राहकों को सुविधा का होना है। उनके लिए अपने प्रतिदिन के प्रयोग में आने वाली वस्तुओं, जैसे– परचून की वस्तुएँ, पेय पदार्थ, प्रसाधन का सामान, स्टेशनरी एवं मिठाइयाँ खरीदना सुविधाजनक रहता है और चूँकि अधिकांश

ग्राहक उसी क्षेत्र के रहने वाले होते हैं इसलिए उनकी सफलता में सबसे बड़ा योगदान दुकानदार की छवि तथा ग्राहकों के साथ उनके तालमेल का होता है।

(ख) विशिष्टीकृत भंडार– इस प्रकार के फुटकर स्टोर पिछले कुछ समय से विशेष रूप से लोकप्रिय हो रहे हैं। विशेषतः शहरी क्षेत्रों में ये विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का विक्रय न कर एक ही प्रकार वस्तुओं की बिक्री करते हैं तथा यह विशेषज्ञ होते हैं। उदाहरणार्थ केवल बच्चों के सिले-सिलाए वस्त्र बेचने वाली दुकानें या फिर पुरुषों के वस्त्र, महिलाओं के जूते, खिलौने एवं उपहार की वस्तुएँ, स्कूल यूनीफॉर्म, कालेज की पुस्तकें या फिर उपभोक्ता की इलेक्ट्रोनिक वस्तुएँ आदि की दुकानें। ये बाजार में पाई जाने वाली इस प्रकार की कुछ दुकानें हैं।

विशेष वस्तुओं की दुकानें साधारणतया केंद्रीय स्थल पर स्थित होती हैं, जहाँ पर बड़ी संख्या में ग्राहक आते हैं तथा ये ग्राहकों को वस्तुओं के चयन का भारी अवसर प्रदान करती हैं।

(ग) गली में स्टॉल– ये छोटे विक्रेता गली के मुहाने पर या भीड़-भाड़ वाले क्षेत्रों में होते हैं। ये घुमक्कड़ जनता को आकर्षित करते हैं तथा हौजरी की वस्तुएँ, खिलौने, सिगरेट, पेय पदार्थ आदि सस्ती वस्तुएँ बेचते हैं। ये स्थानीय आपूर्तिकर्ता अथवा थोक विक्रेता से माल खरीदते हैं क्योंकि इनकी पहुँच बहुत ही सीमित क्षेत्र तक होती है इसलिए ये बहुत ही छोटे पैमाने पर व्यापार करते हैं। ग्राहक को उसकी आवश्यकता की वस्तु सुगमतापूर्वक सुलभ कराना ही इनका मुख्य कार्य है।

(घ) पुरानी वस्तुओं की दुकानें– ये दुकानें पुरानी वस्तुओं अर्थात् पहले ही उपयोग की गई वस्तुओं की बिक्री करती हैं, जैसे कि पुस्तकें, कपड़े, मोटर कारें, फर्नीचर एवं अन्य घरेलू सामान। सामान्य आय वाले लोग ही इन्हें खरीदते हैं। यहाँ वस्तुएँ कम मूल्य पर प्राप्त होती हैं। ये दुकानदार ऐतिहासिक महत्व की दुर्लभ वस्तुएँ एवं पुरानी वस्तुएँ भी रखते हैं तथा उन लोगों को भारी मूल्य पर बेचते हैं जिनको इन पुरानी वस्तुओं में रूचि होती है।

पुरानी वस्तुओं का विक्रय करने वाली दुकानें गली के मुहाने पर या फिर अधिक चहल-पहल वाली गली में होती हैं। ये छोटे स्टाल होते हैं जिसमें एक मेज अथवा फट्टे पर बिक्री की जाने वाली वस्तुएँ सजाई होती हैं। कुछ का अच्छा संस्थागत ढाँचा भी होता है, जैसे– फर्नीचर विक्रेता अथवा पुरानी कार, स्कूटर अथवा मोटरसाइकिल के विक्रेता।

(ङ) एक वस्तु के भंडार– यह वह भंडार होते हैं जो एक ही श्रेणी की वस्तुओं का विक्रय करते हैं जैसे कि पहनने के तैयार वस्त्र, घड़ियाँ, जूते, कारें, टायर, कंप्यूटर, पुस्तकें, स्टेशनरी आदि। यह भंडार एक ही श्रेणी की अनेकों प्रकार की वस्तुएँ रखते हैं तथा केंद्रीय स्थल पर स्थित होते हैं।

इनमें से अधिकांश स्वतंत्र फुटकर बिक्री संगठन होते हैं जो एकल स्वामित्व अथवा साझेदारी फर्म के रूप में चलाए जाते हैं।

स्थायी दुकानें- बड़े पैमाने के भंडार गृह

1. विभागीय भंडार

विभागीय भंडार एक बड़ी इकाई होती है जो विभिन्न प्रकार के उत्पादों की बिक्री करती हैं, जिन्हें भली-भांति निश्चित विभागों में बाँटा गया होता है तथा जिनका उद्देश्य ग्राहक की लगभग प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति एक ही छत के नीचे करना है। अमेरिका में किसी विभागीय भंडार के लिए सुई से लेकर हवाई जहाज तक बेचना कोई असामान्य बात नहीं है। यह एक ही छत के नीचे सभी प्रकार की वस्तुओं का क्रय है। सही अर्थों में विभागीय भंडार की भावना पिन से लेकर विशालकाय वस्तु का एक ही स्थान पर उपलब्ध कराना है। भारत में सही अर्थ वाले विभागीय भंडार अभी फुटकर व्यापार में बड़े पैमाने पर नहीं आये हैं। हाँ, भारत में इस श्रेणी में कुछ भंडार हैं, जैसे– 'अकबरली' तथा 'शीयाकरी' भंडार मुम्बई में तथा 'स्पैंसर्स' चेन्नई में।

विभागीय भंडार की विशेषताएँ :

(क) आधुनिक विभागीय भंडार जलपान गृह, यात्रा एवं सूचना ब्यूरो, टेलीफोन बूथ, विश्राम गृह आदि सभी प्रकार की सुविधाएँ प्रदान करते हैं। ये उच्च श्रेणी के ग्राहकों को अधिकतम सेवाएँ प्रदान करने का प्रयत्न करते हैं जिनके लिए मूल्य द्वितीय महत्त्व की बात होती है।

(ख) ये भंडार साधारणतया शहर के केंद्र में स्थित होते हैं जहाँ बड़ी संख्या में ग्राहक आते हैं।

(ग) ये भंडार बहुत बड़े होते हैं इसलिए ये संयुक्त पूँजी कंपनी के रूप में होते हैं तथा इनका प्रबंधन निदेशक मंडल करता है जिनकी सहायता जनरल मैनेजर एवं अन्य विभागीय प्रबंधक करते हैं।

(घ) विभागीय भंडार फुटकर विक्रेता भी होते हैं एवं भंडार गृह भी ये माल सीधे उत्पादक से खरीदते हैं तथा इनके अपने अलग भंडार गृह होते हैं। इस प्रकार से ये उत्पादक एवं ग्राहकों के बीच के अनावश्यक मध्यस्थों को समाप्त करते हैं।

(ङ) इनमें माल के क्रय की केंद्रीय व्यवस्था होती है। एक विभागीय भंडार में इसका क्रय विभाग ही पूरे माल का क्रय करता है जबकि विक्रय विभिन्न विभागों के माध्यम से किया जाता है।

लाभ

विभागीय भंडारों के माध्यम से फुटकर व्यापार के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं :

(क) बड़ी संख्या में ग्राहकों को आकर्षित करना– ये भंडार सामान्यतः केंद्रीय स्थलों पर स्थित होते हैं इसलिए दिन में अधिकांश समय

में बड़ी संख्या में ग्राहक आते रहते हैं।

(ख) क्रय करना सुगम– विभागीय भंडार एक ही छत के नीचे बड़ी संख्या में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की बिक्री की व्यवस्था करते हैं। इससे ग्राहकों को एक ही स्थान पर अपनी आवश्यकता की लगभग सभी वस्तुएँ खरीदने की सुविधा मिल जाती है। परिणामस्वरूप अपनी खरीददारी के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागना नहीं पड़ता।

(ग) आकर्षक सेवाएँ– विभागीय भंडार का उद्देश्य ग्राहक को अधिकतम सेवाएँ प्रदान करना है। इसकी कुछ सेवाएँ इस प्रकार हैः वस्तुओं की घर पर सुपुर्दगी, टेलीफोन पर प्राप्त आदेश का क्रियान्वयन, विश्राम गृहों की व्यवस्था, टेलीफोन बूथ, जलपानगृह, नाई की दुकान आदि।

(घ) बड़े पैमाने पर परिचालन के लाभ– विभागीय भंडार बड़े स्तर पर संगठित किये जाते हैं इसलिए इन्हें बड़े पैमाने पर परिचालन के लाभ मिलते हैं, विशेष रूप से वस्तुओं के क्रय के संबंध में।

(ङ) विक्रय में वृद्धि– विभागीय भंडार काफी धन विज्ञापन एवं अन्य संवर्द्धन क्रियाओं पर व्यय करने की स्थिति में होते हैं। उनकी बिक्री में वृद्धि होती है।

इस प्रकार के फुटकर व्यापार की कुछ अपनी सीमाएं भी हैं जिनका वर्णन नीचे किया गया है :

सीमाएँ

(क) व्यक्तिगत ध्यान का अभाव– बड़े पैमाने पर क्रियाओं के कारण विभागीय भंडार में ग्राहकों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना कठिन हो जाता है।

(ख) उच्च परिचालन लागत– विभागीय भंडार अतिरिक्त सेवाएँ प्रदान करने पर अधिक जोर देते हैं इसलिए इनकी परिचालन लागत भी अधिक होती है। इन खर्चों के कारण वस्तुओं का मूल्य भी अधिक होता है। यह मूल्य कम आय-वर्ग के लोगों को आकर्षित नहीं करता है।

(ग) हानि की संभावना अधिक– परिचालन की ऊँची लागत एवं बड़े पैमाने पर कार्य करने के कारण एक विभागीय भंडार में हानि होने की संभावना अधिक होती है। उदाहरण के लिए, माना कि ग्राहकों की रुचिफैशन में बड़ा परिवर्तन आ गया है तो यह आवश्यक हो जाता है कि स्टॉक में एकत्रित भारी मात्रा में फैशन से बाहर हो गई वस्तुओं की बिक्री घटी दरों पर की जाए।

(घ) असुविधाजनक स्थिति– विभागीय भंडार साधारणतः शहर के केंद्र में स्थित होते हैं इसलिए यदि किसी वस्तु की तुरंत आवश्यकता हो तो यहां से खरीदना आसान नहीं होता।

उपरोक्त सीमाओं के रहते हुए भी विभागीय भंडार विश्व के पश्चिमी देशों

में एक वर्ग विशेष को लाभ पहुँचाने के कारण बहुत अधिक लोकप्रिय हैं।

2. शृंखला भंडार अथवा बहुसंख्यक दुकानें–

शृंखला भंडार अथवा बहुसंख्यक दुकानें फुटकर दुकानों का फैला हुआ जाल है जिनका स्वामित्व एवं परिचालन उत्पादनकर्ता या मध्यस्थ करते हैं। इस व्यवस्था में एक जैसी दिखाई देने वाली कई दुकानें देश के विभिन्न भागों में विभिन्न स्थानों पर खोली जाती हैं। इन दुकानों पर मानकीय एवं ब्रांड की वस्तुएँ जिनका विक्रय आवर्त तीव्र होता है, बेची जाती हैं। इन दुकानों को एक ही संगठन चलाता है तथा इनकी व्यापार की व्यूह रचना एक-सी होती है तथा एक तरह की वस्तुओं का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार की दुकानों की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ नीचे दी गई हैं–

(क) ये दुकानें बड़ी जनसंख्या वाले क्षेत्रों में स्थित होती हैं जहाँ काफी संख्या में ग्राहक मिल जाते हैं। इनकी भावना ग्राहकों को उनके आवास अथवा कार्यस्थल के समीप सेवाएँ प्रदान करना है न कि उनको एक केंद्रित स्थान पर आमंत्रित करना।

(ख) सभी फुटकर इकाइयों के लिए उत्पादन अथवा क्रय करना मुख्यालय में केंद्रित होता है, जहाँ से इन्हें विभिन्न दुकानों को उनकी आवश्यकता के अनुसार भेज दिया जाता है। इससे इन भंडारों के परिचालन व्यय में बचत हो जाती है।

(ग) प्रत्येक दुकान का प्रबंधन एक शाखा प्रबंधक करता है जो दिन-प्रतिदिन के कार्यों की देख-रेख करता है। वह बिक्री, नकद जमा एवं माल की आवश्यकता के संबंध में प्रतिदिन की सूचना मुख्यालय में भेजता है।

(घ) मुख्यालय ही सभी शाखाओं का नियंत्रण करता है तथा नीति निर्धारण कर उनका क्रियान्वयन कराता है।

(ङ) इन दुकानों पर वस्तुओं का मूल्य एक ही होता है तथा सभी विक्रय नकद होता है। माल के विक्रय से प्राप्त राशि को प्रतिदिन स्थानीय बैंक में मुख्यालय को प्रेषित कर दिया जाता है।

(च) प्रधान कार्यालय निरीक्षकों की नियुक्ति करता है जो दुकानों पर ग्राहकों को प्रदान की जा रही सेवाओं की गुणवत्ता, प्रधान कार्यालय की नीतियों का सम्मान आदि का निरीक्षण करते हैं।

(छ) शृंखला भंडार ऐसी वस्तुओं के व्यापार का प्रभावी ढंग से संचालन करते हैं जिनकी बिक्री बड़ी मात्रा में एवं पूरे वर्ष एक समान रहती है। भारत में बाटा के जूतों की दुकान इसका एक लाक्षणिक उदाहरण है। इसी प्रकार की फुटकर बिक्री की दुकानें अन्य उत्पादों के लिए भी खोली जा रही हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं– डी.सी.एम. एवं रेमंड्स के शोरूम तथा नरूला, मैकडोनल्ड एवं पीजाकिंग की फास्ट फूड शृंखलाएँ।

लाभ

बहुसंख्यक दुकानों से समाज के उपभोक्ताओं को अनेकों लाभ हैं जिनका वर्णन नीचे किया गया है।

(क) **बड़े पैमाने की मितव्ययता–** केंद्रीयकृत क्रय/उत्पादन के कारण बहुसंख्यक दुकानों के संगठन को बड़े पैमाने की मितव्ययता का लाभ मिलता है।

(ख) **मध्यस्थ की समाप्ति–** बहुसंख्यक दुकानें शोधगृह को कोई माल बेचती हैं इसलिए वस्तु एवं सेवाओं के विक्रय में अनावश्यक मध्यस्थों को समाप्त कर देती हैं।

(ग) **कोई अशोध्य ऋण नहीं–** इन दुकानों पर क्योंकि माल का विक्रय नकद होता है इसलिए अशोध्य ऋणों के रूप में कोई हानि नहीं होती।

(घ) **वस्तुओं का हस्तांतरण–** यदि वस्तुओं की किसी एक स्थान पर मांग नहीं है तो उन्हें उस क्षेत्र में भेज दिया जाता है जहाँ उनकी मांग है। इसके कारण इन दुकानों पर निष्क्रिय स्टॉक की संभावना कम हो जाती है।

(ङ) **जोखिम का बिखराव–** एक दुकान की हानि की पूर्ति दूसरी दुकानों के लाभ से हो जाती है जिससे संगठन की कुल जोखिम कम हो जाती है।

(च) **निम्न लागत–** क्रय का केंद्रीयकरण, मध्यस्थों की समाप्ति, केंद्रीय बिक्री संवर्धन एवं अधिक बिक्री के कारण बहुसंख्यक दुकानों का व्यापार कम लागत पर होता है।

(छ) **लोचपूर्णता–** इस पद्धति में यदि कोई दुकान लाभ नहीं कमा रही है तो प्रबंधक इसे बंद कर सकते हैं अथवा इसे किसी दूसरे स्थान पर हस्तांतरित कर सकते हैं। इसका पूरे संगठन की लाभप्रदता पर कोई अधिक प्रभाव नहीं पड़ेगा।

हानियाँ

(क) **वस्तुओं का चयन सीमित–** बहुसंख्यक दुकानें सीमित उत्पाद की किस्मों में व्यापार करती है जिनके विपणनकर्ता स्वयं ही उत्पादन करते हैं। वे अन्य उत्पादकों का माल नहीं बेचते। इस प्रकार से उपभोक्ताओं के सम्मुख चयन के अवसर सीमित होते हैं।

(ख) **प्रेरणा का अभाव–** बहुसंख्यक दुकानों का प्रबंध करने वाले कर्मचारियों को प्रधान कार्यालय से प्राप्त आदेशों का पालन करना होता है। इससे वे सभी मामलों में प्रधान कार्यालय के दिशा निर्देशों के आदी हो जाते हैं। इससे उनकी पहल क्षमता समाप्त हो जाती है तथा वह अपनी सृजनात्मक प्रवीणता का ग्राहकों की संतुष्टि के लिए उपयोग नहीं कर सकते।

(ग) **व्यक्तिगत सेवा का अभाव–** कर्मचारियों के कारण व प्रेरणा के अभाव में उनमें उदासीनता आ जाती है तथा व्यक्तिगत सेवा का अभाव हो जाता है।

(घ) **माँग में परिवर्तन कठिन–** जिन वस्तुओं की बहुसंख्यक दुकानें व्यापार करती हैं यदि उनकी मांगों में तेजी से परिवर्तन आ जाता है तो संगठन को भारी हानि उठानी पड़ सकती है क्योंकि केंद्रीय भंडार में बड़ी मात्रा में बिना बिका माल बेचा जाता है।

विभागीय भंडार एवं बहुसंख्यक दुकानों में अंतर :

ये दोनों यद्यपि बड़े पैमाने के संगठन हैं, तथापि इनमें कई अंतर हैं जो नीचे दिये गए हैं–

(क) **स्थिति**– विभागीय भंडार किसी केंद्रीय स्थान पर स्थित होते हैं जहाँ काफी बड़ी संख्या में ग्राहक आ सकते हैं, जबकि बहुसंख्यक दुकानें अलग-अलग स्थानों पर स्थित होती हैं जहाँ बड़ी संख्या में ग्राहक पहुँचते हैं। इस प्रकार से इनके लिए किसी केंद्रीय स्थल की आवश्यकता नहीं है।

(ख) **उत्पादों की श्रेणी**– विभागीय भंडारों का उद्देश्य एक ही छत के नीचे ग्राहकों की सभी आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति करना है। यह विभिन्न प्रकार के अलग-अलग उत्पादों का विक्रय करते हैं जबकि बहुसंख्यक दुकानों का उद्देश्य किसी वस्तु की विभिन्न किस्मों की (ग्राहकों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु) पूर्ति करना है।

(ग) **प्रदत्त सेवाएँ–** विभागीय भंडार अपने ग्राहकों को अधिकतम सेवाएँ प्रदान करने पर जोर देते हैं। इनमें कुछ हैं– डाक घर, जलपान गृह आदि। इसके विपरीत बहुसंख्यक दुकानें सीमित सेवाएँ ही प्रदान करती हैं, जैसे– वस्तुओं में यदि किसी प्रकार की कमी है तो उसकी गारंटी एवं मरम्मत।

(घ) **कीमतें/मूल्य–** बहुसंख्यक दुकानें निर्धारित मूल्यों पर माल बेचती हैं तथा उनकी सभी दुकानों पर एक ही मूल्य रहता है। विभागीय भंडारों में सभी विभागों में मूल्य नीति समान नहीं होती। कई बार माल की निकासी के लिए कुछ वस्तुओं एवं किस्मों पर छूट दी जाती है।

(ङ) **ग्राहकों का वर्ग–** विभागीय भंडार अधिकांश रूप से उच्च आय वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं जो सेवाएँ चाहते हैं तथा मूल्य की परवाह नहीं करते। दूसरी ओर बहुसंख्यक दुकानें ग्राहकों के विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं जिनमें कम आय वर्ग भी है जो कम कीमत पर गुणवत्ता वाली वस्तुओं में रुचि रखते हैं।

(च) **उधार की सुविधा–** बहुसंख्यक दुकानों में सभी बिक्री पूर्णतः नकद होती है। इसके विपरीत विभागीय भंडार अपने कुछ नियमित ग्राहकों को उधार की सुविधा भी देते हैं।

(छ) **लोचपूर्ण–** विभागीय भंडार बड़ी संख्या में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का व्यापार करते हैं तथा विक्रय उत्पादों की

विभिन्न श्रेणियों के कारण वस्तुओं में लचीलापन पाया जाता है। शृंखला भंडारों में लोचपूर्णता की संभावना नहीं है क्योंकि यह सीमित श्रेणी की वस्तुओं का व्यापार करते हैं।

डाक आदेश गृह

ये वो फुटकर विक्रेता होते हैं जो डाक द्वारा वस्तुओं का विक्रय करते हैं। इस प्रकार के व्यापार में विक्रेता एवं क्रेता में कोई प्रत्यक्ष व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता। आदेश प्राप्त करने के लिए यह संभावित ग्राहकों से समाचार पत्र अथवा पत्रिकाओं में विज्ञापन, परिपत्र अनुसूची, नमूने एवं बिल एवं मूल्य सूची जो उन्हें डाक से भेजे जाते हैं के द्वारा संपर्क बनाते हैं। विज्ञापन में वस्तुओं के संबंध में सभी आवश्यक सूचनाएँ, जैसे- मूल्य, प्रकृति सुपुर्दगी की शर्तें, भुगतान की शर्तें आदि का वर्णन किया जाता है। आदेश प्राप्ति के पश्चात् वस्तुओं की ग्राहक द्वारा जिन बातों की जानकारी मांगी जाती है उसके अनुसार जाँच की जाती है तथा उनका डाक के माध्यम से पालन किया जाता है।

जहाँ तक भुगतान का संबंध है, कई विकल्प हैं। प्रथम, ग्राहकों से पूरा भुगतान अग्रिम मांगा जा सकता है। द्वितीय, वस्तुओं को मूल्य देय डाक द्वारा भेजा जा सकता है। इस व्यवस्था में वस्तुओं को डाक से भेजा जाता है तथा ग्राहकों को उनकी सुपुर्दगी तभी की जाती है जबकि वह उनका पूरा भुगतान कर देता है। तीसरे, वस्तुएँ बैंक के माध्यम से भेजी जा सकती हैं तथा उन्हें वस्तुओं को ग्राहकों को सुपुर्दगी का निर्देश दिया जाता है। इस व्यवस्था में अशोध्य ऋणों की जोखिम नहीं होती क्योंकि क्रेता को माल की सुपुर्दगी उसका पूरा भुगतान करने पर ही की जाती है लेकिन यहाँ ग्राहकों को यह विश्वास दिलाना होता है कि माल उनके द्वारा-निर्दिष्ट वर्णन के अनुसार ही भेजा गया है।

इस प्रकार का व्यापार सभी प्रकार के उत्पादों के लिए उपयुक्त नहीं होता। उदाहरण के लिए जो वस्तुएँ शीघ्र नष्ट होने वाली हो अथवा वजन में भारी हैं तथा जिन्हें सरलता से उठाना और रखना संभव नही है, उनका डाक द्वारा व्यापार केवल वही वस्तुएँ- (क) जिनका श्रेणीकरण एवं मानकीकरण हो सकता है, (ख) जिन्हें कम लागत पर ले जाया जा सकता है, (ग) जिनकी बाजार में मांग है, (घ) जो पूरे वर्ष बड़ी मात्रा में उपलब्ध हैं, (ङ) जिनमें बाजार में न्यूनतम प्रतियोगिता है, (छ) जिनका चित्र आदि के द्वारा वर्णन किया जा सकता है इत्यादि। इस प्रकार के व्यापार के लिए उपयुक्त है। इस संबंध में एक और बात ध्यान देने योग्य है कि डाक द्वारा व्यापार तभी सफलतापूर्वक चलाया जा सकता है कि जबकि शिक्षा का पर्याप्त प्रसार हो क्योंकि पढ़े-लिखे लोगों तक ही विज्ञापन एवं अन्य प्रकार के लिखित संप्रेषण के माध्यम से पहुँचा जा सकता है।

लाभ

(क) **सीमित पूँजी की आवश्यकता–** डाक व्यापार में भवन तथा अन्य आधारगत ढाँचे पर

भारी व्यय की आवश्यकता नहीं होती। इसीलिए इसे तुलना में कम पूंजी से प्रारंभ किया जा सकता है।

(ख) मध्यस्थों की समाप्ति– उपभोक्ता की दृष्टि से डाक-द्वारा व्यापार का सबसे बड़ा लाभ है कि विक्रेता एवं क्रेता के बीच से अनावश्यक मध्यस्थ समाप्त हो जाते हैं। इससे क्रेता एवं विक्रेता दोनों की बचत होती है।

(ग) विस्तृत क्षेत्र– इस पद्धति में हर उन स्थानों पर माल भेजा जा सकता है जहाँ डाक सेवाएँ उपलब्ध हैं। इस प्रकार से डाक द्वारा पूरे देश में बड़ी संख्या में लोगों को माल बेचा जा सकता है जिससे व्यवसाय का क्षेत्र व्यापक हो जाता है।

(घ) अशोध्य ऋण संभव नहीं– डाक द्वारा ग्राहकों को माल उधार नहीं बेचा जाता इसलिए ग्राहकों के द्वारा माल का भुगतान न करने से अशोध्य ऋणों की संभावना नहीं है।

(ङ) सुविधा– इस पद्धति में वस्तुओं की ग्राहकों के घर पर सुपुर्दगी कर दी जाती है। इसलिए इससे ग्राहकों द्वारा वस्तुओं का क्रय करना सुविधाजनक हो जाता है।

सीमाएँ

(क) व्यक्तिगत संपर्क की कमी– डाक द्वारा व्यापार में विक्रेता एवं क्रेता के बीच व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता है। इसलिए दोनों के बीच भ्रांति एवं अविश्वास पैदा होने की संभावना रहती है। क्रेता क्रय से पहले वस्तुओं की जाँच नहीं कर सकते तथा विक्रेताओं पर व्यक्तिगत ध्यान नहीं दे सकते एवं सूची पत्रों एवं विज्ञापन के द्वारा उनकी शंकाओं का समाधान नहीं कर सकते।

(ख) उच्च प्रवर्तन लागत– डाक द्वारा व्यापार में संभावित ग्राहकों को सूचित करने एवं वस्तुओं को खरीदने के लिए प्रेरित करने के लिए विज्ञापन पर एवं प्रवर्तन के अन्य साधनों पर बहुत अधिक निर्भर किया जाता है। परिणाम स्वरूप विक्रय प्रवर्तन पर भारी व्यय करना होता है।

(ग) बिक्री के बाद की सेवा का अभाव– डाक द्वारा बिक्री में विक्रेता एक दूसरे से बहुत दूर हो सकते हैं तथा उनके बीच कोई व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता। परिणामस्वरूप बिक्री के बाद की सेवाएँ प्रदान नहीं की जा सकती जो कि ग्राहकों की संतुष्टि के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

(घ) उधार की सुविधा की कमी– डाक आदेश गृह क्रेताओं को उधार की सुविधा प्रदान नहीं करते। इसलिए सीमित साधन वाले व्यक्ति इस प्रकार के व्यापार में रुचि नहीं लेते।

(ङ) सुपुर्दगी में विलंब– डाक द्वारा आदेश प्राप्त करने एवं उनके क्रियान्वयन में समय लगता है। अतः ग्राहकों को माल की सुपुर्दगी समय पर नहीं मिल पाती।

(च) दुरुपयोग की संभावना– इस प्रकार के व्यापार में बेईमान व्यापारियों द्वारा धोखा दिए जाने की अधिक संभावना रहती है। यह उत्पाद के विषय में झूठे दावे करते हैं या फिर विज्ञापन एवं इश्तहार में किए गए वादों को पूरा नहीं करते हैं।

(छ) डाक सेवाओं पर अधिक निर्भरता– डाक आदेश व्यापार की सफलता किसी स्थान पर प्रभावी डाक सेवाओं की उपलब्धता पर बहुत अधिक निर्भर करती है लेकिन भारत जैसे विशाल देश में जहाँ बहुत से स्थान ऐसे हैं जहाँ डाक सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। इस प्रकार के व्यवसाय के सफल होने की संभावनाएं सीमित हैं।

उपभोक्ता सहकारी भंडार

उपभोक्ता सहकारी भंडार एक ऐसा संगठन है जिसके उपभोक्ता, स्वामी स्वयं ही होते हैं तथा वही उसका प्रबंध एवं नियंत्रण करते हैं। इन भंडारों का उद्देश्य मध्यस्थों की संख्या को कम करना है जो उत्पाद की लागत को बढ़ाते हैं, इस प्रकार से यह सदस्यों की सेवा करते हैं। साधारणतया यह वस्तुओं को सीधे उत्पादक थोक विक्रेता से बड़ी मात्रा में क्रय करते हैं तथा उन्हें उपभोक्ताओं को उचित दर पर बेचते हैं क्योंकि मध्यस्थ या तो समाप्त हो गए होते हैं या फिर कम हो गए होते हैं, सदस्यों को अच्छी गुणवत्ता की वस्तुएँ सस्ते मूल्य पर उपलब्ध हो जाती हैं। उपभोक्ता सहकारी भंडारों द्वारा वर्ष के दौरान अर्जित लाभ को सदस्यों में उनके क्रय के अनुपात में लाभांश के रूप में घोषित किया जाता है तथा सदस्यों के सामाजिक एवं शैक्षणिक लाभों के अधिक सुदृढ़ बनाने के लिए साधारण संचय एवं कल्याण कोष में जमा किया जाता है।

उपभोक्ता सहकारी भंडार को स्थापित करने के लिए न्यूनतम 10 सदस्यों की आवश्यकता होती है तथा एक स्वैच्छिक संगठन की स्थापना कर सहकारी समिति अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत करना पड़ता है। सहकारी भंडारों के लिए पूँजी इनके सदस्यों को अंश निर्गमित करके जुटाई जाती है। इन भंडारों का प्रबंध जनतांत्रिक पद्धति से चुनी गई एक प्रबंध समिति द्वारा किया जाता है तथा इसमें एक व्यक्ति वोट के नियम का पालन होता है। कोषों के उचित प्रबंधन को सुनिश्चित करने के लिए इन भंडारों के खातों का सहकारी समिति रजिस्ट्रार अथवा उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति के द्वारा अंकेक्षण किया जाता है।

लाभ

उपभोक्ता सहकारी भंडारों के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं:

(क) स्थापना सरल– एक उपभोक्ता सहकारी समिति का गठन सरल होता है। कोई भी 10 व्यक्ति एकजुट होकर एक स्वैच्छिक संगठन बना सकते हैं तथा कुछ औपचारिकताओं को पूरा कर सहकारी समिति के रजिस्ट्रार के पास इसका पंजीयन करा लेते हैं।

(ख) सीमित दायित्व– सहकारी भंडार के प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसकी पूँजी तक सीमित होता है। यदि समिति की देयताएँ उसकी परिसंपत्तियों से अधिक हैं तो समिति के ॠणों के भुगतान के लिए अपनी पूँजी से अधिक राशि के लिए वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं होता है।

(ग) प्रजातांत्रिक प्रबंध– सहकारी समिति का प्रबंध इसके सदस्यों के द्‌वारा चुनी गई प्रबंध समिति द्‌वारा प्रजातांत्रिक ढंग से किया जाता है। प्रत्येक सदस्य को एक वोट देने का अधिकार होता है भले ही उसके पास कितने भी शेयर हों।

(घ) कम कीमत– सहकारी भंडार उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं से सीधे माल का क्रय करते हैं तथा उसे सदस्यों एवं अन्य लोगों को बेचते हैं। परिणामस्वरूप मध्यस्थ कम हो जाते हैं अतः उपभोक्ता एवं सदस्यों को वस्तुएँ कम मूल्य पर प्राप्त होती हैं।

(ङ) नकद बिक्री– प्रायः उपभोक्ता सहकारी भंडार वस्तुओं का नकद विक्रय करते हैं, परिणामस्वरूप कार्यशील पूँजी की आवश्यकता कम होती है।

(च) सुविधाजनक स्थिति– उपभोक्ता सहकारी भंडार सुविधा के अनुसार सार्वजनिक स्थलों पर खोले जाते हैं, जहाँ से सदस्य एवं अन्य लोग सुगमतापूर्वक अपनी आवश्यकता की वस्तुओं का क्रय कर सकते हैं।

सीमाएँ

उपभोक्ता सहकारी भंडारों की सीमाएँ निम्न हैं :

(क) प्रेरणा का अभाव– सहकारी भंडारों का प्रबंध जिन लोगों द्‌वारा किया जाता है, वे अवैतनिक होते हैं। इसीलिए इन लोगों में अधिक प्रभावी ढंग से काम करने के लिए पहल एवं अभिप्रेरणा की कमी होती है।

(ख) कोषों की कमी– सहकारी भंडारों के लिए धन इकट्‌ठा करने का मूल स्रोत सदस्यों से अंशों का निर्गमन है। इनके सदस्य सीमित संख्या में होते हैं इसलिए साधारणतया इनके पास धन की कमी रहती है। यह भंडारों की बढ़ोत्तरी एवं विस्तार में आड़े आता है।

(ग) संरक्षण का अभाव– प्रायः सहकारी भंडारों के सदस्य नियमित रूप से इनको संरक्षण प्रदान नहीं करते। इसलिए इनका सफलतापूर्वक परिचालन नहीं हो पाता।

(घ) व्यावसायिक प्रशिक्षण का अभाव– जिन लोगों को सहकारी भंडारों का प्रबंध कार्य सौंपा जाता है, उनमें विशेषज्ञता का अभाव होता है क्योंकि उन्हें भंडार को सुचारू रूप से चलाने का प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता है।

सुपर बाजार

सुपर बाजार एक बड़ी फुटकर व्यापारिक संस्था

होती है, जो कम लाभ पर अनेकों प्रकार की वस्तुओं का विक्रय करती है। इनमें स्वयं-सेवा, आवश्यकतानुसार चयन एवं भारी विक्रय का आकर्षण होता है। इनमें अधिकांश खाद्य सामग्री एवं अन्य कम मूल्य की वस्तुएँ ब्रांड वाली एवं बहुतायत में उपयोग में आने वाली उपभोक्ता वस्तुएँ, जैसे– परचून, बर्तन, कपड़े, बिजली के उपकरण, घरेलू सामान एवं दवाइयों का विक्रय किया जाता है। प्रायः सुपर बाजार अधिकांश रूप से प्रमुख विक्रय केंद्रों में स्थित होते हैं। उनमें वस्तुओं को खानों में रखा जाता है जिन पर मूल्य एवं गुणवत्ता स्पष्ट रूप से लिखे होते हैं। उपभोक्ता भंडार में घूमकर अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को चुनते हैं तथा उन्हें फिर नकद पटल पर लाते हैं तथा भुगतान कर उन्हें घर ले जाते हैं।

सुपर बाजार विभागीय भंडारों की भाँति विभिन्न विभागों में बँटा संगठन होता है जिसमें ग्राहक विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को एक ही छत के नीचे खरीद सकते हैं लेकिन ये भंडार, विभागीय भंडारों की भाँति घर पर माल की मुफ्त सुपुर्दगी, उधार की सुविधा, एजेंसी सुविधाएँ प्रदान नहीं करते। ये ग्राहकों को वस्तुओं की गुणवत्ता आदि के संबंध में विश्वास दिलाने के लिए विक्रेताओं की नियुक्ति नहीं करते। सुपर बाजार की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैंः

(क) सुपर बाजार सामान्यतः हर प्रकार की खाद्य सामग्री एवं परचून सामग्री जो गैर-खाद्य आवश्यकता की वस्तुओं के अतिरिक्त होती है, उनकी बिक्री करते हैं।

(ख) ऐसे बाजारों में क्रेता आवश्यक वस्तुओं का क्रय एक ही छत के नीचे कर सकते हैं।

(ग) सुपर बाजार स्वयं सेवा के सिद्धांत पर चलाए जाते हैं। इसलिए इनकी वितरण लागत कम होती है।

(घ) निम्न परिचालन लागत, बड़ी मात्रा में क्रय एवं कम लाभ के कारण अन्य फुटकर भंडारों की तुलना में यहाँ वस्तुओं की कीमत कम होती है।

(ङ) वस्तुओं को केवल नकद बेचा जाता है।

(च) सुपर बाजार साधारणतया केंद्रीय स्थानों पर स्थित होते हैं, जहाँ इनकी बिक्री बहुत अधिक होती है।

लाभ

सुपर बाजार के निम्नलिखित लाभ हैं–

(क) एक छत कम लागत– सुपर बाजार में विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को कम कीमत पर एक ही छत के नीचे बेचा जाता है।

इन बिक्री केंद्रों से क्रेता न केवल सुविधापूर्वक क्रय कर सकते हैं बल्कि यह मितव्ययी भी होता है।

(ख) केंद्र में स्थित– सुपर बाजार साधारणतया शहर के मध्य में स्थित होते हैं। परिणामस्वरूप यह आस-पास के क्षेत्र के लोगों की पहुँच में होते हैं।

(ग) **चयन के भारी अवसर–** सुपर बाजार में विभिन्न डिजाइन, रंग आदि की अनेक वस्तुएँ उपलब्ध होती हैं जिससे क्रेता सुगमतापूर्वक भली-भाँति चयन कर सकते हैं।

(घ) **कोई अशोध्य ऋण नहीं–** माल का विक्रय नकद किया जाता है इसलिए सुपर बाजार में अशोध्य ऋण नहीं होते।

(ङ) **बड़े स्तर के लाभ–** सुपर बाजार बड़े पैमाने के फुटकर विक्रय भंडार होते हैं। इसे बड़े पैमाने के क्रय एवं विक्रय के सभी लाभ मिलते हैं जिसके कारण इसकी प्रचालन लागत कम होती है।

सीमाएँ

(क) **उधार विक्रय नहीं–** सुपर बाजार अपनी वस्तुओं का केवल नकद विक्रय करते हैं। इसमें उधार क्रय की सुविधा नहीं होती। अतः सभी क्रेता यहाँ से माल का क्रय यहाँ नहीं कर सकते।

(ख) **व्यक्तिगत ध्यान की कमी–** सुपर बाजार स्वयं-सेवा के सिद्धांत पर चलते हैं। इसलिए ग्राहकों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान नहीं दिया जाता। परिणामस्वरूप जिन वस्तुओं पर विक्रेताओं पर व्यक्तिगत ध्यान देने की आवश्यकता है, इनका प्रभावी विक्रय सुपर बाजार में संभव नहीं है।

(ग) **वस्तुओं की अव्यवस्थित देख-रेख–** कुछ ग्राहक शैल्फ में रखी वस्तुओं के साथ लापरवाही दिखाते हैं। इससे सुपर बाजार को भारी हानि उठानी पड़ती है।

(घ) **भारी ऊपरी व्यय–** सुपर बाजार में भारी ऊपरी व्यय होता है। इनके कारण यह ग्राहकों को कम कीमत पर माल नहीं बेच सकते।

(ङ) **भारी पूँजी की आवश्यकता–** एक सुपर बाजार की स्थापना एवं परिचालन के लिए भारी निवेश की आवश्यकता होती है। इसीलिए इनमें अधिक बिक्री की आवश्यकता है जिससे कि ऊपरी व्यय को उचित स्तर पर रखा जा सके। ये केवल बड़े शहरों में ही संभव है छोटे कस्बों में नहीं।

विक्रय मशीनें

विपणन पद्धतियों में विक्रय मशीनें एक नई क्राँति की सूत्रधार हैं। मशीन में सिक्का डालिए और मशीन अपनी बिक्री का काम शुरू कर देगी। इसके माध्यम से अनेक वस्तुओं का विक्रय किया जा सकता है, जैसे- गर्म पेय पदार्थ, प्लेटफार्म टिकटें, दूध, सिगरेट, पेय पदार्थ, चॉकलेट, समाचारपत्र आदि। इनका प्रयोग कई देशों में हो रहा है। इन उत्पादों के अतिरिक्त एक और क्षेत्र जिसमें यह अवधारणा देश के कई भागों में (विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में) अधिक लोकप्रिय हो रही है, वो है आटोमेटेड टैलर मशीन (ए.टी.एम.) जो बैंकिंग सेवाएँ प्रदान कर रही है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, इन मशीनों ने बैंकिंग

की अवधारणा को ही बदल दिया है तथा अब बिना किसी शाखा में जाए रुपया इन मशीनों की मदद से आसानी से निकाला जा सकता है।

विक्रय मशीनें कम कीमत की पूर्व परिबंधित ब्राँड वस्तुएँ, जिनकी बहुत अधिक बिक्री होती है और जिनकी प्रत्येक इकाई का एक ही आकार एवं वजन होता है, की बिक्री के लिए अधिक उपयोगी हैं लेकिन ऐसी मशीनों को लगाने पर प्रारंभिक व्यय तथा इनके नियमित रख-रखाव तथा मरम्मत पर भारी व्यय करना होता है तथा ग्राहक वस्तु को क्रय करने से पहले उसका निरीक्षण नहीं कर सकते और यदि वस्तुओं की आवश्यकता नहीं हो तो उन्हें लौटा भी नहीं सकते। इसके अतिरिक्त, मशीन के अनुसार वस्तु का विशेष परिबंधन विकसित करना होता है। मशीनों का परिचालन भी विश्वसनीय होना चाहिए। इन सीमाओं के रहते हुए भी अर्थव्यवस्था में विकास के साथ विक्रय मशीनों के द्वारा अधिक बिकने वाली एवं कम कीमत की उपभोक्ता वस्तुओं की फुटकर बिक्री का भविष्य उज्ज्वल है।

10.7 वाणिज्य एवं उद्योग संगठनों की आंतरिक व्यापार संवर्द्धन में भूमिका

व्यवसाय एवं औद्योगिक संस्थानों का गठन समस्त व्यवसायों के हितों एवं लक्ष्यों के संवर्द्धन एवं संरक्षण के लिए किया गया था; उदाहरणार्थ ASSOCHAM, CII और FICCI. ये संस्थाएँ व्यापार, वाणिज्य एवं उद्योग के क्षेत्र में अपने आपको राष्ट्रीय संरक्षक के रूप में प्रस्तुत करती रही हैं।

ये संगठन आंतरिक व्यापार को संपूर्ण अर्थव्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग एवं सशक्त बनाने में उत्प्रेरक की भूमिका अदा कर रहा है। वाणिज्य एवं उद्योग मंडल सरकार से विभिन्न स्तरों पर संवाद करते हैं जिससे कि सरकार ऐसी नीतियों को पुनर्निर्देशित अथवा व्यवस्थित करे जिससे कि बाधाएँ घटें, वस्तुओं की अंतर्राज्यीय आवाजाही बढ़े, पारदर्शिता आए एवं बहुस्तरीय निरीक्षण एवं नौकरशाही को समाप्त किया जा सके। इसके अतिरिक्त चैंबर का लक्ष्य एक दृढ़ बुनियादी ढाँचा खड़ा करना एवं कर ढाँचे को सरल बनाना एवं एकरूपता प्रदान करना है। इसका हस्तक्षेप मुख्यतः निम्न क्षेत्रों में है :

(क) परिवहन अथवा वस्तुओं का अंतर्राज्यीय स्थानांतरण/आवागमन– वाणिज्य एवं उद्योग मंडल वस्तुओं के अंतर्राज्यीय संचलन से संबंधित अनेकों क्रियाओं में सहायता प्रदान करते हैं, जैसे– वाहनों का पंजीयन, सड़क एवं रेल परिवहन नीतियाँ, राजमार्ग एवं सड़कों का निर्माण आदि। उदाहरणार्थ– भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग मंडलों के महासंघ (FICCI) की एक वार्षिक साधारण सभा के निर्माण की घोषणा आंतरिक व्यापार को सुगम बनाएगी।

(ख) चुंगी एवं स्थानीय कर– चुंगी एवं स्थानीय कर स्थानीय सरकार का महत्त्वपूर्ण राजस्व का स्रोत है। यह राज्य अथवा नगर की सीमाओं में प्रवेश कर रही वस्तुओं एवं लोगों से वसूल किए जाते हैं। सरकार एवं वाणिज्य मंडलों को यह सुनिश्चित करना

चाहिए कि इन करों के कारण निबार्ध परिवहन एवं स्थानीय व्यापार पर कोई प्रभाव न पड़े।

(ग) **बिक्री कर ढाँचा एवं मूल्य संबंधित कर में एकरूपता–** वाणिज्यिक संघ विभिन्न राज्यों में बिक्री कर ढाँचे में एकरूपता लाने के लिये सरकार से बातचीत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। बिक्री कर राज्य राजस्व का एक महत्त्वपूर्ण भाग होता है। संकलित व्यापार के प्रवर्तन के लिए राज्यों के बीच बिक्री कर का तर्कसंगत ढाँचा एवं समान दर महत्त्वपूर्ण हैं। सरकार की नई नीति के अनुसार बिक्री कर के असंतुलन पैदा करने के प्रभाव को दूर करने के लिए इसके स्थान पर मूल्य संबंधित कर लगाया जा रहा है।

(घ) **कृषि उत्पादों के विपणन एवं इससे जुड़ी समस्याएँ–** कृषक संगठनों एवं अन्य महासंघों की कृषि उत्पादों के विपणन में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। कृषि उत्पादों की बिक्री उत्पादों की बिक्री करने वाले संगठनों की विपणन नीतियों एवं स्थानीय सहायता को चुस्त बनाने के कुछ क्षेत्र हैं जिनमें वाणिज्यिक एवं औद्योगिक संघ हस्तक्षेप कर सकते हैं एवं कृषि सहकारी समितियों जैसी संबंधित एजेंसियों के साथ बातचीत कर सकते हैं।

(ङ) **माप-तौल तथा ब्रॉड वस्तुओं की नकल को रोकना–** माप-तौल एवं ब्राँडों की सुरक्षा से संबंधित कानून उपभोक्ताओं एवं व्यापारियों के हितों के रक्षार्थ आवश्यक हैं। इन्हें सख्ती से लागू करने की आवश्यकता है। वाणिज्यिक एवं उद्योग संघ सरकार से ऐसे कानून बनाने के लिए बातचीत करते हैं तथा कानून एवं नियमों की अवहेलना करने वालों के विरूद्ध कार्यवाही करते हैं।

(च) **उत्पादन कर–** केंद्रीय उत्पादन कर जो केंद्रीय सरकार सभी राज्यों में लगाती है, जो सरकार के राजस्व का प्रमुख स्रोत है। मूल्य निर्धारण तंत्र में उत्पादन कर नीति की अहम् भूमिका होती है इसीलिए व्यापार संगठनों के लिए उत्पादन कर को एक सूत्र में लाने के लिए सरकार से बातचीत करना आवश्यक होता है।

(छ) **सुदृढ़ मूल-भूत ढाँचे का प्रवर्तन–** दृढ़ आधारभूत ढाँचा, जैसे– सड़क, बंदरगाह, बिजली रेल आदि व्यापार संवर्द्धन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वाणिज्य संघों को सरकार के साथ मिलकर भारी निवेश प्रायोजनों को लेना चाहिए।

(ज) **श्रम कानून–** सरल व लोचपूर्ण श्रम कानून उद्योग को चलाने, अधिकतम उत्पादन एवं रोजगार पैदा करने में सहायक होता है। वाणिज्यिक संघों एवं सरकार के बीच श्रम कानून एवं श्रम संख्या में कटौती जैसी समस्याओं पर बातचीत होती रहती है।

मुख्य शब्दावली

आंतरिक व्यापार	थोक विक्रेता	सावधिक बाजार व्यापारी
थोक व्यापार	खुदरा विक्रेता	सस्ते दर की दुकान
फुटकर व्यापार	सुपर बाजार	विक्रय मशीन
एक वस्तु के भंडार	भ्रमणशील फुटकर विक्रेता	विशिष्टकृत भंडार
विभागीय भंडार	शृंखला भंडार	चैंबर्स ऑफ कॉमर्स

सारांश

व्यापार से अभिप्राय लाभार्जन के उद्देश्य से वस्तुओं एवं सेवाओं के क्रय-विक्रय से है। क्रेताओं एवं विक्रेताओं की भौगोलिक स्थिति के आधार पर व्यापार को दो भागों में बाँटा जा सकता है–
(क) आंतरिक व्यापार, एवं (ख) बाह्य व्यापार।

आंतरिक व्यापार : जब वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय एक ही देश की सीमाओं के अंदर किया जाता है तो इसे आंतरिक व्यापार कहते हैं। इस प्रकार के व्यापार में कोई सीमा शुल्क अथवा आयात कर नहीं लगाया जाता क्योंकि वस्तुएँ घरेलू उत्पादन का भाग हैं तथा घरेलू उपयोग के लिए होती है। आंतरिक व्यापार को दो भागों में बांटा जा सकता है– (क) थोक व्यापार, एवं (ख) फुटकर व्यापार।

थोक व्यापार : विक्रय अथवा पुनः थोक व्यापार से अभिप्राय पुनः उत्पादन के उपयोग के लिए वस्तु एवं सेवाओं के बड़ी मात्रा में क्रय-विक्रय से है। ये न केवल उत्पादकों के लिए बड़ी संख्या में बिखरे हुए उपभोक्ताओं तक पहुंच (फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से) को संभव बनाते हैं बल्कि वस्तुओं एवं सेवाओं की वितरण प्रक्रिया के कई अन्य कार्य भी करते हैं।

थोक विक्रेताओं की सेवाएँ : थोक विक्रेता विनिर्माता एवं फुटकर विक्रेताओं के बीच की महत्त्वपूर्ण कड़ी होते हैं। ये समय उपयोगिता एवं स्थान उपयोगिता दोनों का सृजन करते हैं।

विनिर्माताओं के प्रति सेवाएँ : विनिर्माताओं के प्रति थोक विक्रेताओं की प्रमुख सेवाएँ नीचे दी गई हैं– (क) बड़े पैमाने पर उत्पादन में सहायक; (ख) जोखिम उठाना; (ग) वित्तीय सहायता; (घ) विशेषज्ञ सलाह; (ङ) विपणन में सहायक; (च) निरंतरता में सहायक; एवं (छ) संग्रहण।

फुटकर विक्रेताओं के प्रति सेवाएँ : थोक विक्रेताओं द्वारा फुटकर विक्रेताओं को दी जाने वाली सेवाएँ हैं– (क) वस्तुओं को उपलब्ध कराना; (ख) विपणन में सहायक; (ग) साख प्रदान करना; (घ) विशिष्ट ज्ञान; एवं (ङ) जोखिम में भागीदारी।

फुटकर व्यापार : फुटकर विक्रेता वह व्यावसायिक इकाई होती है जो वस्तुओं एवं सेवाओं को सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को बेचते हैं।

फुटकर व्यापारियों की सेवाएँ : फुटकर व्यापार वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण में उत्पादक एवं अंतिम उपभोक्ताओं के बीच की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इस प्रक्रिया में वह उपभोक्ताओं, थोक विक्रेताओं एवं विनिर्माताओं को उपयोगी सेवाएँ प्रदान करता है।

उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं के प्रति सेवाएँ : फुटकर व्यापारी उत्पादकों एवं थोक विक्रेताओं को जो मूल्यवान सेवाएँ प्रदान करते हैं; वे हैं : (क) वस्तुओं के वितरण में सहायक; (ख) व्यक्तिगत विक्रय; (ग) बड़े पैमाने पर परिचालन में सहायक; (घ) बाजार संबंधित सूचनाएँ एकत्रित करना; एवं (ङ) प्रवर्तन में सहायक।

उपभोक्ताओं को सेवाएँ : उपभोक्ताओं की दृष्टि से फुटकर व्यापारियों की कुछ सेवाएँ निम्नलिखित हैंः (क) उत्पादों की नियमित उपलब्धता; (ख) नये उत्पादों के संबंध में सूचना; (ग) क्रय में सुविधा; (घ) चयन के पर्याप्त अवसर; (ङ) बिक्री के बाद की सेवाएँ; एवं (च) उधार की सुविधा।

फुटकर व्यापार के प्रकार : फुटकर व्यापारियों को विभिन्न प्रकारों में बाँटने के लिए विभिन्न वर्गीकरणों का सहारा लिया जाता है। व्यावसायिक आकार के आधार निश्चित स्थान हैं। इस आधार पर फुटकर विक्रेता दो प्रकार के हो सकते हैं–

(क) भ्रमणशील फुटकर विक्रेता एवं
(ख) स्थायी दुकानदार

भ्रमणशील फुटकर विक्रेता : ये वे फुटकर व्यापारी होते हैं जो किसी स्थायी जगह से अपना व्यापार नहीं करते हैं। ये अपने सामान के साथ ग्राहकों की तलाश में गली-गली एवं एक स्थान से दूसरे स्थानों पर घूमते रहते हैं।

(क) फेरी वाले : ये छोटे उत्पादक अथवा मामूली व्यापारी होते हैं जो वस्तुओं को साइकिल, हाथ-ठेली, साइकिल रिक्शा या अपने सिर पर रखकर तथा जगह-जगह घूमकर ग्राहक के दरवाजे पर जाकर माल का विक्रय करते हैं।

(ख) सावधिक बाजार व्यापारी : फुटकर व्यापारी होते हैं जो विभिन्न स्थानों पर निश्चित दिन अथवा तिथि को दुकान लगाते हैं, जैसे– प्रति शनिवार या फिर एक शनिवार छोड़कर दूसरे शनिवार को।

(ग) सस्ते दर की दुकान : यह उपभोक्ता वस्तुओं में व्यापार करते हैं एवं वस्तुओं को उस स्थान पर उपलब्ध कराते हैं जहाँ उसकी उपभोक्ता को आवश्यकता है।

स्थायी दुकानदार : परिचालन आकार के आधार पर स्थायी दुकानदार मुख्यतः दो प्रकार के हो सकते हैं :

(क) छोटे दुकानदार, एवं
(ख) बड़े फुटकर विक्रेता।

छोटे स्थायी फुटकर विक्रेता

(क) जनरल स्टोर : उपभोक्ताओं की प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति की वस्तुओं की बिक्री करते हैं। उनके लिए अपने प्रतिदिन के प्रयोग में आने वाली वस्तुओं, जैसे– परचून की वस्तुएँ, पेय पदार्थ, प्रसाधन का सामान, स्टेशनरी एवं मिठाइयाँ खरीदना सुविधाजनक रहता है।

(ख) विशिष्टीकृत भंडार : शहरी क्षेत्रों में ये विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का विक्रय न कर एक ही प्रकार की वस्तुओं की बिक्री करते हैं। ये केवल बच्चों के सिले-सिलाए वस्त्र बेचते हैं या फिर पुरूषों के वस्त्र, महिलाओं के जूते, खिलौने एवं उपहार की वस्तुएँ, स्कूल यूनीफॉर्म, कॉलेज की पुस्तकें या फिर उपभोक्ता की इलेक्ट्रोनिक वस्तुएँ आदि।

(ग) गली में स्टॉल : ये छोटे विक्रेता गली के मुहाने पर या भीड़-भाड़ वाले क्षेत्रों में होते हैं तथा हौजरी की वस्तुएँ, खिलौने, सिगरेट, पेय पदार्थ आदि सस्ती बेचते हैं।

(घ) पुरानी वस्तुओं की दुकान : ये दुकानें पुरानी वस्तुओं की बिक्री करती हैं, जैसे कि पुस्तकें, कपड़े, मोटर कारें, फर्नीचर एवं अन्य घरेलू सामान। ये वस्तुएँ कम मूल्य पर प्राप्त होती हैं।

(ङ) एक वस्तु के भंडार : ये वे भंडार होते हैं जो एक ही श्रेणी की वस्तुओं का विक्रय करते हैं, जैसे कि पहनने के तैयार वस्त्र, घड़ियाँ, जूते, कारें, टायर, कंप्यूटर, पुस्तकें, स्टेशनरी आदि। ये केंद्रीय स्थल पर स्थित होते हैं।

विभागीय भंडार : एक विभागीय भंडार एक बड़ी इकाई होती है जो विभिन्न प्रकार के उत्पादों की बिक्री करती हैं, जिन्हें भली-भांति निश्चित विभागों में बाँटा गया होता है तथा जिनका उद्देश्य ग्राहक की लगभग प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति एक ही छत के नीचे करना है।

विभागीय भंडारों के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं :
(क) बड़ी संख्या में ग्राहकों को आकर्षित करना; (ख) क्रय सुगम बनाना;
(ग) आकर्षक सेवाएँ; (घ) बड़े पैमाने पर परिचालन के लाभ; एवं (ङ) विक्रय में वृद्धि।

सीमाएँ :
(क) व्यक्तिगत ध्यान का अभाव; (ख) उच्च परिचालन लागत; (ग) हानि की संभावना अधिक; एवं (घ) असुविधाजनक स्थिति।

(ख) शृंखला भंडार अथवा बहुसंख्यक दुकानें :
शृंखला भंडार अथवा बहु संख्यक दुकानें फुटकर दुकानों का फैला हुआ जाल हैं जिनका स्वामित्व एवं परिचालन उत्पादनकर्ता या मध्यस्थ करते हैं। इन दुकानों पर मानकीय एवं ब्रांड की वस्तुएँ जिनका विक्रय आवर्त तीव्र होता है, बेची जाती हैं।

लाभ :
(क) बड़े पैमाने की मितव्ययता; (ख) मध्यस्थ की समाप्ति; (ग) कोई अशोध्य ऋण नहीं;
(घ) वस्तुओं का हस्तांतरण; (ङ) जोखिम का बिखराव; (च) निम्न लागत; एवं (छ) लोचपूर्णता।

हानियाँ :
(क) वस्तुओं का चयन सीमित; (ख) प्रेरणा का अभाव; (ग) व्यक्तिगत सेवा का अभाव; एवं (घ) माँग में परिवर्तन कठिन।

विभागीय भंडार एवं बहुसंख्यक दुकानों में अंतर :
(क) स्थिति; (ख) उत्पादों की श्रेणी; (ग) प्रदत्त सेवाएँ; (घ) कीमतें/मूल्य; (ङ) ग्राहकों का वर्ग;
(च) उधार की सुविधा; (छ) लोचपूर्णता; एवं (ज) डाक आदेश गृह।

डाक आदेश गृह : ये वे फुटकर विक्रेता होते हैं जो डाक द्वारा वस्तुओं का विक्रय करते हैं। इस प्रकार के व्यापार में विक्रेता एवं क्रेता में कोई प्रत्यक्ष व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता।

लाभ :
(क) सीमित पूँजी की आवश्यकता; (ख) मध्यस्थों की समाप्ति; (ग) विस्तृत क्षेत्र; (घ) अशोध्य ऋण संभव नहीं; एवं (ङ) सुविधा।

सीमाएँ :
(क) व्यक्तिगत संपर्क की कमी; (ख) उच्च प्रवर्तन लागत; (ग) बिक्री के बाद की सेवा का अभाव; (घ) उधार की सुविधा की कमी; (ङ) सुपुर्दगी में विलंब; (च) दुरुपयोग की संभावना; एवं (छ) डाक सेवाओं पर अधिक निर्भरता।

उपभोक्ता सहकारी भंडार : उपभोक्ता सहकारी भंडार एक ऐसा संगठन है जिसके उपभोक्ता, स्वामी स्वयं ही होते हैं तथा वही उसका प्रबंध एवं नियंत्रण करते हैं। इन भंडारों का उद्देश्य मध्यस्थों की संख्या को कम करना है जो उत्पाद की लागत को ब\ढ़ाते हैं। इस प्रकार से यह सदस्यों की सेवा करते हैं।

लाभ :

(क) स्थापना सरल; (ख) सीमित दायित्व; (ग) प्रजातांत्रिक प्रबंध; (घ) कम कीमत; (ङ) नकद बिक्री; (च) सुविधाजनक स्थिति।

सीमाएँ :

(क) प्रेरणा का अभाव; (ख) कोषों की कमी; (ग) संरक्षण का अभाव; एवं (घ) व्यावसायिक प्रशिक्षण का अभाव।

सुपर बाजार : सुपर बाजार एक बड़ी फुटकर व्यापारिक संस्था होती है जो कम लाभ पर अनेकों प्रकार की वस्तुओं का विक्रय करती है। इनमें स्वयं सेवा, आवश्यकतानुसार चयन एवं भारी विक्रय का आकर्षण होता है।

लाभ :

(क) एक छत कम लागत; (ख) केंद्र में स्थित; (ग) चयन के भारी अवसर; (घ) कोई अशोध्य ऋण नहीं; एवं (ङ) बड़े स्तर के लाभ।

सीमाएँ :

(क) उधार विक्रय नहीं; (ख) व्यक्तिगत ध्यान की कमी; (ग) वस्तुओं की अव्यवस्थित देख-रेख;
(घ) भारी ऊपरी व्यय; (ङ) भारी पूँजी की आवश्यकता; एवं (च) विक्रय मशीनें।

विक्रय मशीनें : विक्रय मशीनें कम कीमत की पूर्व परिबंधित ब्राँड वस्तुएँ उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराती हैं इन वस्तुओं की बिक्री बहुत अधिक होती है और इनकी प्रत्येक इकाई का एक ही आकार एवं वजन होता है।

अभ्यास

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. आंतरिक व्यापार से क्या तात्पर्य है?
2. स्थायी दुकान फुटकर व्यापारियों की विशेषताएँ बताइए।
3. थोक व्यापारी द्वारा भंडारण की सुविधा किस उद्देश्य के लिए दी जाती है?
4. थोक व्यापारी से मिलने वाली बाजार जानकारी से निर्माता को किस प्रकार के लाभ मिलते हैं?
5. थोक व्यापारी निर्माता को बड़े पैमाने की मितव्ययता में किस प्रकार मदद करता है?
6. एक वस्तु भंडार और विशिष्टीकृत भंडार के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए। क्या आप ऐसे भंडारों को ज्ञात कर सकते हैं?
7. पटरी व्यापारी और सस्ते दर की दुकान में किस प्रकार अंतर्भेद करेंगे?
8. थोक व्यापारी द्वारा निर्माता को दी जाने वाली सेवाओं की व्याख्या कीजिए।
9. फुटकर व्यापारी द्वारा थोक व्यापारी और उपभोक्ता को दी जाने वाली सेवाएँ बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारत में भ्रमणशील फुटकर विक्रेता आंतरिक व्यापार का महत्वपूर्ण अंग हैं। थोक फुटकर व्यापारी से उसकी प्रतिस्पर्द्धा

के बजाय बचाव के कारणों का विश्लेषण कीजिए।

2. विभागीय भंडार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए। ये शृंखला भंडार या बहुसंख्यक दुकानों से किस प्रकार भिन्न है?
3. उपभोक्ता सहकारी भंडार को कम खर्चीला क्यों माना जाता है? थोक फुटकर व्यापारी से संबंधित लाभ क्या हैं?
4. स्थानीय बाजार के बिना अपने जीवन की कल्पना कीजिए। फुटकर दुकान के नहीं होने पर उपभोक्ता को किन कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है?
5. डाक आदेश गृहों की उपयोगिता का वर्णन कीजिए। इनके द्वारा किस प्रकार की वस्तुएँ दी जाती हैं? स्पष्ट कीजिए।

परियोजना कार्य/क्रियाकलाप

1. अपने क्षेत्र के विभिन्न स्थायी फुटकर विक्रेताओं की पहचान कीजिए तथा उनका वर्गीकरण कीजिए।
2. क्या आप अपने क्षेत्र में ऐसे किसी विक्रेता को जानते हैं जो पुरानी वस्तुओं का विक्रय करता हो? उन उत्पादों का वर्गीकरण करें जिसमें वह व्यवहार करता है। उनमें से कौन-से उत्पाद पुनः विक्रय योग्य हैं? इस प्रकार की सूची बनाकर अपना निष्कर्ष निकालें।
3. फुटकर व्यापार के अतीत एवं भविष्य के तुलनात्मक विश्लेषण पर संक्षिप्त निबंध लिखिए और कक्षा में चर्चा कीजिए।
4. अपने अनुभवों के आधार पर दो फुटकर भंडारों की तुलना करें जो एक समान वस्तुएँ/उत्पाद बेचते हैं। उदाहरणार्थ एक ही तरह का सामान जनरल स्टोर एवं डिपार्टमेंटल स्टोर में बिकता है। आप इन स्टोरों में बिकने वाले उत्पादों के मूल्य, सेवा, गुणवत्ता एवं सुविधाओं में किस प्रकार की समानता एवं विविधता पाते हैं?

भारत सरकार द्वारा 1 जुलाई, 2017 को माल एवं सेवा कर जी.एस.टी. पारित किया गया है। जी.एस.टी. (GST) के अन्तर्गत विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं को निर्धारित दरों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। ये दरें हैं– 0%, 5%, 12%, 18% और 28%। आपसे अपेक्षित है कि आप अखबार, मीडिया, इंटरनेट और व्यावसायिक पत्रिकाओं से जी.एस.टी. सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित करें और नीचे दिए गए माल एवं सेवाओं को 5 जी.एस.टी. दरों पर व्यवस्थित करें।

परियोजना कार्य : विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं के लिए जी.एस.टी. दरों का वर्गीकरण

मदें	कर रहित	5 प्रतिशत	12 प्रतिशत	18 प्रतिशत	28 प्रतिशत
जूट					
अख़बार					
चाय/कॉफी					
केश शैम्पु					
कपड़े धोने की मशीन					
मोटर साइकिल					
सब्जियाँ					
दूध					
दही					

नमक					
मसाले					
कैरोसिन					
पतंग					
1000 रु. से ऊपर के वस्त्र					
पनीर					
घी					
फलों का जूस					
भुजिया					
आयुर्वेदिक दवाएँ					
सिलाई मशीन					
मोबाइल फोन					
कैचप और सॉस					
कॉपियाँ					
अभ्यास पुस्तिका					
चश्में					
खाद					
बिस्किट					
पास्ता					
पेस्ट्रीज एवं केक					
जैम					
पानी					
स्टील					
कैमरा					
स्पीकर और मॉनीटर					
एल्युमीनियम फॉइल					
सी.सी.टी.वी.					
टेलीकॉम सेवाएँ					
ब्रांडेड पोशाक					

11109CH11

अध्याय 11

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

अधिगम उद्‌देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप :

- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का अर्थ समझ सकेंगे;
- यह बता सकेंगे कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार घरेलू व्यापार से किस प्रकार से भिन्न है?
- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे;
- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लाभों का वर्णन कर सकेंगे;
- निर्यात सौदों के क्रियान्वयन से संबद्‌ध विभिन्न महत्वपूर्ण प्रलेखों की चर्चा कर सकेंगे।
- अंतर्राष्ट्रीय इकाइयों को मिलने वाले विभिन्न प्रलोभनों एवं योजनाओं की पहचान कर सकेंगे।
- विदेशी व्यापार के प्रवर्तन के लिए देश में स्थापित विभिन्न संगठनों की भूमिका की पहचान कर सकेंगे एवं उसे बता सकेंगे।
- विश्व स्तर के प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों एवं समझौतों को सूचीबद्‌ध कर सकेंगे तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं विकास के प्रवर्तन में उनकी भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।

सुधीर मनचंदा मोटर वाहनों के कलपुर्जों का एक छोटा सा विनिर्माता है। उसका कारखाना गुड़गाँव में स्थित है जिसमें 55 कर्मचारी काम करते हैं तथा इसमें संयंत्र एवं मशीनों में 92 लाख रु का निवेश किया गया है। घरेलू बाजार में मंदी के कारण अगले कुछ वर्षो तक बिक्री बढ़ने की कोई संभावना नहीं है। अब वह बाह्य बाजार में संभावनाओं को तलाश रहा है। उसके कई प्रतियोगी पहले से निर्यात व्यापार में लगे हुए हैं। इसी प्रकार के व्यवसाय उसके एक घनिष्ट मित्र से बातचीत में यह पता लगा कि मोटर वाहन के विभिन्न भाग एवं इससे जुड़े अन्य सामान की दक्षिण-पूर्व एशिया एवं मध्य-पूर्व के देशों में अच्छा खासा बाजार है। लेकिन उसने यह भी बताया कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में व्यापार करना देश के भीतर व्यापार करने जैसा नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय अधिक जटिल है क्योंकि बाहर की विपणन परिस्थितियां देश की व्यवसाय संबंधी परिस्थितियों से भिन्न होती हैं।

श्री मनचंदा को यह ज्ञान नहीं है कि वह बाह्य व्यवसाय को कैसे जमाए। क्या उसे दूसरे देशों में बैठे ग्राहकों की पहचान कर उनसे संपर्क साधना चाहिए या उन्हें सीधे माल निर्यात कर देना चाहिए या फिर उसे अपना माल निर्यात ग्रहों के माध्यम से भेजना चाहिए जो कि दूसरे के निर्मित माल का निर्यात करने में विशिष्टता प्राप्त किये हुए हैं।

श्री मनचंदा का पुत्र, जो हाल ही में अमेरिका से एम.बी.ए. करने के पश्चात् लौटा है, ने सुझाव दिया कि उन्हें अपनी निजी फैक्टरी बैंकाक में लगानी चाहिए जिससे कि दक्षिण-पूर्व एशिया एवं मध्य-पूर्व के देशों के ग्राहकों को माल की आपूर्ति की जा सके। वहाँ कारखाना लगाने से भारत से माल भेजने पर परिवहन व्यय की बचत होगी। इससे उनकी विदेश में ग्राहकों से नजदीकियां भी बढ़ेंगी।

श्री मनचंदा पशोपेश में है कि क्या करें जैसा उनके मित्र ने विदेशों से व्यापार करने में आने वाली कठिनाइयों के संबंध में बताया। वह सोच रहा है कि क्या वास्तव में वैश्विक बाजार में प्रवेश किया जाए। उन्हें यह भी नहीं पता है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रवेश के कौन-कौन से मार्ग हैं तथा उनमें से कौन-सा श्रेष्ठतम है।

11.1 परिचय

पूरे विश्व के विभिन्न देशों में वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं उनके विक्रय के तरीकों में आधारभूत परिवर्तन आ रहे हैं। जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएँ अभी तक आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को प्राप्त करने में लगी थीं, अब उन्हें विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं के एकत्रीकरण एवं आपूर्ति के लिए अधिक से अधिक दूसरों पर आश्रित होना पड़ रहा है। अपने देश की सीमाओं के पार व्यापार एवं विनियोग के बढ़ने के कारण अब देश अकेले नहीं पड़ रहे हैं।

इस क्रांतिकारी परिवर्तन का मुख्य कारण संप्रेषण, तकनीक, आधारभूत ढाँचा आदि के क्षेत्र में विकास है। नये-नये संप्रेषण के माध्यम एवं परिवहन के तीव्र एवं अधिक सक्षम साधनों के विकास ने विभिन्न देशों को एक-दूसरे के नज़दीक ला दिया है। जो देश भौगोलिक दूरी एवं सामाजिक, आर्थिक अंतर के कारण एक-दूसरे से कटे हुए थे, वे अब एक-दूसरे से संवाद कर रहे हैं। विश्व व्यापार संघ (डब्ल्यू.टी.ओ.) एवं विभिन्न देशों की सरकारों के द्वारा किये गये सुधारों का विभिन्न देशों के बीच संवाद एवं व्यावसायिक संबंध की वृद्धि में भारी योगदान रहा है।

आज हम जिस दुनिया में जी रहे हैं, उसमें

वस्तु एवं व्यक्तियों की सीमा पार आवागमन में बाधाएँ बहुत कम हो गई हैं। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएँ आज सीमारहित होती जा रही हैं तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था में समाहित होती जा रही हैं। आश्चर्य नहीं कि आज पूरी दुनिया एक भूमंडलीय गाँव में बदल गई है। आज के युग में व्यवसाय किसी एक देश की सीमाओं तक सीमित नहीं रह गया है। अधिक से अधिक व्यावसायिक इकाइयाँ आज अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रवेश कर रही हैं, जहाँ उन्हें विकास एवं अधिक लाभ के अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

भारत सदियों से अन्य देशों से व्यापार करता रहा है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों से इसने विश्व अर्थव्यवस्था में समाहित होने एवं अपने विदेशी व्यापार एवं निवेश में वृद्धि की प्रक्रिया को पर्याप्त गति प्रदान की है। (देखें बॉक्स 1 भारत वैश्वीकरण की राह पर)।

11.1.1 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय/ व्यापार का अर्थ

जब व्यापारिक क्रियाएँ भौगोलिक सीमाओं की परिधि में होती हैं तो इसे घरेलू व्यापार अथवा राष्ट्रीय व्यापार कहते हैं। इसे आंतरिक व्यापार अथवा घरेलू व्यापार भी कहते हैं। कोई देश अपनी सीमाओं से बाहर विनिर्माण एवं व्यापार करता है तो उसे अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय कहते हैं। अंतर्राष्ट्रीय अथवा बाह्य व्यवसाय को इस प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है– यह वह व्यावसायिक क्रिया है जो राष्ट्र की सीमाओं के पार की जाती है। इसमें न केवल वस्तु एवं सेवाओं का ही व्यापार सम्मिलित है बल्कि पूँजी, व्यक्ति, तकनीक, बौद्धिक संपत्ति, जैसे– पेटेंट्स, ट्रेडमार्क, ज्ञान एवं कॉपीराइट का आदान-प्रदान भी।

भारत वैश्वीकरण की राह पर

सोवियत संघ में कम्यूनिस्ट सरकार के पतन एवं यूरोप तथा अन्यत्र में सुधार कार्यक्रमों के पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय ने उत्थान के नये युग में प्रवेश किया। भारत भी इस प्रगति में अलग-थलग नहीं रहा। उस समय भारत भारी ऋण के बोझ से दबा हुआ था। 1991 में भारत ने अपने भुगतान शेष के घाटे को पूरा करने के लिए कोष जुटाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई.एम.एफ.) गुहार लगाई। आई.एम.एफ. भारत को इस शर्त पर ऋण देने को तैयार हो गया कि भारत ढाँचागत परिवर्तन करेगा जिससे कि ऋण के भुगतान को सुनिश्चित किया जा सके। भारत के पास इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था। ये आई.एम.एफ. द्वारा लगाई गई शर्तें ही थीं जिसके कारण भारत को कमोबेश अपनी आर्थिक नीतियों में उदारीकरण के लिए बाध्य होना पड़ा। तभी से आर्थिक क्षेत्र में काफी बड़ी मात्रा में उदारीकरण आया है।

यद्यपि सुधार प्रक्रिया थोड़ी धीमी हो गई है फिर भी भारत वैश्वीकरण एवं विश्व अर्थव्यवस्था से पूरी तरह जुड़ जाने के मार्ग पर अग्रसर है। एक ओर कई बहुराष्ट्रीय निगम (एम.एन.सी.) अपनी वस्तुओं एवं सेवाओं की बिक्री का भारतीय बाजार में साहस कर रही हैं, वहीं भारतीय कंपनियों ने भी विदेशों में उपभोक्ताओं को अपने उत्पाद एवं सेवाओं के विपणन हेतु अपने देश से बाहर कदम रखे हैं।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि बहुत-से लोग अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का अर्थ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से लगाते हैं। लेकिन यह सत्य नहीं है। इसमें कोई शंका नहीं है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार अर्थात् वस्तुओं का आयात एवं निर्यात ऐतिहासिक रूप से अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का एक महत्त्वपूर्ण भाग रहा है। लेकिन पिछले कुछ समय से अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया है। सेवाओं का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, जैसे– अंतर्राष्ट्रीय यात्रा एवं पर्यटन, परिवहन, संप्रेषण, बैंकिंग, भंडारण, वितरण एवं विज्ञापन काफी अधिक बढ़ गया है। उतनी ही महत्त्वपूर्ण प्रगति विदेशी निवेश में वृद्धि एवं विदेशों में वस्तु एवं सेवाओं के उत्पादन में हुई है। अब कंपनियाँ दूसरे देशों में अधिक विनियोग तथा वस्तु एवं सेवाओं का उत्पादन करने लगी हैं जिससे कि वे विदेशी ग्राहकों के और समीप आ सकें तथा कम लागत पर और अधिक प्रभावी ढंग से उनकी सेवा कर सकें। ये सभी गतिविधियाँ अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का भाग हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय एक व्यापक शब्द है, जो विदेशों से व्यापार एवं वहां वस्तु एवं सेवाओं के उत्पादन से मिलकर बना है।

11.1.2 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के कारण

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का आधारभूत कारण है कि देश अपनी आवश्यकता की वस्तुओं का भली प्रकार से एवं सस्ते मूल्य पर उत्पादन नहीं कर सकते। इसका कारण उनके बीच प्राकृतिक संसाधनों का असमान वितरण अथवा उनकी उत्पादकता में अंतर हो सकता है। उत्पादन के विभिन्न साधन जैसे श्रम, पूँजी एवं कच्चा माल, जिनकी विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन के लिए आवश्यकता होती है, संसाधनों की उपलब्धता अलग-अलग देशों में अलग-अलग होती है। वैसे विभिन्न राष्ट्रों में श्रम की उत्पादकता एवं उत्पादन लागत में भिन्नता विभिन्न सामाजिक-आर्थिक, भौगोलिक एवं राजनैतिक कारणों से होती है। इन्हीं कारणों से यह कोई असाधारण बात नहीं है कि कोई एक देश अन्य देशों की तुलना में श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली वस्तुओं एवं कम लागत पर उत्पादन की स्थिति में हो। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि कुछ देश कुछ चुनिंदा वस्तुओं एवं सेवाओं के लाभ में उत्पादन करने की स्थिति में होते हैं जबकि इन्हीं को अन्य देश उतने ही प्रभावी एवं क्षमता से उत्पादन नहीं कर सकते। इसी कारण से प्रत्येक देश के लिए उन वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन अधिक लाभप्रद रहता है जिनका वह अधिक कुशलतापूर्वक उत्पादन कर सकते हैं तथा शेष वस्तुओं को वह व्यापार के माध्यम से उन देशों से ले सकते हैं जो उन वस्तुओं का उत्पादन कम लागत पर कर सकते हैं। संक्षेप में किसी एक देश का दूसरे देश से व्यापार का यही कारण है और इसी व्यापार को अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय कहते हैं।

आज का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार काफी हद तक ऊपर वर्णित भौगोलिक विशिष्टीकरण का परिणाम है। मूल रूप से किसी एक देश में इसके विभिन्न राज्यों एवं क्षेत्रों के बीच घरेलू व्यापार का कारण

भी यही है। किसी एक देश के विभिन्न राज्य या फिर क्षेत्र उन्हीं वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन के विशेषज्ञ हो जाते हैं जिनके उत्पादन के लिए वह सर्वथा उपयुक्त हैं। उदाहरण के लिए, भारत में पश्चिम बंगाल यदि जूट से तैयार वस्तुओं के उत्पादन में विशिष्टता लिए हुए है, तो महाराष्ट्र में मुम्बई एवं इसके आस-पास के क्षेत्र सूती वस्त्रों के उत्पादन में अधिक संलग्न हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी क्षेत्रीय श्रम विभाजन इसी सिद्धांत के आधार पर होता है। अधिकांश विकासशील देश जिनके पास श्रम शक्ति काफी अधिक है सिले/सिलाए वस्त्रों के उत्पादन एवं निर्यात में विशिष्टता लिए हुए हैं। इन देशों के पास पूँजी एवं तकनीकी ज्ञान की कमी है। इसीलिए यह टैक्सटाइल मशीनें विकसित देशों से आयात करते हैं जो इन मशीनों का उत्पादन अधिक कुशलता से करने की स्थिति में हैं।

जो एक देश के लिए सत्य है, वह व्यावसायिक इकाइयों के लिए भी सत्य है। विभिन्न फर्म भी अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय से जुड़कर उन वस्तुओं का आयात करती हैं जिन्हें वह दूसरे देशों से कम मूल्य पर प्राप्त कर सकती हैं तथा दूसरे देशों को उन वस्तुओं का निर्यात करती हैं जहाँ उन्हें अपनी वस्तुओं का अधिक मूल्य प्राप्त हो सकता है। राष्ट्रों एवं फर्मों को अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय से केवल मूल्य का ही लाभ नहीं मिलता है बल्कि और भी बहुत-से लाभ प्राप्त होते हैं। ये दूसरे लाभ भी राष्ट्रों एवं फर्मों को अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय करने के लिए प्रेरित करते हैं। इन लाभों का वर्णन हम बाद के एक अनुभाग में करेंगे।

11.1.3 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय बनाम घरेलू व्यवसाय

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का संचालन एवं प्रबंधन घरेलू व्यवसाय को चलाने से कहीं अधिक जटिल है। विदेशों की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक वातावरण की विविधताओं के कारण व्यावसायिक इकाइयों के लिए घरेलू व्यवसाय में अपनाई जाने वाली रणनीति को विदेशी बाजार में प्रयोग नहीं किया जा सकता। घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में विभिन्न पहलुओं पर अंतर नीचे दिये गये हैं–

(क) क्रेताओं एवं विक्रेताओं की राष्ट्रीयता– व्यावसायिक सौदों के मुख्य पक्षों (क्रेता एवं विक्रेता) की राष्ट्रीयता घरेलू व्यवसाय व अंतर्राष्ट्रीय व्यवसायों में अलग-अलग होती है। घरेलू व्यवसाय में क्रेता एवं विक्रेता दोनों एक ही देश के वासी होते हैं। इसीलिए दोनों पक्ष एक दूसरे को भली-भांति समझते हैं तथा व्यावसायिक लेन-देन करते हैं। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में क्रेता एवं विक्रेता दो भिन्न देशों के होते हैं। भाषा, रुझान, सामाजिक रीतियाँ एवं व्यावसायिक उद्देश्य एवं व्यवहार में अंतर के कारण एक-दूसरे से संवाद एवं व्यावसायिक सौदों को अंतिम रूप देना अपेक्षाकृत अधिक कठिन होता है।

(ख) अन्य हितार्थियों की राष्ट्रीयता– घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में अन्य हितार्थी, जैसे– कर्मचारी, आपूर्तिकर्ता, अंशधारक/

साझीदार एवं सामान्य जनता जिनका व्यावसायिक इकाइयों से वास्ता पड़ता है, उनकी राष्ट्रीयता भी भिन्न होती है। घरेलू/ आंतरिक व्यवसाय में यह सभी अदाकार एक ही देश के होते हैं इसलिए इनके मूल्यों एवं व्यवहार में अपेक्षाकृत अधिक अनुरूपता होती है, जबकि अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में इकाइयों को अलग देशों के हितार्थियों के मूल्यों एवं आकांक्षाओं को ध्यान में रखना होता है।

(ग) उत्पादन के साधनों में गतिशीलता– देश की सीमाओं की तुलना में अन्य देशों के बीच श्रम एवं पूँजी जैसे उत्पादन के साधनों की गतिशीलता कम होती है। ये साधन देश की सीमाओं के भीतर स्वतंत्रता से गतिमान रहते हैं जबकि एक देश से दूसरे देश के बीच इनके आवागमन पर कई प्रकार की रोक लगी होती हैं। इनमें कानूनी रोक तो होती है। इनके अतिरिक्त सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण, भौगोलिक प्रभाव एवं आर्थिक स्थिति में भिन्नता भी इनके स्वतंत्र परिगमन में बाधक होते हैं। यह श्रम के लिए विशेष रूप से सत्य है क्योंकि इनके लिए अपने आपको जलवायु, आर्थिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुकूल ढालना कठिन होता है जोकि हर देश की अलग-अलग होतीहैं।

(घ) विदेशी बाजारों में ग्राहक– अंतर्राष्ट्रीय बाजार में क्रेता अलग-अलग देशों से आते हैं इसलिए उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी भिन्न होती है। उनकी रुचि, फैशन, भाषा, विश्वास एवं रीतिरिवाज़, रुझान एवं वस्तुओं को प्राथमिकता में अंतर के कारण न केवल वस्तु एवं सेवाओं की मांग में भिन्नता होती है बल्कि उनके संप्रेषण स्वरूप एवं क्रय व्यवहार में विविधता होती है। सामाजिक-सांस्कृतिक भिन्नता के कारण ही चीन के लोग जहाँ साइकिल पसंद करते हैं, वहीं इसके विपरीत जापानी मोटरसाइकिल की सवारी पसंद करते हैं। इसी प्रकार, जहाँ भारत के लोग दायीं ओर बैठकर कार चलाते हैं, वहीं अमेरिका के लोग उन कारों को बाँयी ओर चलाते हैं जिनमें स्टीयरिंग, ब्रेक आदि बाँयी ओर लगे होते हैं। अमेरिका में लोग अपने टेलीविज़न, मोटर साइकिल या अन्य उपभोग की स्थायी वस्तुओं को क्रय के पश्चात् दो से तीन वर्ष में बदल लेते हैं, वहीं भारत के लोग इनके स्थान पर दूसरी इकाई तब तक नहीं खरीदते जब तक कि वर्तमान इकाइयाँ पूरी तरह से घिस न जाएँ।

इन्हीं विभिन्नताओं के कारण दूसरे देशों के ग्राहकों को ध्यान में रखकर वस्तुओं को तैयार किया जाता है एवं रणनीति तैयार की जाती है। यद्यपि किसी एक देश के ग्राहकों की रुचि एवं पसंद में भी अंतर हो सकते हैं लेकिन विदेशों में अपेक्षाकृत अधिक होतेहैं।

(ङ) व्यवसाय पद्धतियों एवं आचरण में अंतर– कई देशों को लें तो उनमें

व्यवसाय पद्धतियों एवं आचरणों में बहुत अधिक अंतर पाएंगे जबकि एक ही देश के भीतर इतना अंतर नहीं होगा। दो देश सामाजिक-आर्थिक विकास, उपलब्धता, आर्थिक आधारभूत ढाँचा एवं बाजार समर्थित सेवाएँ एवं व्यवसाय संबंधी रीति एवं आचरण के क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक वातावरण एवं ऐतिहासिक अवसरों के कारण एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। अंतर के इन्हीं कारणों से अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश की इच्छुक व्यावसायिक इकाइयाँ अपनी उत्पादन, वित्त, मानव संसाधन एवं विपणन योजनाओं को अंतर्राष्ट्रीय बाजार में व्याप्त परिस्थितियों के अनुसार ढालती हैं।

(च) राजनीतिक प्रणाली एवं जोखिमें– सरकार, राजनीतिक दल प्रणाली, राजनीतिक विचारधारा, राजनीतिक जोखिमें आदि जैसे– राजनीतिक तत्व व्यवसाय प्रचालन को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं।

एक व्यवसायी अपने देश के राजनीतिक वातावरण से भली-भांति परिचित होता है तथा इसे वह समझता है तथा व्यावसायिक गतिविधियों पर इसके प्रभाव का अनुमान लगा सकता है लेकिन अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में ऐसा नहींहै। अलग-अलग देशों का राजनीतिक वातावरण अलग-अलग होता है। राजनीतिक वातावरण की भिन्नता एवं व्यवसाय पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को समझने के लिए विशेष प्रयत्न करना होता है। चूँकि राजनैतिक वातावरण बदलता रहता है इसलिए जिस देश से व्यापार करना है, उसमें समय-समय पर हो रहे राजनैतिक परिवर्तनों पर नज़र रखनी आवश्यक है तथा विभिन्न राजनैतिक जोखिमों का सामना करने के लिए रणनीति बनायी जाती है।

किसी अन्य बाहर के देश के राजनैतिक वातावरण की सबसे बड़ी समस्या है कि यह देश अपने ही देश के उत्पाद एवं सेवाओं को अन्य देशों की वस्तुओं एवं सेवाओं की अपेक्षा पसंद करते हैं। अपने ही देश में व्यवसाय कर रही फर्मों के लिए यह कोई समस्या नहीं है लेकिन जो फर्में दूसरे देशों को वस्तु एवं सेवाएँ निर्यात करना चाहती हैं या फिर दूसरे देश में अपने संयंत्र लगाना चाहती हैं, यह बहुत बड़ी कठिनाई पैदा करती है।

(छ) व्यवसाय के नियम एवं नीतियाँ– प्रत्येक देश अपने सामाजिक-आर्थिक वातावरण एवं राजनीतिक विचारधारा के अनुसार व्यवसाय के नियम एवं कानून बनाता है। ये नियम कानून एवं आर्थिक नीतियाँ देश की सीमाओं में लगभग समान रूप से लागू होती हैं लेकिन कई देशों को लेते हैं तो इनमें बहुत अधिक अंतर होता है। किसी एक देश के सीमा शुल्क एवं कर संबंधी नीतियाँ, आयात कोटा प्रणाली, आर्थिक सहायता एवं अन्य नियंत्रण अन्य देशों के समान नहीं होते हैं तथा विदेशी

वस्तुओं, सेवाओं एवं पूँजी के साथ भेदभाव बरतते हैं।

(ज) व्यावसायिक लेन-देनों के लिए प्रयुक्त मुद्रा– आंतरिक एवं बाह्य व्यवसाय में एक और महत्वपूर्ण अंतर है। बाह्य देशों की मुद्राएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। विनिमय दर अर्थात् किसी एक देश की मुद्रा का मूल्य परिवर्तित होता रहता है। इससे अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में कार्यरत फर्म के लिए अपनी वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करना एवं विदेशी विनिमय के जोखिमों से सुरक्षा कठिन हो जाती है।

11.1.4 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का क्षेत्र

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से अधिक व्यापक होता है। इसमें न केवल अंतर्राष्ट्रीय व्यापार (वस्तु एवं सेवाओं का आयात एवं निर्यात) सम्मिलित है बल्कि और भी बहुत-से कार्य हैं जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय की प्रमुख क्रियाएं निम्नलिखित हैं–

(क)वस्तुओं का आयात एवं निर्यात– व्यापार की वस्तुओं से अभिप्राय उन मूर्त वस्तुओं से है, अर्थात् जिन्हें हम देख सकते हैं एवं स्पर्श कर सकते हैं। जब हम इस संदर्भ में देखते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यापार वस्तुओं के निर्यात का अर्थ है– मूर्त वस्तुओं को अन्य देशों को भेजना तथा इनके आयात का अर्थ है– मूर्त वस्तुओं को बाह्य देश से अपने देश में लाना। व्यापारिक वस्तुओं के आयात-निर्यात, अर्थात् वस्तुओं के व्यापार में मूर्त वस्तुएँ ही सम्मिलित होती हैं तथा सेवाओं में व्यापार का भाग नहीं होता है।

(ख)सेवाओं का आयात एवं निर्यात– सेवाओं के आयात निर्यात में अमूर्त वस्तुओं का व्यापार होता है। इसी अमूर्त लक्षण के कारण सेवाओं में व्यापार को अदृश्य व्यापार भी कहते हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सेवाओं का व्यापार होता है, जिनमें सम्मिलित हैं– पर्यटन एवं यात्रा, भोजनालय एवं विश्राम (होटल एवं जलपान गृह) मनोरंजन, परिवहन, पेशागत सेवाएँ (जैसे– प्रशिक्षण, भर्ती, परामर्श देना एवं अनुसंधान), संप्रेषण (डाक, टेलीफोन, फैक्स, कूरियर एवं अन्य श्रव्य दृश्य), निर्माण एवं इंजीनियरिंग, विपणन (थोक विक्रय, फुटकर विक्रय, विज्ञापन, विपणन अनुसंधान एवं भंडारण), शैक्षणिक एवं वित्तीय सेवाएँ (जैसे– बैंकिग एवं बीमा)। इनमें से पर्यटन एवं परिवहन व्यावसायिक सेवाओं के विश्व व्यापार के प्रमुख अंग हैं।

(ग) लाइसेंस एवं फ्रैंचाइजी– अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश का एक और मार्ग है किसी दूसरे देश में वहीं के व्यवसासी को कुछ फीस के बदले आपके अपने ट्रेडमार्क, पेटेंट या कॉपी-राइट के अंतर्गत वस्तुओं के उत्पादन एवं विक्रय की अनुमति देना। लाइसेंस प्रणाली के अंतर्गत ही विदेशों में स्थानीय पेप्सी एवं कोकाकोला उत्पादन एवं विक्रय

तालिका 11.1 घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में कुछ प्रमुख अंतर

आधार	घरेलू व्यवसाय	अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय
1. क्रेता एवं विक्रेताओं की राष्ट्रीयता	घरेलू व्यावसायिक लेन-देन में एक ही देश के व्यक्ति अथवा संगठन भाग लेते हैं।	अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में विभिन्न देशों की राष्ट्रीयता प्राप्त लोग एवं संगठन भाग लेते हैं।
2. अन्य हितार्थियों की राष्ट्रीयता	अनेकों दूसरे हितार्थी जैसे आपूर्तिकर्ता, कर्मचारी, मध्यस्थ, अंशधारक एवं साझेदार सामान्यतः एक ही देश के नागरिक होते हैं।	अन्य दूसरे हितार्थी आपूर्तिकर्त्ता, कर्मचारी, मध्यस्थ, अंशधारक एवं साझेदार अलग-अलग देशों से होते हैं।
3. उत्पादन के साधनों की गतिशीलता	एक देश की सीमाओं में उत्पादन के साधन जैसे श्रम एवं पूँजी अपेक्षाकृत अधिक गतिशील होते हैं।	विभिन्न देशों के बीच उत्पादन के साधन जैसे- श्रम एवं पूँजी अपेक्षाकृत कम गतिशील होते हैं।
4. बाजार में ग्राहकों के स्वरूप में भिन्नता	घरेलू बाजार में अपेक्षाकृत अधिक समरूपता पाई जाती है।	अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में भाषा प्राथमिकताओं रीति-रिवाजों आदि की भिन्नता के कारण समरूपता का अभाव रहता है।
5. व्यवसाय की प्रणालियों एवं व्यवहार में भिन्नता	एक देश की सीमाओं के भीतर व्यवसाय की प्रणालियों एवं व्यवहार में अधिक समरूपता पाई जाती है।	विभिन्न देशों में व्यवसाय की पद्धतियाँ एवं व्यवहार भी भिन्न होते हैं।
6. राजनैतिक प्रणालियाँ एवं जोखिमें	घरेलू व्यवसाय को एक ही देश की राजनैतिक प्रणाली एवं जोखिमों से वास्ता प\ड़ता है।	अलग-अलग देशों की राजनैतिक प्रणालियों के स्वरूप एवं जोखिमों की सीमा अधिक होती है जो कभी-कभी अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में बाधक हो जाती हैं।
7. व्यवसाय संबंधित नियम एवं नीतियाँ	घरेलू व्यवसाय में, एक ही देश के नियम, कानून, नीतियाँ एवं कर प्रणाली लागू होती हैं।	अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में लेन-देन पर बहुत से देशों के नियम, कानून एवं नीतियाँ सीमा शुल्क एवं कोटी आदि लागू होते हैं।
8. व्यवसाय में प्रयुक्त मुद्रा	अपने देश की मुद्रा प्रयोग की जाती है।	अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में लेन-देन एक से अधिक देशों की मुद्रा में होता है।

करते हैं। फ्रैंचाइजी भी लाइसेंस प्रणाली के समान है लेकिन यह सेवाओं के संदर्भ में प्रयुक्त होती है। उदाहरणार्थ मैकडोनाल्ड्स फ्रैंचाइजी प्रणाली के द्वारा ही पूरे विश्व में त्वरित खाद्य जलपान गृह चलाते हैं।

(घ) विदेशी निवेश– विदेशों में निवेश करना अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का एक और महत्वपूर्ण प्रकार है। विदेशी निवेश में कुछ वित्तीय प्रतिफल के बदले विदेशों में धन का निवेश किया जाता है। विदेशी निवेश दो प्रकार के हो सकते हैं- प्रत्यक्ष एवं पेटिका निवेश।

प्रत्यक्ष निवेश में एक कंपनी किसी देश में वस्तु एवं सेवाओं के उत्पादन एवं विपणन के लिए वहाँ संयंत्र एवं मशीनों जैसी परिसंपत्तियों में प्रत्यक्ष निवेश करती है। प्रत्यक्ष निवेश निवेशक को विदेशी कंपनी में नियंत्रण का अधिकार देता है। इसे प्रत्यक्ष विदेशी निवेश अर्थात् एफ.डी.आई. कहते हैं। जब किसी एक या अधिक विदेशी व्यवसायी के साथ उत्पादन एवं विपणन में धन लगाया जाता है तो इस क्रिया को संयुक्त उपक्रम कहते हैं। यदि कोई कंपनी चाहती है तो वह विदेशी उपक्रम में 100 प्रतिशत निवेश कर पूर्ण रूप से अपने स्वामित्व में एक सहायक कंपनी की स्थापना कर सकती है। इस प्रकार से उस सहायक कंपनी के विदेशों में व्यवसाय पर इसका पूरा नियंत्रण होगा। दूसरी ओर, एक पेटिका निवेश एक कंपनी का दूसरी कंपनी में उसके शेयर खरीद या फिर ऋण के रूप में निवेश होता है। निवेशक कंपनी को लाभांश या ऋण पर ब्याज के रूप में आय होती है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के समान पेटिका निवेश में निवेशक उत्पादन एवं विपणन क्रियाओं में लिप्त नहीं होता है। इसमें विदेशों में शेयर, बॉंड, बिल या नोट में निवेश कर या विदेशी व्यावसायिक फर्मों को ऋण देकर उनसे आय प्राप्त होती है।

11.1.5 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के लाभ

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में अनेक जटिलताओं एवं जोखिमों के होते हुए भी यह राष्ट्रों एवं व्यावसायिक फर्मों के लिए महत्वपूर्ण है। इससे उन्हें अनेक लाभ हैं। पिछले वर्षों में प्राप्त इन लाभों के कारण ही विभिन्न राष्ट्रों के बीच व्यापार एवं निवेश का विस्तार हुआ है। परिणामस्वरूप वैश्वीकरण में आशातीत वृद्धि हुई है। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के विभिन्न देशों एवं फर्मों के लाभों का वर्णन नीचे किया गया है–

राष्ट्रों को लाभ

(क) विदेशी मुद्रा का अर्जन– अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय से एक देश को विदेशी मुद्रा के अर्जन में सहायता मिलती है जिसे वह पूँजीगत वस्तुओं एवं उर्वरक, फार्मास्यूटिकल उत्पाद एवं अन्य बहुत-सी ऐसी उपभोक्ता वस्तुएँ जो अपने देश में उपलब्ध नहीं हैं, उनके आयात पर व्यय करता है।

(ख) संसाधनों का अधिक क्षमता से उपयोग– जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का संचालन एक सरल सिद्धांत पर किया जाता है-उन वस्तुओं का उत्पादन करें जिसे आपका देश अधिक क्षमता से कर सकता है तथा आधिक्य उत्पादन को दूसरे देशों के उन उत्पादों से विनिमय कर लें जिनका वे अधिक क्षमता से उत्पादन कर सकते हैं। जब राष्ट्र इस सिद्धांत पर व्यापार करते हैं तो वे यदि सभी वस्तु एवं सेवाओं का स्वयं ही उत्पादन करें, तो इससे अधिक उन वस्तुओं का उत्पादन कर सकेंगे जिनका वह भली-भाँति उत्पादन कर सकते हैं। इस प्रकार से सभी देशों की वस्तु एवं सेवाओं को एकत्रित कर उसे समानता के आधार पर उनमें वितरित कर दिया जाए तो इससे व्यापार कर रहे सभी देशों को लाभ होगा।

(ग) विकास की संभावनाओं एवं रोजगार के अवसरों में सुधार– यदि उत्पादन केवल घरेलू उपभोग के लिए किया जाएगा तो इससे देश के विकास एवं रोजगार की संभावनाओं में रुकावट पैदा होगी। अनेक देश, विशेषतः विकासशील देश बड़े पैमाने पर उत्पादन की अपनी योजनाओं को इसलिए कार्यान्वित नहीं कर सके क्योंकि घरेलू बाजार में आधिक्य उत्पादन की खपत नहीं थी इसीलिए वह रोजगार के अवसर भी पैदा नहीं कर सके।

कुछ समय बाद कुछ देश, जैसे- सिंगापुर, दक्षिण कोरिया एवं चीन ने विदेशों में अपने माल की बिक्री पर ध्यान दिया तथा निर्यात करो एवं फलो-फूलो की रणनीति अपनाई एवं शीघ्र ही संसार के नक्शे में चोटी के निष्पादक बन गये। इससे न केवल उनके विकास के अवसर बढ़े बल्कि इनके देशवासियों के लिए रोजगार के अवसर भी पैदा हुए।

(घ) जीवन स्तर में वृद्धि– यदि वस्तु एवं सेवाओं का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार नहीं होता तो विश्व समुदाय के लिए दूसरे देशों में उत्पादित वस्तुओं का उपभोग संभव नहीं होता। आज वह इनका उपभोग कर स्वयं भी उच्च जीवन स्तर का आनन्द ले रहे हैं।

फर्मों को लाभ

(क) उच्च लाभ की संभावनाएँ– अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में घरेलू व्यवसाय की तुलना में अधिक लाभ प्राप्त होता है। जब घरेलू बाजार में मूल्य कम हो तो उन देशों में माल बेचकर लाभ कमाया जा सकता है जिनमें मूल्य अधिक है।

(ख) बढ़ी हुई क्षमता का उपयोग– कई इकाइयाँ घरेलू बाजार में उनकी वस्तुओं की मांग से कहीं अधिक क्षमता स्थापित कर लेती हैं। बाह्य विस्तार एवं अन्य देशों के ग्राहकों से आदेश प्राप्त करने की योजना के द्वारा वह अपनी अतिरिक्त उत्पादन क्षमता के उपयोग की सोच सकते हैं तथा व्यवसाय

की लाभप्रदता को बढ़ा सकते हैं। बड़े पैमाने पर उत्पादन से अनेक लाभ प्राप्त होते हैं जिससे उत्पादन लागत में कमी आती है तथा प्रति इकाई लाभ में वृद्धि होती है।

(ग) विकास की संभावनाएँ– व्यावसायिक इकाइयों में उस समय निराशा व्याप्त हो जाती है, जब घरेलू बाजार में उनके उत्पादों की मांग में ठहराव आने लगता है। ऐसी इकाइयाँ विदेशी बाजार में प्रवेश कर अपने विकास के अवसर काफी हद तक बढ़ा सकती हैं। यही कारण है जिसने विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों को विकासशील देशों के बाजार में प्रवेश के लिए प्रेरित किया है। जब उनके अपने देश में मांग लगभग परिपूर्णता पर पहुँच गयी, तभी विकसित देशों में उनकी वस्तुओं को बहुत पसंद किया जाने लगा तथा वहाँ इनकी मांग बड़ी तेजी से बढ़ी।

(घ) आंतरिक बाजार में घोर प्रतियोगिता से बचाव– जब आंतरिक बाजार में गहन प्रतियोगिता हो, तब पर्याप्त विकास के लिए अंतर्राष्ट्रीय व्यापार ही एकमात्र उपाय है। घरेलू बाजार में गहन प्रतियोगिता के कारण कई कंपनियाँ अपने उत्पादों के लिए बाजार की तलाश में विदेशों को पलायन करती हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय इस प्रकार से उन फर्मों के लिए विकास की सीढ़ी का काम करता है जिन्हें घरेलू बाजार में भारी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ रहा है।

(ङ) व्यावसायिक दृष्टिकोण– कई कंपनियों के अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का विकास उनकी व्यावसायिक नीतियों अथवा रणनीतिगत प्रबंधन का एक भाग है। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसायी बनने की आकांक्षा, विकास की तीव्र इच्छा, अधिक प्रतियोगी होने की आवश्यकता, विविधिकरण की आवश्यकता एवं अंतर्राष्ट्रीयकरण के लाभ प्राप्ति का परिणाम है।

11.2 अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश की विधियाँ

सरल शब्दों में विधि का अर्थ है– कैसे या किस मार्ग से। इसलिए 'अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश की विधि' वाक्य खंड का अर्थ है– अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश के विभिन्न तरीके। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का अर्थ एवं क्षेत्र की परिचर्चा करते समय हमने अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश के कुछ मार्गों के संबंध में बताया। आगे के अनुभाग में हम अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश की कुछ महत्वपूर्ण प्रणालियों पर उनके लाभ एवं सीमाओं सहित परिचर्चा करेंगे। इस चर्चा से आप यह जान जाएँगे कि किन परिस्थितियों में कौन-सी प्रणाली अधिक उपयुक्त है।

11.2.1 आयात एवं निर्यात

निर्यात से अभिप्राय वस्तु एवं सेवाओं को अपने देश से दूसरे देश को भेजने से है। इसी प्रकार से आयात का अर्थ है विदेशों से माल का

क्रयकर अपने देश में लाना। एक फर्म आयात और निर्यात दो तरीकों से कर सकती है प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष आयात/निर्यात। प्रत्यक्ष आयात/निर्यात में फर्म स्वयं विदेशी क्रेता/आपूर्तिकर्ता तक पहुँचती है तथा आयात/निर्यात से संबंधित सभी औपचारिकताओं, जिनमें जहाज में लदान एवं वित्तीयन भी सम्मिलित है, को स्वयं ही पूरा करती है। दूसरी ओर अप्रत्यक्ष आयात/निर्यात वह है जिसमें फर्म की भागीदारी न्यूनतम होती है तथा वस्तुओं के आयात/निर्यात से संबंधित अधिकांश कार्य को कुछ मध्यस्थ करते हैं जैसे अपने ही देश में स्थित निर्यात गृह या विदेशी ग्राहकों से क्रय करने वाले कार्यालय तथा आयात के लिए थोक आयातक। इस प्रकार की फर्में निर्यात की स्थिति में विदेशी ग्राहकों से एवं आयात में आपूर्तिकर्त्ताओं से सीधे व्यवहार नहीं करती हैं।

लाभ

निर्यात के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैंः-

(क)प्रवेश के अन्य माध्यमों की तुलना में अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश की आयात/निर्यात सबसे सरल पद्धति है। यह संयुक्त उपक्रमों की स्थापना एवं प्रबंधन से या विदेशों में स्वयं के स्वामित्व वाली सहायक इकाइयों की तुलना में कम जटिल क्रिया है।

(ख)आयात/निर्यात में संबद्धता कम होती है अर्थात् इसमें व्यावसायिक इकाइयों को उतना धन एवं समय लगाने की आवश्यकता नहीं है जितना कि संयुक्त उपक्रम में सम्मिलित होने या फिर मेहमान देश में विनिर्माण संयंत्र एवं सुविधाओं को स्थापित करने में लगाया जाता है।

(ग) क्योंकि आयात/निर्यात में विदेशों में अधिक निवेश की आवश्यकता नहीं होती है इसीलिए विदेशों में निवेश की जोखिम शून्य होता है या फिर अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश के अन्य माध्यमों की तुलना में यह बहुत ही कम होता है।

आयात/निर्यात की सीमाएँ

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश माध्यम के रूप में आयात/निर्यात की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैंः

(क)आयात/निर्यात में वस्तुओं को भौतिक रूप से एक देश से दूसरे देश को लाया ले जाया जाता है। इसलिए इन पर पैकेजिंग, परिवहन एवं बीमा की अतिरिक्त लागत आती है। विशेष रूप से यदि वस्तुएँ भारी हैं तो परिवहन व्यय आयात/निर्यात में बाधक होता है। दूसरे देश में पहुँचने पर इन पर सीमा शुल्क एवं अन्य कर लगते हैं एवं खर्चे होते हैं। इन सभी खर्चो के प्रभाव स्वरूप उत्पाद की लागत में काफी वृद्धि हो जाती है तो वह कम प्रतियोगी हो जाते हैं।

(ख) जब किसी देश में आयात पर प्रतिबंध लगा होता है तो वहाँ निर्यात नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में फर्मों के पास केवल अन्य माध्यमों का ही विकल्प रह जाता है जैसे लाइसेंसिंग/फ्रैंचाइजिंग या फिर संयुक्त उपक्रम। इनके कारण दूसरे देशों में स्थानीय उत्पादन एवं विपणन के माध्यम से उत्पादों को उपलब्ध कराना संभव हो जाता है।

(ग) निर्यात इकाइयाँ मूलरूप से अपने गृह देश से प्रचालन करती हैं। वे अपने देश में उत्पादन कर उन्हें दूसरे देशों में भेजती हैं। निर्यात फर्मों के कार्यकारी अधिकारियों का अपनी वस्तुओं के प्रवर्तन के लिए अन्य देशों की गिनी चुनी यात्राओं को छोड़कर इनका विदेशी बाजार से और अधिक संपर्क नहीं हो पाता। इससे निर्यात इकाइयाँ स्थानीय निकायों की तुलना में घाटे की स्थिति में रहती है क्योंकि स्थानीय निकाय ग्राहकों के काफी समीप होते हैं तथा उन्हें भली-भांति समझते भी हैं।

उपरोक्त सीमाओं के होते हुए सभी जो फर्में अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय को प्रारंभ कर रहीं हैं उनके लिए आयात/निर्यात ही पहली पसंद है। जैसाकि साधारणतः होता है व्यावसायिक इकाइयाँ विदेशों से व्यापार पहले आयात/निर्यात से ही प्रारंभ करते हैं और जब वह विदेशी बाजार से परिचित हो जाते हैं तो अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय प्रचालन के अन्य स्वरूपों को अपनाने लगते हैं।

11.2.2 संविदा विनिर्माण

संविदा विनिर्माण अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का वह स्वरूप है जिसमें एक फर्म विदेशों में अपनी आवश्यकता के अनुसार घटक एवं वस्तुओं के उत्पादन के लिए स्थानीय विनिर्माता अथवा विनिर्माताओं से अनुबंध कर लेते हैं। ठेके पर विनिर्माण को बाह्य स्रोतीकरण भी कहते हैं। इसके तीन प्रमुख प्रकार होते हैंः

(क) कुछ घटकों का उत्पादन जैसे स्वचालित वाहनों का घटक या फिर जूतों के ऊपर के भाग। इन घटकों को बाद में कार एवं जूते बनाने में प्रयोग में लाया जाता है।

(ख) घटकों को समुच्चय कर अंतिम उत्पाद में परिवर्तित करना जैसे हार्डडिस्क, मदरबोर्ड, फ्लॉपी डिस्क ड्राइव तथा मॉडम चित्त का समुच्चय कर कंप्यूटर बनाना।

(ग) कुछ वस्तुओं का पूर्ण रूप से उत्पादन जैसे सिले सिलाए वस्त्र।

वस्तुओं का उत्पादन अथवा संमुच्चयीकरण विदेशी कंपनियों द्वारा प्रदत्त तकनीक एवं प्रबंध दिशानिर्देश के अनुसार स्थानीय उत्पादकों के द्वारा किया जाता है। इन उत्पादित अथवा समुच्चय की गई वस्तुओं को यह स्थानीय उत्पादक अंतर्राष्ट्रीय फर्मों को सौंप देते हैं जो इन्हें या तो अपने अंतिम उत्पादों के लिए प्रयोग में लाते हैं या फिर अपने गृह देश, मेहमान देश एवं अन्य देशों में अपने ब्रांड के नाम से विक्रय करते हैं। जितने भी प्रमुख ब्रांड हैं जैसे नाइक, री बॉक, लीविस एवं रैंगलर यह सभी अपने उत्पाद अथवा

घटकों का उत्पादन विकासशील देशों में ठेके पर ही कराते हैं।

लाभ

ठेके पर उत्पादन के अंतर्राष्ट्रीय कंपनी एवं विदेशों एवं स्थानीय उत्पादक दोनों को अनेक लाभ हैं। जो इस प्रकारहैंः

(क) इससे अंतर्राष्ट्रीय फर्में बिना उत्पादन सुविधाओं की स्थापना में पूँजी लगाए बड़े पैमाने पर वस्तुओं का उत्पादन करा लेती हैं। यह फर्में दूसरे देशों में पहले से ही उपलब्ध उत्पादन सुविधाओं का उपयोग करती हैं।

(ख) बाह्य देशों में इनकी कोई पूँजी नहीं लगी होती या फिर बहुत कम लगी होती है इसलिए बाह्य देशों में निवेश मे कोई जोखिम नहीं उठानी पड़ती।

(ग) ठेके पर उत्पादन का अंतर्राष्ट्रीय कंपनी को एक और लाभ कम लागत पर उत्पादन या एकत्रीकरण है विशेष रूप से यदि स्थानीय उत्पादनकर्ता ऐसे देशों के हैं जहाँ कच्चामाल एवं श्रम सस्ता है।

(घ) बाह्य देशों के स्थानीय उत्पादकों को भी ठेके पर उत्पादन का लाभ मिलता है। यदि उनकी उत्पादन क्षमता उपयोग में नहीं आ रही है तो ठेके पर उत्पादन का काम एक प्रकार से उन्हें उनके उत्पादों के लिए तैयार बाजार देता है तथा उनकी उत्पादन क्षमताओं के अधिक उपयोग को सुनिश्चित करता है। गोदरेज समूह भारत में ठेका उत्पादन से इसी प्रकार लाभांवित हो रहा है। यह अनुबंध के अधीन कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए नहाने के साबुन का उत्पादन कर रहा है जैसे रैकिट एंड कोलमैन के लिए डिटोल साबुन। इससे इसकी साबुन का उत्पादन के अतिरिक्त क्षमता को उपयोग करने में सहायता मिल रही है।

(ङ) स्थानीय उत्पादक को भी अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में सम्मिलित होने का अवसर मिलता है तथा यदि अंतर्राष्ट्रीय निकाय इन उत्पादित वस्तुओं की अपने देश को आपूर्ति करते हैं या फिर किसी अन्य देश को भेजते हैं तो निर्यात फर्मों को मिलने वाले प्रोत्साहन का लाभ भी मिलता है।

सीमाएँ

संविदा विनिर्माण की अंतर्राष्ट्रीय निकायों स्थानीय उत्पादकों को प्रमुख हानियाँ निम्नलिखित हैंः

(क) स्थानीय फर्में यदि उत्पादन डिजाइन एवं गुणवत्ता मान के अनुरूप कार्य नहीं करती हैं तो इससे अंतर्राष्ट्रीय फर्म को गुणवत्ता उत्पादन की कठिन समस्या पैदा हो सकती है।

(ख) बाह्य देश के स्थानीय उत्पादक का उत्पादन प्रक्रिया पर कोई नियंत्रण नहीं रहता क्योंकि वस्तुओं का उत्पादन अनुबंध में निर्धारित शर्तों एवं विशिष्ट वर्णन के

अनुसार किया जाता है।

(ग) संविदा विनिर्माण के अंतर्गत उत्पादन करने वाली स्थानीय इकाई अपनी इच्छानुसार इस माल को नहीं बेच सकती। इसे अपने माल को अंतर्राष्ट्रीय कंपनी को पूर्व निर्धारित मूल्य पर ही बेचना होगा। खुले बाजार में इन वस्तुओं की मूल्य यदि अुनबंधित मूल्य से अधिक है तो स्थानीय फर्म को इससे कम लाभ प्राप्त होगा।

11.2.3 अनुज्ञप्ति लाइसैंस एवं मताधिकारी

लाइसैंस प्रदान करना एक ऐसी अनुबंधीय व्यवस्था है जिसमें एक फर्म बाह्य देश की दूसरी फर्म को फीस, जिसे रॉयल्टी कहते हैं, के बदले में अपने पेटेंट अधिकार, व्यापार के रहस्य या फिर तकनीक दे देता है। जो फर्म दूसरी फर्म को इस प्रकार का लाइसैंस प्रदान करती है वह लाइसैंस प्रदानकर्ता एवं बाह्यदेश की जो फर्म इस प्रकार के अधिकार प्राप्त करती है को केवल तकनीक का ही अुनज्ञप्ति लाइसेंस नहीं दिया जाता बल्कि फैशन उद्योग में कई डिजाइन कर्ता अपने नाम के प्रयोग करने का लाइसेंस दे देते हैं। कभी-कभी दो इकाइयों के बीच तकनीक का आदान-प्रदान भी होता है। इसी प्रकार से दो फर्मों के बीच ज्ञान, तकनीक एवं पेटेंट अधिकार का पारस्परिक विनिमय होता है। इसे प्रति अनुज्ञप्ति लाइसैंस कहते हैं।

मताधिकारी अनुज्ञप्ति लाइसैंस से बहुत मिलता जुलता है। दोनों में एक प्रमुख अंतर है कि पहले का प्रयोग वस्तुओं उत्पादन एवं विनिमय के लिए होता है तो मताधिकारी का प्रयोग सेवाओं के संदर्भ में किया जाता है। दूसरा अंतर है कि विशेषाधिकार अनुज्ञप्ति से अधिक कठोर होता है। विशेषाधिकार प्रदानकर्ता साधारणतया विशेषाधिकार प्राप्तकर्ताओं अपने व्यवसाय का प्रचालन किस प्रकार से करना चाहिए। इस संबंध में सख्त नियम एवं शर्तें रखते हैं। इन दो अंतरों को छोड़कर विशेष अधिकार अनुज्ञप्ति के समान ही है। जैसा कि अुनज्ञप्ति में होता है विशेषाधिकार समझौते में भी एक पक्ष दूसरे पक्ष को तकनीक, ट्रेडमार्क एवं पेटेन्ट को एक तय प्रतिफल के बदले निश्चित समय के लिए उपयोग करने का अधिकार देता है। अविभावक कंपनी को विशेषाधिकार प्रदानकर्त्ता एवं समझौते के दूसरे पक्ष को विशेषाधिकार प्राप्तकर्ता कहते हैं। फ्रैंचाइजर कोई भी सेवा प्रदान करने वाला जैसे एक जलपान गृह, होटल, यात्रा एजेंसी, बैंक, थोक विक्रेता या फिर फुटकर विक्रेता हो सकता है जिसने कि अपने नाम या ट्रैडमार्क के अधीन सेवाओं के निर्माण एवं विपणन के विशेष तकनीक का विकास किया हो। विशिष्ट तकनीक के कारण ही फ्रैचांइजर अपने प्रतियोगियों से अधिक श्रेष्ठ हो जाता है तथा इससे संभावित सेवा प्रदानकर्ता विशेषाधिकार प्रणाली में सम्मिलित होने के लिए तैयार हो जाते हैं। मैक्डोनाल्ड, पीज़ाहट एवं वॉलमार्ट कुछ अग्रणी विशेषाधिकार प्रदानकर्ता (फ्रैंचाइजर) हैं जो पूरे विश्व में प्रचालन कर रहे हैं।

लाभ

संयुक्त उपक्रम एवं पूर्णस्वामित्व सहायक इकाइयों की तुलना में अनुज्ञप्ति/फ्रैंचाइजिंग विदेशी व्यापार में प्रवेश का सबसे सरल मार्ग है जिसमें परखा हुआ माल/तकनीक होता है तथा जिसमें न अधिक जोखिम है और न ही अधिक निवेश की आवश्यकता। अनुज्ञप्ति के कुछ विशिष्ट लाभ

निम्नलिखित हैं।

(क) अनुज्ञप्ति/फ्रैंचाइजिंग प्रणाली में अनुज्ञप्तिदाता/ फ्रैंचाइजर व्यवसाय को स्थापित करता है एवं इसमें अपनी पूँजी लगाता है। अर्थात् अनुज्ञप्तिदाता/फ्रैंचाइजर एक प्रकार से दूसरे देशों में निवेश करता है। इसीलिए इसे अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश का एक महंगा माध्यम माना गया है।

(ख) बहुत ही कम विदेशी निवेश के कारण अनुज्ञप्तिदाता/फ्रैंचाइजर को विदेशी व्यापार से होने वाली हानि में कोई भागीदारी नहीं होती।

(ग) अनुज्ञप्ति धारक/फ्रैंचाइजी से तब तक पूर्व निर्धारित फीस का भुगतान मिलता रहेगा जब तक कि उसकी व्यावसायिक इकाई में उत्पादन अथवा विक्रय होता रहेगा।

(घ) बाह्य देश के व्यवसाय का प्रबंध अनुज्ञप्ति धारक/फ्रैंचाइजी के द्वारा किया जाता है जो कि एक स्थानीय व्यक्ति होता है। इसीलिए सरकार द्वारा व्यवसाय के अधिग्रहण अथवा उसमें हस्तक्षेप का जोखिम कम होता है।

(ङ) अनुज्ञप्ति धारक/फ्रैंचाइजी क्योंकि एक स्थानीय व्यक्ति होता है। उसे बाजार का अधिक ज्ञान होता है तथा उसके संपर्क सूत्र भी अधिक होते हैं। इसका लाभ अुनज्ञप्ति दाता/फ्रैंचाइजर को अपने विपणन कार्य को सफलतापूर्वक चलाने में मिलता है।

(च) अनुज्ञप्ति/फ्रैंचाइजिंग के अनुबंध की शर्तों के अनुसार इस अनुबंध के पक्षों को ही अुनज्ञप्ति दाता/फ्रैंचाइजर के कॉपीराइट, पेटेंट एवं ब्रांड के नाम का बाह्य देशों में उपयोग करने का कानूनी अधिकार होता है। परिणामस्वरूप अन्य फर्मों, ट्रेडमार्क एवं पेटेंट्स का उपयोग नहीं कर सकती।

सीमाएँ

एक अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के साधन के रूप में अनुज्ञप्ति/विशेषाधिकार (फ्रैंचाइजिंग) की कुछ कमियाँ हैं जो निम्नलिखित हैंः

(क)अनुज्ञप्तिधारक/फ्रैंचाइजी जब आधिकारित वस्तुओं के विनिर्माण एवं विपणन में निपुणता प्राप्त कर लेता है तो उसके द्वारा समान उत्पाद के थोड़े भिन्न ब्रांड के नाम में व्यापार करने का खतरा रहता है। इससे अनुज्ञप्ति दाता/फ्रैंचाइजर को भारी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ सकता है।

(ख) यदि व्यापार के रहस्यों को भली प्रकार से गुप्त नहीं रखा गया तो विदेशी बाजार में दूसरों को इनका ज्ञान हो जायेगा। अनुज्ञप्ति धारक/ फ्रैंइचाइजी की इस चूक के कारण अनुज्ञप्ति दाता/फ्रैंचाइजर को भारी हानि हो सकती है।

(ग) कुछ अवधि के पश्चात् अनुज्ञप्ति दाता/ फ्रैंचाइजर एवं अनुज्ञप्ति धारक/फ्रैंचाइजी के बीच खातों के रखने, रॉयल्टी का भुगतान एवं गुणवत्ता उत्पादों के उत्पादन के संबंध में मानकों का पालन न करना जैसे मामलों पर मतभेद पैदा हो जाते हैं। इन मतभेदों के कारण मुकदमें शुरू हो जाते हैं जिससे दोनों पक्षों को हानि होती है।

11.2.4 संयुक्त उपक्रम

संयुक्त उपक्रम बाह्य बाजार में प्रवेश का एक सामान्य माध्यम है। संयुक्त उपक्रम का अर्थ होता है दो या दो से अधिक स्वतंत्र इकाइयों के संयुक्त स्वामित्व में एक फर्म की स्थापना। व्यापक अर्थों में यह भी संगठन का वह स्वरूप है जिसमें एक लंबी अवधि के लिए सहयोग की अपेक्षा की जाती है। एक संयुक्त स्वामित्व उपक्रम को तीन प्रकार से बनाया जा सकता हैः

(क) विदेशी निवेशक द्वारा स्थानीय कंपनी में हिस्सेदारी का क्रय।

(ख) स्थानीय फर्म द्वारा पूर्व स्थापित विदेशी फर्म में हिस्सा प्राप्त कर लेना।

(ग) विदेशी एवं स्थानीय उद्यमी दोनों ही मिलकर एक न एक उद्यम की स्थापना कर लें।

लाभ

संयुक्त उपक्रम के कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैंः

(क) इस प्रकार के उपक्रमों की समता पूँजी में स्थानीय साझी का भी योगदान होता है, इसलिए अंतर्राष्ट्रीय फर्म पर विश्वव्यापी विस्तार में कम वित्तीय भार पड़ेगा।

(ख) संयुक्त उपक्रमों के कारण बड़ी पूँजी एवं श्रमशक्ति वाली बड़ी योजनाओं को कार्यान्वित करना संभव हो पाता है।

(ग) विदेशी व्यावसायिक इकाइयों को स्थानीय साझी के मेहमान देश की प्रतियोगी परिस्थितियों, संस्कृति, भाषा, राजनीतिक प्रणाली एवं व्यावसायिक पद्धतियों के संबंध में जानकारी का पूरा लाभ प्राप्त होता है।

(घ) कई मामलों में विदेशी व्यापार में प्रवेश करना खर्चीला एवं जोखिम भरा भी होता है। संयुक्त उपक्रम करार के द्वारा इस प्रकार की लागत एवं जोखिम को बाँटने के माध्यम से इनसे बचा जा सकता है।

सीमाएँ

संयुक्त उपक्रम की प्रमुख सीमाओं का वर्णन नीचे किया गया हैः

(क) विदेशी फर्में जो संयुक्त उपक्रम में साझा करती हैं वह अपनी प्रौद्योगिकी एवं व्यापार के राज विदेशी स्थानीय फर्म के साथ बाँटती है इससे प्रौद्योगिकी एवं व्यापार के राज दूसरों को उजागर किये जाने का भय रहता है।

(ख) द्विस्वामित्व व्यवस्था में विरोधाभास की संभावना रहती है जिससे निवेशक इकाइयों के बीच नियंत्रण की लड़ाई हो सकती है।

11.2.5 संपूर्ण स्वामित्व वाली सहायक इकाइयाँ/ कंपनियाँ

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का यह माध्यम उन कंपनियों की पंसद होती है जो अपने विदेशों में परिचालन पर पूर्ण नियंत्रण चाहते हैं। जनक कंपनी अन्य देश में स्थापित कंपनी में 100 प्रतिशत पूँजी निवेश कर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेती है। संपूर्ण

स्वामित्व वाली सहायक कंपनी की स्थापना दो प्रकार से की जा सकती है–

(क) विदेशों में परिचालन प्रारंभ के लिए एक बिलकुल ही नई कंपनी स्थापित करना। इसे 'हरित क्षेत्र उपक्रम' भी कहते हैं।

(ख) दूसरे देश में पहले से ही स्थापित संगठन का अधिग्रहण कर लेना तथा मेहमान देश में इसी इकाई के माध्यम से अपने उत्पादों का उत्पादन एवं संवर्धन करना।

लाभ

विदेश में एक संपूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी के कुछ प्रमुख लाभ नीचे दिए गए हैंः

(क) जनक कंपनी अपने विदेश की क्रियाओं पर पूरा नियंत्रण रख सकती है।

(ख) जनक कंपनी क्योंकि अपनी विदेशी सहायक कंपनी के प्रचलन पर नज़र रखती है इससे इसके प्रौद्योगिकी एवं व्यापार के राज दूसरों पर नहीं खुलते।

सीमाएँ

किसी अन्य देश में पूर्ण रूप से अपने स्वामित्व में सहायक कंपनी की स्थापना की सीमाएँ निम्नलिखित हैंः

(क) जनक कंपनी को विदेशी सहायक कंपनी की पूँजी में 100 प्रतिशत निवेश करना होगा। इस प्रकार का अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय छोटी एवं मध्य आकार की इकाइयों के लिए उपयुक्त नहीं हैं जिनके पास विदेशों में निवेश के लिए पर्याप्त धन नहीं है।

(ख) अब क्योंकि जनक कंपनी को ही विदेशी सहायक कंपनी की 100 प्रतिशत समता

विदेश व्यापार नीति 2015-20

भारतीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और व्यापारिक असंतुलन में कमी लाने के लिए विदेश व्यापार नीति 2015-20 को लागू किया गया है ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं के विदशी व्यापार के लिए स्थिर एवं सतत वातावरण तैयार हो सके। इस नीति में आयात और निर्यात हेतु नियम और सुविधाओं को इस प्रकार जोड़ा गया है कि 'कौशल भारत' जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं को प्रोत्साहन मिल सके और निर्यात संवर्धन एवं विविधता से भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मक मदद मिल सके। इस नीति के अंतर्गत दो प्रमुख योजनाएँ हैं–

1. भारत से वस्तुओं के निर्यात की योजना (MEIS) जिसके कृषि उत्पाद, फल, फूल, सब्जी, चाय, कॉफी, मसाले, हस्तशिल्प, जूट उत्पाद, वस्त्र एवं परिधान, औषधि, शल्य, जड़ी-बूटी (हर्बल), ऑटो-पुर्जे, टेलीकॉम, यातायात, रेलवे, चम\ड़ा उत्पाद, कागज आदि सम्मिलित हैं।
2. भारत से सेवाओं के निर्यात की योजना (SEIS) जिनमें न्यायिक, लेखांकन, वास्तुकला, अभियंत्रण, शैक्षिक, अस्पताल सेवा 5 प्रतिशत पर, होटल और जलपान गृह, यात्रा अभिकरण और यात्रा-परिचालक तथा 3 प्रतिशत की दर पर अन्य व्यापारिक सेवाएँ।

स्रोत ः वार्षिक रिपोर्ट, 2016-17, वाणिज्य मंत्रालय

पूँजी में धन लगाया होता है इसीलिए यदि इसकी विदेशी व्यापारिक कार्य असफल रहते हैं तो उसकी पूरी हानि इसी को वहन करनी होगी।

(ग) कुछ देश अपने देश में अन्य देश के व्यक्तियों द्वारा शतप्रतिशत स्वामित्व वाली सहायक कंपनी की स्थापना के विरुद्ध होते हैं। इस प्रकार से विदेशों में व्यवसाय संचालन को बड़ा राजनीतिक जोखिम उठाना पड़ता है।

11.3 आयात-निर्यात प्रक्रिया

आंतरिक एवं बाह्य व्यवसाय परिचालन में प्रमुख अंतर बाह्य व्यवसाय की जटिलता है। वस्तुओं का आयात एवं निर्यात उतना सीधा एवं सरल नहीं है जितना कि घरेलू बाजार में क्रय एवं विक्रय, क्योंकि विदेशी व्यापार में माल देश की सीमा के पार भेजा जाता है तथा इसमें विदेशी मुद्रा का प्रयोग किया जाता है, इसलिए अपने देश की सीमा को पार करने तथा दूसरे देश की सीमा में प्रवेश करने से पूर्व कई औपचारिकताओं को पूरा करना होता है। आगे के अनुभागों में आयात-निर्यात सौदों को पूरा करने से संबंधित प्रमुख चरणों की चर्चा करेंगे।

11.3.1 निर्यात प्रक्रिया

अलग-अलग निर्यात लेन-देनों के विभिन्न चरणों की संख्या एवं जिस क्रम में यह चरण उठाए जाते हैं, अलग-अलग होते हैं। एक प्रारूपिक निर्यात लेन-देन के निम्नलिखित चरण होते हैं:

(क) पूछताछ प्राप्त करना एवं निर्ख भेजना– संभावित क्रेता विभिन्न निर्यातकों को पूछताछ का पत्र भेजता है जिसमें वह उनसे माल के मूल्य, गुणवत्ता एवं निर्यात से संबंधित शर्तों के संबंध में सूचना भेजने के लिए प्रार्थना करता है। आयातक इस प्रकार विज्ञापन की पूछताछ के संबंध में निर्यातकों को समाचार पत्रों में विज्ञापन के माध्यम से भी सूचित कर सकता है। निर्यातक इस पूछताछ का उत्तर निर्ख के रूप में भेजता है जिसे प्रारूप बीजक कहते हैं। प्रारूप बीजक में उस मूल्य के संबंध में सूचना होती है जिस पर निर्यातक माल को बेचने के लिए तैयार है। इसमें गुणवत्ता, श्रेणी, आकार, वजन, सुपुर्दगी की प्रणाली, पैकेजिंग का प्रकार एवं भुगतान की शर्तों आदि की भी सूचना दी होती है।

(ख) आदेश अथवा इंडैंट की प्राप्ति– यदि संभावित क्रेता (अर्थात् आयातक फर्म) के लिए निर्यात का मूल्य एवं अन्य शर्तें स्वीकार्य हैं, तो वह वस्तुओं को भेजने का आदेश देगा। इस आदेश में जिसे इंडैंट भी कहते हैं, आदेशित वस्तुओं का विवरण, देय मूल्य, सुपुर्दगी की शर्तें, पैकिंग एवं चिह्नांकन का ब्यौरा एवं सुपुर्दगी संबंधी निर्देश होते हैं।

(ग) आयातक की साख का आँकलन एवं भुगतान की गारंटी प्राप्त करना– इंडैंट की प्राप्ति के पश्चात् निर्यातक, आयातक की साख के संबंध में आवश्यक पूछताछ करता है। इस पूछताछ का उद्देश्य माल के आयात

के गंतव्य स्थान पर पहुँचने पर आयातक द्वारा भुगतान न करने के जोखिम का आँकलन करता है। इस जोखिम को कम से कम करने के लिए अधिकांश निर्यातक, आयातक से साख पत्र की माँग करते हैं। साख पत्र आयातक के बैंक द्वारा जारी किया जाता है जिसमें वह निर्यातक के बैंकों को एक निश्चित राशि तक के निर्यात बिलों के भुगतान की गारंटी देता है। अंतर्राष्ट्रीय लेन-देनों के निपटान के लिए भुगतान की सर्वाधिक उपयुक्त एवं सुरक्षित विधि है।

(घ) निर्यात लाइसेंस प्राप्त करना– भुगतान के संबंध में आश्वस्त हो जाने के पश्चात् निर्यातक फर्म निर्यात संबंधी नियमों के पालन की दिशा में कदम उठाती है। भारत में वस्तुओं के निर्यात पर सीमा नियम लागू होते हैं जिनके अनुसार निर्यातक फर्म को निर्यात करने से पहले निर्यात लाइसेंस प्राप्त कर लेना चाहिए। निर्यात लाइसेंस प्राप्त करने के पूर्व महत्त्वपूर्ण अपेक्षाएँ निम्नलिखित हैं :

- भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अधिकृत किसी भी बैंक में खाता खोलना एवं खाता संख्या प्राप्त करना।
- विदेशी व्यापार महानिदेशालय (डी.जी.एफ.टी.)अथवा क्षेत्रीय आयात-निर्यात लाइसेंसिग प्राधिकरण से आयात-निर्यात कोड (आई.ई.सी.) संख्या प्राप्त करना।
- उपर्युक्त निर्यात संवर्द्धन परिषद् के यहाँ पंजीयन कराना।
- निर्यात साख एवं गारंटी निगम (एक्सपोर्ट क्रेडिट एंड गारंटी काउंसिल, ई.सी.जी.सी.) भुगतान प्राप्त न होने के कारण होने वाले जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षा हेतु पंजीकरण कराना।

एक निर्यातक फर्म को आयात-निर्यात कोड (आई.ई.सी.) संख्या अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए क्योंकि इसे कई आयात/निर्यात विलेखों में लिखना होता है। आई.ई.सी. नंबर प्राप्त करने के लिए निर्यातक फर्म को महानिदेशक विदेशी व्यापार (डाइरेक्टर जनरल फॉर फॉरेन ट्रेड, डी.जी.एफ.टी.) के पास आवेदन करना होता है जिसके साथ वह कुछ प्रलेख संलग्न करता है जो इस प्रकार हैं- निर्यात खाता, आपेक्षित फीस की बैंक रसीद, बैंक से एक फार्म पर प्रमाण पत्र, बैंक द्वारा अनुप्रमाणित फोटोग्राफ, गैर आवासी हित का विस्तृत ब्यौरा एवं जिन फर्मों से सावधान रहना हैं उनसे किसी प्रकार का संबंध नहीं है, इस आशय की घोषणा। प्रत्येक निर्यातक के लिए उपयुक्त निर्यात संवर्द्धन परिषद् के यहाँ पंजीयन कानूनी बाध्यता है। भारत सरकार द्वारा विभिन्न वर्गों के उत्पादों के संवर्द्धन एवं विकास के लिए कई निर्यात संवर्द्धन परिषदों की स्थापना की गई है, जैसे कि इंजीनियरिंग निर्यात संवर्द्धन परिषद् (ई.ई.पी.सी.) एवं अपैरल निर्यात संवर्द्धन परिषद (ए.ई.पी.सी.) के संबंध में चर्चा आगे एक अनुभाग में की जाएगी। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि किसी भी निर्यातक के लिए किसी उपयुक्त निर्यात

संवर्द्धन परिषद् का सदस्य बनना एवं पंजीयन-सदस्यता प्रमाण पत्र (आर.सी.एम.सी.) प्राप्त करना जरूरी है, तभी वह सरकार से निर्यातक फर्मों को मिलने वाले लाभों को प्राप्त कर पाएगा।

विदेशों से भुगतान को राजनीतिक एवं वाणिज्यिक जोखिमों से संरक्षण के लिए ई.सी.जी.सी. के पास पंजीकरण कराना आवश्यक है। पंजीकरण करा लेने पर निर्यातक फर्मों को व्यापारिक बैंक एवं अन्य वितीय संस्थानों से वित्तीय सहयोग भी प्राप्त हो जाता है।

(ङ) **माल प्रेषण से पूर्व वित्त करना–** आदेश होने एवं साख-पत्र की प्राप्ति के पश्चात् निर्यातक माल के प्रेषण से पूर्व के वित्त हेतु अपने बैंक के पास जाता है जिससे कि वह निर्यात के लिए उत्पादन कर सके। प्रेषण-पूर्व वित्त वह राशि है जिसकी निर्यातक को कच्चा माल एवं अन्य संबंधित चीजों का क्रय करने, वस्तुओं के प्रक्रियन एवं अन्य संबंधित चीजों का क्रय करने, वस्तुओं के प्रक्रियन एवं पैकेजिंग तथा वस्तुओं के माल लदान बंदरगाह तक परिवहन के लिए आवश्यकता होती है।

(च) **वस्तुओं का उत्पादन एवं अधिप्राप्ति–** माल के लदान से पूर्व बैंक से वित्त की प्राप्ति हो जाने पर निर्यातक आयातक के विस्तृत वर्णन के अनुसार माल को तैयार करेगा। फर्म या तो इन वस्तुओं का स्वयं उत्पादन करेगी अथवा इन्हें बाजार से क्रय करेगी।

(छ) जहाज लदान निरीक्षण– भारत सरकार ने यह सुनिश्चित करने की दिशा में कई कदम उठाए हैं कि देश से केवल अच्छी गुणवत्ता वाली वस्तुओं का ही निर्यात हो। इनमें से एक कदम सरकार द्वारा मनोनीत सर्वथा योग्य एजेन्सी द्वारा कुछ वस्तुओं का अनिवार्य निरीक्षण है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सरकार ने 'निर्यात गुणवत्ता नियंत्रण एवं निरीक्षण अधिनियम-1963' पारित किया। सरकार ने कुछ एजेंसियों को निरीक्षण एजेंसी के रूप में अधिकृत किया। यदि निर्यात किया जाने वाला माल इस वर्ग के अंतर्गत आता है तो उसे निर्यात निरीक्षण एजेंसी (ई.आई.ए.) अथवा अन्य मनोनीत की गई एजेंसी से संपर्क कर निरीक्षण प्रमाणपत्र प्राप्त करना होगा। इस निरीक्षण अनुवेदन को निर्यात के अवसर पर अन्य निर्यात प्रलेखों के साथ जमा कराया जाएगा। यदि माल का निर्यात सितारा निर्यात गृहों, निर्यात प्रक्रिया अंचल/विशेष आर्थिक अंचल (ई.पी. जेड./एस.ई.जेड.) एवं शत् प्रतिशत निर्यात मूलक इकाइयों (ई.ओ.यू.) के द्वारा किया जा रहा है तो इस प्रकार का निरीक्षण अनिवार्य नहीं होगा। हम इन विशिष्ट प्रकार की निर्यात फर्म के संबंध में आगे के अनुभाग में चर्चा करेंगे।

(ज) **उत्पाद शुल्क की निकासी–** केंद्रीय उत्पादन शुल्क अधिनियम (सेंट्रल एक्साइज टैरिफ एक्ट) के अनुसार वस्तुओं के विनिर्माण में प्रयुक्त माल पर उत्पादन शुल्क का

भुगतान करना होता है। निर्यातक को इसीलिए संबंधित क्षेत्रीय उत्पादन शुल्क कमिश्नर को आवेदन करना होता है। यदि कमिश्नर संतुष्ट हो जाता है तो वह उत्पादन शुल्क की छूट का प्रमाण पत्र दे देगा। लेकिन कुछ मामलों में यदि उत्पादित वस्तुएँ निर्यात के लिए होती हैं तो सरकार उत्पादन शुल्क से छूट प्रदान कर देती है अथवा इसे लौटा देती है। इस प्रकार की छूट अथवा वापसी का उद्देश्य निर्यातक को और अधिक निर्यात के लिए प्रोत्साहित करना एवं निर्यात उत्पादों को विश्व बाजार में और अधिक प्रतियोगी बनाना है। उत्पादन शुल्क की वापसी को शुल्क की वापसी कहते हैं। शुल्क फिरौती योजना को आजकल वित्त मंत्रालय के अधीनस्थ फिरौती/वापसी निदेशालय प्रशासित करता है। यही विभिन्न उत्पादों के फिरौती की दर को निश्चित करता है। वापसी का अनुमोदन एवं भुगतान बंदरगाह/हवाई अड्डे/स्थल सीमा स्टेशन, जिससे माल का निर्यात किया गया है, उसके कस्टम, कमिश्नर अथवा केंद्रीय उत्पाद इंचार्ज के द्वारा किया जाता है।

(झ) उद्गम प्रमाण-पत्र प्राप्त करना– कुछ आयातक देश, किसी विशेष देश से आ रहे माल पर शुल्क की छूट अथवा अन्य कोई छूट देते हैं। इनका लाभ उठाने के लिए आयातक निर्यातक से उद्गम प्रमाण पत्र की माँग कर सकता है। यह प्रमाण पत्र इस बात को प्रमाणित करता है कि वस्तुओं का उत्पादन उसी देश में हुआ है जिस देश ने इसका निर्यात किया है। इस प्रमाण पत्र को निर्यातक के देश में स्थित वाणिज्य दूतावास अधिकारी से प्राप्त किया जा सकता है।

(ञ) जहाज में स्थान का आरक्षण– निर्यातक फर्म जहाज में स्थान के लिए प्रावधान हेतु जहाजी कंपनी को आवेदन करती है। इसे निर्यात के माल का प्रकार, जहाज में लदान की संभावित तिथि एवं गंतव्य बंदरगाह को घोषित करना होता है। जहाज पर लदान के आवेदन की स्वीकृति, के पश्चात् जहाजी कंपनी जहाजी आदेश पत्र जारी करती है। जहाजी आदेश-पत्र जहाज के कप्तान के नाम आदेश होता है कि वह निर्धारित वस्तुओं को नामित बंदरगाह पर सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा निकासी होने पर जहाज पर माल का लदान करा ले।

(ट) पैकिंग एवं माल को भेजना– माल की उचित ढंग से पैकिंग कर उन पर आवश्यक विवरण देंगें, जैसे– आयातक का नाम एवं पता, सकल एवं शुद्ध भार, भेजे जाने वाले एवं गंतव्य बंदरगाहों के नाम एवं उद्गम देश का नाम आदि। निर्यातक तत्पश्चात् माल को बंदरगाह तक ले जाने की व्यवस्था करता है। रेल के डिब्बे में माल का लदान कर लेने के पश्चात् रेल अधिकारी 'रेलवे रसीद' जारी करते हैं जो

माल के मालिकाना अधिकार का काम करता है। निर्यातक इस रेलवे रसीद को अपने एजेंट के नाम को बेचान कर देता है जिससे कि वह बंदरगाह के शहर के स्टेशन पर माल की सुपुर्दगी ले सके।

(ठ) वस्तुओं का बीमा– वस्तुओं को मार्ग में समुद्री जोखिमों के कारण, माल के खो जाने अथवा टूट-फूट जाने के जोखिम से संरक्षण प्रदान करने के लिए निर्यातक बीमा कंपनी से वस्तुओं का बीमा करा लेता है।

(ड) कस्टम निकासी– जहाज में लदान से पहले वस्तुओं की कस्टम से निकासी अनिवार्य है। कस्टम से निकासी प्राप्त करने के लिए निर्यातक जहाजी बिल तैयार करता है। यह मुख्य प्रलेख होता है जिसके आधार पर कस्टम कार्यालय निर्यात की अनुमति प्रदान करता है। जहाजी बिल में निर्यात किये जाने वाले माल, जहाज का नाम, बंदरगाह जहाँ माल उतारना है, अंतिम गंतव्य देश, निर्यातक का नाम एवं पता आदि का विवरण दिया जाता है तत्पश्चात् जहाजी बिल की पाँच प्रति एवं नीचे दिये गए प्रलेख कस्टम घर में तैनात कस्टम मूल्यांकन अधिकारी के पास जमा करा दिए जाते हैं। ये प्रलेख हैं–

- निर्यात अनुबंध अथवा निर्यात आदेश,
- साख पत्र,
- वाणिज्यिक बीजक,
- उद्गम प्रमाण पत्र,
- निरीक्षण प्रमाण पत्र, यदि आवश्यक है तो
- समुद्री बीमा पॉलिसी, एवं
- अधीक्षक।

इन प्रलेखों को जमा करने के पश्चात्, संबंधित बंदरगाह न्यास के पास माल को ढो ले जाने का आदेश प्राप्त करने के लिए जाया जाएगा। ढो ले जाने का आदेश बंदरगाह के प्रवेश द्वार पर तैनात कर्मचारियों के नाम, डॉक में माल के प्रवेश की अनुमति देने के लिए आदेश होता है। ढो ले जाने के आदेश की प्राप्ति माल को बंदरगाह क्षेत्र में ले जाकर उपयुक्त शैड में संगृहित कर दिया जाएगा। निर्यातक को इन सभी औपचारिकताओं की पूर्ति के लिए हर समय उपस्थिति संभव नहीं है, इसीलिए यह कार्य एक एजेंट को सौंप दिया जाता है जिसे निकासी एवं माल भेजने वाला एजेंट कहते हैं।

(ढ) जहाज के कप्तान की रसीद (मेट्स रिसीप्ट) प्राप्त करना– वस्तुओं का अब जहाज पर लदान किया जाएगा जिसके बदले जहाज का कारिंदा अथवा कप्तान/मेट्स रसीद/बंदरगाह अधीक्षक को जारी करेगा। मेट्स रसीद जहाज के नायक के कार्यालय द्वारा जहाज पर माल के लदान पर जारी की जाती है जिसमें जहाज का नाम, माल लदान की तिथि,, पेटींबधन (पैकेज) का विवरण, चिन्ह एवं संख्या, जहाज पर प्राप्ति के समय माल की दशा आदि की सूचना दी जाती है। बंदरगाह का अधीक्षक बंदरगाही शुल्क की प्राप्ति के पश्चात् मेट्स

रसीद को निकासी एवं प्रेषक एजेंट को सौंप देता है।

(ण) भाड़े का भुगतान एवं जहाजी बिल्टी का बीमा– भाड़े की गणना हेतु निकासी एवं प्रेषक एजेंट मेट्स रसीद को जहाजी कंपनी को सौंप देगा। भाड़े के भुगतान के पश्चात् जहाजी कंपनी जहाजी बिल्टी जारी करेगी जो इस बात का प्रमाण है कि जहाजी कंपनी ने माल को नामित गंतव्य स्थान तक ले जाने के लिए स्वीकार कर लिया है। यदि माल हवाई जहाज के द्वारा भेजा जा रहा है तो इस प्रलेख को एयर वे बिल कहेंगे।

(त) बीजक बनाना– माल को भेज देने के पश्चात्, भेजे गए माल का बीजक तैयार किया जाएगा। बीजक भेजे गए माल की मात्रा एवं आयातक द्वारा भुगतान की जाने वाली राशि लिखी होती है। निकासी एवं प्रेषक एजेंट इसे कस्टम अधिकारी से सत्यापित कराएगा।

(थ) भुगतान प्राप्त करना– माल के जहाज से भेज देने के पश्चात् निर्यातक इसकी सूचना आयातक को देगा। माल के आयातक के देश में पहुँच जाने पर उसे माल पर अपने स्वामित्व के अधिकार का दावा करने के लिए एवं उनकी कस्टम से निकासी के लिए विभिन्न प्रलेखों की आवश्यकता होती है, ये प्रलेख हैंः बीजक की सत्यापित प्रति, जहाजी बिल्टी, पैकिंग सूची, बीमा पॉलिसी, उद्गम प्रमाण-पत्र एवं साख-पत्र। निर्यातक इन प्रलेखों को अपने बैंक के माध्यम से इन निर्देशों के साथ भेजता है कि इन प्रलेखों को आयातक को तभी सौंपा जाए जब वह विनिमय विपत्र को स्वीकार कर ले जिसे ऊपर लिखे प्रलेखों के साथ भेजा जाता है। प्रासंगिक प्रलेखों को बैंक को भुगतान प्राप्ति के उद्देश्य से सौंपना प्रलेखों का विनिमयन कहलाता है।

विनिमय विपत्र आयातक को एक निश्चित राशि का निश्चित व्यक्ति अथवा आदेशित व्यक्ति अथवा विलेख के धारक को भुगतान करने का आदेश होता है। यह दो प्रकार का हो सकता है– अधिकार पत्र प्राप्ति पर भुगतान (दर्श विपत्र) अथवा अधिकार प्राप्ति पर स्वीकृति (मुद्दती विपत्र)। दर्श विपत्र में अधिकार पत्रों को आयातक को भुगतान पर ही सौंपा जाता है। जैसे ही आयातक दर्श विपत्र पर हस्ताक्षर करने को तैयार हो जाता है, संबंधित प्रलेखों को उसे सौंप दिया जाता है। दूसरी ओर, मियादी विपत्र में आयातक द्वारा बिल को स्वीकार करने, जिसमें एक निश्चित अवधि जैसे कि तीन मास की समाप्ति पर भुगतान करना होता है, उसे अधिकार प्रलेख सौंपे जाते हैं। विनिमय विपत्र की प्राप्ति पर दर्श विपत्र के होने पर आयातक भुगतान कर देता है और यदि मियादि विपत्र है तो वह विपत्र की भुगतान तिथि पर भुगतान के लिए इसे स्वीकार करता है। निर्यातक का बैंक आयातक के बैंक के माध्यम से भुगतान प्राप्त करता है, तत्पश्चात

उसे निर्यातक के खाते के जमा में लिख देता है।

निर्यातक को आयातक द्वारा भुगतान करने का इंतजार करने की आवश्यकता नहीं है। निर्यातक अपने बैंक को प्रलेख सौंपकर एवं क्षतिपूरक पत्र पर हस्ताक्षर कर तुरंत भुगतान कर सकता है। क्षतिपूरक पत्र पर हस्ताक्षर कर निर्यातक आयातक से भुगतान की प्राप्ति न होने की स्थिति में बैंक को यह राशि ब्याज सहित भुगतान करने का दायित्व लेता है।

निर्यात के बदले में भुगतान प्राप्त कर लेने पर निर्यातक को बैंक से भुगतान प्राप्ति का प्रमाण पत्र प्राप्त करना होगा। यह प्रमाण पत्र यह प्रमाणित करता है कि एक निश्चित निर्यात प्रेषण से संबंधित प्रलेखों (विनिमय विपत्र को सम्मिलित कर) का प्रक्रमण कर लिया गया है (आयातक को भुगतान के लिए प्रस्तुत कर दिया गया है) एवं विनिमय नियंत्रण नियमों के अनुरूप भुगतान प्राप्त कर लिया गया है।

11.3.2 आयात प्रक्रिया

आयात व्यापार से अभिप्राय बाहय देश से माल के क्रय से है। आयात प्रक्रिया भिन्न-भिन्न देशों

निर्यात लेन-देन में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख प्रलेख

(क) वस्तुओं से संबंधित प्रलेख

निर्यात बीजक : निर्यात बीजक विक्रेता का विक्रय माल बिल होता है जिसमें बेचे गए माल के संबंध में सूचना दी होती है, जैसे– मात्रा, कुल मूल्य, पैकेजों की संख्या, पैकिंग पर चिन्ह, गंतव्य बंदरगाह, जहाज का नाम, जहाजी बिल्टी संख्या, सुपुर्दगी संबंधित शर्तें एवं भुगतान आदि।

पैकिंग सूची : पैकिंग सूची, पेटियों अथवा गांठों की संख्या एवं इनमें रखे गए माल का विवरण है। इसमें निर्यात किए गए माल की प्रकृति एवं इनके स्वरूप का विवरण दिया होता है।

उद्गम का प्रमाण पत्र : यह वो प्रमाण पत्र है जो इस बात का निर्धारण करता है कि माल का उत्पादन किस देश में हुआ है। इस प्रमाण पत्र से आयातक को कुछ पूर्व निर्धारित देशों में उत्पादित वस्तुओं पर शुल्क पर छूट या फिर अन्य छूट, जैसे– कोटा प्रतिबंध का लागू न होना प्राप्त हो जाती है। जब कुछ चुनिंदा देशों से कुछ विशेष वस्तुओं के आयात पर प्रतिबंध हो, तब भी इस प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है क्योंकि वस्तुएँ यदि प्रतिबंधित देश में उत्पादित नहीं हैं, तभी उन्हें आयातक देश में आने दिया जाएगा।

निरीक्षण प्रमाण पत्र : उत्पादों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए सरकार ने कुछ उत्पादों का किसी अधिकृत एजेंसी द्वारा निरीक्षण अनिवार्य कर दिया है। भारतीय निर्यात निरीक्षण परिषद् (ई.आई. सी.आई.) एक ऐसी ही एजेंसी है जो इस प्रकार का निरीक्षण करती है एवं इस आशय का प्रमाण पत्र जारी करती है कि प्रेषित माल का 'निर्यात गुणवत्ता नियंत्रण एवं निरीक्षण अधिनियम-1963' के तहत निरीक्षण कर लिया गया है एवं यह इस पर लागू गुणवत्ता नियंत्रण एवं निरीक्षण शर्तों को पूरा करता है एवं यह निर्यात के सर्वथा योग्य है। प्रमाण पत्र को अपने देश में आयातित वस्तुओं के लिए अधिकृत रूप से अनिवार्य कर दिया गया है।

(ख) जहाज लदान से संबंधित प्रलेख

मेट्स रसीद : यह रसीद जहाज के नायक द्वारा जहाज पर माल के लदान के पश्चात् निर्यातक को दी जाती है। मेट्स रसीद में जहाज का नाम, बर्थ, माल भेजने की तिथि, पैकेजों का विवरण, चिन्ह एवं संख्या, जहाज पर माल प्राप्ति के समय में माल की स्थिति आदि। जहाजी कंपनी तब तक जहाजी बिल्टी जारी नहीं करती जब तक की यह मेट्स रसीद प्राप्त नहीं कर लेती।

जहाजी बिल : यह मुख्य प्रलेख है। इसी के आधार पर कस्टम कार्यालय निर्यात की अनुमति प्रदान करता है। जहाजी बिल में निर्यात किए जा रहे माल का विवरण, जहाज का नाम, बंदरगाह जिस पर माल उतारा जाना है, अंतिम गंतव्य देश, निर्यातक का नाम, पता आदि होता है। जहाजी बिल्टी। यह एक ऐसा प्रलेख है जो जहाजी कंपनी द्वारा जारी जहाज पर माल प्राप्ति की रसीद है तथा साथ ही गंतव्य बंदरगाह तक उन्हें ले जाने की शपथ भी। यह वस्तु और स्वामित्व का अधिकार प्रलेख है इसीलिए यह बेचान एवं सुपुर्दगी द्वारा स्वतंत्र रूप से हस्तांतरणीय है।

वायुमार्ग विपत्र : जहाजी बिल्टी के समान वायुमार्ग विपत्र भी एक प्रलेख है जो एयरलाइन कंपनी की हवाई की प्राप्ति की विधिवत रसीद होती है तथा जिसमें वह गंतव्य हवाई अड़े तक उन्हें ले जाने का वचन देती है। यह भी माल पर मालिकाना हक का प्रलेख है एवं यह बेचान एवं सुपुर्दगी द्वारा स्वतंत्र रूप से हस्तांतरणीय है।

समुद्री बीमा पॉलिसी : यह एक बीमा अनुबंध का प्रमाण पत्र होता है जिसमें बीमा कंपनी बीमाकृत को प्रतिफल, जिसे प्रीमियम कहते हैं, के भुगतान के बदले किसी समुद्री जोखिम से हानि की क्षतिपूर्ति का वचन देता है।

गाड़ी टिकट : इसे गाड़ी चिट, वाहन अथवा गेट पास भी कहते हैं। इसे निर्यातक तैयार करता है तथा इसमें निर्यात सामान का विस्तृत विवरण होता है, जैसे कि माल भेजने वाले का नाम, पैकेजों की संख्या, जहाजी बिल संख्या, गंतव्य बंदरगाह, एवं माल ढोने वाले वाहन का नंबर।

(ग) भुगतान संबंधी प्रलेख

साख पत्रः साख पत्र आयातक के बैंक द्वारा दी जाने वाली गारंटी है जिसमें वह निर्यातक के बैंक को एक निश्चित राशि तक के निर्यात बिल के भुगतान की गारंटी देता है। यह अंतर्राष्ट्रीय सौदों के निपटान के लिए भुगतान का सबसे उपयुक्त एवं सुरक्षित साधन है।

विनिमय विपत्र : यह एक लिखित प्रपत्र है जिसमें इसको जारी करने वाला दूसरे पक्ष को एक निश्चित राशि, एक निश्चित व्यक्ति अथवा इसके धारक को भुगतान का आदेश देता है। आयात निर्यात लेन-देन के संदर्भ में विनिमय विपत्र निर्यातक द्वारा आयातक पर लिखा जाता है जिसमें वह आयातक को एक निश्चित व्यक्ति अथवा इसके धारक को एक निश्चित राशि के भुगतान के लिए कहता है। निर्यात किए माल पर मालिकाना अधिकार देने वाले प्रलेखों को आयातक को केवल उस दशा में ही सौंपा जाता है जबकि वह बिल में दिए गए आदेश को स्वीकार कर लेता है। **बैंक का भुगतान संबंधित प्रमाण पत्र :** यह प्रमाण पत्र यह प्रमाणित करता है कि एक निश्चित निर्यात प्रेषण से संबंधित प्रलेखों (विनिमय विपत्र को सम्मिलित कर) का प्रक्रमण कर लिया गया है (आयात को भुगतान के लिए प्रस्तुत कर दिया गया है) एवं विनिमय नियंत्रण नियमों के अनुरूप भुगतान प्राप्त कर लिया गया है।

के संबंध में भिन्न-भिन्न होती है जो देश की आयात एवं कस्टम संबंधी नीतियों एवं अन्य वैधानिक आवश्यकताओं पर निर्भर करती है। आगे के परिच्छेदों में भारत की सीमाओं के भीतर माल लाने के लिए सामान्य आयात लेन-देनों के विभिन्न चरणों की विवेचना की गई है।

(क) व्यापारिक पूछताछ– सर्वप्रथम आयातक फर्म उन देशों एवं फर्मों के संबंध में सूचना एकत्रित करेगी जो उत्पाद विशेष का निर्यात करते हैं। यह सूचना उसे व्यापार निर्देशिका अथवा व्यापार संघ एवं व्यापार संगठनों से प्राप्त हो सकती है। निर्यातक फर्मों एवं देशों की पहचान करने के पश्चात् आयातक फर्म निर्यातक फर्मों से उनके व्यापारिक पूछताछ के द्वारा निर्यात मूल्यों एवं निर्यात की शर्तों की सूचना प्राप्त करती है। व्यापारिक पूछताछ आयातक फर्म द्वारा निर्यातक फर्म के नाम लिखित प्रार्थना पत्र है जिसमें वह उस मूल्य एवं विभिन्न शर्तों की सूचना देने के लिए प्रार्थना करता है जिन पर निर्यातक माल का निर्यात करने के लिए तैयार है।

व्यापारिक पूछताछ का उत्तर आने के पश्चात् निर्यातक निर्ख तैयार करता है एवं इसे आयातक को भेज देता है। इस निर्ख को प्रारूप बीजक कहते हैं। प्रारूप बीजक एक ऐसा विलेख है जिसमें निर्यात की वस्तुओं की गुणवत्ता, श्रेणी, स्वरूप, आकार, वजन एवं मूल्य तथा निर्यात की शर्तें लिखी होती हैं।

(ख) आयात लाइसेंस प्राप्त करना– कुछ वस्तुओं को स्वतंत्रतापूर्वक आयात किया जा सकता है जबकि अन्य के लिए लाइसेंस की आवश्यकता होती है। यह जानने के लिए कि जिन वस्तुओं का वह आयात करना चाहता है, उन पर आयात लाइसेंस लागू होता है अथवा नहीं, आयातक वर्तमान आयात निर्यात नीति (ई.एक्स.आई.एम.) को देखेगा। यदि उन वस्तुओं के आयात के लिए लाइसेंस की आवश्यकता है तो वह आयात लाइसेंस प्राप्त करेगा। भारत में प्रत्येक आयातक (निर्यातक के लिए भी) के लिए विदेशी व्यापार महानिदेशक अथवा क्षेत्रीय आयात-निर्यात लाइसेसिंग प्राधिकरण के पास पंजीयन कराना एवं आयात निर्यात कोड नंबर प्राप्त करना आवश्यक है। इस नंबर को अधिकांश आयात संबंधी प्रलेखों पर लिखना अनिवार्य होता है।

(ग) विदेशी मुद्रा का प्रबंध करना– आयात लेन-देन से संबंधित आपूर्तिकर्ता विदेश में रहता है, वह भुगतान विदेशी मुद्रा में करना चाहेगा। विदेशी मुद्रा में भुगतान के लिए भारतीय मुद्रा का विदेशी मुद्रा में विनिमय करना होगा। भारत में सभी विदेशी विनिमय संबंधित लेन-देनों का भारतीय रिजर्व बैंक के विनिमय नियंत्रण विभाग द्वारा नियमन होता है। नियमों के अनुसार प्रत्येक आयातक के लिए विदेशी मुद्रा का अनुमोदन प्राप्त करना आवश्यक

है। इस अनुमोदन को प्राप्त करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अधिकृत बैंक के पास विदेशी मुद्रा जारी करने के लिए आवेदन करना होगा। यह आवेदन एक निर्धारित फार्म भरकर आयात लाइसेंस के साथ विनिमय नियंत्रण अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार करना होता है। आवेदन की भली भाँति जाँच कर लेने के पश्चात् बैंक आयात सौदे के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा का अनुमोदन कर देता है।

(घ) आदेश अथवा इंडैंट भेजना– लाइसेंस प्राप्त होने के पश्चात् आयातक निर्धारित वस्तुओं की आपूर्ति हेतु निर्यातक के पास आयात आदेश अथवा इंडैंट भेजेगा। आयात आदेश में आदेशित वस्तुओं का मूल्य, मात्रा माप, श्रेणी एवं गुणवत्ता एवं पैकिंग, माल का लदान बंदरगाह, जहाँ से माल को ले जाया जाएगा एवं जहाँ ले जाया जायेगा की सूचना दी जाती है। आयात आदेश को ध्यान से तैयार करना चाहिए जिससे कि किसी प्रकार का संशय न रहे जिसके कारण आयातक एवं निर्यातक के बीच मतभेद पैदा हो सकते हैं।

(ङ) साख पत्र प्राप्त करना– आयातक एवं विदेशी आपूर्तिकर्ता के बीच भुगतान की शर्तों में साख पत्र तय किया गया है तो आयातक को अपने बैंक से साख पत्र प्राप्त करना होगा जिसे वह आगे आपूर्तिकर्ता को भेज देगा। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि साख पत्र आयातक के बैंक द्वारा जारी की जाने वाली गारंटी है जिसमें वह निर्यातक के बैंक को निश्चित राशि तक के निर्यात बिल के भुगतान की गारंटी देता है।

यह अंतर्राष्ट्रीय सौदों के निपटान के लिए भुगतान का सबसे उपयुक्त एवं सुरक्षित साधन है। निर्यातक को इस प्रपत्र की आवश्यकता यह सुनिश्चित करने के लिए होती है कि भुगतान न होने का कोई जोखिम नहीं है।

(च) वित्त की व्यवस्था करना– माल के बंदरगाह पर पहुँचने पर निर्यातक को भुगतान करने के लिए आयातक को इसकी अग्रिम व्यवस्था करनी चाहिए। भुगतान न किए जाने के कारण बंदरगाह से निकासी न होने की दशा में भारी विलंब शुल्क (अर्थात् जुर्माना) देना होता है। इससे बचने के लिए आयात के वित्तीयन के लिए अग्रिम योजना बनानी आवश्यक है।

(छ) जहाज से माल भेज दिए जाने की सूचना की प्राप्ति– जहाज में माल के लदान कर देने के पश्चात् विदेशी आपूर्तिकर्ता आयातक को माल भेजने की सूचना भेजता है। माल प्रेषण सूचना पत्र में जो सूचनाएँ दी होती हैं वे हैं- बीजक संख्या, जहाजी बिल्टी/ वायु मार्ग बिल नंबर एवं तिथि, जहाज का नाम एवं तिथि, निर्यात बंदरगाह, माल का विवरण एवं मात्रा तथा जहाज के प्रस्थान की तिथि।

(ज) आयात प्रलेखों को छुड़ाना– माल रवानगी

के पश्चात् विदेशी आपूर्तिकर्ता अनुबंध एवं साख पत्र की शर्तों को ध्यान में रखकर आवश्यक प्रलेखों का संग्रह तैयार करता है तथा उन्हें अपने बैंक को भेज देता है जो उन्हें आगे साख पत्र में निर्धारित रीति से भेजता है एवं प्रक्रमण करता है। इस संग्रह में सामान्यतः विनिमय विपत्र, वाणिज्यिक बीजक, जहाजी बिल्टी/वायुमार्ग बिल पैंकिग सूची उद्‌गम स्थान प्रमाणपत्र, समुद्री बीमा पॉलिसी आदि सम्मिलित होते हैं।

इन प्रलेखों के साथ जो विनिमय विपत्र भेजा जाता है, उसे प्रलेखीय विनिमय विपत्र कहते हैं। जैसा कि पहले ही निर्यात प्रक्रिया में बताया जा चुका है, प्रलेखीय विनिमय विपत्र दो प्रकार का हो सकता है- भुगतान के बदले प्रलेख (दर्श विपत्र) एवं स्वीकृति के बदले प्रलेख (मुद्‌दती विपत्र)। दर्श विपत्र में लेखक आदेशक बैंक को भुगतान प्राप्त हो जाने पर ही आयातक को आवश्यक प्रलेखों को सौंपने का आदेश देता है। लेकिन मुद्‌दती विपत्र की दशा में वह बैंक को प्रलेखों को आयातक द्‌वारा विनिमय विपत्र के स्वीकार किए जाने पर ही सौंपने का आदेश देता है। प्रलेखों को प्राप्त करने के लिए विनिमय विपत्र की स्वीकृति को आयात प्रलेखों का भुगतान कहते हैं। भुगतान हो जाने के पश्चात् आयात संबंधी प्रलेखों को आयातक को सौंप देता है।

(झ) माल का आगमन– विदेशी आपूर्तिकर्ता माल को अनुबंध के अनुसार जहाज से भेजता है। वाहन (जहाज अथवा हवाई जहाज) का अभिरक्षक गोदी अथवा हवाई अड्डे पर तैनात देख-रेख अधिकारी को माल के आयातक देश में पहुँच जाने की सूचना देता है। वह उन्हें एक विलेख सौंपता है जिसे आयातित माल की सामान्य सूची कहते हैं। यह वह प्रलेख है जिसमें आयातित माल का विस्तृत विवरण दिया होता है। इसी विलेख के आधार पर ही माल को उतरवाया जाता है।

(ञ) सीमा शुल्क निकासी एवं माल को छुड़ाना– भारत में आयातित माल को भारत की सीमा में प्रवेश के पश्चात् सीमा शुल्क निकासी से गुजरना होता है। सीमा शुल्क निकासी एक जटिल प्रक्रिया है तथा इसके लिए कई औपचारिकताओं को पूरा करना होता है। इसलिए उचित यही रहेगा कि आयातक निकासी एवं लदानें वाले एजेंट की नियुक्ति करें क्योंकि यह इन औपचारिकताओं से भली-भाँति परिचित होता है एवं सीमा शुल्क से माल की निकासी में इनकी अहम् भूमिका होती है।

सर्वप्रथम आयातक सुपुर्दगी आदेश पत्र प्राप्त करेगा जिसे सुपुर्दगी के लिए बेचान भी कहते हैं। सामान्यतः जब जहाज बंदरगाह पर पहुँचता है तो आयातक जहाजी बिल्टी के पृष्ठ भाग पर बेचान करा लेता है। यह बेचान संबंधित जहाजी कंपनी के द्‌वारा किया जाता है। कुछ मामलों में जहाजी कंपनी बिल का बेचान करने के स्थान पर एक आदेश पत्र जारी कर देती है। यह आदेश

पत्र आयातक को माल की सुपुर्दगी को लेने का अधिकार देता है। यह बात अलग है कि आयातक को माल के अपने अधिकार में लेने से पहले भाड़ा चुकाना होगा। (यदि इसका भुगतान निर्यातक ने नहीं किया है।)

आयातक को गोदी व्यय (डॉक व्यय) का भी भुगतान करना होगा जिसके बदले उसे बंदरगाह न्यास शुल्क की रसीद मिलेगी। इसके लिए आयातक अवतरण एवं जहाजी शुल्क कार्यालय में एक फार्म को भरकर उसकी दो प्रति जमा करानी होती है। इसे आयात आवेदन कहते हैं। अवतरण एवं जहाजी शुल्क कार्यालय गोदी अधिकारियों की सेवाओं के बदले शुल्क लगाती है जिसे आयातक वहन करता है। डॉक व्यय को भुगतान कर देने पर आवेदन की एक प्रति, जो प्राप्ति की रसीद होती है, आयातक को लौटा दी जाती है। इस रसीद को बंदरगाह न्यास शुल्क रसीद कहते हैं। आयातक इसके पश्चात् आयात शुल्क निर्धारण हेतु प्रवेश बिल (बिल ऑफ एंट्री) फार्म भरेगा। एक मूल्यांकनकर्ता सभी विलेखों का ध्यान से अध्ययन कर निरीक्षण के लिए आदेश देगा। आयातक मूल्यांकनकर्ता के द्वारा तैयार विलेख को प्राप्त करेगा और यदि सीमा शुल्क देना है तो उसका भुगतान करेगा।

आयात शुल्क का भुगतान कर देने के पश्चात् प्रवेश बिल को गोदी अधीक्षक के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा। अधीक्षक इसे चिन्हित करेगा तो निरीक्षक से आयातित माल का भौतिक रूप में निरीक्षण करने के लिए कहेगा। निरीक्षक प्रवेश बिल पर ही अपना अनुवेदन लिख देगा। आयातक अथवा उसका प्रतिनिधि इस प्रवेश बिल को बंदरगाह अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत करेगा। आवश्यक शुल्क ले लेने के पश्चात् वह अधिकारी माल की सुपुर्दगी का आदेश दे देगा।

11.4 विदेशी व्यापार प्रोन्नति-प्रोत्साहन एवं संगठनात्मक समर्थन

निर्यात में प्रतिस्पर्द्धा की योग्यता में वृद्धि के लिए

आयात लेन-देनों में प्रयुक्त प्रमुख प्रलेख

व्यापारिक पूछताछ : यह आयातक की ओर से निर्यातक को एक लिखित आग्रह होता है, जिसमें वह निर्यातक द्वारा निर्यात की वस्तुओं के मूल्य एवं विभिन्न शर्तों की सूचना प्रदान करने के लिए कहता है।

प्रारूप बीजक : यह वह प्रलेख है जिसमें निर्यात के माल के मूल्य, गुणवत्ता, श्रेणी, डिजाइन, माप, भार तथा निर्यात की शर्तों का विस्तृत वर्णन होता है।

आयात आदेश अथवा इंडैंट : यह वह विलेख है जिसमें क्रेता (आयातक) आपूर्तिकर्ता (निर्यातक) को इसमें मांगी गई वस्तुओं की आपूर्ति का आदेश देता है। इस आदेश इंडैंट में आयात की वस्तुओं, मात्रा एवं गुणवत्ता, मूल्य, माल लदान की पद्धति, पैकिंग की प्रकृति भुगतान का माध्यम आदि के संबंध में सूचना दी जाती है।

साख पत्र : साख पत्र आयातक के बैंक द्वारा निर्यातक बैंक को एक निश्चित राशि के निर्यातक बिल के भुगतान की गारंटी है। इसे निर्यातक आयातक को वस्तुओं के निर्यात के बदले में जारी करता है।

माल प्रेषण की सूचना : यह निर्यातक द्वारा आयातक को भेजा जाने वाला प्रलेख है जिसमें वह सूचित करता है कि माल का लदान करा दिया गया है। माल लदान/प्रेषण सूचना-पत्र में बीजक नंबर, जहाजी बिल्टी/वायुमार बिल संख्या एवं तिथि, जहाज का नाम एवं तिथि, निर्यातक बंदरगाह, माल का विवरण एवं मात्रा एवं जहाज की यात्रा प्रारंभ तिथि होती है।

जहाजी बिल्टी : यह जहाज के नायक द्वारा तैयार एवं हस्ताक्षरयुक्त विलेख होता है जिसमें वह माल के जहाज पर प्राप्ति को स्वीकार करता है। इसमें माल को निर्धारित बंदरगाह तक ले जाने से संबंधित शर्ते दी हुई होती हैं।

हवाई मार्ग बिल : जहाजी बिल्टी के समान वायु मार्ग विपत्र भी एक प्रलेख है जो एयरलाइन कंपनी की हवाई जहाज पर माल प्राप्ति की विधिवत् रसीद होती है तथा जिसमें वह माल को गंतव्य हवाई अड्डे तक ले जाने का वचन देती हैं। यह भी माल पर मालिकाना हक का प्रलेख है एवं यह भी बेचान एवं सुपुर्दगी द्वारा स्वतंत्र रूप से हस्तांतरणीय है।

प्रवेश बिल : यह सीमा शुल्क कार्यालय द्वारा आयातक को दिया जाने वाला एक फॉर्म होता है जिसे आयातक माल की प्राप्ति पर भरता है। इसकी तीन प्रतियाँ होती हैं तथा इसे सीमा शुल्क कार्यालय में जमा कराया जाता है। इसमें जो सूचना दी हुई होती है, वह है- आयातक का नाम एवं पता, जहाज का नाम, पैकेजों की संख्या, पैकेज पर चिन्ह, माल की मात्रा एवं मूल्य, निर्यातक का नाम एवं पता, गंतव्य बंदरगाह एवं देय सीमा शुल्क।

विनिमय विपत्र : यह एक लिखित प्रपत्र है जिसमें इसको जारी करने वाला दूसरे पक्ष को एक निश्चित राशि एक निश्चित व्यक्ति अथवा इसके धारक को भुगतान के लिए कहता है। आयात निर्यात लेन-देन के संदर्भ में यह निर्यातक द्वारा आयातक को लिखा जाता है जिसमें वह आयातक को एक निश्चित राशि एक निश्चित व्यक्ति अथवा इसके धारक को भुगतान करने का आदेश देता है। निर्यात किए गए माल पर मालिकाना अधिकार देने वाले प्रलेखों को आयातक को केवल उस दशा में ही सौंपा जाता है जब वह बिल में दिए गए आदेश को स्वीकृति प्रदान कर दे।

दर्श बिल : यह विनिमय विपत्र का वह प्रकार है जिसमें इसका लेखक बैंक को आयातक को संबंधित प्रलेख बिल का भुगतान कर देने पर ही देने का आदेश देता है।

मुद्दती बिल : यह विनिमय विपत्र का वह प्रकार है जिसमें इसका लेखक बैंक को आयातक को संबंधित प्रलेख मुद्दती बिल को स्वीकार कर देने पर ही सौंपने के आदेश देता है।

आयातित माल की सूची : यह वह प्रलेख है जिसमें आयातित माल का विस्तृत विवरण दिया होता है। इसी के आधार पर माल को जहाज से उतरवाया जाता है।

डॉक चालान : सीमा शुल्क संबंधी औपचारिकताओं की पूर्ति पर डॉक व्यय का भुगतान किया जाता है। डॉक/ गोदी व्यय का भुगतान करते समय आयातक अथवा उसका निकासी एजेंट डॉक व्यय की राशि एक चालान अथवा फार्म में दर्शाता है जिसे डॉक चालान कहते हैं।

व्यावसायिक फर्मों की सहायता के लिए देश में कई प्रेरणा एवं योजनाएँ प्रचलित हैं। समय-समय पर सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में संलग्न फर्मों को विपणन में सहायता एवं बुनियादी ढाँचागत समर्थन प्रदान करने के लिए संगठन स्थापित किए हैं। आगे के अनुभागों में प्रमुख विदेशी व्यापार प्रोन्नति योजनाओं एवं संगठनों पर चर्चा की गई है।

11.4.1 विदेशी व्यापार प्रोन्नति विधियाँ एवं योजनाएँ

व्यावसायिक फर्मों के कार्यों को सुगम बनाने के लिए सरकार अपनी आयात-निर्यात नीति में विभिन्न व्यापार प्रोन्नति उपायों एवं योजनाओं की घोषणा करती है। वर्तमान में प्रचलित प्रमुख व्यापार प्रोन्नति उपाय (विशेषतः निर्यात से संबंधित) निम्नलिखित हैं :

(क) शुल्क वापसी योजना– निर्यात की वस्तुओं को देश के भीतर उपभोग नहीं किया जाता। इन पर किसी प्रकार का उत्पादन शुल्क एवं सीमा शुल्क का भुगतान नहीं करना होता। निर्यात की वस्तुओं पर यदि किसी प्रकार के शुल्क का भुगतान कर दिया गया है तो उसे निर्यातक को लौटा दिया जायेगा लेकिन इसके लिए उसे संबंधित अधिकारियों को निर्यात का प्रमाण देना होगा। इस प्रकार की वापसी को शुल्क वापसी कहते हैं। कुछ प्रमुख शुल्क वापसियों में निर्यात के लिए वस्तुओं पर उत्पादन शुल्क, कच्चे माल एवं निर्यात हेतु उत्पादन के लिए आयातित मशीनों पर सीमा शुल्क का भुगतान सम्मिलित है। अंतिम वापसी को सीमा शुल्क वापसी भी कहते हैं।

(ख) बाँड योजना के अंतर्गत निर्यात हेतु विनिर्माण– इस सुविधा के अनुसार फर्में वस्तुओं का उत्पादन शुल्क अथवा अन्य कोई शुल्क देय कर सकती हैं। जो फर्में इस सुविधा का लाभ उठाना चाहती हैं उन्हें वचन (अर्थात् बांड) देना होता है कि वे वस्तुओं का उत्पादन निर्यात के उद्देश्य से कर रहे हैं तथा वे इनका वास्तव में निर्यात करेंगे।

(ग) विक्रय कर के भुगतान से छूट– निर्यात की वस्तुओं पर विक्रय कर नहीं लगता। यही नहीं, काफी लंबी अवधि तक निर्यात क्रियाओं से अर्जित आय पर आयकर भी नहीं देना होता था। अब आयकर से छूट केवल 100 प्रतिशत निर्यात मूलक इकाइयों एवं निर्यात प्रवर्तन क्षेत्रों/विशिष्ट आर्थिक क्षेत्रों में स्थापित इकाइयों को ही कुछ चुने हुये वर्षों के लिए ही मिलती है। आगे के परिच्छेदों में हम इन इकाइयों की विवेचना करेंगे।

(घ) अग्रिम लाइसेंस योजना– इस योजना के अंतर्गत निर्यातक को निर्यात के लिए वस्तुओं के उत्पादन घरेलू एवं आयातित आगत की बिना किसी शुल्क का भुगतान किए आपूर्ति की छूट है। निर्यातक को निर्यात के लिए वस्तुओं के विनिर्माण हेतु वस्तुओं के आयात पर सीमा शुल्क नहीं देना होता। अग्रिम लाइसेंस दोनों प्रकार के निर्यातकों को उपलब्ध है- जो नियमित रूप से निर्यात करते हैं एवं जो तदर्थ निर्यात करते हैं। नियमित निर्यातक अपने

उत्पादन कार्यक्रम के आधार पर इस प्रकार का लाइसेंस प्राप्त कर सकते हैं। कभी-कभी निर्यात करने वाली फर्में भी विशिष्ट निर्यात आदेशों के विरुद्ध इस प्रकार का लाइसेंस प्राप्त कर सकती हैं।

(ङ) **निर्यात संवर्द्धन पूँजीगत वस्तुएँ योजना–** इस योजना का मुख्य उद्देश्य निर्यात उत्पादन के लिए पूँजीगत वस्तुओं के आयात को प्रोत्साहन देना है। यह योजना निर्यात फर्मों को पूँजीगत वस्तुओं के आयात का प्रोत्साहन देती है। यह योजना निर्यात फर्मों को पूँजीगत वस्तुओं को नीची दर अथवा शून्य सीमा शुल्क पर आयात की अनुमति देती है। लेकिन शर्त है कि वह वास्तविक उपयोगकर्ता होना चाहिए तथा वह कुछ विशिष्ट निर्यात अनुग्रहों को पूरा करता हो। यदि विनिर्माता इन शर्तों को पूरा करता है तो वह पूँजीगत वस्तुओं को या तो शून्य अथवा रियायती दर पर आयात कर चुकाकर आयात कर सकता है। समर्थक विनिर्माता एवं सेवा प्रदानकर्ता भी इस योजना के अंतर्गत पूँजीगत वस्तुओं के आयात के लिए योग्य हैं। यह योजना विशेष रूप से उन औद्योगिक इकाइयों के लिए उपयोगी है जो अपने वर्तमान संयंत्र एवं मशीनरी के आधुनिकीकरण एवं संवर्द्धन में रूचि रखते हैं। अब सेवा निर्यात फर्म भी, निर्यात के लिए सॉफ्टवेयर विकसित करने के लिए कंप्यूटर सॉफ्टवेयर प्रणाली जैसी वस्तुओं के आयात के लिए इस सुविधा का लाभ उठा सकती हैं।

(च) **निर्यात फर्मों को निर्यात गृह एवं सुपरस्टार व्यापार गृहों के रूप में मान्यता देने की योजना–** भली-भाँति स्थापित निर्यातकों को प्रोन्नति एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार में उनके उत्पादों के विपणन में सहायता के लिए सरकार कुछ चुनिंदा निर्यातक फर्मों को निर्यात गृह, व्यापार गृह एवं सुपरस्टार व्यापार गृह के स्तर की मान्यता देती है। यह सम्मानजनक स्थान किसी फर्म को तब दिया जाता है, जब वह पिछले कुछ चुने हुए वर्षों में निर्धारित औसत निर्यात निष्पादन को प्राप्त कर लेती है। न्यूनतम पिछले औसत निर्यात निष्पादन को प्राप्त करने के साथ-साथ ऐसी निर्यातक फर्मों को आयात-निर्यात नीति में उल्लिखित अन्य शर्तों को भी पूरा करना होगा। निर्यात संवर्द्धन के लिए विपणन मौलिक ढाँचा एवं विशेषज्ञता के विकास को ध्यान में रखते हुए विभिन्न वर्गों के निर्यात गृहों को मान्यता प्रदान की गई है। निर्यात संवर्द्धन के लिए इन गृहों को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दी गई है। इन्हें उच्च श्रेणी के पेशेवर एवं गतिशील संस्थानों के रूप में कार्य करना होता है तथा यह निर्यात के उत्थान के लिए एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में कार्य करते हैं।

(छ) **निर्यात सेवाएँ–** निर्यात सेवाओं को प्रोत्साहन देने के लिए विभिन्न श्रेणी के

निर्यात गृहों को मान्यता दी गई है। इनको मान्यता सेवा प्रदानकर्ताओं के निर्यात निष्पादन के आधार पर दी गई है। इन्हें इनके निर्यात निष्पादन के आधार पर सेवा निर्यात गृह अंतर्राष्ट्रीय सेवा निर्यात गृह, अंतर्राष्ट्रीय स्टार सेवा निर्यात गृह के नाम दिए गए हैं।

(ज) **निर्यात वित्त–** निर्यातकों को वस्तुओं के उत्पादन के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। माल का लदान कर देने के पश्चात् भी वित्त की आवश्यकता होती है क्योंकि आयातक से भुगतान आने में कुछ समय लग सकता है। इसीलिए अधिकृत बैंकों द्वारा निर्यातकों को दो प्रकार का निर्यात वित्त उपलब्ध कराया जाता है। इन्हें लदान-पूर्व वित्त या पैकेजिंग साख एवं लदान के पश्चात् वित्त कहते हैं। जहाज में लदान से पूर्व वित्त में निर्यातक को वित्त/क्रय, प्रक्रियण, विनिर्माण अथवा पैकेजिंग के लिए उपलब्ध कराया जाता है। माल लदान-पश्चात् वित्त योजना के अंतर्गत, निर्यातक को वित्त माल लदान के पश्चात् साख की तिथि को बढ़ाने से उपलब्ध कराया जाता है। निर्यातकों को वित्त ब्याज की रियायती दरों पर उपलब्ध रहता है।

(झ) **निर्यात प्रवर्तन क्षेत्र–** निर्यात प्रवर्तन क्षेत्र, वे औद्योगिक परिक्षेत्र होते हैं जो राष्ट्रीय सीमा शुल्क क्षेत्र में अंतःक्षेत्र का सृजन करते हैं। ये सामान्यतः समुद्री बंदरगाह अथवा हवाई अड्डे के समीप स्थित होते हैं। इनका उद्देश्य कम लागत पर निर्यात उत्पादन के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मक शुल्क रहित वातावरण प्रदान करना है। इससे निर्यात प्रवर्तन क्षेत्रों (ई.पी.जेड.) के उत्पाद अंतर्राष्ट्रीय बाजार में गुणवत्ता एवं मूल्य दोनों में प्रतिस्पर्धा योग्य किए गए हैं जिनमें प्रमुख हैं : कांदला (गुजरात), सांताक्रुज (मुंबई), फाल्टा (पश्चिमी बंगाल), नोएडा (उ.प्र.), कोचीन (केरल), चेन्नई (तमिलनाडु) एवं विशाखापट्टनम (आंध्र प्रदेश)।

सांताक्रूज क्षेत्र केवल इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं एवं हीरा एवं जेवरात की मदों के लिए है। अन्य ई.पी.जेड. क्षेत्र अनेकों प्रकार की वस्तुओं का व्यापार करते हैं। हाल ही में ई.पी.जैड. को विशेष आर्थिक क्षेत्र (स्पेशल इकोनॉमिक जोन ई.पी. जेड.) में परिवर्तित कर दिया गया है जो निर्यात प्रवर्तन क्षेत्रों का और अधिक उन्नत स्वरूप है। ई.पी.जेड. आयात निर्यात को शासित करने वाले नियमों, श्रम एवं बैंकिंग से संबंधित को छोड़कर मुक्त हैं। सरकार ने ई.पी.जेड. को विकसित करने के लिए निजी, राज्य अथवा संयुक्त क्षेत्रों को अनुमति दे दी है। निजी ई.पी.जेड. के लिए गठित अंतः मंत्रालय कमेटी पहले ही मुंबई, सूरत एवं कांचीपुरम में निजी ई.पी. जेड. स्थापित करने के प्रस्ताव को अपनी मंजूरी दे चुकी है।

(ञ) 100 प्रतिशत निर्यात परक इकाइयाँ (100

प्रतिशत ई.ओ.यू.)– 100 प्रतिशत निर्यात परक इकाइयाँ योजना को 1981 में ई.पी. जेड. योजना की पूरक के रूप में लागू किया गया। यह उत्पादन के समान क्षेत्रों को ही अपनाता है लेकिन स्थानीय करार की दृष्टि से वृहत विकल्प देता है जिनका संबंध जिन निर्धारक तत्वों से होता है, वे हैं- कच्चे माल के स्रोत, बंदरगाह, पृष्ठ प्रदेश सुविधाएँ, प्रौद्योगिकी में दक्षता की उपलब्धता, औद्योगिक आधार का होना एवं इस परियोजना के लिए भूमि के बड़े क्षेत्र की आवश्यकता। ई.ओ.यू. की स्थापना निर्यात के लिए अतिरिक्त उत्पादन क्षमता पैदा करने की दृष्टि से की गई है। इसके लिए उचित नीतिगत कार्य ढाँचा, परिचालन में लोचपूर्णता एवं प्रेरणा उपलब्ध कराई जाती है।

11.4.2 संगठन समर्थन

भारत सरकार हमारे देश में विदेशी व्यापार की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए समय-समय पर विभिन्न संस्थानों की स्थापना करती रही है। कुछ महत्वपूर्ण संस्थान निम्न हैंः

वाणिज्य विभाग– भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय में वाणिज्य विभाग सर्वोच्च संस्था है जो देश के विदेशी व्यापार एवं इससे संबंधित सभी मामलों के लिए उत्तरदायी है। इस पर दूसरे देशों के साथ वाणिज्यिक संबंध बढ़ाने, राज्य व्यापार, निर्यात प्रोन्नति उपाय एवं निर्यात परक उद्योगों एवं वस्तुओं के नियमन का उत्तरदायित्व होता है। यह विभाग विदेशी व्यापार के लिए नीतियाँ निर्धारित करता है, विशेष रूप से देश की आयात-निर्यात नीति बनाता है।

निर्यात प्रोन्नति परिषद् (ई.पी.सी.)– निर्यात प्रोन्नति परिषद् गैर-लाभ संगठन होते हैं जिनको कंपनी अधिनियम अथवा समिति पंजीयन अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कराया जाता है। इन परिषदों का मूल उद्देश्य इनके अधिकार क्षेत्र के विशिष्ट उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देना एवं विकसित करना है। वर्तमान में 21 ई.पी.सी. हैं जो विभिन्न वस्तुओं में व्यवहार करते हैं।

सामग्री बोर्ड– ये वे बोर्ड हैं जिनकी स्थापना भारत सरकार द्वारा परंपरागत वस्तुओं के उत्पादन के विकास एवं उनके निर्यात के लिए की गई है। ये ई.पी.सी के पूरक होते हैं। इनके कार्य भी ई.पी. सी. के कार्यों के समान होते हैं। आज भारत में सात सामग्री बोर्ड हैं, ये हैं– कॉफी बोर्ड, रबड़ बोर्ड, तंबाकू बोर्ड, मसाले बोर्ड, केंद्रीय सिल्क बोर्ड, चाय बोर्ड एवं कॉयर बोर्ड।

निर्यात निरीक्षण परिषद् (ई.आई.सी)– निर्यात निरीक्षण परिषद् की स्थापना भारत सरकार द्वारा निर्यात गुणवत्ता, नियंत्रण एवं निरीक्षण अधिनियम-1963 की धारा 3 के अंतर्गत की गई थी। इस परिषद का उद्देश्य गुणवत्ता नियंत्रण एवं लदान पूर्व निरीक्षण के माध्यम से निर्यात व्यवसाय का संवर्द्धन करना है। निर्यात की वस्तुओं के गुणवत्ता नियंत्रण एवं पूर्व लदान निरीक्षण संबंधी क्रियाओं पर नियंत्रण हेतु यह

सर्वोच्च संस्था है। कुछ वस्तुओं को छोड़कर शेष सभी निर्यात की वस्तुओं के लिए ई.आई.सी. की स्वीकृति लेनी अनिवार्य है।

भारतीय व्यापार प्रोन्नति संगठन (आई.टी.पी.ओ)– इस संगठन की स्थापना भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय द्वारा कंपनी अधिनियम-1956 के अंतर्गत जनवरी 1992 में की गई थी। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। आई.टी.पी.ओ का निर्माण दो पूर्व एजेंसियों– व्यापार विकास प्राधिकरण एवं भारतीय व्यापार मेला प्राधिकरण को मिलाकर किया गया था। आई.टी.पी.ओ. एक सेवा संगठन है जो व्यापार, उद्योग एवं सरकार से नियमित एवं नजदीकी आदान-प्रदान है। यह देश के अंदर तथा देश से बाहर व्यापार मेलों एवं प्रदर्शनियों का आयोजन कर औद्योगिक क्षेत्र की सेवा करता है। यह निर्यात फर्मों को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले एवं प्रदर्शनियों में भाग लेने में सहायता करता है, नई वस्तुओं के निर्यात को विकसित करता है, वाणिज्य व्यवसाय संबंधी आज तक की सूचना उपलब्ध कराता है एवं सामर्थ्य प्रदान करता है। इसके पाँच क्षेत्रीय कार्यालय हैं जो मुंबई, बंगलुरु कोलकाता, कानपुर एवं चेन्नई में हैं तथा चार अंतर्राष्ट्रीय कार्यालय हैं जो जर्मनी जापान, यू.ए.ई. एवं अमेरिका में स्थित हैं।

भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान– भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान की स्थापना 1963 में भारत सरकार ने समिति पंजीयन अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत स्वायत्त संस्था के रूप में की थी। इसका मूल उद्देश्य देश के विदेशी व्यापार प्रबंध को एक पेशे का स्वरूप प्रदान करना है। इसे हाल ही में मानद विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। यह संस्थान अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रशिक्षण देता है, अंर्तर्राष्ट्रीय व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान करता है एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं निवेश संबंधित आंकड़ों का विश्लेषण एवं प्रसार करता है।

भारतीय पैकेजिंग संस्थान (आई.आई.पी.)– भारतीय पैकेजिंग संस्थान की स्थापना 1966 में भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय एवं भारतीय पैकेजिंग उद्योग एवं संबंधित हितों के संयुक्त प्रयास से एक राष्ट्रीय संस्थान के रूप में की गई थी। इसका मुख्यालय एवं प्रमुख प्रयोगशाला मुंबई में एवं तीन क्षेत्रीय प्रयोगशालाएँ कोलकाता, दिल्ली एवं चेन्नई में स्थित हैं। यह पैकेजिंग एवं जाँच का प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान है। इसके पास अद्भुत आधारगत सुविधाएँ हैं जो पैकेज विनिर्माण एवं पैकेज उपयोग उद्योगों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। यह राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय बाजार की पैकेजिंग की जरूरतों को पूरा करता है। यह तकनीकी सलाह देने, पैकेजिंग के विकास की जाँच सेवाएँ, प्रशिक्षण एवं शैक्षणिक कार्यक्रम संवर्द्धन इनामी प्रतियोगिता, सूचना सेवाएँ एवं अन्य सहायक क्रियाएँ करता है।

राज्य व्यापार संगठन– बड़ी संख्या में भारत की घरेलू फर्मों के लिए विश्व बाजार की प्रतियोगिता में टिकना कठिन था। इसके साथ ही, वर्तमान व्यापार मार्ग/माध्यम निर्यात प्रोन्नति एवं यूरोपीय देशों को छोड़कर अन्य देशों के साथ व्यापार में विविधता लाने के लिए अनुपयुक्त थे। इन परिस्थितियों में मई 1956 में राज्य व्यापार

संगठन की स्थापना की गई थी। एस.टी.सी. का मुख्य उद्देश्य विश्व के विभिन्न व्यापार में, भागीदारों में व्यापार को, विशेषतः निर्यात को बढ़ावा देना है। बाद में सरकार ने ऐसे कई अन्य संगठनों की स्थापना की जैसे मैटल एवं मिनरल व्यापार निगम (एम.एम.टी.सी), हैंडलूम एवं हैंडीक्राफ्ट निर्यात निगम (एच.एच.ई.सी) की स्थापना की।

11.5 अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संस्थान एवं व्यापार समझौते

प्रथम विश्व युद्ध (1914-18) एवं द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45) के पश्चाम् पूरे विश्व में जीवन एवं संपत्ति की भारी तबाही हुई। विश्व की लगभग सभी अर्थव्यवस्थाएँ इससे बुरी तरह प्रभावित हुईं। संसाधनों की कमी के कारण कोई राष्ट्र पुनर्निमाण एवं विकास कार्य करने की स्थिति में नहीं थे। विश्व की मुद्रा प्रणाली में व्यवधान के कारण अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर विपरीत प्रभाव पड़ा। विनिमय दर की कोई सर्वमान्य प्रणाली नहीं थी। ऐसे हालात में 44 देशों के प्रतिनिधि जे.एम. कीन्स-जो एक नामी अर्थशास्त्री थे, उनकी अगुआई में विश्व में शांति एवं सामान्य वातावरण की पुनः स्थापना के लिए उपाय ढूँढ़ने के लिए ब्रैटनवुड्, न्यू हैम्पशायर में एकत्रित हुए।

बैठक का समापन तीन अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की स्थापना के साथ हुआ, जिनके नाम हैं- अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई.एम.एफ.), पुर्ननिर्माण एवं विकास का अंतर्राष्ट्रीय बैंक (आई.बी.आर.डी.) एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन (आई.टी.ओ.)। वे इन तीन संगठनों को विश्व के आर्थिक विकास के तीन स्तंभ मानते थे। विश्व बैंक को युद्ध के कारण नष्ट अर्थव्यवस्थाओं, विशेषतः यूरोप के पुनर्निमाण का कार्य सौंपा गया तो अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को विश्व व्यापार के विस्तार का मार्ग प्रशस्त करने के लिए विनिमय दरों में स्थिरता लाने का दायित्व सौंपा गया। आई.टी.ओ. का मुख्य कार्य, जिसकी कल्पना उन्होंने उस समय की थी, सदस्य देशों के बीच उस समय व्यवहार में लाई जाने वाली विभिन्न प्रतिबंध एवं पक्षपातपूर्ण व्यवहार पर अधिकार प्राप्त कर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा देना एवं सुगम बनाना था।

प्रथम दो संस्थान, अर्थात् आई.बी.आर.डी. एवं आई.एम.एफ. तुरंत अस्तित्व में आ गए लेकिन आई.टी.ओ. के विचार को अमेरिका के विरोध के कारण मूर्त रूप प्रदान नहीं किया जा सका। एक संगठन के स्थान पर ऊँचे सीमा शुल्क तथा अन्य प्रतिबंधों से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को मुक्त करने की व्यवस्था उभरकर आई। इस व्यवस्था को जनरल फॉर टैरिफ एंड ट्रेड का नाम दिया गया। भारत इन तीन संस्थाओं के संस्थापक सदस्यों में से एक है। इन तीन संस्थाओं के प्रमुख उद्देश्य एवं कार्यों की विस्तार से विवेचना आगे के अनुभागों में की गई है।

11.5.1 विश्व बैंक

पुनर्निमाण एवं विकास का अंतर्राष्ट्रीय बैंक (आई. बी.आर.डी.) जिसे विश्व बैंक भी कहते हैं, वो ब्रैटन वुड्स कॉन्फ्रेंस का परिणाम था। इस अंतर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना का मुख्य उद्देश्य युद्ध से

प्रभावित यूरोप के देशों की अर्थव्यवस्थाओं का पुनर्निर्माण एवं विश्व के अविकसित देशों को विकास के कार्य में सहायता प्रदान करना था। प्रारंभ के कुछ वर्ष विश्व बैंक यूरोप के युद्ध से तबाह देशों को इससे उबारने के कार्य में जुटा रहा। 1950 तक वह इस कार्य में सफलता प्राप्त कर लेने के पश्चात् विश्व बैंक ने अविकसित देशों के विकास पर ध्यान देना प्रारंभ किया। इसने यह माना कि जितना अधिक इन देशों में निवेश करेंगे। विशेष रूप से सामाजिक क्षेत्रों, जैसे कि स्वास्थ्य एवं शिक्षा में, उतना ही अधिक विकासशील देशों में आवश्यक सामाजिक एवं आर्थिक बदलाव लाना संभव होगा। अविकसित देशों में निवेश की इस पहल को मूर्त रूप देने के लिए 1960 में अंतर्राष्ट्रीय विकास संघ (आई.डी.ए.) का निर्माण किया गया। आई.डी.ए. की स्थापना का मुख्य उद्देश्य उन देशों को रियायती दरों पर ऋण उपलब्ध कराना था जिनकी प्रति व्यक्ति आय नाजुक स्तर से भी नीचे थी। रियायती शर्तों से अभिप्राय है :

(क) ऋण को लौटाने की अवधि आई.बी.आर.डी. की निर्धारित अवधि से भी कहीं अधिक लंबी है।

(ख) ऋण लेने वाले देश के लिए इन ऋणों पर ब्याज देने की आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार से आई.डी.ए. गरीब देशों को ब्याज मुक्त दीर्घ अवधि ऋण देता है लेकिन यह वाणिज्यिक दर से ब्याज लेता है। कालांतर में विश्व बैंक की छत्रछाया में अतिरिक्त संगठनों की स्थापना की गई। आज विश्व बैंक पाँच अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का समूह है जो विभिन्न देशों को वित्त प्रदान करते हैं। यह समूह एवं इसकी सहयोगी संस्थाओं, जिनका मुख्यालय वाशिंगटन डी.सी. में है एवं जो विभिन्न वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं, की सूची बॉक्स 11.1 में दी गई है।

11.5.2 अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई.एम.एफ.)

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष विश्व बैंक के बाद दूसरा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। आई.एम.एफ. जो 1945 में अस्तित्व में आया, उसका मुख्यालय वाशिंगटन डी.सी. में स्थित है। 2005 में 91 देश इसके सदस्य थे। आई.एम.एफ की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य एक व्यवस्थित अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रणाली का विकास करना है, अर्थात् अंतर्राष्ट्रीय भुगतान प्रणाली को सुविधाजनक बनाना एवं राष्ट्रीय मुद्राओं में विनिमय दर को समायोजित करना।

आई.एम.एफ के उद्देश्य

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं–

- एक स्थाई संस्था के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा सहयोग को बढावा देना।
- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संतुलित विकास के विस्तार को सुगम बनाना एवं उच्च स्तरीय रोजगार एवं वास्तविक आय में वृद्धि एवं अनुरक्षण में योगदान देना।
- सदस्य देशों के बीच नियमानुसार विनिमय व्यवस्था के उद्देश्य से विनिमय स्थिरता को बढ़ाना।
- देशों के बीच वर्तमान लेन-देनों के संदर्भ में

भुगतान की बहु आयामी प्रणाली की स्थापना में सहायता करना।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के कार्य

इस संगठन के द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अनेकों कार्य किए जाते है। इसके कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित हैं–

- एक लघु अवधि साख संस्था के रूप में कार्य करना;
- विनिमय दर के नियम के अनुसार समायोजन के लिए तंत्र की रचना करना;
- सभी सदस्य देशों की मुद्राओं के कोष के रूप में कार्य करना जिसमें से कोई भी देश दूसरे देश की मुद्रा में ऋण ले सकता है;
- विदेशी मुद्रा एवं वर्तमान लेन-देनों के ऋणदात्री संस्था का कार्य।
- किसी भी देश की मुद्रा का मूल्य निर्धारण करना करना अथवा आवश्यकता पड़ने पर उसमें परिवर्तन करना जिससे कि सदस्य देशों में विनिमय दरों में सुव्यवस्थित समायोजन किया जा सके।
- अंतर्राष्ट्रीय विचार-विमर्श के लिए तंत्र की व्यवस्था करना।

11.5.3 विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ) एवं प्रमुख समझौते

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की तर्ज पर ब्रैटन वुड् सम्मेलन में प्रारंभ में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संघ की स्थापना का निर्णय लिया गया। इसका उद्देश्य सदस्य देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा देना एवं सुविधाजनक बनाना तथा उस समय व्याप्त विभिन्न प्रतिबंध एवं पक्षपात पर काबू पाना था। लेकिन यह विचार अमेरिका के कड़े विरोध के कारण व्यवहार में नहीं आ सका। लेकिन इस विचार को पूर्ण रूप से त्याग देने के स्थान पर जो देश ब्रैटन वुड्स सम्मेलन में भाग ले रहे थे, उन्होंने विश्व को ऊँचे सीमा शुल्क एवं उस समय लागू अन्य दूसरे प्रकार के प्रतिबंधों से मुक्त करने के लिए आपस में कोई व्यवस्था करना तय किया। यह व्यवस्था शुल्क एवं व्यापार का साधारण समझौता (जनरल एग्रीमेंट फॉर टैरिफ्स एंड ट्रेड, जी.ए.टी.टी.) कहलाया।

जी.ए.टी.टी 01 जनवरी 1948 को अस्तित्व में आया तथा दिसंबर 1994 तक कार्यरत रहा। इसके सानिध्य में सीमा शुल्क एवं अन्य बाधाओं को कम करने के लिए बातचीत के कई दौर हो चुके हैं। अंतिम दौर, जिसे उरूग्वे दौर कहा जाता है, जिसमें सर्वाधिक संख्या में समस्याओं पर विचार किया गया एवं जिसकी अवधि भी सबसे लंबी रही जोकि 1986 से 1994 तक की सात वर्ष की थी।

जी.ए.टी.टी में विचार-विमर्श के उरूग्वे दौर की प्रमुख उपलब्धियों में से एक है विभिन्न देशों में स्वतंत्र एवं संतोषजनक व्यापार की प्रोन्नति पर ध्यान देने के लिए एक स्थायी संस्था की स्थापना का निर्णय। इस निर्णय के परिणाम स्वरूप जी.ए.टी.टी को 1 जनवरी 1995 से विश्व व्यापार संगठन में परिवर्तित कर दिया गया। इसका मुख्यालय जिनेवा, स्विट्जरलैंड में स्थित है। विश्व व्यापार संगठन की स्थापना लगभग

50 वर्ष पूर्व के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन (आई.टी.ओ.) की स्थापना के मूल प्रस्ताव का क्रियान्वयन है।

यद्यपि विश्व व्यापार संगठन जी.ए.टी.टी. का उत्तराधिकारी है तथापि यह उससे अधिक शक्तिशाली संगठन है। यह न केवल वस्तुओं बल्कि सेवाओं एवं बौद्धिक संपदा अधिकार में व्यापार को शासित करता है। जी.ए.टी.टी. से हटकर यह एक स्थायी संगठन है जिसकी स्थापना अंतर्राष्ट्रीय समझौते से हुई है तथा जिसे सदस्य देशों की सरकारों एवं विधान मंडलों ने प्रमाणित किया है। वैसे भी यह एक सदस्यों द्वारा संचालित नियमों पर आधारित संगठन है क्योंकि इसमें सभी निर्णय सदस्य सरकारों द्वारा आम राय से लिए जाते हैं। विभिन्न देशों के बीच व्यापारिक समस्याओं के समाधान की प्रधान अंतर्राष्ट्रीय संस्था एवं बहु आयामी व्यापारिक पराक्रमण का मंच होने के नाते इसका आई.एम.एफ. एवं विश्व बैंक के समान वैश्विक स्तर है। भारत विश्व व्यापार संगठन का संस्थापक सदस्य है। 11 दिसंबर 2005 को इसके 149 सदस्य थे।

विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्य

विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्य वही हैं जो जी.ए.टी.टी. के हैं, अर्थात् आय में वृद्धि एवं जीवन स्तर में सुधारपूर्ण रोजगार सुनिश्चित करना, उत्पादन एवं व्यापार का विस्तार एवं विश्व के संसाधनों का समुचित उपयोग। दोनों के उद्देश्यों में सबसे बड़ा अंतर यह है कि विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्य अधिक सुनिश्चित हैं तथा इसके कार्यक्षेत्र में सेवाओं का व्यापार भी आता है। विश्व व्यापार संगठन का एक उद्देश्य विश्व के संसाधनों के समुचित उपयोग के द्वारा टिकाऊ विकास करना है जिससे कि पर्यावरण को सुरक्षा एवं संरक्षण को सुनिश्चित किया जा सके। उपर्युक्त परिचर्चा को ध्यान में रखते हुए हम अधिक स्पष्ट रूप में कह सकते हैं कि विश्व व्यापार संगठन के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं :

- विभिन्न देशों द्वारा लगाए शुल्क एवं अन्य व्यापारिक बाधाओं में कमी को सुनिश्चित करना;
- ऐसे कार्य करना जो जीवन स्तर में सुधार लाए, रोजगार पैदा करे, आय एवं प्रभावी मांग में वृद्धि करे एवं अधिक उत्पादन एवं व्यापार को सुगम बनाए;
- टिकाऊ विकास के लिए विश्व संसाधनों के उचित उपयोग को सुगम बनाना;
- एकीकृत, अधिक व्यावहारिक एवं टिकाऊ व्यापार प्रणाली का प्रवर्तन।

विश्व व्यापार संगठन के कार्य

विश्व व्यापार संगठन के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं-

- एक ऐसे वातावरण को बल देना जो इसके सदस्य देशों को अपनी शिकायतों को दूर करने के लिए डब्ल्यू.टी.ओ. के पास आने के लिए प्रोत्साहित करे;
- एक सर्वमान्य आचार संहिता बनाना जिससे कि व्यापार की बाधाओं, जैसे- सीमा शुल्क को कम किया जा सके एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

संबंधों में पक्षपात को समाप्त किया जा सके;
- विवादों को हल करने वाली संस्था के रूप में कार्य;
- यह सुनिश्चित करना कि सभी सदस्य देश अपने आपसी विवादों को हल करने के लिए अधिनियम द्वारा निर्धारित सभी नियम एवं कानूनों का पालन करें;
- आई.एम.एफ. एवं आई.बी.आर.डी. एवं इससे संबद्ध एजेंसियों से विचार-विमर्श करना जिससे कि वैश्विक आर्थिक नीति के निर्माण में और श्रेष्ठ समझ एवं सहयोग का समावेश किया जा सके; एवं
- वस्तुओं, सेवाओं एवं व्यापार से संबंधित बौद्धिक अधिकारों के संबंध में संशोधित समझौते एवं सरकारी घोषणाओं के परिचालन का नियमित पर्यवेक्षण करना।

विश्व व्यापार संगठन के लाभ

1995 में स्थापना के समय से ही विश्व व्यापार संगठन ने वर्तमान बहुआयामी व्यापार प्रणाली की वैधानिक एवं संस्थागत आधारशिला तैयार करने के लिए एक लंबा सफर तय किया है। यह न केवल व्यापार को सुगम बनाने बल्कि जीवन स्तर में सुधार एवं सदस्य देशों में पारस्परिक सहयोग में मददगार रहा है। विश्व व्यापार संगठन के प्रमुख लाभ निम्न हैं–

- विश्व व्यापार संगठन अंतर्राष्ट्रीय शांति को बढ़ावा देता है एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय को सुगम बनाता है।
- सदस्य देशों के बीच विवादों को आपसी बातचीत से निपटाता है।
- नियम अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं संबंधों को मृदु एवं संभाव्य बनाते हैं।
- स्वतंत्र व्यापार के कारण विभिन्न प्रकार की अच्छी गुणवत्ता वाली वस्तुओं को प्राप्त करने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं।
- स्वतंत्र व्यापार के कारण आर्थिक विकास में तीव्रता आई है।
- यह प्रणाली श्रेष्ठ शासन को प्रोत्साहित करती है।
- विश्व व्यापार संगठन विकासशील देशों के विकास का, व्यापार से संबंधित मामलों में विशेष ध्यान रखकर प्राथमिकता के आधार पर व्यवहार कर पोषण करने में सहायक होता है।

सारांश

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय/व्यापार का अर्थ : कोई देश अपनी सीमाओं से बाहर विनिर्माण एवं व्यापार करता है तो उसे अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय कहते हैं। अंतर्राष्ट्रीय, अथवा बाह्य व्यवसाय को इस प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है। यह वह व्यावसायिक क्रियाएँ हैं जो राष्ट्र की सीमाओं के पार की जाती हैं। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि बहुत से लोग अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का अर्थ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से लगाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय एक व्यापक शब्द है, जो विदेशों से व्यापार एवं वहां वस्तु एवं सेवाओं के उत्पादन से मिलकर बना है।

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के कारण : अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का आधाारभूत कारण है कि दे"ा अपनी आवश्यकता की वस्तुओं का भली प्रकार से एवं सस्ते मूल्य पर उत्पादन नहीं कर सकते। इसका कारण उनके बीच प्राकृतिक संसाधानों का असमान वितरण अथवा उनकी उत्पादकता में अंतर हो सकता है। वैसे विभिन्न राष्ट्रों में श्रम की उत्पादकता एवं उत्पादन लागत में भिन्नता विभिन्न सामाजिक-आर्थिक, भौगोलिक एवं राजनैतिक कारणों से होती है। इन्हीं कारणों से यह कोई असाधारण बात नहीं है कि कोई एक देश अन्य देशों की तुलना में श्रेष्ठ गुणवत्ता वाली वस्तुओं एवं कम लागत पर उत्पादन की स्थिति में हो।

अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय बनाम घरेलू व्यवसाय : अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय का संचालन एवं प्रबंधन घरेलू व्यवसाय को चलाने से कहीं अधिक जटिल है। घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में विभिन्न पहलूओं पर अंतर नीचे दिये गये हैं। (क) क्रेता एवं विक्रेताओं की राष्ट्रीयता (ख) अन्य हितार्थियों की राष्ट्रीयता (ग) उत्पादन के साधनों में गतिशीलता (घ) जीवन स्तर में वृद्धि (ड़) व्यवसाय पद्धतियों एवं आचरण में अंतर (च) राजनीतिक प्रणाली एवं जोखिमें (छ) व्यवसाय के नियम एवं नीतियाँ (ज) व्यावसायिक लेन-देनों के लिए प्रयुक्त मुद्रा।

आयात निर्यात प्रक्रिया : आंतरिक एवं बाह्य व्यवसाय परिचालन में प्रमुख अंतर की जटिलता है। वस्तुओं का आयात एवं निर्यात उतना सीधाा एवं सरल नहीं है जितना कि घरेलू बाजार मे क्रय एवं विक्रय, क्योंकि विदेशी व्यापार में माल देश की सीमा के पार भेजा जाता है तथा इसमें विदेशी मुद्रा का प्रयोग किया जाता है।

निर्यात प्रक्रिया : निर्यात लेन-देन के अलग-अलग होते हैं। एक प्रति रूपक निर्यात लेन-देन के निम्नलिखित चरण होते हैंः (क) पूछताछ प्राप्त करना एवं निर्ख भेजना (ख) आदेश अथवा इंडैंट की प्राप्ति (ग) आयातक की साख का आंकलन एवं भुगतान की गारंटी प्राप्त करना (घ) निर्यात लाइसेंस प्राप्त करना (ड़) माल प्रेषण से पूर्व वित्त करना (च) वस्तुओं का उत्पादन एवं अधिाप्राप्ति (छ) जहाज लदान निरीक्षण (ज) उत्पाद शुल्क की निकासी (झ) उद्गम प्रमाणपत्र प्राप्त करना (ञ) जहाज में स्थान का आरक्षण (ट) पैकिंग एवं माल को भेजना (ठ) वस्तुओं का बीमा (ड) कस्टम निकासी (ढ) जहाज के कप्तान की रसीद (मेट्स रिसीप्ट) प्राप्त करना (ण) भाड़े का भुगतान एवं जहाजी बिल्टी का बीमा (त) बीजक बनाना (थ) भुगतान प्राप्त करना।

आयात प्रक्रिया : (क) व्यापारिक पूछताछ (ख) आयात लाइसेंस प्राप्त करना (ग) विदेश मुद्रा का प्रबंध करना (घ) आदेश अथवा इंडैंट भेजना (ड़) साख पत्र प्राप्त करना (च) वित्त की व्यवस्था करना (छ) जहाज से माल भेज दिए जाने की सूचना की प्राप्ति (ज) आयात प्रलेखों को छुड़ाना (झ) माल का आगमन (ञ) सीमा शुल्क निकासी एवं माल को छुड़ाना।

अभ्यास

बहु-विकल्पीय प्रश्न

दिए गए विकल्पों में से सही (✓) पर निशान लगाएं।

1. प्रवेश के निम्न माध्यमों में से किसमें घरेलू विनिर्माता फीस के बदले अन्य देश के विनिर्माता को अपनी बौद्धिक परिसंपत्तियों, जैसे पेटेंट एवं ट्रेडमार्क, को प्रयोग करने का अधिकार देता है।
   (क) अनुज्ञप्ति (ख) अनुबंध
   (ग) संयुक्त उपक्रम (घ) इनमें से कोई भी नहीं
2. दो अथवा दो से अधिक फर्मों द्वारा मिलकर एक नई व्यावसायिक इकाई का निर्माण, जोकि अपनी जनक इकाइयों से कानूनी रूप से स्वतंत्र एवं पृथक है, को कहते हैं।
   (क) ठेके पर विनिर्माण (ख) फ्रैंचाइजिंग
   (ग) संयुक्त उपक्रम (घ) अनुज्ञप्ति
3. निम्न में से कौन-सा निर्यात व्यापार का लाभ नहीं है?
   (क) अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश का सरल मार्ग (ख) तुलना में कम जोखिम
   (ग) विदेशी बाजारों में सीमित उपस्थिति (घ) निवेश की आवश्यकता कम।
4. प्रवेश के निम्न मार्गों में से किसमें जोखिम अधिक है?
   (क) अनुज्ञप्ति (ख) फ्रैंचाइजिंग
   (ग) ठेके पर विनिर्माण (घ) संयुक्त उपक्रम
5. निम्न में से कौन-सी मद भारत की प्रमुख निर्यात मदों में से एक नहीं है?
   (क) कप\ड़ा एवं वस्त्र (ख) रत्न एवं जेवरात
   (ग) तेल एवं पैट्रोलियम (घ) बासमती चावल।
6. निम्न में से कौन-सी मद भारत की प्रमुख आयात मदों में से एक नहीं है?
   (क) आयुर्वेदिक दवाइयाँ (ख) तेल एवं पैट्रोलियम उत्पाद
   (ग) मोती एवं कीमती पत्थर (घ) मशीनरी
7. निम्न में से कौन-सा देश भारत का प्रमुख व्यापारिक साझेदार नहीं है?
   (क) यू.एस.ए (ख) यू.के
   (ग) जर्मनी (घ) न्यूजीलैंड
8. निर्यात लाइसेंस प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित में से कौन से प्रलेखों की आवश्यकता नहीं होती।
   (क) आई.ई.सी. नंबर (ख) साख पत्र
   (ग) पंजीयन संग सदस्यता प्रमाण पत्र (घ) बैंक खाता संख्या
9. निम्न में से कौन सा शुल्क वापसी योजना का अंग नहीं है?
   (क) उत्पादन शुल्क की वापसी (ख) सीमा शुल्क की वापसी
   (ग) निर्यात कर की वापसी (घ) लदान बंदरगाह पर बंदरगाही

10. निम्न में से कौन-सा निर्यात संबंधित प्रलेखों में सम्मिलत नहीं है?
    (क) वाणिज्यिक बीजक (ख) उद्‌गम स्थान प्रमाण पत्र
    (ग) प्रवेश बिल (घ) कारिंदे की रसीद
11. जब माल का जहाज पर लदान करा दिया जाता है तो जहाज के कप्तान द्वारा जारी रसीद को कहते हैं-
    (क) जहाजरानी रसीद (ख) कारिंदे की रसीद
    (ग) नौभार माल रसीद (घ) जहाज के किराए की रसीद
12. निम्न में से कौन-सा प्रलेख निर्यातक द्वारा बनाया जाता है जिसमें जहाज से माल भेजने से संबंधित विवरण होता है जैसे भेजने वाले का नाम, पैकेजों की संख्या, जहाजी बिल, गंतव्य बंदरगाह, जहाज का नाम आदिः
    (क) जहाजी बिल (ख) पैकेजिंग सूची
    (ग) कारिंदे की रसीद (घ) विनियम पत्र
13. प्रलेख जिसमें बैंक द्वारा उस पर निर्यातक द्वारा लिखे बिल के भुगतान की गारंटी दी होती है। वह है-
    (क) बंधक पत्र (ख) साख पत्र
    (ग) जहाजी बिल्टी (घ) विनिमय पत्र
14. टी.आर.आई.पी. विश्व व्यापार समझौते में से एक है जो संबंधित है।
    (क) कृषि व्यापार (ख) सेवा व्यापार
    (ग) व्यापार संबंधित निवेश उपाय (घ) इनमें से कोई नहीं

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में अंतर्भेद कीजिए।
2. अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के किन्हीं तीन लाभों की व्याख्या कीजिए।
3. दो देशों की बीच व्यापार के प्रमुख कारण क्या हैं?
4. ऐसा क्यों कहा जाता है कि अनुज्ञप्ति वैश्विक विस्तार का सरल मार्ग है।
5. विदेशों में ठेका उत्पादन एवं संपूर्ण स्वामित्व वाली उत्पादन सहायक कंपनी के अंतर्भेद कीजिए।
6. निर्यात लाइसेंस लेने के लिए औपचारिकताओं की विवेचना कीजिए।
7. निर्यात प्रोन्नति परिषद् में पंजीयन कराना क्यों आवश्यक है?
8. एक निर्यात फर्म के लिए लदान-पूर्व निरीक्षण कराना क्यों आवश्यक है?
9. माल को उत्पादन शुल्क विभाग से अनुमति के लिए प्रक्रिया की संक्षेप में विवेचना कीजिए।
10. जहाजी बिल क्या है?
11. साख पत्र क्या है? निर्यातक को इस प्रलेख की क्या आवश्यकता है?
12. निर्यात का भुगतान प्राप्त करने की प्रक्रिया की विवेचना कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से अधिक व्यापक है। विवेचना कीजिए।
2. अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय से व्यावसायिक इकाइयों को क्या लाभ हैं?
3. अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में प्रवेश हेतु निर्यात किस प्रकार से विदेशों में संपूर्ण स्वामित्व कंपनियों की स्थापना से श्रेष्ठतर माध्यम है?
4. रेखा गारमैंट्स को आस्ट्रेलिया में स्थित स्विफ्ट इम्पोट्स लि. को 2000 पुरूष पैंट के निर्यात का आदेश प्राप्त हुआ है। इस निर्यात आदेश को क्रियान्वित करने में रेखा गारमेंट्स को किस प्रक्रिया से गुजरना होगा? विवेचना कीजिए।
5. आपकी फर्म कनाडा से कपड़ा मशीनरी के आयात की योजना बना रही है। आयात प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
6. देश के विदेशी व्यापार को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने जिन संगठनों की स्थापना की है। उनके नाम दीजिए।
7. अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष क्या है? इसके विभिन्न उद्देश्यों एवं कार्यों की विवेचना कीजिए।
8. विश्व व्यापार संगठन की विशेषताओं ढाँचा उद्देश्य एवं कार्य संचालन पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

परियोजना कार्य/क्रियाकलाप

विश्व व्यापार में भारत की स्थिति

नीचे दिये गए आँकड़ों को ध्यानपूर्वक पढ़ें। यह आँकड़े विश्व व्यापार में भारत के निष्पादन को व्याख्या करते हैं। भारत सरकार द्वारा लिये गए 8 नवीन कदम जैसे कि 'मेक इन इंडिया', 'कौशल भारत' और विदेशी व्यापार नीति 2015-20 और 'डिजीटल इंडिया' आदि के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था में आयात निर्यात और व्यापार तुलन को बढ़ावा मिला है।

1. **तालिका 1** : विश्व की विस्तृत अर्थव्यवस्थाओं में भारत की स्थिति दर्शाती है।

क्रम सं.	देश	विश्व व्यापार में प्रतिशत अंश
1.	संयुक्त राज्य अमेरिका	24.3
2.	चीन	14.8
3.	जापान	5.9
4.	जर्मनी	4.5
5.	यूनाइटेड किंगडम	3.9
6.	फ्रांस	3.3
7.	इंडिया	2.8
8.	इटली	2.5
9.	ब्राजील	2.4
10.	कनाडा	2.1

स्रोत : विश्व बैंक-2017

इसके संदर्भ में प्रवृत्ति रिपोर्ट तैयार करें, जोकि भारत की स्थिति को वर्ष 2015 से वर्ष 2017 तक दिखाए।

2. **तालिका 2** : इसमें विश्व व्यापार में भारत के प्रधाान साझेदारों का ब्यौरा है।

भारत के व्यापारिक सहयोगी एवं कुल व्यापार (2014-15)					**(राशि अमेरिकी डॉलर में)**
क्रम सं.	**देश**	**निर्यात**	**आयात**	**कुल व्यापार**	**व्यापार का संतुलन**
1.	चीन	9.01	61.71	70.72	(52.70)
2.	संयुक्त राज्य अमेरिका	40.34	62.12	62.12	18.55
3.	संयुक्त अरब अमीरात	30.29	49.74	49.74	10.84
4.	सऊदी अरब	6.39	20.32	26.72	(13.93)
5.	जर्मनी	.98	12.09	20.33	(5.25)
6.	दक्षिण कोरिया	3.52	13.05	18.13	(8.93)
7.	मलेरिया	3.71	9.08	16.93	(5.30)
8.	सिंगापुर	7.72	7.31	16.93	2.68
9.	नाइजीरिया	2.22	9.95	16.36	(11.00)
10.	बेल्जियम	5.03	8.26	16.33	(5.29)
11.	कतर	.90	9.02	15.66	(13.55)
12.	जापान	4.66	9.85	15.52	(4.75)
13.	यूनाइटेड किंगडम	8.83	5.19	14.34	4.30
					केवल चयनित देश

इन आँकड़ों के आधार पर चर्चा करें कि किस प्रकार व्यापारिक क्रियाओं द्‌वारा विश्व में शांति और सद्‌भावना स्थापित की जा सकती है।

3. **तालिका 3** में दिये गए आयात एवं निर्यात संबंधी आँकड़ों को चित्रात्मक रूप से प्रदर्शित कीजिए।

व्यापारिक माल			
वर्ष	**निर्यात**	**आयात**	**व्यापार का संतुलन**
2006-2007	571779	840506	(268727)
2007-2008	655864	1012312	(356448)

2008-2009	840755	1374438	(533680)
2009-2010	845534	1363736	(518202)
2010-2011	1136954	1683487	(546503)
2011-2012	1465959	2345463	879504)
2012-2013	1634318	2669162	(1034844)
2013-2014	1905011	2715434	(810423)
2014-2015	1896348	2737087	(840738)
2015-2016 (अनंतिम)	1716378	2490298	(773920)
2016-2017 (अनंतिम) अक्तूबर तक	1039797	1396352	(356554)
वार्षिक रिपोर्ट, 2016-17 वाणिज्य मंत्रालय			

4. **तालिका 4 :** भारत के आयात एवं निर्यात की वृद्धि दर को दर्शाता है।

वर्ष	निर्यात वृद्धि दर %	आयात वृद्धि दर %
2006-2007	25.28	27.27
2007-2008	14.71	20.44
2008-2009	28.19	35.77
2009-2010	0.57	(0.78)
2010-2011	34.47	23.45
2011-2012	28.94	39.32
2012-2013	11.48	13.8
2013-2014	16.58	1.73
2014-2015	(0.45)	0.8
2015-2016 (अनंतिम)	(6.49)	(9.02)
2016.2017 (अनंतिम) अक्तूबर तक	4.17	(6.99)
2016-17 का वार्षिक रिपोर्ट, वाणिज्य मंत्रालय		

5. **तालिका 5 :** उन वस्तुओं की सूची प्रस्तुत करती है जिन्हें भारत विश्व बाजार में आयात/निर्यात करता है। आपको आपेक्षित है कि वाणिज्य मंत्रालय को वार्षिक रिपोर्ट (2016-17) से इस सूची को पढ़ें और किन्हीं पाँच वस्तुओं का चुनाव कर 'पाई चार्ट' पर दर्शायें।

क्रम सं.	वस्तु	वस्तु	निर्यात (अमेरिकी डॉलर में)	अंश प्रतिशत	आयात (अमेरिकी डॉलर में)	अंश प्रतिशत
1.	वृक्षारोपण	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	1503 1563 895	.58	1034 895 524	0.25
2.	कृषि एवं संमबद्ध उत्पाद	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	30147 24522 13420	8.64	19004 20673 12189	5.84
3.	खनिज और अयस्क	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	2410 2015 1412	.91	26918 20684 12941	5.08
4.	चमड़ा एवं चमड़ा उत्पाद	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	6195 5554 3158	2.03	1093 1031 606	0.28
5.	खेल एवं आभूषण	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	41266 39283 26458	17.02	62351 56509 33845	12.80
6.	रासायनिक एवं संबंधित उत्पाद	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	31731 32169 18740.56	12.06	31731 32169 18740	12.06
7.	प्लास्टिक और रबर	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	6615 6416 3683	2.32	6615 6416 3682	2.37
8.	इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	6009 5690 3270	2.10	6009 5690 3270	2.10
9.	वस्त्र एवं सम्बद्ध उत्पाद	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	37141 35953 19593	12.61	37141 35953 19594	12.61
10.	कच्चा तेल एवं उत्पाद	2014-2015 2015-2016 2016-2017 (अनंतिम) अप्रैल-अक्तूबर, 2017	56794 30583 19597	11.32	56794 30583 17597	11.32

FORM NO. INC-1

(Pursuant to section 4(4) of the Companies Act, 2013 and pursuant to rule 8 & 9 of the Companies (Incorporation) Rules, 2014)

सत्यमेव जयते

Application for reservation of Name

Form language ⦿ English Hindi ○
Refer the instruction kit for filing the form.

1.* Application for :
○ Incorporating a new company (Part A, B, C)
○ Changing the name of an existing company (Part B, C, D)

Part A: Reservation of name for incorporation of a new company

2. Details of applicant (In case the applicant has been allotted DIN, then it is mandatory to enter such DIN)
(a) Director identification number (DIN) or Income tax permanent account number (PAN) or passport number [ ] Pre-fill Verify Details
(b) *First Name [ ]
Middle Name [ ]
*Surname [ ]
(c) *Occupation Type ○ Self-employed ○ Professional ○ Homemaker ○ Student ○ Serviceman
(d) Address *LINE I [ ]
LINE II [ ]
(e) *City [ ]
(f) *State/Union Territory [ ]
(g) *Pin Code [ ]
(h) ISO Country code [ ]
(i) Country [ ]
(j) e-mail ID [ ]
(k) Phone (with STD/ISD code) [ ] — [ ]
(l) Mobile (with country code) [ ] — [ ]
(m) Fax [ ] — [ ]

3. (a) *Type of company
○ Section 8 company ○ Part I company (Chapter XXI) ○ Producer company
○ New company (others)
(d) *State the sub-category of proposed company
○ Public ○ Private ○ Private (One Person Company)
(b) *State class of the proposed company [ ]
(c) *State the category of proposed company [ ]

4. *Name of the State/Union territory in which the proposed company is to be registered
[ ]

5. *Name of the office of the Registrar of Companies in which the proposed company is to be registered

6. Details of promoter(s) (In case the promoter(s) has been allotted DIN, then it is mandatory to enter such DIN)

* Enter the number of promoter(s)

*Category

DIN or Income-tax PAN or passport number or corporate identification number (CIN) or foreign company registration Number (FCRN) or any other registration number   Pre-fill

*Name

7. *Objects of the proposed Company to be included in its MoA

8. *Particulars of proposed director(s)

(Specify information of one director in case the proposed company is One Person Company or of two directors in case the proposed company is a private company (other than producer company) or of three directors in case the proposed company is a public company or of five directors in case the proposed company is a producer company)

*Director Identification Number (DIN)   Pre-fill

Name

Father's Name

Nationality   Date of birth (DD/MM/YY)

Income tax permanent account number (PAN)

Passport number   Voter identity card number

Aadhaar number

Present residential address

9 *Whether the Promoters are carrying on any Partnership firm, sole proprietary or unregistered entity in the name as applied for

O Yes   O No

(If yes, attach NOC from all owners/partners of such entity for use of such name)

Part B. Particulars about the proposed name(s)

10. *Number of proposed names for the company

(Please give maximum six names in order of preference)

I. Proposed name

Significance of key or coined word in the proposed name	
State the name of the vernacular language(s) if used in the proposed name	

11. *Whether the proposed name is in resemblance with any class of Trade Marks Rules, 2002
   O Yes O No
   If yes, Please specify the Class(s) of trade mark
12. *Whether the proposed name(s) is/are based on a registered trade mark or is subject matter of an application pending for registration under the Trade Marks Act.
   O Yes O No
   If yes, furnish particulars of trade mark or application and the approval of the applicant or owner of the trademark
13. In case the name is similar to any existing company or to the foreign holding company, specify name of such company and also attach copy of the No Objection Certificate by way of board resolution (Duly attested by a director of that company)
   (a) Whether the name is similar to holding Company
   O Existing Company O Foreign holding company
   (b) In case of existing Company, provide CIN Pre-fill
   (c) Name of the Company
14. (a) Whether the proposed name includes the words such as Insurance, Bank, Stock exchange, Venture Capital, Asset Management, Nidhi, or Mutual Fund etc. O Yes O No
   If Yes, whether the in-principle approval is received from

specify other O Yes O No

   (If yes, attach the approval or if No, attach the approval at the time of filing the incorporation form
   (b) *Whether the proposed name including the phrase 'Electoral trust' O Yes O No
   [If Yes, attach the affidavit as per rule 8(2)(b)(vi)]

Part C. Names requiring Central Government approval

15. *State whether the proposed name(s) contain such word or expression for which the previous approval of Central Government is required O Yes O No
   (If Yes, this form shall be treated as an application to the Central Govt., for such approval and shall be dealt with accordingly)

Part D. Reservation of name for change of Name by an Existing Company

16. (a) *CIN of Company Pre-fill
   (b) Global Location Number (GLN) of Company
17. (a) Name of Company
   (b) Address of the registered office of the Company
   (c) Email ID of the Company
18. (a) * State whether the change of name is due to direction received from the Central Government.
   O Yes O No
   (If yes, please attach a copy of such directions)

(b) * Whether the proposed name is in accordance with the rule 8(8) and specific direction of the Tribunal is attached.

O Yes O No

[If 'Yes' selected,attach order of tribunal as required in Rule 8(8)]

19. (a) Whether the change in name requires change in object of the company

O Yes O No

(b) Reasons for change in name (in case of yes above, mention proposed object of the company)

Attachments

(12) Optional attachment, if any. Attach List of attachments

Remove attachment

Declaration

☐ *I have gone through the provisions of The Companies Act, 2013, the rules thereunder and prescribed guidelines framed thereunder in respect of reservation of name, understood the meaning thereof and the proposed name(s) is/are in conformity thereof.

☐ *I have used the search facilities available on the portal of the Ministry of Corporate Affairs (MCA) for checking the resemblance of the proposed name(s) with the companies and Limited Liability partnerships (LLPs) respectively already registered or the names already approved. I have also used the search facility for checking the resemblances of the proposed name(s) with registered trademarks and trade mark subject of an application under The Trade Marks Act, 1999 and other relevant search for checking the resemblance of the proposed name(s) to satisfy myself with the compliance of the provisions of the Act for resemblance of name and Rules thereof.

☐ *The proposed name(s) is/are not in violation of the provisions of Emblems and Names (Prevention of Improper Use) Act, 1950 as amended from time to time.

☐ *The proposed name is not offensive to any section of people, e.g., proposed name does not contain profanity or words or phrases that are generally considered a slur against an ethnic group, religion, gender or heredity.

☐ *The proposed name(s) is not such that its use by the company will constitute an offence under any law for the time being in force.

☐ *To the best of my knowledge and belief, the information given in this application and its attachments thereto is correct and complete, and nothing relevant to this form has been suppressed.

☐ *I undertake to be fully responsible for the consequences in case the name is subsequently found to be in contravention of the provisions of section 4(2) and section 4(4) of the Companies Act, 2013 and rules thereto and I have also gone through and understood the provisions of section 4(5) (ii) (a) and (b) of the Companies Act, 2013 and rules thereunder and fully declare myself responsible for the consequences thereof.

To be digitally signed by

*Designation

*DIN or Income-tax PAN or passport number of the applicant or Director identification number of the director; or PAN of the manager or CEO or CFO; or Membership number of the Company Secretary

Note: Attention is drawn to the provisions of Section 7(5) and 7(6) which, inter-alia, provides that furnishing of any false or incorrect particulars of any information or suppression of any material information shall attract punishment for fraud under Section 447. Attention is also drawn to provisions of Section 448 and 449 which provide for punishment for false statement and punishment for false evidence respectively.

Modify Check Form Prescrutiny Submit

टिप्पणी

प्यारे बच्चो!

यदि कोई आपको अनुचित ढंग से स्पर्श करे और यह स्पर्श आपको अच्छा न लगे तो, आप चुप न रहें। आप

1. स्वयं को इसका दोष न दें;
2. इस बारे में किसी ऐसे व्यक्ति को बताएँ जिस पर आप भरोसा करते हो;
3. आप **पॉक्सो ई.बॉक्स** के माध्यम से राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग को भी इस बारे में सूचित कर सकते हैं।

जब आपको कोई अनुचित ढंग से स्पर्श करता है तो आपको बुरा लग सकता है, आप दुविधाग्रस्त और असहाय अनुभव कर सकते हैं
आपको ''बुरा'' अनुभव करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आपकी गलती नहीं है

इस बटन को दबाएँ

पॉक्सो ई.बॉक्स NCPCR@gov.in पर उपलब्ध है।

नए समाज की ओर
Towards a new dawn

यदि आपकी आयु 18 वर्ष से कम है और आप मुसीबत में हैं अथवा दुविधाग्रस्त हैं अथवा आपके साथ दुर्व्यवहार किया गया है अथवा संकट में हैं अथवा किसी ऐसे बच्चे को जानते हैं...

1098 पर कॉल करें...क्योंकि कुछ अच्छे नंबर जीवन बदल देते हैं।

चाइल्ड लाइन 1098 – विपत्ति में बच्चों के लिए 24 घंटे नि:शुल्क राष्ट्रीय आपातकालीन फ़ोन सेवा, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के सहयोग से चाइल्ड लाइन इंडिया फ़ाउंडेशन की पहल है।

नए समाज की ओर
Towards a new dawn

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

11109

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 81-7450-583-0